CIK - 01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

नित्यकर्म प्रयोग

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो.(डॉ.) विनय कुमार पाठक

कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

समन्वयक एवं सदस्य

समन्वयक

डॉ. क्षमता चौधरी

सहायक आचार्य (अंग्रेजी) व.म.खु.वि., कोटा

सदस्य

1. **प्रो.(डॉ.) एल.आर. गुर्जर**
   निदेशक, सामाजिक एवं मानविकी विद्या पीठ
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
2. डॉ. क्षमता चौधरी
   सहायक आचार्य (अंग्रेजी)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
3. डॉ. कमलेश जोशी
   उपकुलसचिव, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
4. प्रो. भास्कर श्रोत्रिय
5. डॉ. सरिता भार्गव
6. पं. हेमन्त शास्त्री
   ज्योतिष, कोटा

सम्पादन एवं पाठ्यक्रम लेखन

सम्पादक

डॉ. उमेश शुक्ला

व्याख्याता, संस्कृत विभाग

श्रीमती लाड़ देवी, संस्कृत महाविद्यालय, माड़ल गढ, भीलवाड़ा

	लेखक	इकाई सं.
1	**प्रो. वासुदेव शर्मा** **आचार्य एवं ज्योतिष विभागाध्यक्ष,** **राष्ट्रिय संस्कश्त संस्थान, त्रिवेणी नगर,** **गोपालपुरा बाईपास के पास, जयपुर**	(2, 7, 8, 9, 10, 11)
2 . 2	**पं. चन्द्रशेखर शर्मा** **ब्रह्मपुरी, जयपुर**	**(1, 3, 4, 5, 6)**

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) विनय कुमार पाठक
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो.(डॉ.) एल.आर. गुर्जर
निदेशक, सामाजिक एवं मानविकी विद्याा पीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राज.)

प्रो.(डॉ.) पी.के. शर्मा
निदेशक, क्षेत्रीय सेवाएं
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राज.)

पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

श्री योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी

उत्पादन

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ सं.
इकाई – 1	दैनिक नित्यकर्म (हस्त अवलोकन, भूमि प्रार्थना, शौचकर्म, दन्तधावन, तीर्थ प्रार्थना)	3
इकाई – 2	दैनिक जीवन में ज्योतिषीय पंचांग का व्यवहारिक ज्ञान	30
इकाई – 3	षोड़श संस्कारों का परिचय एवं यज्ञोपवीत का पूजन सहित धारण विधि	75
इकाई – 4	सन्ध्योपासना (त्रिकाल सन्ध्या का विधान एवं नियम, सन्ध्या में पूजनकालिक प्रमुख मुद्राओं का सचित्र विश्लेषणात्मक विवरण)	140
इकाई – 5	पंचदेवोपासना	161
इकाई – 6	बलिवैश्वदेव एवं भोजनविधि	203
इकाई – 7	नित्य तर्पण (देव–ऋषि–पितृ–मनुष्य तर्पण)	223
इकाई – 8	उत्तरकर्म (अन्त्येष्टिकर्म) परिचय	246
इकाई – 9	शिवसंकल्प सूक्त, अप्रतिरथ सूक्त, पुरूष सूक्त, उत्तरनारायण सूक्त, रुद्रसूक्त, भद्रसूक्त का पाठाभ्यास	292
इकाई – 10	चण्ड़ी–विधान का सामान्य परिचय	317
इकाई – 11	यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र का सैद्वान्तिक ज्ञान	346

पाठ्यक्रम परिचय

दैनिक क्रियाएँ (हस्त अवलोकन, भूमि अवलोकन, भूमि प्रार्थना, शौच कर्म, दन्त धवन, तीर्थ एवं स्नान)

भारतीय सनातन संस्कृति पुनर्जन्म एवं मरण पर आधारित है। इस लोक में सभी जगह सुख–दुख,हानी–लाभ,जीवन–मरण,दरिद्रता–सम्पन्नता, रुग्णता –स्वस्थता, वुद्धिमत्ता–अवुद्धिमत्ता, दया–कुरता और द्वेष–अद्वेष आदि वैभिन्य स्पष्ट रुप से दिखायी पडता है। पर यह वैभिन्य दृष्ट कारणों से ही होना आवश्यक नहीं,कारण की ऐसे बहुत सारे उदाहरण प्राप्त होते हैं, कि एक ही माता पिता के एक ही साथ जन्मे युग्म बालकों की शिक्षा –दीक्षा , लालन –पालन आदि समान होने पर भी व्यक्तिगत रूप से उनकी परिस्थितियां भिन्न–भिन्न होती हैं, जैसे कोई सुखी कोई दुखी, कोइ हानी कोई लाभ, कोई दरिद्र कोई सम्पन्न कोई रुग्ण कोई स्वस्थ, कोई वुद्धिमान कोई अवुद्धिमान, कोई दयावान कोई कुर कोई द्वेष कोई अद्वेष कोई अंगहीन तो कोई सर्वांग–सुन्दर इत्यादि। इन सभी बातों से यह स्पष्ट होता है कि जन्मान्तरीय धर्माधर्म रूप अदृष्ट भी इन भोगों का कारण है। अतः मानव –जन्म लेकर अपने कर्तव्य के पालन और स्व–धर्माचरण के प्रति प्रत्येक व्यक्ति को अत्यधिक सावधान होना चाहिये।

कर्मकाण्ड में प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रथम पत्र में कुल 11 इकाईयों को सम्मिलित किया गया है, जिनका परिचय इस प्रकार है–

इकाई –1 : दैनिक क्रियाएँ (हस्त अवलोकन, भूमि अवलोकन, भूमि प्रार्थना, शौच कर्म, दन्त धवन, तीर्थ एवं स्नान)इस इकाई के अध्ययन से मनुष्य के नित्यकर्मो के सम्बन्ध में विशद विवेचन किया गया है। मनुष्य को बहुत सी विधों में पशुओं से भी ज्ञान ग्रहण करने हेतु शास्त्रों ने निर्देशित किया है।

इकाई 2 : पंचांग का व्यावहारिक जीवन में उपयोग–इस इकाई के अध्ययन से तिथि, वार, नक्षत्र, योग करण। पाँच अंगों के अतिरिक्त भी अन्य अनेकानेक विषयों का ज्ञान करेंगे

इकाई – 3 षोडश संस्कार : मानव जीवन विशुद्ध और उन्नत बनाने के उद्देश्य से संचालित षोड़श संस्कार व्यवस्था अनादिकाल से भारतीय संस्कृति का अभिन्न अङ्ग रही है। संस्कार–संज्ञक क्रिया–कलाप प्रत्येक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य लिए अनिवार्य कर्तव्य है,इसके विषय में अध्ययन करेंगे

इकाई – 4 सन्धा : सन्धा वर्णन से संबंधित यह चौथी इकाई है। सन्ध्या शब्द का तात्पर्य दो कालों के मध्य का समय होता है। सन्ध्या तीन प्रकार की होती है – 1. प्रातः सन्ध्या, 2. मध्याह्न सन्ध्या तथा 3. सायं सन्ध्या। तथापि एक और सन्ध्या (रात्रि सन्ध्या) होती है जो सभी के लिए बाध्य नहीं है, यह केलव कार्यविशेष (तान्त्रिक कर्म) के लिए विशेष अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप संधा संबंधी समस्त महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें।

इकाई – 5 पंचदेव – उपसना : इस इकाई में पञ्चदेव के विषय में विशेष महत्त्व माना गया **है** सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव तथा विष्णु पञ्चदेव है। इनका पूजन सभी कार्यों में से करना चाहिए, अन्यथा पूजनकर्म निष्फल हो जाता है। अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें।

इकाई–6, बलि वैश्यदेव : इस इकाई में बलि–वैश्यदेव का प्रयोजन एवं उसकी विधियों सम्यक् अध्ययन किया गया है मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः नित्य दिनचार्य में यज्ञ एवं भोजनविधि का महत्त्वपूर्ण क्रम है। सभी जीवों के लिए भोजन का प्रबन्ध एवं समाज में मानवता का उत्थापन प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व है। अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें।

इकाई –7 नित्य तर्पण : तर्पण का प्रयोजन ऋण से मुक्ति है। प्रस्तुत इकाई में नित्यकर्म के अन्तर्गत तर्पण करने की विधि का संगोपांग वर्णन किया गया है।

इकाई – 8 उत्तर कर्म (अन्त्येश्टिकर्म) : मृत्यु समय निकट देखकर पुत्र अथवा सम्बन्धी लोग भक्ति का उपदेश, भगवान्के नामों का उच्चारण, गायत्री मन्त्र का जाप, ऊँकार अथवा महामृत्युञ्जय का जाप, गङ्गा, राम, कृष्ण का स्मरण करवायें या जिसकी मृत्यु निकट आ गयी हो, उसे गीता, विष्णुसहस्रनाम, गङ्गा सहस्रनाम, श्रीमद्भगवद्गीता आदि पुण्य शास्त्रों का पाठ सुनावें, जिससे अन्तकाल में प्राणी भगवान्नाम को स्मरण अथवा श्रवण करते हुए मुक्त हो सके। अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें।

इकाई – 9 सूक्तो की व्याख्या : इस देश मे जितने प्रकार के उपवास व्रत पूजन अथवा होम–नियम प्रचलित है उनमे शिवरात्रि–व्रत के समान साम्ब सदाशिव की आराधना से चतुर्वर्ग फलाप्ति का अमोघ वैदिक उपाय है ''रूद्राभिषेक''। शिव और रूद्र ब्रह्म के ही पर्यायवाची शब्द है। 'वेदः शिवः शिवो वेदः' वेद शिव है और शिव ही वेद है अर्थात् शिव वेदस्वरूप है अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें। '

इकाई–10 चण्डी विधान :इस संसार में बड़े–बड़े सिद्ध एवं साधकों ने सप्तशती पर अपनी वाणी को पवित्र करने के लिए शास्त्र–साधना, अनुभव, भक्ति, प्रेम एवं आनन्द में विभोर होकर अपने–अपने श्रेष्ठतम विचारों को साधकों के हितार्थ चण्डी के विधान के विषय में बताया गया है। अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें। '

इकाई–11 यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र का सैद्धान्तिक ज्ञान : तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र मानव जीवन का अभिन्न अङ्ग है। अपने नित्यदिन के कर्मों के सिद्धि हेतु इनका उपयोग सभी धर्मों के अनुयायी किया करते है। तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र के योग में पारङ्गत होना परम आवश्यक है। जब तक मनुष्य आत्म–संयम नहीं करता है,

इकाई –1

दैनिक क्रियाएँ (हस्त अवलोकन, भूमि अवलोकन, भूमि प्रार्थना, शौच कर्म, दन्त धवन, तीर्थ एवं स्नान)

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 विषय प्रवेश
1.4 हस्त अवलोकन
1.4.1 ब्रह्म मुहूर्त
1.4.2 हस्त अवलोकन का मन्त्र
1.5 भूमि प्रार्थना
1.5.1 अभंग परिहार हेतु वस्तुओं का दर्शन
1.5.2 शीतल जल से मुखंडों का प्रक्षालन
1.5.3 मानसिक शुद्धि मन्त्र
1.5.4 प्रातः स्मरण के मंगल श्लोक
1.6 शौच कर्म
1.7 दन्त धावन
1.7.1 दातुन तोडने हेतु प्रार्थना
1.7.2 वर्णो के अनुसार दन्त काष्ठ
1.7.3 निषेध काल
1.7.4 प्रशस्त काष्ठ
1.7.5 निषिद्ध काष्ठ
1.7.6 काष्ठ विसर्जन
1.7.7 क्षौर कर्म
1.7.8 क्षौर कर्म फल
1.7.9 प्रशस्त वरों में क्षौर कर्म का फल
1.7.10 तैलाम्भंग
1.7.11 तैलाम्भंग हेतु निषिद्ध काल
1.7.12 तैलाम्भंग का निषेध काल में फल
1.7.13 व्यायाम
1.8 तीर्थ प्रार्थना
1.8.1 प्रातः स्वाद के लाभ
1.8.2 सूर्य नमस्कार
1.8.3 स्नान
1.8.4 असक्त की स्नान विधि
1.8.5 संकल्प
1.8.6 जल–श्रेष्ठता
1.8.7 अपवित्र जल विचार

1.8.8 मृत्तिका लेपन मन्त्र
1.8.9 तीर्थावाहन
1.8.10 गंगा प्रार्थना
1.8.11 तीर्थ स्नान के नियम
1.8.12 स्नानांग तर्पण
1.8.13 देव तर्पण
1.8.14 ऋषि तर्पण
1.8.15 पितृ तर्पण
1.8.16 जीवित तर्पण का निर्णय
1.9 सारांश
1.10 शब्दावली
1.11 अति लघुत्तरीय प्रश्न
1.12 लघुत्तरीय प्रश्न
1.13 सन्दर्भ ग्रन्ध सूची

1.1 प्रस्तावना :

मनुष्य के श्वासोच्छावास अर्थात अहर्निश जीवन में प्रभू का नाम होना चाहिए, तभी मानव मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। शास्त्रों में सूर्योदय से ही मनुष्य के नित्यकर्मो के सम्बन्ध में विशद विवेचन किया गया है। मनुष्य को बहुत सी विधों में पशुओं से भी ज्ञान ग्रहण करने हेतु शास्त्रों ने निर्देशित किया है। जैसे –

काक चेष्टा बको ध्यानम्, श्वाद निद्रा तथैव च।

स्वल्पाहारी गृहत्यागी, विद्यार्थी पंचलक्षणम्।।

यदि मनुष्य प्रकृति का अनुसरण करे, तो अनेकानेक व्याधियाँ मनुष्य से स्वतः ही दूर हो जाती है। उदाहरण के लिए हम पशु–पक्षियों की जीवनचर्या देख सकते है। उनके नित्यकर्म सूर्योदय से प्रारम्भ होकर सूर्यास्त तक समाप्त हो जाते है। यदि मनुष्य भी जीवन में शास्त्रों में बताये गये नित्यकर्मो को अंगीकार कर ले तो वह स्वयं तो सात्विक बन ही जाता है, आस–पास क सामाजिक लोग भी उनसे प्रेरणा लेने लगते है।

1.2 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप शास्त्रों में वर्णित निम्नलिखित ज्ञान से अवगत हो पायेंगे।

1. प्रातः कालीन नित्यकर्मो में प्रारम्भिक कर्म का विधान एवं नियम।

2. नित्य पठनीय श्लोकों की पाठविधि तथा उनका अर्थज्ञान।

3. इस इकाई के अध्यय करने के बाद आप नित्य क्रियाओं के सम्यक् विधान का पालन करने हेतु

बतायी गयी विधियों का समझ सकेंगे।

1.3 विषय प्रवेश :

स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए प्रकृति द्वारा कुछ विशेष नियम निर्धारित किये गये हे, जो मनुष्य एवं पशु दोनों के लिए समान रूप से करना अनिवार्य हे। जैसे – भोजन, जलग्रहण, उत्सर्जन इत्यादि क्रियाएँ। ये सभी क्रियाएँ स्वस्थ शरीर के पोषण हेतु आवश्यक है। इसी प्रकार मानसिक स्वस्थता के लिए मन का एकाग्र होना अत्यावश्यक है। मन की एकाग्रता के लिए विविध शास्त्रों में भिन्न–भिन्न स्व–प्रकृति के अनुसार निरूपण किये गये है। उदाहरण के लिये –

1. योगाश्चित्तवृति निरोधः। – पतंजलि योग सूत्र

2. अभ्यासेन हि कौन्तेय ....। – श्रीमद्‌भागवग्दीता

मनुष्य–शरीर में प्राण–अपान–समान–उदान–ज्ञान–नाक–कूर्म–देवदत्त–धनंजय आदि प्रमुख नाड़ियाँ है।

1.4 हस्त अवलोकन :

1. इन्हीं में प्रवाहित वायु वेग शरीर को स्वस्थ अथवा अस्वस्थ बनाता है। अपनी–अपनी नाड़ी की प्रकृति क अनुसार मनुष्य विविध परिस्थितियों मे आचार–व्यवहार करता है।

2. ब्रह्म मुहूर्त को परिभाषित करते हुए विष्णुपुराण में कहा गया है कि –

अर्थात रात्रि के पश्चिम याम (अन्तिम प्रहार) को ब्रह्म मुहूर्त तो कहते ही हैं उसमें भी तृतीय चरण को विष्णुपुराण में ब्रह्ममुहूर्त कहा गया है। अथवा गणित में घंटा मिनट के अनुसार रात्रि के अन्तिम प्रहर का तृतीय चरण अर्थात् सूर्योदय होने के लगभग एक घंटे तीस मिनट पूर्व का समय ब्रह्म मुहूर्त के अन्तर्गत आता है।

इस अवलोकन की क्रिया प्रत्येक मनुष्य को शोकर उठते ही सबसे पहले करनी चाहिए। दर्शन के समय ही हस्त अवलोकन मन्त्र कराग्रे वसते लक्ष्मी... इत्यादि का उच्चारण भी करना चाहिए।

1.4.1 ब्रह्ममुहूर्त्त :–

रात्रेः पश्चिमयामस्य मुहूर्त्तो यस्तृतीयकः।

स ब्राह्म इति विज्ञेयो विहितः सः प्रबोधने।। – विष्णुपुराण

ब्राह्मे मुहूर्ते या निद्रा सा पुण्यक्षयकारिणी;

तां करोति द्विजो मोहात् पादकृच्छ्रेण शुद्ध्यति।।

अर्थात् ब्रह्ममुहूर्त्त की निद्रा मनुष्य के पुण्य का क्षय करने वाली है। ब्रह्ममुहूर्त्त में जो भी कोई (विशेषकर द्विज) मोहवश निद्रावस्था में रहता है, उसे प्रायश्चित के लिए अर्थात् उस पाप से मुक्ति के लिए ''पादकृच्छ्र'' नामक व्रत करना चाहिए।

1.4.2 हस्त अवलोकन का मन्त्र :–

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये तु सरस्वती।

करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते कर दर्शनम्।। – आचारप्रदीप

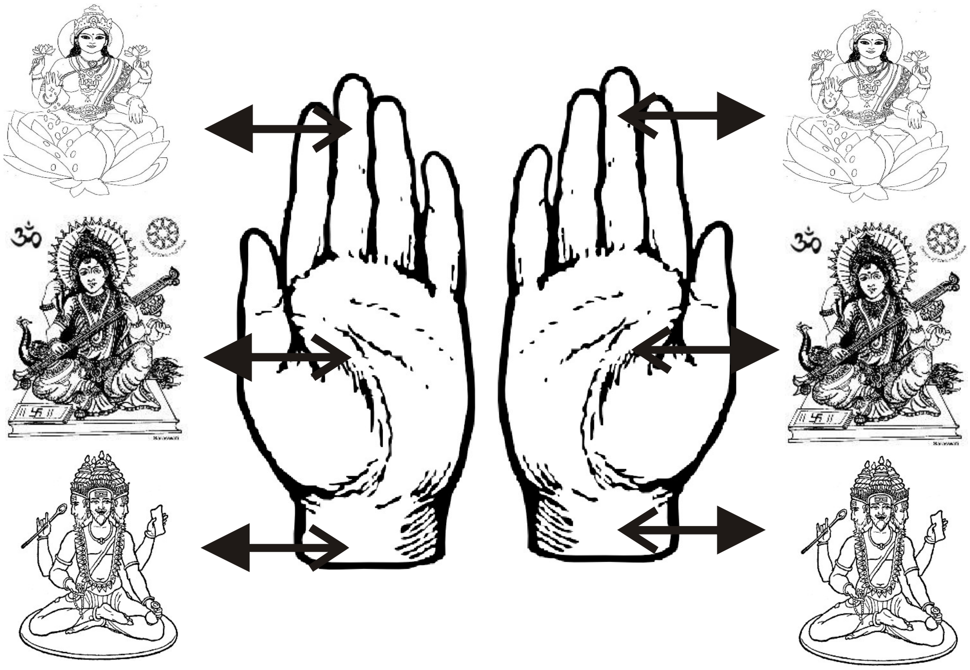

मन्त्र का यह अर्थ है कि हाथ के अग्रभाग में लक्ष्मी, मध्य में सरस्वती और मूल ब्रह्मा का निवास है। अतः प्रातः काल दोनों हाथों में इन देवताओं का ध्यान करते हुए दर्शन करना चाहिए।

वस्तुतः सांसारिक सभी कार्य मनुष्य के हाथों से ही सम्पादित होते है। श्रीमद्भागवग्दीता में भी श्रीकृष्ण ने कर्मयोग का सन्देश दिया है। लक्ष्मी को धन की देवी कहा गया है, संसार के समस्त भौतिक सुख धन के बिना प्राप्त नहीं हो सकते है तथा सरस्वती, जिसे ज्ञान की देवी कहा जाता है उसकी आराधना के बिना मनुष्य की बौद्धिक क्षमताएँ विकसित नहीं हो सकती है। ब्रह्मा अर्थात् परमत्व (ईश्वर) की कृपा से रहित मनुष्य किसी भी कार्य में सफल नहीं हो सकता। इसीलिए शास्त्रों ने लक्ष्मी–सरस्वती–ब्रह्मा को स्व–हस्त में स्थान दिया है और कर्म करने हेतु मनुष्य को प्रेरित किया है।

नोट :– सम्प्रदाय के अनुसार व्यक्ति जिस भी आध्यात्मिक शक्ति में आस्था रखता है, उसका ध्यान करते हुए हस्त अवलोकन कर सकते है।

अव्याधितं चेत् स्वपन्तं .... विहितकर्मश्रान्ते तु न।।

– आचार्य इन्दु

शास्त्र में रोगी, वृद्ध व्यक्ति, बालकों के लिए ब्रह्ममुहूर्त्त में निद्रामुक्त ने होने पर भी किसी भी प्रकार प्रायश्चित नहीं बताया गया है। साथ ही धार्मिक अनुष्ठान अथवा सामाजिक कल्याण हेतु किये गये कार्यो के फलस्वरूप भी यदि कोई धार्मिक ब्रह्ममुहूर्त्त में निद्रामुक्त नहीं हो ताता है, तो वह भी पूर्व में किये कृत्यों के फलस्वरूप दोषमुक्त रहता है अर्थात् उन्हें भी प्रायश्चितमुक्त रखा गया है।

वर्णं कीर्तिं मतिं लक्ष्मीं स्वास्थ्यमायुश्च विन्दति।

ब्राह्मे मुहूर्त्ते संजाग्रच्छ्रियं वा पंकजं यथा।।

अर्थात् ब्रह्ममुहूर्त्त में उठने से व्यक्ति को शारीरिक–कान्ति, यश, लक्ष्मी, बुद्धि, दीर्घायु, स्वास्थ्य आदि की प्राप्ति सहज ही सुलभ हो जाती है।

यहाँ ध्यान देने योग्य विशेष बात यह है कि भारतीय संस्कृति में स्वावलम्बन अर्थात् आत्मनिर्भरता की भावना का व्यक्ति में विकास करने के उद्देश्य से ही स्व–हस्तावलोकन का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है।

1.5 भूमि प्रार्थना (भूमि प्रार्थना, प्रमाण, दर्शन, मुख प्रक्षालन) :

शय्या से उठकर हस्त अवलोकन के पश्चात् पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व भूमि की वन्दना तथा क्षमा याचना करने का विधान बताया गया है। इस हेतु यदि सम्भव हो तो भूमि का हाथ से स्पर्श कर प्रमाण करने के उपरान्त ही नाम का जो स्वर प्रभावी हो प्रथमतः वही पैर पहले रखते हुए निम्न श्लोक के माध्यम से अभिवादन तथा क्षमायाचना करनी चाहिए–

समुद्रवसने देवि! पर्वतस्तनमण्डले!।

विष्णुपत्नि! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।।

अथवा

समुद्रमेखले देवि! पर्वतस्तनमण्डले।

विष्णुप्रिये नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।।

अर्थात् हे समुद्ररूपी मेखले! (करधनी) को धारण करने वाली और पर्वतरूप स्तनों से युक्त हे विष्णु की पत्नी पृथिवी देवी! तुमको नमस्कार है और तुम मेरे पादस्पर्श को क्षमा करो।

इसके पश्चात् दायाँ चरण मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथि देवो भव। आदि निर्देशों अनुसार श्री मंगल, सार्वत्रिक, विजय, आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि के लिए सभी को प्रणाम करते हुए उनका आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए। इस क्रिया से आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि होती है।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्।।

अर्थात् अभिवादनशील (प्रणाम करना स्वाभाविक) मनुष्य और नित्य रूप से वृद्धों अर्थात् माता–पिता एवं गुरू आदि की सेवा करने वाले मनुष्यों को आयु, विद्या, बल और यश में वृद्धि प्राप्त होती है। इतना ही नहीं बल्कि श्रीद्भागवत महापुराण में चराचर प्राणियों वनस्पतियों आदि को प्रमाण करने का परामर्श दिया गया है, जैसे –

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च।

ज्योतिषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन्।

सरित् समुद्रांश्च हरेः शरीर यत्किंच भूतं प्रणमेदन्यः।।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने प्रभु श्रीराम के माध्यम से रामचरित मानस में प्रभात वेला में गुरूजनों को प्रणाम करने के लिए प्रेरणा दी है :–

प्रातकाल उठि कै रघुनाथ। मातु पिता गुरू नावहिं माथा। – रामचरितमानस

1.5.1 इसके पश्चात् अमंगल के परिहारार्थ मांगलिक वस्तुओं का दर्शन करना चाहिए। यथा –

श्रोतियं सुभगां गाश्च अग्निमग्चितं तथा।

प्रातरूत्थाय यः पश्येदापद्भ्यः स विमुच्यते।।

अर्थात् प्रभात वेला में जो व्यक्ति वेदज्ञ, विद्वान्, सौभाग्यवती स्त्री, गौ, अग्नि तथा याज्ञिक का दर्शन करता हे, वह भी विपत्तियों से मुक्त रहता है।

1.5.2 शीतल जल से मुखांगों का प्रक्षालन –

पुराणों में निद्रानिवृत्ति के पश्चात् शीतल जल से मुख प्रक्षालन करने का विधान बताया गया है। जिसमें नेत्रादि प्रक्षालन भी सम्मिलित है। जैसे – ब्रह्मवैवर्तपुराण का कथन है –

आपूर्यशीतलजलेन मुखं प्रसिश्चेत् पानीयबिन्दुविसरैः नयने सदैव।

त्रिसप्तधारमखिलक्षिरूजापहारी कर्मेतदुक्तमधियोगि गुरूप्रसिद्धम्।।

चक्षुर्जलंच व्यायामः पादाधस्तैलमर्दनम्।

कर्णयोर्मूर्ध्नि तैलं च जराव्याधिविनाशनम्।।

1.5.3 मानसिक शुद्धि हेतु मन्त्र :–

ओम अपवितत्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।। ओम पुण्डरीकाक्षः पुनातु ऐसा तीन बार उच्चारण करें।

1.5.4 प्रातः स्मरण हेतु मंगलश्लोक :–

गणेश स्मरण :–

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथबन्धुं,

सिन्दूरपूरपरिशोभितगण्डयुग्मम्।

उद्दण्डविघ्नपरिखण्डनचण्डदण्ड–

माखण्डलादिसुरनायकवृन्दवन्द्यम्।।

समूह के मुखिया अनाथो के बन्धु, सिन्दुर से शोभायमान दोनों गण्डस्थल वाले, प्रबल विघ्न का नाश करने में समर्थ एवं इन्द्रादि देवों से नमस्कृत श्रीगणेश को मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

विष्णुस्मरण :–

प्रातः स्मरामि भवभीतिमहार्तिनाशं,

नारायणं गरूड़वाहनमब्जनाभम्।

ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं,

चक्रायुधं तरूणवारिजपत्रनेत्रम्।।

संसार से भयरूपी महान् दुःख को नष्ट करने वाले, ग्राह से गजराज को मुक्त कराने वाले, चक्रधारी एवं नवीन कमलदल के समान नेत्रवाले पद्मनाभ गरूड़वाहन भगवान् श्रीनारायण का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

शिवस्मरण :–

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं,

गंगाधरंवृषभवाहनमम्बिकेशम्।

खट्वांगशूलवरदाभयहस्तमीशं,

संसाररोगहरमौषधमद्वितीयम् ।।

संसार के भय को नष्ट करने वाले, देवेश, गंगाधर, वृषभवाहन, उमापति, हाथ में खट्वांग एवं त्रिशूल लिये और संसाररूपी रोग का नाश करने के लिए अद्वितीय औषध–स्वरूप, अभय एंव वरद मुद्रायुक्त हस्तवाले भगवान् शिव को मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

देवीस्मरण :–

प्रातः स्मरामि शरदिन्दुकरोज्जवलाभां,

सद्रत्नवन्मकरकुण्डलहाभूषाम् ।

दिव्यायुधोर्जितसुनीलसहस्त्रहस्तां,

रक्तोत्पलाभचरणां भवतीं परेशाम् ।।

शरत्कालीन चन्द्रमा के समान उज्जवल आभायुक्त, उत्तम रत्नों से जटिल मकरकुण्ड तथा हारों से सुशोभित, दिव्यायुधों से दीप्त सुन्दर नीले हजारों हाथों वाली, लाल कमल की आभायुक्त चरणों वाली भगवती दुर्गा देवी का मैं प्रातः काल स्मरण करता हूँ।

सूर्यस्मरण :–

प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं,

रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि ।

सामानि सस्य किरणाः प्रभवादिहेतुं,

ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम् ।।

सूर्य का वह प्रशस्त रूप, जिसका मण्ड ऋग्वेद, कलेवर यजुर्वेद तथा किरणों में सामवेद है। जो सृष्टि आदि के कारण हैं, ब्रह्मा और शिव के स्वरूप हैं तथा जिनका रूप अचिन्त्य और अलक्ष्य हैं, प्रातः काल मैं उनका स्मरण करता हूँ।

त्रिदेवों के साथ नवग्रह का स्मरण :–

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी, भानुः शशी भूमिसुतोबुधश्च ।

गुरूश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः, कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।

ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु व केतु – ये सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे।

ऋषिस्मरण :–

भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरंगिराश्च, मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः।

रैभ्यों मरीचिश्च्यवनश्च दक्षः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

भृगु, वसिष्ठ, क्रतु, अंगिरा, मनु, पुलस्त्य, पुलह, गौतम, रैभ्य, मरीचि, च्यवन और दक्ष – ये समस्त मुनिगण मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे।

सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिंगलौच।

सप्त स्वराः सप्त रसातलानि कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

सप्तावर्णाः सप्त कुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीपवनानि सप्त।

भूरादिकृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

ये ऋषिगण – सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, सनातन, आसुरि और पिंगल

ये सप्तस्वर – षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पशपंचम, धैवत तथा निषाद

ये सात अधोलोक – अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल तथा पाताल

उपर्युक्त सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे। सातों समुद्र, सातों कुलपर्वत, सप्तर्षिगण, सातों वन तथा सातों द्वीप, भूर्लोक, भुवर्लोक आदि सातों सभी मेरे प्रातः काल को मंगलमय करे।

प्रकृतिस्मरण :–

पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः, स्पर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः।

नभः सशब्दं महता सहैव, कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।।

गन्धयुक्त पृथ्वी, रसयुक्त जल, स्पर्शयुक्त वायु, प्रज्वलित तेज, शब्दसहित आकाश एवं महत्तत्व – ये सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करे।

इत्थं प्रभाते परम पवितं पठेत् स्मरेद्वा श्रृणुयाच्च भक्त्या।

दुःस्वप्ननाशस्विह सुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात्।।

इस प्रकार उपर्युक्त इन प्रातः स्मरणीय परमपवित्र श्लोकों का जो भी व्यक्ति भक्तिपूर्वक प्रातः काल पाठ करता है, स्मरण करता है अथवा श्रवण करता है, भगवद्दया से उसके दु:स्वप्नों का नाश हो जाता है और उसका प्रभाग मंगलमय हो जाता है।

1.6 शौचकर्म :

प्रत्येक द्विज एवं अन्य सभी धार्मिकों को शोचाचार का सदैव नियमपूर्वक पालन करना चाहिए क्योंकि इसके बिना अन्य सभी क्रियाएँ निष्फल हो जाती है। यथा

शौचे यत्नः सदा कार्यः शौचमूलो द्विजः स्मृत।

शौचाचारविहीनस्य समस्ता निष्फलाः क्रियाः।। – दक्षस्मृति

1.6.1 जलपात्र को उचित स्थान पर रखे, सिर व शरीर को ढककर रखे, जनेऊ को दायें कान पर लगा लेना चाहिए अथवा जनेऊ को दायें हाथ से निकालकर (कण्ठीकृत करके) पहले दायें कान को लपेटे, फिर उसे सिर के ऊपर लाकर बायें कान को भी लपेट लेवे। यथा –

मूत्रे तु दक्षिणेकर्णे पुरीषे वामकर्णके।

उपवीतं सदाधार्य मैथुने तु उपवीतिवत्।। – सायण

शिरोवेष्टनस्य तु सदा तेनैव सिद्धेः। – आचारभूषण

वर्तमानकाल में अधिकांश जनसंख्या व्यक्ति कोष्ठबद्धता से पीड़ित है। यदि प्रातः मलत्याग से पूर्व रात्रि में ताम्रपात्र में रखा हुआ जल भरपेट पी लिया जाये तो इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है। यथा –

निशायां तु पिबेद् निशान्ते शीतलं जलम्.....।।

अर्थात् रात्रि में कवोष्ण (गुनगुना) दूध, प्रातः ताम्रपात्र में रखा शीतलजल तथा भोजन के बाद छाछका सेवन करने पर किसी अन्य औषधि के सेवन की आवश्यकता नहीं रह जाती।

1.6.2 ऊर्ध्वगामी वायु को अधेगामी बनाने, मलाशय पर दबाव बनाने के लिए सिर और कानों पर वस्त्र लपेट, शिखा खोलकर सुखपूर्वक पूर्व उत्तराभिमुख बैठकर सम्भव हो तो खेत, खुला मैदान, शौचालय अथवा सुविधाजनक स्थान पर मल–त्याग करना चाहिए। कहीं यह भी उल्लेख मिलता हैकि जगदात्मा सूर्य को दायीं और रख प्रातः उत्तर तथा सायंकाल दक्षिण की ओर मखकर मल–त्याग करना चाहिए। यथा –

शौचे च सुखमासीनः प्राङ् मुखो वाप्युदङ् मुखः।

शिरः प्रावृत्य कर्णौ च मुक्तकच्छशिखोऽपि वा।। – दक्षस्मृति

दिवा सन्ध्यासु कर्णस्थब्रह्मसूत्र उदङ् मुखः।

कुर्यान्मूत्रपुरीषे तु रात्रौ च दक्षिणामुखः।। – याज्ञवल्क्यस्मृति

जलाशय से दस (10) हाथ परिमाण स्थान छोडकर तथा तीर्थ से चतुर्दश (40) हस्तपरिमाण स्थान छोड़कर मूत्रविसर्जन करना चाहिए।

जलाशय से शत (100) हाथ परिमाण स्थान छोड़कर तथा तीर्थ से चतु:शत (400) हस्तपरिमाण स्थान छोड़कर मल–त्याग करना चाहिए। यथा –

दश हस्तान् परित्यज्य मूत्रं कुर्याज्जलाशये।

शतहस्तान् पुरीषार्थे तीर्थे नद्यां चतुर्गुणम्।।

यदि आप खुले स्थान पर शौच कर रहे है तो तीन बार ताल (ताली) बजाकर शौचक्रिया के लिए मौन होकर बैठे।

1.6.3 शौचमन्त्र :– शौच के समय का मन्त्र स्मरण –

गच्छन्तु ऋषयो देवाः पिशाचा ये च गुह्यकाः।

पितृभूतगणाः सर्वे करिष्ये मलमोचनम्।। – नारदपुराण

1.6.4 शौचक्रिया सम्पन्न हो जाने पर दो बार शिश्र, पाँच बाद गुदा, दस बार बायें हाथ, सात बार दोनों हाथ शुद्ध मिट्टी (वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जल से) से रगड़कर धोने चाहिए। यह विधि गृहस्थ के लिए तो यथावत् है, ब्रह्मचारी के लिए द्विगुणित, वानप्रस्थ के लिए त्रिगुणित तथा यतियों (सन्यासी) के लिए चतुर्गुणित करणीय है। यथा –

द्वे लिंगे मृत्तिके देये गुदे पंच करे दश।

उभयोः सप्त दातव्याः विट्शौचे मृत्तिकाः स्मृता।।

मूत्रोत्सर्गमात्रे तु एकालिंगे करे तिस्त्र उभयोमृर्त्तिकाद्वयम्।

एकैकया मृदा पादौ प्रक्षाल्य तु शुचिर्भवेत्।।

मूत्राशौचं समाख्यातं शुक्रे तद् द्विगुणं भवेत्। – वसिष्ठ

1.6.5 मूत्रविसर्जन के पश्चात् चार (4) बार, मलत्याग के पश्चात् आठ (8) बार गण्डूष (कुल्ला अथवा मुखप्रक्षालन) अपने बायें हाथ की तरफ करना चाहिए। यथा –

मूत्रोत्सर्गे तु चतुरः पुरीषे त्वष्टसंख्कान् ....।। – आपस्तम्ब

1.7 दन्तधावन (क्षौरकर्म, तैलाभ्यंग, व्यायाम) :

शौचकर्म के पश्चात् करंज, गूलर, आम, कदम्ब, लोध, चम्पक, बेर, नीम, बबूल, खदिर इनमें से जो भी सुलभ हो, उसकी अंगुली–प्रमाण से बारह (12) अंगुल की कनिष्ठिका अंगुली जितनी मोटी दातून लेवे, उसे खूब चबा लेवे, नर्म कूची बनाकर भली–भाँति दाँतों को धीर–धीर रगड़कर मसूड़ों को बचाकर साफ करना चाहिए।

निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः काषाये खदिरस्तथा।

मधुको मधुरे श्रेष्ठः करंजः कटुके तथा।।

1.7.1 दातुन हेतु काष्ठ को वृक्ष से तोड़ने के समय प्रार्थना करे :–

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजा पशुवसूनि च।

ब्रह्म प्रजां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते।। – कात्यायन

1.7.2 वर्णो के अनुसार दन्तकाष्ठ का प्रमाण :–

ब्राह्मण के लिए द्वादशांगुल (12), क्षत्रिय के लिए नवांगुल (09), वैश्य षष्ठ्यंगुल (06) तथा शूद्र व स्त्रियों के लिए चतुरांगुल (04) लम्बी तथा कनिष्ठिका अंगुली के समान मोटी दन्तकाष्ठ प्रशस्त कही गयी है। यथा –

द्वादशांगुलकं विप्रे काष्ठमाहुर्मनीषिणः।

क्षत्रविट्शूद्रजातीनां नवषट्चतुरंगुलम्।। – आचार्य भूषण

1.7.3 दन्तधावन हेतु निषेध काल

संक्रान्ति, व्यतिपात, व्रत, श्राद्धदिवस, प्रतिपदा, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा तथा रविवार को काष्ठ से दन्तधावन नहीं करना चाहिए। केवलमात्र मुखप्रक्षालन करना चाहिए। यथा –

प्रतिपद्दर्शषष्ठीसु नवम्यां रविवासरे।

व्यतीपाते च संक्रान्त्यां दन्तकाष्ठं न भक्षयेत्।। – व्यास

उपवासे तथा श्राद्धे न कुर्यात् दन्तधावनम्।। – विष्णु

1.7.4 दन्तधावन हेतु प्रशस्त काष्ठ :– चिड़चिड़ा, गूलर, आम, नीम, बिल्व, कुरैया, करंज, खैर, अपामार्ग, अर्क, उदुम्बर, बेर आदि की दातुन श्रेष्ठ मानी जाती है। यथा –

खदिरश्च करंजश्च कदम्बश्च वटस्तथा।

तिन्तिड़ी वेणपृष्ठं च आम्रनिम्बौ तथेव च।।

अपामार्गश्च बिल्वश्च अर्कचौदुम्बरस्तथा।

बरीतिन्दुकास्त्वेते प्रशस्ता दन्तधावने।। – आचार्य इन्दु

1.7.5 दन्तधावन हेतु निषिद्ध काष्ठ :–

कुशा, दूर्वा, पलाश, निशुप आदि काष्ठों का दन्तधावन में प्रयोग नहीं करना चाहिए। यथा –

कुशं काशं पलाशश्च निशुपं यस्तु भक्षयेत्।

तावद्भवति चाण्डालो यावद्ंगा न गच्छति।।

दातून करने के बाद अन्यून तीस (30) कुल्ले करके मुखशोधन करना चाहिए, तदनन्तुर मुख में जलभरके नेत्रों को जल से भली भांति धोना चाहिए, जिससे उनकी ऊष्णता शमित होकर नेत्रज्योति बढ़ती है। यदि सम्भव हो तो त्रिफला जल से नेत्रशोधन करना चाहिए। यथा –

भिल्लोदककषायेण तथैवामलकस्य वा।

प्रक्षालयेन्मुखं नेत्रे स्वस्थं शीतोदकेन वा।।

1.7.6 दन्तधावन के पश्चात् दन्तकाष्ठ का विसर्जन :–

दन्तधावन के पश्चात् दन्तकाष्ठ को दो भागों में विभाजित करके भलीप्रकार से धीरे–धीरे जिव्हा को साफ करना चाहिए। यथा – ''राक्षस्यामुत्सृजेत् काष्ठम्।'' (आश्वलायन) उच्चारण करके नैर्ऋत्यकोण में त्याग देना चाहिए।

दन्तधावन के पश्चात् कम से कम बाहर (12) बार गण्डूष (कुल्ला) अथवा मुखशोधन करना चाहिए। मुखशोधन ऋतु के अनुसार शीतल अथवा ऊष्ण जल से करना चाहिए।

दन्तधावन हेतु निषेधकाल में मध्यमा, अनामिका अथवा अगुंष्ठा से दाँतों को भलीभाँति साफ करे, किन्तु तर्जनी अंगुली से दन्तधावन नहीं करना चाहिए। यथा –

मध्यमा अनामिकाभ्यां च वृद्धांगुष्ठेन च द्विजः।

दन्तस्य धावनं कुर्यान्न तर्जन्या कदाचन।।

1.7.7 क्षौरकर्म :–

एकादशी, अमावस्या, चतुर्दशी, पूर्णिमा, संक्रान्ति, व्यतिपाल, व्रत–उपवास, श्राद्ध, रविवार, मंगलवार तथा शनिवार के दिन क्षौरकर्म का निषेध किया गया है। यथा –

भानुर्मासं क्षपयति तथा सप्त मार्तण्डसूनुः।

भौमश्चाष्टौ वितरति शुभान् बोधनः पंच मासान्।।

सप्तेवेन्दुर्दश सुरगुरूः शुक्र एकादशेति।

प्राहुर्गर्गप्रभृतिमुनयः क्षौरकार्येषु नूनम्।। – वाराहीं संहिता

1.7.8 निषिद्ध वारों में क्षौरकर्म करने का फल :– शास्त्रों में विचारित है कि –

रविवार को क्षौरकर्म करने से एक मास, मंगलवार को क्षौरकर्म करने से आठ मास, शनिवार को क्षौरकर्म करने से सात मास की आयु का क्षय होता है।

1.7.9 प्रशस्त वारों में क्षौरकर्म करने का फल :–

बुधवार को क्षौरकर्म करने से पाँच मास, सोमवार को क्षौरकर्म करने से सात मास, गुरूवार को क्षौरकर्म करने से दस मास तथा शुक्रवार को क्षौरकर्म करने से एकादशमास की आयुवृद्धि होती है।

नोट :– सामान्यतः गुरूवार को क्षौरकर्म नहीं करवाना चाहिए तथा जिन व्यक्तियों की नित्यक्रिया में क्षौरकर्म भी सम्मिलित है, उन्हें उपरोक्त किसी भी प्रकार का अशुभ अथवा शुभफल का विचार नहीं करना चाहिए।

1.7.10 तैलाभ्यंग :–

आयुर्वेद में अभ्यंग के लिए घृत (घी) से तेल की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए कहा गया है – ''घृतादष्टगुणा तैले मर्दने न तु भक्षणे'' अर्थात् मालिश हेतु प्रयुक्त तेल घी की अपेक्षा आठ (08) गुणा अधिक होता है, परन्तु भोजन में नहीं। आयुर्वेदाचार्य वाग्भट के अनुसार प्रतिदिन तेल की मालिश करने से थकावट, आलस्य, बुढ़ापा आदि के लक्षण शीघ्र प्रकट नहीं होते है। रोगों का उपशमन तथा नेत्रज्योति की वृद्धि होती है। शरीर पुष्ट, आयु में वृद्धि एवं सुखद निद्रा का लाभ होता है। मालिश से त्वचा चिकनी, सुन्दर और मजबूत हो जाती है। सिर, कान और पाँवों में विशेषरूप से मालिश करना प्रशस्त माना गया है। यथा –

अभ्यंगमाचरेन्नित्यं स जराश्रमवातहा।

दष्टिप्रसादपुष्ट्यायुः स्वपनसुत्वक्तदार्ढ्यकृत्।।

शिरः श्रवणपादेषु तं विशेषेण शीतलेयत्।।

शरीर को पूर्णतः निरोग रखने के लिए वायु की सर्वाधिक महत्ता है। शरीर त्वचा के छिद्रों द्वारा वायु ग्रहण करता है। त्वाचा में यह शक्ति मालिश के द्वारा आती है। अतः स्वस्थ रहने की कामना करने वालों का नियमित मालिश करनी चाहिए। महर्षि चरक का कथन है। यथा –

स्पर्शनेऽभ्यधिको वायुः स्पर्शनंच त्वगाश्रितम्।

त्वच्यश्च परमोऽभ्यंगस्तस्मात्तं शीलयेन्नरः।।

1.7.11 तैलाभ्यंग हेतु निषिद्धकाल :–

षष्ठी, एकादशी, द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, व्रत–उपवास, श्राद्ध–दिवस, रविवार, मंगलवार तथा शुक्रवार को तैल की मालिश नहीं करनी चाहिए।

1.7.12 निषिद्धकाल में तैलमालिश का फलः–

रविवार के दिन तेल की मालिश करने से ताप, सोमवार को तेल की मालिश करने से शोभा, मंगलवार को तैल की मालिश करने से मृत्यु अथवा आयुक्षय, बुधवार का धनप्राप्ति, गुरूवार को तैल की मालिश करने से हानि, शुक्रवार को तैल की मालिश करने से दुःख तथा शनिवार को तैल की मालिश करने से सुख की प्राप्ति होती है। गन्धयुक्त पुष्पों से सुवासित तथा अन्य पदार्थों से युक्त सरसों का तेल मालिश में प्रयोग करने पर दोष नहीं लगता है।

तैलाभ्यंगेरवौ तापः सोमे शोभा कुजे मृतिः।

बुधे धनं गुरौ हानिः शुक्रे दुःखं शनै सुखम्।।

रवौ पुष्पं गुरौ दूर्वा भौमवारे तु मृत्तिका।

गोमयं शुक्रवारे च तैलाभ्यंगे तु दोषभाक्।।

सार्षपं गन्धतैलं च यत्तैलं पुष्पवासितम्।

अन्यद्रव्यं युतं तैलं न दुष्यति कदाचन।। **– निर्णयसिन्धु**

वार	फल	अशुभ फल के शमन हेतु द्रव्य
रविवार	ताप	पुष्प
सोमवार	शोभा	–
मंगलवार	आयुक्षीण अथवा मृत्यु	मिट्टी

बुधवार	**धनप्राप्ति**	–
गुरूवार	**हानि**	**दूर्वा**
शुक्रवार	**दु:ख**	**गोबर (गोमय)**
शनिवार	**सुख**	–

कानों के नीचे अँगूठे से धीरे–धीरे मालिश करने से कानों में वातज रोग, बधिरता आदि रोग, फोड़े–फुन्सी आदि, हनुस्तम्भ–ठुड्डी की जकड़न आदि रोगों के होने का भय नहीं होता है। सिर की मालिश से शीर्षाघात, कम्पवात, सन्त्रास आदि होने का भय शिथिल हो जाता है तथा पाँवों के तलवों की मालिश से नेत्रदृष्टि बढ़ती है, स्नायुतन्त्र होता है एवं शरीर बलवान् होता है। यथा –

न कर्णरोगा वातोत्था न मन्याहनुसंग्रहः।

नोच्चैः श्रुतिर्न बाधिर्यं स्यान्नित्यं कर्णतर्पणात्।।

***नोट* :– सामान्यतः जिन व्यक्तियों की नित्यक्रिया में तैलाभ्यंग भी सम्मिलित है, उन्हें उपरोक्त किसी भी प्रकार का अशुभ अथवा शुभफल का विचार नहीं करना चाहिए। मुख्यरूप से दोष का फल केवलमात्र तिल के तेल हेतु ही माना गया है।**

1.7.13 व्यायाम :–

नित्यक्रिया में व्यायाम को भी अनिवार्य करणीय कर्म प्रतिपादित किया गया है। शरीर का स्वस्थ्य एवं स्फूर्तिदायक रखने में इसका अत्युत्तम योगदान है। व्यायाम से पुष्ट शरीर पर रोग सहसा आक्रमण नहीं कर पाते है। विरूद्ध आहार भी इससे पच जाता है। यह शैथिल्य (पतलापन), आलस्य, वृद्धावस्था आदि से भी बचाव करता है तथा मोटापे से भी बचाता है। नियमित व्यायाम करने से शरीर पुष्ट, अंग कान्तियुक्त एवं सुडौल हो जाते है, जठराग्नि तीव्र हो जाती है। शरीर भूख, प्यास, धूप, शीत, श्रम, क्लम आदि सहने का अभ्यस्त हो जाता है। सम्पूर्ण आरोग्य की प्राप्ति व्यायाम से ही सम्भव है। यथा–

शरीरोपचयः कान्तिर्गात्राणां सुविभक्तता।

दीप्ताग्नित्वमनालस्यं स्थिरत्वं लाघवं सृजा।।

श्रमक्लपपिपासाष्णशीतादीनां सहिष्णुता।

आरोग्यं चापि परमं व्यायामदुपजायते।।

आयुर्वेद भी इस विषय में कहता है – ''धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्'' अर्थात् धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष का मूलस्त्रोत्र स्वस्थ्य शरीर ही है।

''धीमता तदनुष्ठेयं स्वास्थ्यं येनानुवर्तने'' और इसकी प्राप्ति का साधन व्यायम ही है।

1.8 तीर्थप्रार्थना (सूर्य नमस्कार, स्नान) :

नवछिद्रों वालो अत्यन्त मलिन काया से मल निरन्तर उत्सर्जित होता रहता है। इस मल से शरीर को शुद्ध करने के लिए प्रातः काल स्नान अवश्य करना चाहिए। यथा –

अत्यन्तमलिनः कायः नवच्छिद्रसमन्वितः।

स्त्रवत्येष दिवारात्रौ प्रातः स्नानं विशोधनम्।। – दक्षस्मृति

1.8.1 प्रातः स्नान के लाभ :–

नित्य स्नान करने से रूप, तेज, बल, पवित्रता, आयु, आरोग्य, निर्लोभता, दु:स्वप्न का नाश, तप और मेधा की व2द्धि होती है। यथा –

गुणा दश स्नानपरस्य साधो! रूपं च तेजश्च बलं च शौचम्।

आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं दु:स्वप्रश्नशश्च तपश्च मेधाः।। – दक्षस्मृति

वेद–श्रुति–स्मृतियों में कहे गये समस्त धार्मिक कृत्य स्नानमूलक है, जिसके नित्य करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। शरीर की पुष्टता एवं आरोग्य की वृद्धि होती है। यथा –

स्नानमूला क्रियाः सर्वाः श्रुतिस्मृत्युदिता नृणाम्।

तस्मात् स्नानं निषेवेत् श्रीपुष्ट्यारोग्यवर्धनम्।।

1.8.2 सूर्य नमस्कार :–

ओम ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्तीनारायण सरसिजासनसन्निविष्ट।

केयूरवान् कमरकुण्डलवान् किरीटीहारि हिरण्यमय वपुद्धतशंखचक्रः।।

1. ओम मित्राय नमः 2. ओम रवये नमः 3. ओम सूयार्य नमः

4. ओम भानवे नमः 5. ओम खगाय नमः 6. ओम पूषणे नमः

7. ओम हिरण्यगर्भाय नमः ?

8. ओम मरीचये नमः 9. ओम आदित्याय नमः

10. ओम सवित्रे नमः 11. ओम अकार्य नमः 12. ओम भास्कराय नमः।

फलश्रुति –

आदित्यस्य नमस्कारान् ये कुर्वन्ति दिने दिने।

आयुः प्रज्ञां बलं वीर्यं तेजस्वेशांच जायते।।

1.8.3 स्नान :–

स्नान करने के पश्चात् ही मनुष्य शारीरिक रूप से शुद्ध होकर प्रातः काल जप–पूजा–पाठ इत्यादि धार्मिक नित्यकर्म करने हेतु अधिकृत होता है। प्रातः काल स्नान एक अत्यावश्यक कर्म (सामाजिक एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से) है। शास्त्रों में स्नान के सात भेद बताये है। यथा –

मान्त्रं भौमं तथाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव च।

वारूणं मानसं चैव सप्त स्नानान्यनुक्रमात्।। – आचारमयूख

इत्यादि मन्त्रों स्नान करना मन्त्रस्नान कहलाता है, सम्पूर्ण शरीर में मिट्‌टी का लेपन भौमस्नान, भस्म का लेपन अग्निस्नान गौ की खुर की धूलि लगाना वायव्य स्नान, सूर्यकिरण में वर्षा के जल से स्नान दिव्यस्नान, जल से स्नान करना वारूणस्नान तथा आत्मचिन्तर करना मानसिक स्नान की श्रेणी में आता है। यथा –

आपो हिष्ठादिभिर्मान्त्रं मृदालम्भस्तु पार्थिवम्।

आग्नेयं भस्मना स्नान वायव्यं गोरजः स्मृतम्।।

यत्तु सातपवर्षेण स्नानं तद् दिव्यमुच्यते।

अवगाहो वारूणं स्यात् मानसं ह्यात्मचिन्तनम्।। – आचारमयूख

स्नान	–	विधि
1. मन्त्रस्नान	–	इत्याद मन्त्रों से मार्जन करना चाहिए।
2. भौमस्नान	–	समस्त शरीर में मिट्टी लगाना
3. अग्निस्नान	–	समस्त शरीर में भस्म लगाना
4. वायुस्नान	–	गौ (गाय) के खुर की धूल (मिट्टी) लगाना
5. दिव्यस्नान	–	सूर्यकिरण में वर्षा के जल से स्नान
6. वारूण (जल) स्नान	–	जल में डुबकी लगाना अथवा जल से स्नान करना
7. मानसिक स्नान	–	स्नान का चिन्तन करना अथवा विचारों का शुद्धिकरण

1.8.4 अशक्तजनों के लिए स्नानविधि :–

शारीरिक रूप से स्नान में असमर्थ (बाल, वृद्ध, रोगी) होने पर सिर के नीचे से ही स्नान करना चाहिए अथवा गीले वस्त्र से अथवा आर्द्र वस्त्र से शरीर को साफ करना (पोंछ लेना) भी विशेष परिस्थितियों में स्नान की ही श्रेणी में आता है, इसे कटिस्नान भी कहा जाता है। यथा –

अशिरस्कं भवेत् स्नानं स्नानाशक्तौ तु कर्णिकाम्।

आर्द्रेण वाससा वापि मार्जन दैहिकं विदुः।।

मणिबन्ध तक हाथ तथा घुटनों तक पैर धोकर एवं पवित्र होकर दोनों घुटनों के भीतर हाथ करके आचमन करने से स्नान के समान फल मिलता है तथा शुद्धि होती है। यथा –

आ–मणेर्बन्धानाद्धस्तो पादौ चाजनुतः शुची।

प्रक्षाल्य चाचामेद्विद्वानन्तर्जानुकरो द्विजः।।

1.8.5 संकल्प :–

“हरि ओम विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ओम तत्सदद्यैतस्य श्रीमदभागवतो महापुरूषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्यश्रीब्राह्मणो अहनि द्वितीय परार्द्धे श्रीश्वेतवराहकल्पे, सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे

अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिः प्रथमचरणे जम्बुद्वीपे भरतखण्डे त्त्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते पुण्यक्षेत्रे (अपने देश का नाम) अमुक देशे (अपने राज्य का ना) अमुक नगरे (अपने नगर का नाम) श्रीगंगायमुनयोः पश्चिमे भाग नर्मदायाः उत्तरे भागे, चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपतिवीरविक्रमार्कसमयादमुसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे अमुकायने (उत्तरायण अथवा दक्षिणायन) अमुक ऋतौ (ऋतु का नाम) अमुकमासे (मास का नाम) अमुकपक्षे (पक्ष का नाम) अमुकतिथौ (तिथि का नाम) अमुकवासरे (वार का नाम) अमुकगोत्रः (गोत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वर्मा, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) प्रातः (मध्यान्हे/सायं) सर्वकर्मसु शुद्धयर्थं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीभगवत्प्रीतयर्थं च अमुकस्नानं (स्नान का नाम) करिष्ये।''

1.8.6 जल की उत्तरात्तर श्रेष्ठता का विचार :– कुएँ से झरने का जल, झरने से सरोवर का लज, सरोवर के जल से नदी का जल, नदी के जल से तीर्थ का जल तथा तीर्थ के जल से गंगाजल श्रेष्ठ है। यथा –

निपानादुद्धतं पुण्यं ततः प्रस्त्रवणोदकम्।

ततोऽपि सारसं पुण्यं ततो नादेयमुच्यते।।

तीर्थतोयं ततः गंगातोयं ततोऽधिकम्।। – अग्निपुराण

1.8.7 स्नान हेतु अपवित्र जल का विचार :–

जिस शिला पर धोबी कपड़े धोता है और कपड़े धोते समय जहाँ तक जल के छींटे पड़ते हो, वहाँ तक का जल अपवित्र माना जाता है। यथा –

वासांसि धावतो यत्र पतन्ति जलबिन्दवः।

तदपुण्यं जलस्थानं रजकस्य शिलांकितम्।।

1.8.8 स्नान के पूर्व मृत्तिका का लेपन–मन्त्र :–

अश्वक्रान्ते! रथक्रान्ते! विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे!

मृत्तिके! हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्।।

1.8.9 प्रार्थना (तीर्थ आवाहन) :–

पुष्कराानि तीर्थनि गंगाद्याः सरितस्तथा।

आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम।।

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।

नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरू।।

त्वं राजा सर्वतीर्थानां त्वमेव जगतः पिता।

याचितं देहि मे तीर्थं तीर्थराज नमोऽस्तुते।।

1.8.10 गंगा प्रार्थना :–

विष्णुपादाब्जसम्भूते! गंगे! त्रिपथगामिनी!

धर्म्मद्रवेति विख्याते! पापं! मे हर जान्हवी।।

गंग गंगेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।

मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति।।

उपरोक्त मन्त्रों को पढ़ते हुए गंगा सहित सभी तीर्थोंका आवाहन/प्रार्थना करते हुए स्नान आरम्भ करे। स्नान करते समय गज के समान आनन्द–मुद्रा में जलक्रीड़ा में करते हुए स्नान का आनन्द लेना चाहिए।

''गजवतत् स्नानमाचरेत्'' अनुसार जिस प्रकार हाथी मदमस्त होकर जल में स्नान करता है, उसी प्रकार व्यक्ति को स्नान का आनन्द लेते हुए शरीर की शुद्धि करनी चाहिए।

1.8.11 तीर्थ स्नान के नियम :–

नाभि पर्यन्त अथवा यथोचित जल में जाकर जल की ऊपरि सतह को हटाकर नाक बन्द करके जलप्रवाह की ओर अथवा सूर्य की ओर मुख करके तीन–पाँच अथवा सात डुबकियाँ लगाकर स्नान करना चाहिए। डुबकि लगाने से पूर्व शिखा को खोल लेना चाहिए। गंगा के जल मे मल–मूत्र का त्याग अथवा थूकना इत्यादि अनुचित क्रियाएँ नहीं करनी चाहिए तथा शौचकाल का वस्त्र धारण करके भी तीर्थस्नान नहीं करना चाहिए। यथा –

नाभिमात्रजले तिष्ठन् सप्त द्वादश पंच वा।

त्रिवारं वापि चाप्लुत्य स्नानमेवं विधीयते।। – आचाररत्न

साधारणतया स्नान के समय गंगा के अतिरिक्त अन्य तीर्थ, कुएँ, बावड़ी, नदी, घर के स्नान–पात्र आदि के जल में भी गंगाजी का आवान आवश्यक है। यथा –

स्नानकालेऽन्यतीर्थेषु जप्यते जान्हावी जनै।

बिना विष्णुपदीं कान्यत् समर्थ ह्यघशोधने।। – सकन्दपुराण

1.8.12 स्नानांग तर्पण :–

जलाशय तीर्थों में स्नान के पश्चात् स्नानांग तर्पण अवश्य करना चाहिए। सन्ध्यावन्दन से पूर्व इसका करना आवश्यक माना गया है। इसी कारण शास्त्रों ने अशौच में भी स्नानांग तर्पण का निर्देश दिया है। जीवित–पितृकों के लिए यह स्नानांग तर्पण कहा गया है। यथा –

स्नानान्तरं तावत् तर्ययेत् पितृदेवताः।

स्नानांगतर्पणं विद्वान् कदाचिन्नैव हायेत्।।

आशौचेऽपि तद्भवति ....।

अत्र देवपितृणामेवेज्यत्वात् सांगस्य –

चानुष्ठेयत्वाज्जीवितपितृकस्याप्यधिकारः।। – आचाररत्न

स्नानांग तर्पण में बायें हाथ में जल लेकर दाहिने अंगुष्ठ से ''ऊर्ध्वपुण्ड्र'' (तिलक) तथा मध्य की तीन अंगुलियों से जल द्वारा ही त्रिपुण्ड करना चाहिए तथा दोनों हाथों को सटाकर अर्थात् मिलाकर अंजलि बना लेवे और जल भरकर गाय के सींगों के जितनी ऊँचाई पर ले जाकर जल में ही अंजलि के जल को त्याग देना चाहिए। यथा –

द्वौ हस्तौ युग्मतः कृत्वा पूरयेदुदकांजलिम्।

गौश्रृंगामात्रमुद्धत्य जलमध्ये जलं क्षिपेत्।

1.8.13 देवतर्पण :–

सव्य होकर पूर्वाभिमुख होकर मुख पर वस्त्र (तौलिया) का बायें कन्धे पर रखकर देवतीर्थ से मन्त्र पढ़कर एक–एक जलांजलि निम्न प्रकार देना चाहिए :–

1. ओम ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम्
2. ओम भूर्देवास्तृप्यन्ताम्
3. ओम भुवर्देवास्तृप्यन्ताम्
4. ओम स्वर्देवास्तृप्यन्ताम्
5. ओम भूर्भुवः स्वर्देवास्तृप्यन्ताम्।

1.8.14 ऋषितर्पण :–

उत्तराभिमुख होकर जनेऊ को गले में पहनकर उपवस्त्र को दोनों कन्धों पर डालकर प्रजापतीतीर्थ से प्रत्येक निम्न मन्त्र पढ़ते हुए दो–दो जल की अंजलि देनी चाहिए :–

1. ओम सनकादयो मनुष्यास्तृप्यान्ताम्,
2. ओम भूर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्,
3. ओम भुवर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्,
4. स्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम्,

5. ओम भूर्भूवः स्वर्ऋषयस्तृप्यन्ताम

1.8.15 पितृ तर्पण :–

दक्षिणाभिमुख होकर यज्ञोपवीत को दाहिने कन्धे और बायें हाथ के नीचे करके उपवस्त्र को दाहिने कन्धे पर रखे तथा पितृतीर्थ से तीन–तीन जलांजलि देवे :–

1. ओम कव्यवाडनलादयः पितरस्तृप्यन्ताम्,
2. ओम चतुर्दशयामास्तृप्यन्ताम्,
3. ओम भूः पितरस्पृप्यन्ताम्,
4. ओम भुवः पितरस्तृप्यन्ताम्,
5. ओम स्वः पितरस्तृप्यन्ताम्
6. ओम भूर्भुवः स्वः पितरस्तृप्यन्ताम्

1.8.16 जिनके जीवित पितृक हो, वे जीवित पितृकों को जलांजलि न देवे :–

7. ओम अमुकगोत्रा अस्मत्पितृपितामहास्तृप्यन्ताम्।

8. ओम अमुकगोत्रा अस्मन्मातृपितामहीप्रतितामह्यस्तृप्यन्ताम्।

9. ओम अमुकगोत्रा अस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकास्तृप्यन्ताम्।

10. ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं जगत्तृप्यताम्।

उपर्युक्त तर्पण करने के पश्चात् जल के तट (तीर) पर जाकर जल में ही एक जलांजलि अधोलिखित मन्त्र से देनी चाहिए :–

अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाः कुले मम।

भूमौ दत्तेन तोयेन तृप्ता यान्तु परां गतिम्।।

जल से बाहर निकलकर दाहिनी ओर शिखा (चोटी) के जल को अंगुष्ठ व तर्जनी के मध्यभाग से निचोड़ना चाहिए। यथा –

लता गुल्मेषु वृक्षेषु पितरो ये व्यस्थिताः।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मायोत्सृष्टैः शिखादकैः।

यज्ञोपवीत को बाये कन्धे पर और दाहिने हाथ के नीचे करके आचमन करे और जल के बाहर एक जलांजलि यक्ष्मा को देवे :–

यन्मया दूषितं तोयं शरीर मलसम्भवम्।

तस्य पापस्य शुद्धचर्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहम्। – विश्वमित्र

स्नान के बाद यदि वस्त्र से शरीर को पोंछा जाये तो उचित रहता है क्योंकि सिर से टपकने वाले जल को देवता पीते है। मुख से टपकने वाले जल को पितर ग्रहण करते है तथा बीच वाले भाग से टपकने वाले जल को गन्धर्व ग्रहण करते है और कटि से नीचे वाले भाग से गिरने वाले जल को जन्तु पीते है। यथा –

पिबन्ति शिरसो देवाः पिबन्ति पितरो मुखात्।

मध्यतः सर्वगन्धर्वा अधस्तात् सर्वजन्तवः।।

तस्मात् स्नातो न निर्मृज्यात् स्नानशाट्याा न पाणिना।

तिस्त्रः कोट्योऽर्धकोटी च यावन्त्यंगरूहाणि वै।

वसन्ति सर्वतीर्थानि तस्मात्र परिमार्जयेत्।। – गोभिल

1.8.17 वस्त्र धारण :–

स्नान करने के पश्चात् गीले वस्त्रों को जल से बाहर निकलकर उतार देना चाहिए तथा नवीन अथवा धौतवस्त/ उपवस्त्र धारण करने चाहिए क्योंकि शास्त्रों ने जल में सूखे वस्त्र से और भूमि पर गीले वस्त्रों से पूजनादि कार्यो का निषेध किया है। पूजा आदि करने के लिए अधोवस्त्र से लाँग अवश्य लगानी चाहिए तथा अधोवस्त्र बाँधते समय गाँठ लगाने का भी शास्त्र ने निषेध किया है।

1.9 सारांश

नित्यकर्म नामक प्रथम पत्र में दैनिक क्रियाओं से सम्बद्ध वर्णनों की इस प्रथम ईकाई के अध्ययन से आपने जाना कि स्वस्थ रहते हुए जीवन यापन करने के लिए प्रत्येक मनुष्य को गृहस्थ जीवन में किस प्रकार की दिनचर्या का पालन करना चाहिए। इस इकाई के अन्तर्गत समस्त शास्त्रसम्मत महत्वपूर्ण आचारों के उल्लेख से आपको, करदर्शन विधि, भूमि प्रार्थना, दवे स्मरण, दन्तधावन विधि, क्षौर कर्म, स्नान विधान, सन्ध्या विधि एवं महत्व तथा अन्य जीवनोपयोगी तथ्यों का ज्ञान कराया गया है। इन वर्णनों के अध्ययन से उक्त समस्त विधि एवं निषेधों को जानकर आप अपने दैनिक जीवन को समुन्नत बना पायेंगे।

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई के अध्यन के पश्चात् आप नितयकर्म की विधियों को जानकर उनका उपयोग करने के लिए अन्यों को प्रेति कर सामाजिक दोषों के निराकरण में भी योगदान दे सकेंगे।

1.10 शब्दावली

1. हस्त	=	हाथ,	2. अवलोकन	=	देखना,
3. प्रक्षालन	=	जल से शुद्ध करना,	4. ब्रह्म मूहुर्त	=	रात्रि का अन्तिम चरण,
5. कवोष्ण	=	गुनगुना	6. शौच	=	मलत्याग,
7. कर्म	=	कार्य,	8. नैर्ऋत्य	=	दक्षिण–पश्चिम दिशा का मध्यभाग

9. लघुशंका	=	मूत्रत्याग,	10. गण्डूष	=	कुल्ला करना,
11. दन्तधावन	=	दाँतों को साफ करना,	12. काष्ठ	=	लकड़ी
13. निषेध	=	कार्य की मनाही,	14. काल	=	समय,
15. प्रशस्त	=	श्रेष्ठ,	16. विसर्जन	=	त्याग,
17. क्षौर	=	बालों को साफ करना,	18. अभ्यंग	=	मालिश,
19. गोमय	=	गोबर,	20. जठराग्नि	=	भूख,
21. मेध	=	बुद्धि,	22. लेपन	=	लगाना,
23. तर्पण	=	जल देना,	24. उपवस्त्र	=	कमर से ऊपर के वस्त्र

1.11 अति लघुत्तरात्मक प्रश्न –

प्रश्न–1 : ब्रह्ममुहूर्त्त किसे कहते है ?

उत्तर : रात्रि के अन्तिम प्रहर के तृतीय चरण (सूर्योदय से पूर्व 1 घण्टा 30 मिनट) को ब्रह्ममुहूर्त्त कहते हैं।

प्रश्न–2 : पादकृच्छ्र व्रत क्यों करना चाहिए ?

उत्तर : ब्रह्ममुहूर्त्त की निद्रा मनुष्य के पुण्य का नाश करती है, जिसके प्रायश्चित के लिए पादकृच्छ नामक व्रत करना चाहिए।

प्रश्न–3 : हस्तावलोकन में किन–किन देवताओं का स्थान कहाँ–कहाँ होतो है ?

उत्तर : हाथ के अग्र भाग मे लक्ष्मी, मध्य में सरस्वती तथा मूलभाग में ब्रह्मा का निवास होता है।

प्रश्न–4 : दन्तधावन हेतु प्रशस्त काष्ठ कौनसी होती है ?

उत्तर : नीम, गूलर, आम, बिल्व, खेर, अपामार्ग, उदुम्बर, बैर करंज, चिड़चिड़ा आदि काष्ठ दन्तधावन हेतु प्रशस्त होती है।

प्रश्न–5 : किन्हीं पाँच नित्यकर्मो के नाम लिखिए ?

उत्तर : 1. हस्त अवलोकन 2. भूमि प्रार्थना 3.शौचकर्म 4. दन्तधावन 5. स्नान।

प्रश्न–6 : नित्य स्नान के लाभ बताइये ?

उत्तर : नित्य स्नान करने से रूप, तेज, बल, पवित्रता, आयु, आरोग्यता, निर्भीकता, दुःस्वप्नों का नाश, तप–मेधा की वृद्धि होती है।

1.12 लघुत्तरात्मक प्रश्न –

प्रश्न–1 : नित्यकर्म से कया अभिप्राय है ?

प्रश्न–2 : क्षौरकर्म के निषेधकाल का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न–3 : तेल मालिश का वारादि के अनुसार शुभाशुभ फलों का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न–4 : शौचकर्म का विधि सहित विवेचन कीजिये ?

प्रश्न–5 : नित्य कर्म के अन्तर्गत स्नान विधि का स्नानांग तर्पण सहित विवेचना कीजिए ?

1.13 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. धर्मशास्त्र का इतिहास

लेखक – डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे

प्रकाशन – उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2. नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखक – पं. बिहारी लाल मिश्र,

प्रकाशन :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

3. अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभूसेवा

संकलन ग्रन्थ

प्रकाशन – मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

4. कर्मठगुरू :

लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशन – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणासी।

5. हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशन –राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

इकाई – 2

पंचांग का व्यावहारिक जीवन में उपयोग

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 विषय प्रवेश
2.3.1 पंचांग
2.3.2 सम्बत्सर
2.3.3.1 सम्वत्सर आनयन विधि
2.3.3.2 सम्वत्सर स्वामी
2.3.3.3 सम्वत्सर फल
2.3.2 ऋतु
2.3.3 आर्षवचनानुसार काल विभाग
2.3.4 अयन
2.3.4.1 उत्तरायण
2.3.4.2 दक्षिणायन
2.3.5 मास
2.3.5.1 सौरमास
2.3.5.2 चान्दमास
2.3.5.3 सावन मास
2.3.5.4 नाक्षत्र मास
2.3.5.5 क्षयधि मास
2.3.5.6 मलमास में करणीय
2.3.5.7 जन्म मास
2.3.6 पक्ष
2.3.7 तिथि
2.3.7.1 अमावस्या के भेद
2.3.7.2 पूर्णिमा के भेद
2.3.7.3 तिथि विभाजन
2.3.7.4 नन्दादि तिथियों में उत्पत्ति का फल
2.3.7.5 तिथि समय
2.3.7.6 छिद्रा तिथि
2.3.7.7 वृद्धि तिथि
2.3.7.8 क्षय व वृद्धि तिथि का त्याग
2.3.7.9 पर्व तिथियाँ

2.3.7.10 गलग्रह तिथियाँ
2.3.7.11 सोपपद व कुलाकुल तिथियाँ
2.3.7.12 तिथियों के स्वामी
2.3.7.13 तिथियों में निषिद्ध कार्य
2.3.7.14 चेत्रादि मास में शून्य तिथियाँ
2.3.7.15 पक्षरन्ध्र तिथियाँ
2.3.7.16 तिथि योगिनी चक्र
2.3.7.17 घात तिथियाँ
2.3.7.18 अशुभ फल नाशक पदार्थ
2.3.7.19 तिथियों में द्वारनिर्माण का निषेध
2.3.7.20 मन्वादि तिथियाँ
2.3.7.21 युगादि तिथियाँ
2.3.7.22 मन्वादि व युगादि तिथियों में करणीय कर्म
2.3.7.23 स्वयं सिद्ध तिथियाँ
2.3.8 गण्डान्त विचार
2.3.8.1 तिथि गण्डान्त
2.3.8.2 लग्न गण्डान्त
2.3.8.3 नक्षत्र गण्डान्त
2.3.9 वार – विचार
2.3.9.1 शुभ अशुभ वार
2.3.9.2 वारों में करणीय
2.3.10 कालहोरा मुहूर्त
2.3.11 चौघड़िया मुहूर्त
2.3.12 अभिजित् मुहूर्त
2.3.13 प्रदोष काल
2.3.14 घात वार
2.3.15 दिशा – शूल
2.3.16 वार में अुशुभफलनाशक पदार्थ
2.3.17 वार जन्म फल
2.3.18 पंचक में करणीय–अकरणीय
2.3.19 अग्निवास
2.3.20 नक्षत्र
2.3.21 नक्षत्रों की संज्ञा एवं उनमें करणीय
2.3.22 योग विचार
2.3.23 व्यतियात
2.3.24 वैधृति
2.3.25 आनन्दादि 28 योग
2.3.26 क्रकचादि तात्कालिक योग
2.3.27 करण

2.3.27.1 करण विवेचन
2.3.28 भद्रा विचार
2.3.28.1 भद्रा मुख
2.3.28.2 भद्रा अंग विभाग
2.3.28.3 भद्रा में शुभाशुभ
2.3.29 राहुकाल का यथार्थ
2.3.30 शिववास
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अतिलघुत्तरीय प्रश्न
2.7 लघुत्तरीय प्रश्न
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.1 प्रस्तावना

भारतीय मनीषा में पंचांग बनाने की प्रथा अत्यन्त पुरानी है। ज्योतिष के क्षेत्र में पंचांग तभी से प्रचलित हुआ जब से हमें ज्योतिष का थोड़ा बहुत ज्ञान होने लगा था पर यह निश्चित है कि वह पुराना पंचांग आज जैसा नहीं था। पंचांग के स्थान परर पहले किसी समय चुतरंग, त्रयंग, द्वयंग अथवा एकांग भी प्रचलित था और लिपि का ज्ञान होने के पहले तो कदाचित जबानी ही उसका ज्ञान कर लेते थे परन्तु इतना अवश्य है कि तिथि, नक्षत्र, ग्रह आदि स्थिति दर्शक कोई व्यवस्था अतिप्राचीन काल से ही प्रचलित रही है। यहाँ उसे ज्योतिदर्पण कहेंगे। वेदो में भी लिखा हैं कि अमुक दिन, नक्षत्र और ऋतु में अमुकामुक कार्य करने चाहिए। वेदांगज्योतिषकाल अर्थात् शकपूर्व 1400 में वर्ष में तिथि और नक्षत्र अथवा सावन दिन और नक्षत्र दो ही अंग थे। तिथि का मान लगभग 60 घटी होती है अर्थात् उसे अहोरात्र दर्शक कहना चाहिए। तिथ्यर्ध अर्थात् करण नामक अंग का प्रचार तिथि के थोड़े ही दिनों बाद हुआ होगा और उसके बाद वार प्रचलित हुए होंगे, अथर्वज्योतिष में करण व वार दोनो हैं। ऋक्गृह्य परिशिष्ट में तिथि, करण मुहूर्त, नक्षत्र, तिथि की नन्दादि संज्ञाओं, दिनक्ष और वार का वर्णन हैं, पर मेषादि राशियाँ हैं। वर्तमान पंचांग का स्वरूप प्राचीनकाल से बहुत ही भिन्न हो चुका हैं।

2.2 उद्देश्य :

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्नलिखित शास्त्रीय ज्ञान से अवगत हो पायेंगे :

1. प्रतिदिन पंचांग का प्रयोग किस अर्थ में किया जाय।

2. पंचांग के सिद्धान्तों का अधारभूत ज्ञान।

3. पंचांग के आधार पर विभिन्न निर्णयों का ज्ञान।

4. विवाहदि कार्यो एवं अन्य संस्कारों के समय का ज्ञान।

2.3 विषय प्रवेश :

प्राचीनकाल से पंचांग का महत्व प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में रहा है। प्रातःकाल निद्रामुक्त होते ही पहली जिज्ञासा यही होती है कि आज कौनसा वार, तिथि, व्रत–पर्व आदि है। इस इकाई में सभी जिज्ञासुओं को पंचांग का व्यावहारिक ज्ञान दिया जा रहा हैं, जिससे वह स्वयं दैनिक ज्योतिषीय निर्णय स्वतः कर सके।

2.3.1 पंचांग :

पाँच अंगों से पंचांग बना है – तिथि, वार, नक्षत्र, योग करण।

तिथिर्वारंच नक्षत्रं योगः करणमेव च।

यत्रैतत् पंचकं स्पष्टं पंचांग तदुदीरितम्।। – पंचांगविज्ञानम्

पाँच अंगों के अतिरिक्त भी अन्य अनेकानेक विषयों का समावेश पंचांग में होता है। वर्ष के सम्वत्सरादि निर्णय, ग्रहण–निर्णय, व्रत–पर्वादि, दैनिक ग्रह–स्पष्ट, विवाह आदि मुहूर्त।

2.3.2 सम्वत्सर :–

पंचांग का प्रारम्भ सम्वत्सर से होता है। यही वर्ष गणना सम्वत्सर की जननी है। ब्राह्म, दैव, मानव, पित्र्य, सौर, सावन, चान्द्र एवं बार्हस्पत्यादि मतों के अनुसार विभिन्न कालमानों को व्यक्त किया जाता है। तदनन्तर बार्हस्पत्य और चान्द्र मान से सम्वतसर की प्रतिपत्ति होती है।

2.3.2.1 सम्वत्सर आनयन विधि :–

शालिवाहन शक एवं विक्रमसम्वत् में 135 का अन्तर होता है। अतः शकाब्द में 135 जोड़ने पर विक्रमाब्द प्राप्त होता है। प्रस्तुत सम्वत् में 09 जोड़कर प्राप्त संख्या को 60 से विभाजित करे। शेषांकों के अनुसार प्रभावादि गत सम्वत्सर जानने चाहिए।

उदाहरण के लिए –

सम्वत् 2022 + 9 = 2231 ÷ 60 अर्थात् लब्धि 33 एवे शेष 51 प्रज्ञत हुआ। अतः 51 सम्वत्सर भोगने के बाद 52 वाँ कालयुक्त नामक सम्वत्सर वर्तमान है।

2.3.2.2 सम्वत्सर स्वामी :–

60 सम्वत्सर को द्वादश भागों में विभाजित कर देने से प्रत्येक भाग में पाँच सम्वत्सर होते हैं। इस सम्वत्सरपंचक की कालावधि युग कहलाती है। पाँच–पाँच सम्वत्सरों से निर्मित क्रम प्राप्त युगसमूहों के अधिपति इस प्रकार है :–

सम्वत्सर (पाँच–पाँच)	स्वामी
1–5	विष्णु

6–10	बृहस्पति
11–15	इन्द्र
16–20	अग्नि
21–25	विश्वकर्मा
26–30	अहिर्बुध्न्य
31–25	पितर
36–40	विश्वेदेवा
41–45	चन्द्र
46–50	इन्द्राग्नि
51–55	अश्विनी
56–60	भग

2.3.2.3 सम्वत्सरफल :– वर्तमान सम्वत्सर संख्या को दुगुना करके उसमें 03 घटाकर 07 का भग दें। शेषांकों के अनुसार सम्वत् फल निम्नलिखित है :–

शेषांक	फल	शेषांक	फल
0	पीड़ा	1	दुर्भिक्ष
2	सुभिक्ष	3	मध्यम
4	दुर्भिक्ष	5	सुभिक्ष
6	मध्यम		

विक्रमादित्य काल से प्रचलित प्रभवादि सम्वत्सरों की शुभाशुभता उनकी संज्ञा से ही झलकती है, इनके निम्नलिखित अविच्छिन्न क्रम है :–

1. प्रभव	2. विभव	3. शुक्ल	4. प्रमोद	5. प्रजापति
6. अंगिरा	7. श्रीमुख	8. भाव	9. युवा	10. धाता
11. ईश्वर	12. बहुधान्य	13. प्रमाथी	14. विक्रम	15. वृष

16. चित्रभानु	17. सुभानु	18. तारण	19. पार्थिव	20. व्यय
21. सर्वजित्	22. सर्वधारी	23. विरोधी	24. विकृति	25. खर
26. नन्दन	27. विजय	28. जय	29. मन्मथ	30. दुर्मुख
31. हेमलम्बी	32. विलम्बी	33. विकारी	34. शार्वरी	35. प्लव
36. शुभकृत्	37. शोभन	38. क्रोधी	39. विश्वावसु	40. पराभव
41. प्लवंग	42. कीलक	43. सौम्य	44. साधारण	45. विरोधकृत्
46. परिधावी	47. प्रमादी	48. आनन्द	49. राक्षस	50. नल
51. पिंगल	52. कायुक्त	53. सिद्धार्थी	54. रौद्र	55. दुर्मति
56. दुन्दुभि	57 रूधिरोद्गारी	58. रक्ताक्षी	59. क्रोधन	60. क्षय

2.3.3 ऋतु :–

सूर्य की मेषादि प्रत्येक दो–दो राशियों पर संक्रमण काल ऋतु कहलाता है। इस प्रकार एक वर्ष में छः ऋतुयें होती है :–

1. बसन्त 2. ग्रीष्म 3. वर्षा 4. शरद् 5. हेमन्त
6. शिशिर

ऋतुएँ	**सौरमास**	**चान्द्रमास**
बसन्त	मीन–मेष	चैत्र–वैशाख
ग्रीष्म	वृष–मिथुन	ज्येष्ठ–आषाढ़
वर्षा	कर्क–सिंह	श्रावण–भाद्रपद
शरद्	कन्या–तुला	आश्विन–कार्तिक
हेमन्त	वृश्चिक–धनु	मार्गशीर्ष–पौष
शिशिर	मकर–कुम्भ	माघ–फाल्गुन

आर्षवचन के अनुसार ऋतुओं का विभाग :–

ऋतुएँ	**प्रकार**
बसन्त, ग्रीष्म एवं वर्षादि	दैवी–ऋतु
शरद्, हेमन्त एवं शिशिर	पितर–ऋतु

इनका फल स्व–कर्मानुसार होता है।

2.3.4 अयन :–

क्रान्तिवृत्त के प्रथमांश का विभाजन उत्तर व दक्षिण गोल के मध्यवर्ती ध्रुवों के द्वारा माना गया है। यही विभाजन उत्तरायण और दक्षिणायन कहलाता है। इन अयनों का ज्योतिष संसार में प्रमुख स्थान हैं।

2.3.4.1 उत्तरायण :–

इसे सौम्यायन भी कहा जाता है। उत्तरायण प्रवृति सायन मकर के सूर्य (जो पंचांगों में प्रायः ''मकरे भानुः'' से निर्दिष्ट किया जाता है) अर्थात् 21–22 दिसम्बर से लेकर मिथुन का सूर्य 06 मास तक रहता है। साधारणतया लौकिकमतानुसार यह माघ से अषाढ़ पर्यन्त माना जाता है। सौभ्यायन सूर्य की कालावधि को देवताओं का दिन माना जाता है एवं इस समय में सूर्य देवताओं का अधिपति होता है। शिशिर, बसन्त और ग्रीष्म – ये तीन ऋतुएँ उत्तरायण सूर्य का संगठन करती है। इस अयन में नूतन गृह–प्रवेश, दीक्षा ग्रहण, देवता, उद्यान, कुआँ, बावड़ी, तालाब आदि की प्रतिष्ठ, विवाह, चूड़ाकरण तथा यज्ञोपवीत प्रभृति संस्कार एवं इतरेतर शुभकर्म करना शास्त्रसम्मत है।

नोट *:–* उत्तरायण प्रवृति के समय से 40 घटी पर्यन्त समय पुण्यकाल माना जाता है। जो सभी शुभकार्यो मे वर्जित है।

2.3.4.3 दक्षिणायन :–

यह समय देवताओं की रात्रि माना गया है। सायन कर्क से सूर्य (जिसके यत्र–तत्र ''कर्कभानुः'' से प्रदिष्ट किया जाता है) अथवा 21–22 जून से 06 मास अर्थात् धनुराशिस्थ सायन सूर्य तक का मध्यान्तर दक्षिणायन (याम्यायन) संज्ञक है। दक्षिणायन में वर्षा–शरद्–हेमन्त ऋतु की प्रवृत्ति होती है। दक्षिणायन काल में सूर्य पितरों का अधिष्ठाता कहा गया है इस काल में षोड़श संस्कार तथा अन्य मांगलिक कार्यो के अतिरिक्त कर्म ही किये जाते है। उग्रदेवता, मातृकाएँ, भैरव, वाराह, नारसिंह, त्रिविक्रम (विष्णु), महिषासुर का वध करते हुए दुर्गा की स्थापना दक्षिणायन में भी की जा सकती हैं।

नोट *:–* दक्षिणायन प्रवेश हो के समय से 15 घटी का समय पुण्यकाल के नाम से प्रसिद्ध है और वह सभी शुभशुभ कर्मों में विशेषतः त्याज्य है।

2.3.5 मास :– ज्योतिष के अध्ययन में मासों का वर्गीकरण निम्न प्रकार किया गया है –

मास चार प्रकार के होते है :–

2.3.5.1 सौरमास :– यह सूर्य संक्रमण से सम्बद्ध है। मेषादि बारह राशियों पर सूर्य के गमनानुसार ही मेषादिसंज्ञक द्वादश सौरमासों का गठन किया गया है। एक सौरमास लगभग 30 दिन 10 घण्टे का होता है। विवाह, उपनयनादि षोड़श संस्कार, यज्ञ, एकोद्दिष्ट श्राद्ध, ऋण का दानादान एवं ग्रह–चारादि अन्योन्यविषयक कालों का विचार सौरमास से करना चाहिए।

2.3.5.2 चान्द्रमास :– यह चन्द्र से सम्बन्धित है। अमावस्या के पश्चात् शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्र किसी नक्षत्रविशेष में प्रवेश करके प्रतिदिन एक–एक कला के परिणाम से बढ़ता हुआ पूर्णिमा को पूर्णचद्र के रूप में दृष्टिगोचर होता है। पुनः कृष्णप्रतिपदा से क्रमशः अल्पशुक्ल होता हुआ चन्द्रमा अमावस्या को पूर्णान्धकाररूपी मृतावस्था को प्राप्त होता है। अतः एक मत के शक्ल प्रतिपदा अमावस्या तक अत्यन्तर मतानुसारेण शुक्ल प्रतिपदा से पूर्णिमा तक का समय चान्द्रमास कहा जाता है। यद्यपि शुक्लपक्षादि मास मुख्य तथा कृष्णपक्षादि मास गौण है। तथापि देशभेद के अनुसार दोनों प्रकारों से चान्द्रमासों की प्रवृत्ति को ग्रहण किया जाता है। प्रत्येक चान्द्रमास प्रायः 29 दिन 22 घण्टे का होता है। चैत्रादि विभिन्न चान्द्रमासों की संज्ञायें पूर्णिमा को चन्द्र द्वारा संक्रमित नक्षत्र संज्ञा पर आधारित है :–

मास	**नक्षत्र**
चैत्र	चित्रा, स्वाती
वैशाख	विशाखा, अनुराधा
ज्येष्ठ	ज्येष्ठा, मूल
आषाढ़	पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा
श्रावण	श्रवण, धनिष्ठा
भाद्रप	शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद
आश्विन	रेवती, अश्विनी, भरणी
कार्तिक	कृतिका, रोहिणी
मार्गशीर्ष	मृगशिरा, आर्द्रा
पोष	पुनर्वसु, पुष्य
माघ	अश्लेषा,
फाल्गुन	पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त

2.3.5.3 सावनमास :–

एक अहोरात्र में 24 घण्टे या 60 घटी मानकर 30 दिन का एक सावनमास होता है। जातक की अवस्था, उत्तराधिकरियों में सम्पत्ति–विभाजन, स्त्रीगर्भ की वृद्धि तथा प्रायश्चित्तदि कर्मों में सावनमास का ही विचार करना चाहिए।

2.3.5.4 नाक्षत्रमास :–

चन्द्रमा के द्वारा 27 नक्षत्रों के भ्रमण को सम्पूर्ण करने में आवश्यक समयावधि को एक नाक्षत्रमास कहते है। नाक्षत्रमास का उपयोग जलपूजन, नक्षत्रशान्ति, यज्ञ–विशेष तथा गणितादि में किया जाता है।

2.3.5.5 क्षयाधिमास विचार :–

सौरवर्ष का मान : 365 दिन – 15 घटी– 31 पल – 30 विपल

चान्द्रवर्ष का मान : 354 दिन – 22 घटी – 01 पल– 33 विपल

इस प्रकार स्पष्ट है कि चान्द्र वर्ष सौर वर्ष से 10 दिन – 53 घटी – 30 पल – 07 विपल कम है। इस क्षतिपूर्ति और दोनों मासों के सामंजस्य के उद्देश्य से हर तीसरे वर्ष अधिक चान्द्रमास तथा एक बार 141 वर्षो के बाद तथा दूसरी बार 19 वर्षो के बाद क्षय–चान्द्रमास की आवृत्ति होती है।

असंक्रान्तिमासोऽधिमासः स्फुटं स्याद्।

द्विसंक्रान्तिमासः क्षयाख्यः कदाचित्।। – सिद्धान्तशिरोमणि

अर्थात् जिस चान्द्रमास में स्पष्ट सूर्य की संक्रान्ति न हो वह **''अधिकमास''** तथा जिस चान्द्रमास में दो बार सूर्य की संक्रान्ति हो, वह **''क्षयमास''** कहलाता है।

क्षयमास व अधिकमास दोनों **''मलमास''** कहलाते है। इन्हें लोक व्यवहार में भी यही संज्ञा की गयी है।

2.3.5.6 मलमास में करणीय व अकरणीय कार्य :–

सन्ध्या–अग्निहोत्र–पूजनादि, नित्यकर्म, गर्भधान, जातकर्म–सीमान्त–पुंसवन–संस्कार, रोगशान्ति, अलभ्य योग में श्राद्ध, द्वादशाह–सपिण्डीकरण, मन्वादि तिथियों का दान, दैनिक दान, यव–तिल–गो–भूमि तथा स्वर्णादि दान, अतिथि सत्कार विधिवत स्नान, प्रथम वार्षिक श्राद्ध, मासिक श्राद्ध एवं राजसेवा विषयक कर्म मलमास में शास्त्रसम्मत है।

अनिय व अनैमित्तिक कार्य, द्वितीय वार्षिक श्राद्ध, तुलापुरूष–कन्यादान–गजदानादि, अन्योन्य षोड़श महादान, अग्न्याधान, यज्ञ, अपूर्व तीर्थयात्रा, अपूर्व देवता के दर्शन, वाटिका–देव–कुआँ–तालाब–बावड़ी आदि के निर्माण और प्रतिष्ठा, नामकरण–उपनयन–चौलकर्म–अन्नप्राशनादि संस्कार विशेष, राज्याभिषेक, सकामना, वृषोत्सर्ग बालक का प्रथम निष्क्रमण, व्रतारम्भ, व्रतोद्यापन, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, विवाह, देवता का महोत्सव, कर्मानुष्ठानादि काम्यकर्म, पाप–प्रायश्चित, प्रथम उपाकर्म व उत्सर्ग, हेमन्त ऋतु का अवरोह, सर्वबलि, अष्टकाश्राद्ध, ईशान देवता की बलि, वधूप्रवेश, दुर्गा–इन्द्र का स्थापन और उत्थान, देवतादि की शपथ ग्रहण करना, विशेष परिवर्तन, विष्णु–शयन और कमनीय यात्रा का मलमास में निषेध है।

2.3.5.7 जन्मास :–

जन्मदिन से एक सावनमास (30 दिन) पर्यन्त जन्मास कहलाता है। मत–मतान्तरों से व्यक्ति का जन्म हो, उसे ही जन्ममास माना जाता है। पुनश्च क्षयमास के अन्तर्गत तिथि के पूर्वार्द्ध में जन्म हो तो पूर्वमास तथा परार्द्ध में जन्म हो तो आगामी मास ही जन्ममास निर्धारित किया जाना चाहिए।

जन्मानस में साधारणतया क्षौरकर्म (चूड़ाकरण), यात्रा व कर्णवेधादि कर्म वर्जित है, परन्तु स्नान, दान, जप, होम, विवाह एवं कमनीय कर्मो के लिए जन्मास शुभफलदायी होता है। यथा –

स्नानं दानं तपो होमः सर्वमांगल्यवर्द्धनम्।

उद्वाहश्च कुमारीणां जन्ममासे प्रशस्यते।। – श्रीपतिसमुच्चय

अर्थात् जन्ममास में प्रीति समुच्चय नामक ग्रन्थ के अनुसार स्नान, दान, तप होम कुमारियों के विवाह आदि सभी मांगलिक कार्य प्रशस्त हैं। तात्पर्य यह है कि ये सभी कर्म जन्ममास में करने चाहिए।

जन्मनि मासि विवाहः शुभदो जन्मर्क्षजन्मराश्योश्च।

अशुभं वदन्ति गर्गाः श्रुतिवेधक्षौरयात्रासु।। – पीयूषधारा

अर्थात् जन्ममास में मांगलिक कार्य सम्पादन के निर्णयान्तर्गत वसिष्ठ ने केवल जन्मदिन गर्गाचार्य जन्मान्तर 08 दिन, अधिपति ने 10 दिन और भागुरि ने जन्म के पक्ष को ही केवल दूषित बतलाया है एवं जन्मानस के शेष शुभकार्य सम्पादन में ग्राहा है :–

जातं दिनं दूषयते वसिष्ठो ह्यष्ठौ च गर्गो नियतं दशरात्रिः।

जातस्य पक्षं किल भागुरिश्च शेषाः प्रशस्ताः खलु जन्ममासि।। – राजमार्तण्ड

2.3.6 पक्ष :– पक्ष के अन्तर्गत प्रत्येक मास में दो भाग करके तिथि, वार एवं नक्षत्रों आदि का अध्ययन किया जाता है।

अर्थात् जिस रात्रि में सूर्य और चन्द्रमा किसी राशि में एक ही अंश पर हो, वह रात्रि अमावस्या कहलाती है। अमावस्या से निरन्तर बढ़ती हुई चन्द्र–सूर्य की परस्पर दूरी जिस दिन 180 अंश परिमित हो जाती है, उस दिन रात्रि को पूर्ण चन्द्र दृष्टिगोचर होता है और वह रात्रि पूर्णिमा कहलाती है। अतः अमावस्या से पूर्णिमा तक का यह 15 दिनात्मक प्रकाशमान मध्यान्तर **''शुक्लपक्ष''** कहलाता है, तत्पश्चात् पूर्णिमा से अमावस्या तक का काल **''कृष्णपक्ष''** कहलाता है।

शुक्लपक्ष देवप्रधान होने से देवकर्मों में तथा कृष्णपक्ष में पितराधिष्ठित होने के कारण पितृकर्मों में विहित है अर्थात् शुक्लपक्ष में सर्व शुभकार्य तथा कृष्णपक्ष में सभी पितृकार्य प्रशस्त है। यथा –

य देवा पूर्यतेऽर्द्धमास स देवा, योऽपक्षीयते स पितरः।। – शतपथ ब्राह्मण

प्रायः एक पक्ष 15 दिन का होता है और कभी–कभी तिथि–क्षय–वृद्धि के कारण न्यूनाधिक भी हो सकता है, परन्तु एक ही पक्ष में दो बार तिथि–क्षय हो जाने से 13 दिनात्मक पक्ष समस्त कर्मों में वर्जनीय है। यथा –

पक्षस्य मध्ये द्वितिथी पतेतां तदा भवेद्रौरवकालयोगः।

पक्षे विनष्टे सकलं विनष्टमित्याहुराचार्यवराः समस्ताः।। – ज्यातिर्निबन्ध

2.3.7 तिथि :–

''रविचन्द्रयोर्गत्यन्तरं तिथिः'' अर्थात् सूर्य व चन्द्रमा की गति का अन्तर ही तिथि का मान होता है। इन्हें कुल 30 भागों में विभाजित किया गया है। इस प्रकार सूर्य और चन्द्र के प्रत्येक 12 अंश पर एक तिथि बढ़ती है, जिन्हें क्रमशः प्रतिदा (प्रथमा) द्वितीया आदि से लेकर अमावस्या तक कृष्णपक्ष की तथा इसी प्रकार प्रतिपदा, द्वितीय, तृतीय आदि से पूर्णिमा तक शुक्लपक्ष की 15–15 तिथियाँ होती है। सम्पूर्ण तिथियों को मिलाकर एक चान्द्रमास होता है, जिसे पंचांग में अलग से चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ एवं फाल्गुन नामों से अलग–अलग प्रदर्शित किया जाता है।

अमावस्या को हुए सूर्य–चन्द्रमा के समागम के पश्चात् दोनों ग्रह उत्तरोत्तर दूर होते जाते है, उस दिन चन्द्रमा 0 अंश से प्रारम्भ होकर जब 12 अंश तक जाता है, तब शुक्ल प्रतिपदा का आगमन होता है। इसी प्रकार 12–12 अंशों के परिमाण से अग्रिम तिथियाँ बनती है। अन्त में पूर्णिमा को सूर्य–चन्द्र में 180 अंश की दूरी हो जाने पर चन्द्रमा मण्डल पूर्ण प्रकाशमान हो जाता है। इसी प्रकार 12 अंश के क्रमि ह्रास के साथ–साथ कृष्णा प्रतिपदा का आगमन इसी प्रकार होता है, यही क्रम कृष्णपक्ष का है।

2.3.7.1 अमावस्या के भेद :–

सिनीवाली, दर्श, कुहू। प्रातः काल रात्रिपर्यन्तत व्यापिनी अमावस्या **'सिनीवाली'** चतुर्दशी से विद्धा **'दर्श'** तथा प्रतिपदा से युक्त **'कुहू'** संज्ञक होती है।

2.3.7.2 पूर्णिमा के भेद :–

अनुमति व राका। रात्रि को एक कलाहीन और दिन में पूर्णचन्द्र से सम्पन्न **'अनुमतिसंज्ञक'** पूर्णिमा चतुर्दशीयुक्त होती है, परन्तु रात्रि में पूर्ण चन्द्रमा सहित पूर्णिमा प्रतिपदा से युक्त औरा **'राका'** होती है।

2.3.7.3 तिथि को शास्त्रों में पाँच भागों में विभाजित किया गया है (नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा) :–

संज्ञा	तिथियाँ

नन्दा	1	6	11
भद्रा	2	7	12
जया	3	8	13
रिक्ता	4	9	14
पूर्णा	5	10	15/30

2.3.7.4 नन्दादि तिथियों में उत्पन्न जातकों का फल :–

नन्दा तिथि (1–6–11) :– नन्दा तिथि में जन्म लेने वाले जातक मान पाने वाले, दवताओं की भक्ति में निष्ठा रखने वाले, विद्वान्, ज्ञानवान् व लोकप्रिय होते है।

वस्त्र, गीत, नृत्य, कृषि, उत्सव, गृहसम्बन्धी कार्य तथा किसी शिल्प का अभ्यास हेतु नन्दा तिथि श्रेष्ठा है।

भ्रदा तिथि (2–7–12) :– भद्रा तिथि में जन्म लेने वाले जातक बन्धु–बान्धवों में सम्मानित, राजसेवक, धनी तथा सांसारिक भय से डरने एवं परोपकारी होते है।

विविाह, उपनयन, यात्रा, आभूषण–निर्माण और उपयोगी कला सीखना तथा हाथी–घोड़ा एवं सवारीविषयक कार्यों हेतु भद्रा तिथि श्रेष्ठ है।

जया तिथि (3–8–13) :– जया तिथि में जन्म लेने वाले जातक राजाओं सदृश या राजाओं से पूजित किन्तु पुत्र–पौत्रों से रहित शूरवीर दीर्घायु और दूसरों के मन की बात को जानने वाले होते है।

सैन्य–संगठन, सैनिक–शिक्षा, संग्राम, शस्त्र–निर्माण, यात्रा, उत्सव, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, औषधकर्म और व्यापार हेतु जयातिथि श्रेष्ठ है।

रिक्त तिथि (4–9–14) :– रिक्ता तिथि में जन्म लेने वाले जातक प्रमादि, प्रत्येक कार्य में अनुमान लगाने वाले गुरूओं के निन्दक, शास्त्र के ज्ञाता, दूसरों के मद को नाश करने वाले तथा अत्यधिक कामचेष्टा रखने वाले होते है।

शत्रुओं का दमन और कैद करना, विष देना, शस्त्रप्रयोग, शल्यक्रिया तथा अग्नि लगाना आदि क्रूरकर्म हेतु रिक्तातिथि श्रेष्ठ है।

पूर्णा तिथि (5–10–15/30) :– पूर्णा तिथि में जन्म लेने वाले जातक धन से परिपूर्ण, वेद एवं शास्त्रों के अर्थों को जानने वाले विद्वान्, सत्यवक्ता तथा शुद्ध मन वाले हाते है।

विवाह, यज्ञोपवीत, आवागमन, नृपाभिषेक तथा शान्तिक–पौष्टिक कर्म हेतु पूर्णातिथि श्रेष्ठ है।

2.3.7.5 तिथिसमय :– सूर्योदय के समय जो तिथि वर्तमान हो, वह उदयव्यापिनी तिथि दिन–रात्रि तक दान, पठन, व्रतोपवास, स्नान, देवकर्म, विवाहादि संस्कार तथा प्रतिष्ठादि समस्त मांगलिक कार्यों में ग्राह्य है,

परन्तु श्राद्ध, शरीर पर तैल या उबटन का प्रयोग, मैथुन तथ जन्म–मरण में तात्कालिक **कर्मव्यापिनी** तिथि को ही ग्रहण करना चाहिए।

2.3.7.6 छिद्रा तिथि :– प्रत्येक पक्ष की 4, 6, 8, 9 12 और 14 तिथियाँ पक्षछिद्रा कहलाती है तथा शुभकार्यों में अनका परित्याग ही अपेक्षित है। अत्यावश्यकता में निर्दिष्ट तिथियों की आदिम घटियों का त्यागकर शेष घटियों को प्रयोगार्थ ग्रहण करना चाहिए।

तिथि	4	6	8	9	12	14
घटी	8	9	14	25	10	05

क्षय तिथि :–

सूर्योदय के बाद किसी तिथि का प्रारम्भ हो तथा अग्रिम सूर्योदय से पहिले उस तिथि का समापन हो जाये, तो वह तिथि क्षयतिथि कहलाती है।

2.3.7.7 वृद्धि तिथि :–

यदि एक ही तिथि के प्रमाण में दो सूर्योदय हो जाये अर्थात् सूर्योदय के पहिले किसी तिथि का प्रारम्भ हो जाये तथा अग्रिम सूर्योदय के पश्चात् उस तिथि का समापन हो तो वह तिथि वृद्धितिथि कहलाती है।

2.3.7.8 क्षय व वृद्धि तिथि का त्याग व परिहार :–

क्षय व वृद्धि तिथियाँ सभी कर्मों में त्याज्य है तथा आवश्यक होने पर **'तिथिक्षय'** अथवा **'तिथिवृद्धि'** के दिन कार्य के समय लग्न कुण्ड़ली में बृहस्पति केन्द्रस्थ हो तो तिथिदोष समाप्त हो जाता है। यथा –

अमाख्यं तिथेर्दोषं केन्द्रगो देवपूजितः।

हन्ति यद्वत् पापचयं व्रतं द्वैवार्षिक यथा।। – वसिष्ठ

2.3.7.9 पर्व तिथियाँ :–

कृष्णा अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा तथा सूर्य–संक्रान्ति के दिन वर्तमान तिथि **'पर्वसंज्ञक'** होती है, जो सभी मांगलिक कार्यों में वर्जित है।

2.3.7.10 गलग्रह तिथियाँ :–

चतुथी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावस्या, प्रतिपदा ये सभी कृष्णपक्ष के **'गलग्रह'** तिथियां है, इनका सभी मांगलिक कार्यों में निषेध है।

2.3.7.11 सोपपद व कुलाकुल तिथियाँ :–

ज्येष्ठशुक्ल द्वितीया, आषाढ़ शुक्ल दशमी, पौषशुक्ल एकादशी, माघ की कृष्णपक्ष व शुक्लपक्ष की चतुर्थी व द्वादशी ये तिथियाँ **'सोपपद'** होती है। ये सभी तिथि शुभफलदायक है।

प्रत्येक मास की द्वितीय, षष्ठी व द्वादशी तिथि **'कुलाकुल'** संज्ञक होती है। ये सभी तिथियाँ मध्यमफलदायक है।

2.3.7.12 तिथियों के स्वामी :–

भारतीय परम्परा में कंकर–कंकर से शंकर की कल्पना की गयी है, इसी प्रकार पंचांग के प्रत्येक के प्रत्येक अंग का स्वामी निर्धारित किया गया है। अभीष्ट देवताओं के शुभाशुभ फल भी प्रतिपादित किये गये है। इसी क्रम में यहाँ तिथियों के स्वामी का विवेचन किया जा रहा है।

तिथि	स्वामी	निर्दिष्ट कर्म
प्रतिपदा	अग्नि	विवाह, यात्रा, उपनयन, प्रतिष्ठा, सीमन्तोन्नयन, चौलकर्म, गृहारम्भ, गृहप्रवेश शान्तिक–पौष्टिक कार्य आदि समस्त मांगलिक कार्य
द्वितीया	ब्रह्मा	राजा–मन्त्री–सामन्त–देश–कोश–गढ़ और सेनादि राज के सप्तांग व छत्र, चामर,आदि राज्य के सप्तचिन्ह–सम्बन्धी कार्य, वास्तुकर्म, प्रतिष्ठा, यात्रा, विवाह,आभूषण–निर्माण व धारण, उपनयनादि शुभकर्म।
तृतीया	पार्वती	संगीत–विद्या, शिल्पकर्मविषयक कर्म, सीमन्त, चूड़ाकरण, अन्नप्राशन, गृहप्रवेश तथा द्वितीया तिथि में निर्दिष्ट सभी कर्म तृतीय तिथि में भी प्रशंसनीय है।
चतुर्थी	गणेश	शत्रुताड़न, बिजली के कार्य, विषदान, हिंसक कर्म, अग्नि लगाना, बन्दी तथा शस्त्रप्रयोगादि सभी कर्म।
पंचमी	सर्प	चर–स्थिरादि सभी कर्म, परन्तु किसी को ऋण नहीं देना चाहिए।
षष्ठी	कार्तिकेय	शिल्पकर्म, रणकार्य, गृहारम्भ, वस्त्रालंकार कृत्य, अखिलकाम्य कर्म, परन्तु इसदिन दन्तधवन, आवागमन, तैलाभ्यंग, काष्ठकर्म एवं पितृकार्य वर्जित है।
सप्तम	सूर्य	हस्तिकर्म, विवाह, संगीतकर्म, वस्त्राभूषण निर्माण और धारणयात्रा, गृहप्रवेश,वधूप्रवेश, संग्राम तथा द्वितीय–तृतीया व पंचम में निर्दिष्ट सभी

		कर्म सप्तमी में भी ग्राह्य है।
अष्टमी	शिव	युद्ध, वास्तुकार्य, शिल्प, राजकार्य, आमोद–प्रमोद, लेखन–नृत्य, स्त्रीकर्म, रत्नपरीक्षा, आभूषण–कर्म तथा शस्त्रधारण, परन्तु मांस का सेवन इस दिन कदापि नहीं करे।
नवमी	दुर्गा	चतुर्थी में उक्त सभी कर्म, विग्रह, कलह, जुआ खेलना, मद्यनिर्माण–पान, आखेट तथा शस्त्रनिर्माण श्रेष्ठ है।
दशमी	यम	द्वितीय–तृतीय–पंचमी–सप्तमी में निर्दिष्ट सभी कर्म, हाथी–घोड़ा से सम्बन्धी कर्म तथा राजकार्य श्रेष्ट है, इस दिन तैलाभ्यंग नहीं करे।
एकादशी	विश्वेदेवा	एकादशी, व्रतोपवास, यज्ञोपवीत, पाणिपीड़न, देव महोत्सवादि अखिल धर्म कर्म, गृहारम्भ, युद्धशिल्प सीखना, मद्यनिर्माण व गमन–आगमन व वस्त्रालंकार कार्य श्रेष्ठ है
द्वादशी	हरि	अखिल चर–स्थिर कार्य, पाणिग्रहण, उपनयनादि मांगलिक आयोजन श्रेष्ट है, परन्तु तैलमर्दन, नूतन गृहारम, गृहप्रवेश व यात्रा का परित्याग करे।
त्रयोदशी	काम	शुक्लपक्ष की त्रयोदशी ही ग्राह्य है। द्वितीय–तृतीय–पंचमी–सप्तमी तथा दशमी में निर्दिष्ट सभी कार्य शुक्लपक्ष क त्रयोदशी में श्रेष्ठ है, परन्तु मतान्तरेण इस दिन यात्रा–गृहप्रवेश, तैलाभ्यंग, युद्ध वस्त्राभूषण कर्म तथा यज्ञोपवीत के अतिरिक्त समस्त मांगलिक कार्य शुभ है।
चतुर्दशी	शिव	विषदान, शस्त्रधारण प्रयोग तथा चतुर्थीयुक्त दुष्टकर्म शास्त्रोक्त है, परन्तु चतुर्दशी में क्षौरकर्म तथा यात्राकर्म आदि कर्म वर्जित है।
पूर्णिमा	चन्द्रमा	विवाह, देव, जलाशय, वाटिका की प्रतिष्ठा, शिल्पभूषणादि कर्म, संग्राम

		तथा साझिक, शान्तिक–पौष्टिक वास्तु कर्म श्रेष्ठ है।
अमावस्या	पितर	इस दिन अग्न्याधान, पितृकर्म तथा महादान प्रशस्त है, परन्तु इसमें कोई शुभकर्म

2.3.7.13 विभिन्न तिथियों में निषिद्ध कार्य

तिथि	कार्य	तिथि	कार्य
षष्ठी	तैलाभ्यंग	द्वितीया	उबटन
अष्टमी	मांसभक्षण	दशमी	उबटन
चतुर्दशी	क्षौरकर्म	त्रयोदशीउबटन	
अमावस्या	रतिक्रिया	अमावस्या	आँवला मिश्रित जल से स्नान
सप्तमी	आँवला मिश्रित जल से स्नान	नवमी	आँवला मिश्रित जल से स्नान

2.3.7.14 चेत्रादि मास में शून्य तिथियाँ :–

मास	शून्यतिथियाँ कृष्णपक्ष	शून्यतिथियाँ शुक्लपक्ष
चैत्र	8, 9	8, 9
वैशाख	12	12
ज्येष्ठ	14	13
आषाढ़	6	7
श्रावण	2, 3	2, 3
भाद्रपद	1, 2	1, 2
आश्विन	10, 11	10, 11
कार्तिक	5	14
मार्गशीर्ष	7, 8	7, 8

पौष	4, 5	4, 5
माघ	5	6
फाल्गुन	4	3

2.3.7.15 पक्षरन्ध्र तिथियाँ :–

चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी व चतुर्दशी इन तिथियों की पक्षरध्र संज्ञा होती है, इनमें कोई भी शुभ कार्य नहीं करना चाहिए। यदि बहुत–ही आवश्यक हो तो उपर्युक्त तिथियों में निम्न चक्रानुसार कार्य करे :–

तिथि	त्याज्य घटी (दण्ड़)	तिथि	त्याज्य घटी (दण्ड़)
चतुर्थी	08	षष्ठी	09
अष्टमी	14	नवमी	24
द्वादशी	10	चतुर्दशी	05

2.3.7.16 तिथियोगिनी चक्र :–

दिशा	तिथि	दिशा	तिथि
ईशान	8, 30	पर्व	1, 9
आग्नेय	3, 11	दक्षिण	5, 13
नैर्ऋत्य	4, 12	पश्चिम	6, 14
वायव्य	7, 15	उत्तर	2, 10

उपर्युक्त तिथियों में योगिनी चक्रोक्त ईशादि दिशाओं में स्थित होती है। योगिनी यात्रा के समय बायें भाग में सुखदायक, पृष्ठ में वांछितफलप्रदायिनी, दक्षिण में धन का नाश करने वाली तथा सम्मुख में मृत्युकारक (कष्टदायक) होती है। यथा –

योगिनी सुखदा वामे पृष्ठे वांछित दायिनी।

दक्षिणे धनहन्त्री च सम्मुख मरणप्रदा।।

2.3.7.17 घाततिथियाँ (राशि के अनुसार) :– यात्रा आदि में घात तिथि को वर्जित करना चाहिए।

तिथि	राशि	तिथि	राशि

1, 6, 11	मेष	5, 10, 15	वृष
2, 7, 12	मिथुन	2, 7, 12	कर्क
3, 8, 13	सिंह	5, 10, 15	कन्या
4, 9, 14	तुला	1, 6, 11	वृश्चिक
3, 8, 13	धनु	4, 9, 14	मकर
3, 8, 13	कुम्भ	5, 10, 15	मीन

2.3.7.18 तिथि अशुभफलनाशक पदार्थ :–

जिस तिथि में यात्रा करनी हो, यदि वह तिथि अशुभ हो तोचक्रांकित पदार्थों का भक्षण करके अथवा इन वस्तुओं का दान करके यात्रादि कार्य करने पर सफलता प्राप्त होती है तथा तिथिदोष नष्ट हो जाता है।

तिथि	पदार्थ	तिथि	पदार्थ
प्रतिपदा	मदार का पत्र	द्वितीया	चावल का धोया हुआ पानी
तृतीया	देशी घी	चतुर्थी	देशी घी का हलवा
पंचमी	हविष्यान्न	षष्ठी	स्वर्ण का धोया हुआ जल
सप्तमी	पुआ	अष्टमी	अनार का फल
नवमी	कमलपुष्प का जल	दशमी	गौ मूत्र
एकादशी	जौ का भात	द्वादशी	दूध–चावल की खीर
त्रयोदशीगुड़		चतुर्दशी	रक्त
पूर्णिमा	मूंग	अमावस्या	भात

2.3.7.19 तिथि में द्वारनिर्माण का निषेध :– इन तिथियों इन दिशाओं के द्वारा नहीं बनाने चाहिए और बने हुए द्वारो में से इन तिथियों में इन दशाओं में प्रवेश अथवा इन द्वारों से गमन नहीं करना चाहिए।

दिशा	तिथि
पूर्व	पूर्णिमा तथा कृष्णपक्ष की अष्टमी (कृष्णपक्ष – 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8)
दक्षिण	शुक्लपक्ष की नवमी से चतुर्दशी तक (शुक्लपक्ष – 9, 10, 11, 12, 13, 14)

पश्चिम	अमावस्या, शुक्लपक्ष की अष्टमी (कृष्णपक्ष – 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8)
उत्तर	कृष्णपक्ष की नवमी से चतुर्दशी तक (कृष्ण – 9, 10, 11, 12, 13, 14)

2.3.7.20 मन्वदि तिथियाँ (इन तिथियों में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए) :–

तिथि

1. चैत्रशुक्ल तृतीय व पूर्णिमा
2. कार्तिकशुक्ल पूर्णिमा व द्वादशी
3. आषाढ़शुक्ल दशमी व पूर्णिमा
4. ज्येष्ठ व फाल्गुनशुक्ल पूर्णिमा
5. आश्विनशुक्ल नवमी
6. माघशुक्ल सप्तमी
7. पौषशुक्ल एकादशी
8. भाद्रपद शुक्ल तृतीया
9. श्रावणकृष्ण अमावस्या व अष्टमी

2.3.7.21 युगादि तिथियाँ (इन तिथियों में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए) :–

तिथियाँ	युगदि
कार्तिशुक्ल नवमी	सत् युगादि
वैशाख शुक्ल तृतीया	त्रेतायुगादि
माघकृष्ण अमावस्या	द्वापरयुगादि
श्रावणकृष्ण त्रयोदशी	कलियुगादि

2.3.7.22 मन्वादि व युगादि तिथियों में करणीय कर्म :–

इन तिथियों में स्नान, हवन, जप, दान–पुण्य करने से अनन्तकोटि फल प्राप्त होता है, परन्तु विद्यारम्भ उपनयन, व्रतोद्यापन, विवाह, गृहनिर्माण, गृह–प्रवेश, नित्याध्ययन तथा यात्रादि में इन्हे त्याज्य बताया गया है।

शुक्लपक्ष में कर्तव्य श्राद्ध के लिए इन तिथियों को पूर्वान्ह और कृष्णपक्ष के श्राद्धों के इनका अपरान्ह ग्राह्य है।

अपवाद :–

चैत्र व वैशाख शुक्ल तृतीया तथा माघशुक्ला सप्तमी तिथियाँ मन्वादि युगादि होने पर भी शुभकर्मों में ग्रहण करने की अनुमति शास्त्रों ने दी है। यथा –

या चैत्रवैशाखसितातृतीया माघे च सप्तम्यथ फाल्गुनस्य।

कृष्णे द्वितीयोपनये प्रशस्ता प्रोक्ता भरद्वाजमुनीन्द्रमुख्यैः।। –
पीयुषधारा

2.3.7.23 तिथियों में आने वाली स्वयंसिद्ध तिथियाँ :–

तिथि	**पर्व**
चैत्रशुक्ल प्रतिपदा	नवीन सम्वत्सराङ्गम्भ (कल्पादि)
चैत्रशुक्ल नवमी	रामनवमी
वैशाखशुक्ल तृतीया	अक्षयतृतीया (त्रेतायुगादि)
वैशाख शुक्ल पूर्णिमा	बुद्ध पूर्णिमा/पीपल पूर्णिमा
ज्येष्ठशुक्ल दशमी	गंगादशमी
ज्येष्ठशुक्ल एकादशी	निर्जला एकादशी***
आषाढ़शुक्ल नवमी	भड्ल्या नवमी
भाद्रपद कृष्ण अष्टमी	जन्माष्टमी***
भाद्रपदकृष्ण नवमी	गोगानवमी***
भाद्रपदशुक्ल एकादशी	जलझूलनी एकादशी
आश्विनशुक्ल दशमी	विजयादशमी (दशहरा/मन्वादि)***
कार्तिकशुक्ल अमावस्या	दीपावली (दीपमालिका)***
कार्तिकशुक्ल एकादशी	देवप्रबोधिनी एकादशी
माघशुक्ल पंचमी	बसन्त पंचमी
फाल्गुनशुक्ल द्वितीया	फुलेरा दोज
चैत्रकृष्ण अष्टमी	शीतलाष्टमी (बास्योड़ा)***

2.3.8 गण्डान्त विचार :– गण्डान्त को विभाजित करके म्निानुसार अध्ययन किया जा सकता है

2.3.8.1 तिथि गण्डान्त :– पूर्णा (5–10–15) तथा नन्दा (1–6–11) तिथि, इन तिथियों की क्रम से अनत और आदि की 2–2 घटी दोषयुक्त होने से गण्डान्त नाम से प्रसिद्ध है। यह जन्म, यात्रा, विवाह, व्रतबन्ध आदि में कष्टकारक है।

2.3.8.2 लग्नगण्डान्त :–

कर्क–सिंह, वृश्चिक–धनु तथा मीन–मेष इन दो–दो राशियों के अन्त और आदि की आधी–आधी घटी को गण्ड़ान्त कहते है। यह सभी शुभकर्मों में त्याजय है।

2.3.8.3 नक्षत्रगण्ड़ान्त :–

रेवती–अश्विनी, अश्लेषा–मघा तथा मीन–मेष के नक्षत्रों क्रम से अन्त और आदि की 2–2 घटियाँ अर्थात् दोनों की सन्धि के 4 घटी को गण्ड़ान्त कहते है। इसमें सभी मांगलिक कृत्य वर्जित है।

सभी प्रकार के गण्ड़ान्त में जन्म, यात्रा, विवाह आदि शुभकर्म वर्जित है।

गण्डमूल नक्षत्र एवं उनका फल (शान्ति कराने से अशुभ फल की निवृत्ति व शुभ फल पुष्टी होती है)						
चरण	**अश्विनी**	**अश्लेषा**	**मघा**	**ज्येष्टा**	**मूल**	**श्रेवती**
प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ	पितृभय सुखैश्वर्य राज्यसुख प्राप्ति राज्यसुख प्राप्ति	शान्ति व सुख धननाश मातृनाश पितृनाष	मातृहानि पितृभय सुख धन–विद्या	बड़े भाई को कष्ट छोटे भाई को कष्ट पितृकष्ट	पितृनाश मातृनाश धननाश शांति व सुख	राज्यसुख प्राप्ति राज्यसुख प्राप्ति धनलाभ तन–मन पीड़ा

2.3.9 वार (उदयात् उदयं यावत् भानोः भूमिः सावनवासरः) :– दिनों के नाम को वार कहते है, जो भारतीय पद्धति के क्रमशः सूर्य, चन्द्र, मंगल अथवा भौम, गुरू या बृहस्पति, शुक्र तथा शनि के नाम पर समान्यतः रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरूवार, शुक्रवार, शनिवार के नाम से जाने जाते है। इनका मान एक सूर्योदय से दूसरे सर्योदय तक होता है। इसके स्वामी के नाम पर ही इन वारों का नामकरण हुआ है। जन्म, मरण, षोड़श संस्कार, यात्रा, यज्ञ, हवन–प्रतिष्ठादि सभी मांगलिक कार्यों में वार–प्रवृत्ति सूर्योदय से ही सर्वदा मानी जाती है तथापि प्रातः सन्ध्यादि नित्य करणीय कर्मो में अर्द्धरात्रि के उपरान्त अग्रिम वार को संकल्प में ग्रहण कर लिया जाता है।

2.3.9.1 शुभ–अशुभ वार :– सोमवार, बुधवार, गुरूवार व शुक्रवार सौम्यवारों की श्रेणी में आते है तथा रविवार, मंगलवार व शनिवार क्रूरवारों की श्रेणी में आते है। इन्हीं की संज्ञा के अनुसार ये अभीष्ट कर्मो में फलदायी होते है।

वारों की शुभता दिन–रात्रि के अनुसार भिन्न–भिन्न प्रभावोत्पादक होती है। यथा – रविवार, गुरूवार व शुक्रवार का प्रभाव रात्रि में नगण्य होता है तथा सोमवार, मंगलवार व शनिवार का प्रभाव दिन में नगण्य होता है।

बुधवार का फल सभी समय में एकसमान होता है। यथा –

न वारदोषाः प्रभवन्ति रात्रौ देवेज्यदैत्येज्यदिवाकराणाम्।

दिवा शशांकर्कजभूसुतानां सर्वत्र निन्द्यो बुधवारदोषः।। – ज्योतिर्निबन्ध एवं मुहूर्त्तचिन्तामणि

2.3.9.2 वार व उनके करणीय कार्य :–

वार	**देव**	**अधिदेव**	**करणीय कार्य**
रविार	शिव	अग्नि	राजकीय सेवा एवं अन्य राजकीय कार्यों के लिए शुभ है। यह ध्रुव एवं स्थिसंज्ञक वार है।
सोमवार	पार्वती	जल	सभी कार्यों के लिए शुभ है। यह वार चर एवं चलसंज्ञक है।
मंगलवार	कार्तिकेय	भूमि	युद्ध, द्युतक्रिड़ा (जुआ, सट्टा), यात्रा, कर्ज देने, सभा में जाने, मुकदमा प्रारम्भ करने के लिए शुभ है।यह वार उग्र एवं क्रूरसंज्ञक है।
बुधवार	विष्णु	हरि	विद्या (कला–काव्य) का प्रारम्भ, नवीन व्यापार करना,नवीन लेखन, पुस्तकों का प्रकाशन, धन–संग्रहणप्रार्थना–पत्र प्रस्तुत करने हेतु शुभ है। मिश्र व साधारण संज्ञा बुध को दी गयी है।
गुरूवार	ब्रह्मा	इन्द्र	विद्या का प्रारम्भ, वैवाहिक–कार्यक्रम, उच्चाधिकारियों से मिलन, नवीन काव्य लेखन, प्रकाशन, धन–संग्रह आदि शुभ कार्यों के लिए लघु व क्षिप्र संज्ञा गुरूवार को दी गयी है।

शुक्रवार	इन्द्र	इन्द्राणी	नवीन वस्त्र एवं आभूषणों को धारण करना, सौभाग्यवर्धकार्य चलचित्र शूटिंग कार्य एवं यात्रा जाने हेतु श्रेष्ठ है।मृदु एवं मैत्र संज्ञा शुक्रवार को दी गयी है।
शनिवार	काल	ब्रह्मा	नूतन गृहारम्भ, भूमि–क्रय, मशीनरी का शुभारम्भ, द्रव्य संग्रह, मकान का शिलान्यास (भूमिपूजन) आदि स्थिर कार्यों हेतु श्रेष्ठ है। यह वार दारूण व तीक्ष्ण संज्ञक है।

2.3.10 कालहोरा मुहूर्त्त :–

होरा	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
1	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
2	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू
3	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल
4	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि
5	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र
6	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध
7	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम
8	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
9	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू
10	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल
11	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि
12	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र

13	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध
14	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम
15	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
16	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू
17	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल
18	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि
19	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र
20	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध
21	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम
22	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
23	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू
24	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	रवि	सोम	मंगल

यदि किसी कार्य को करने हेतु कोई भी शुभ मुहूर्त नहीं मिल रहा हो तो उस कर्म को अन्य वार में भी विहित वार की कालहोरा (क्षणवार) में कर सकते है। एक कालहोरा सूर्योदय से 01–01 घण्टे का होता है, ये कालहोरायें सूर्यादिवार की होती है तथा प्रत्येक क्षणवार गत कालहोरेश से छठा होता है।

यदि उपरोक्त वारों के अतिरिक्त अन्य दूसरों कार्यों में अति आवश्यकता हो शास्त्रों में चौघड़ियों की व्यवस्था है। दिन में आठ (8) तथा रात्रि में आठ (8) चौघड़िये होते है अर्थात् एक अहोरात्र में कुद 16 चौघड़िये होते है, जिनमें निषिद्ध वार होते हुए भी दिन अथवा रात्रि के समय में भी आप अभीष्ट कार्य सम्पन्न कर सकते है।

2.3.11 चौघड़िया मुहूर्त विधि :–

दिनमान के आठ भाग करने पर आठ चौघड़िया मुहूर्त प्राप्त होते हैं अर्थात् प्रत्येक चौघड़िये का मान लगभग डेढ़ घण्टा (01 घण्टा 30 मिनट) होता है। चक्र में (प्रातः 06:00 बजे के माध्यमान से समय दिया गया है। सूर्योदय के अनुसार समय में परिर्वन किया जा सकता है।) :–

दिन में चतुर्घटिका मुहूर्त्त							
सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	वार
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	06-7:30
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	07:30-09
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	09-10:30
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	10:30-12
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12-1:30
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	1:30-03
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	03-4:30
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	4:30-06

रात्रि में चतुर्घटिका मुहूर्त्त							
सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	वार
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	06-7:30
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	07:30-09
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	09-10:30
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	10:30-12
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12-1:30
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	1:30-03
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	03-4:30
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	4:30-06

2.3.12 अभिजित् मुहूर्त्त :–

नौमी तिथि मधुमास पुनीता। सुकलपक्ष अभिजित् हरिप्रीता।।

मध्यदिवस अतिसीन न घामा। पावकाल लोक विश्रामा।।

जो भगवान् को अतिप्रिय है, जिसमें काल भी संसार के उपकार के लिए कुछ क्षण विश्राम करता है, इसी अभिजित् मुहूर्त्त, नवमी तिथि, चैत्रमास में मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम का आविर्भाव हुआ था। यदि कोई भी शुभमुहूर्त्त नहीं बनता हो तो सभी जातकादि कर्म अभिजित् मुहूर्त्त में किये जा सकते है।

दिनमान के मध्यभाग में 48 मिनट का अभिजित् मुहूर्त्त होता है जो कि सभी मांगलिक कार्यों में प्रशंसनीय है, किन्तु बुधवार के दिन अभिजित् का निषेध है।

अभिजित् का मान :–

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का चतुर्थ चरण + श्रवण नक्षत्र का आदिम चरण = अभिजित्

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की 15 घटी + श्रवण नक्षत्र की 04 घटी = अभिजित्

चन्द्रमा के राशि–अंश–कला–विकलाक अनुसार अभिजित् का मान :–

मकर राशि अन्तगर्त :– 09–06–40–00 से 09–10–53–20

2.3.13 प्रदोषकाल :– तिथियों में प्रदोष काल का निण्रय इस प्रकार किया जाता है

चतुर्थी का प्रथमप्रहर (3 घण्टे), सप्तमी की प्रथम डेढ़ प्रहर (4 घण्टा 30 मिनट), तथ त्रयोदशी के अग्रिम प्रहरद्वज (6 घण्टा) का समय **'प्रदोषकाल'** कहलाता है।

मतान्तर से षष्ठी या द्वादशी आधी रात्रि के बाद एकघटी पूर्वतक हो अथवा 09 घटी रात्रि तक तृतीय हो तो यह **'प्रदोष'** अध्ययन में वर्जित है तथा रात्रि में तीन प्रहर से पहिले सम्तमी या त्रयोदशी वर्तमान में हो तो वह **'प्रदोष'** भी अनध्याय होता है।

सदैव सूर्यास्त के पश्चात् तीन मुहूर्त्त (एक घंआ 12 मिनट) प्रदोष का मान होता है।

2.3.14 घातवार :– अधोलिखित राशि वालों के लिए निम्नलिखित वार अशुभ होते है। इन वारों में यथासम्भव यात्रा का तयाग करना चाहिए।

वार	**राशि**
रविवार	मेष
सोमवार	मिथुन
मंगलवार	मकर
बुधवार	कर्क
गुरूवार	तुला, कुम्भ
शुक्रवार	वृश्चिक, धनु, मीन
शनिवार	सिंह, वृष

2.3.15 दिशाशूल :– अधोलिखित वारों में निम्नलिखित दिशाओं की यात्रा यथासम्भव वर्जित रखनी चाहिए।

दिशा	निषिद्धवार
पूर्व	सोमवार, शनिवार
दक्षिण	गुरूवार

पश्चिम	रविवार, शुक्रवार
उत्तर	मंगलवार, बुधवार

2.3.16 वार में अशुभफलनाशक पदार्थ :–

जिस वार में यात्रा करनी हो, यदि वह तिथि अशुभ हो तो चक्रांकित पदार्थो का भक्षण करके अािवा इन वस्तुों का दानादि करके यात्रादि कार्य करने पर सफलता प्राप्त होती है तथा वारदोष नष्ट हो जाता है।

वार	**पदार्थ**
रविवार	शुद्व घी अथवा शिखरन
सोमवार	दूध या खी
मंगलवार	गुड़ अथवा कांजीबड़ा
बुधवार	तिल अथवा पका हुआ दूध
गुरूवार	दही
शुक्रवार	शुद्व घी अथवा कच्चा दूध
शनिवार	उड़द अथवा तैल से बनी वस्तु अथवा तिल

2.3.16 वार के अनुसार जन्म लेने वाले जातकों का फल

जन्मवार	**फल**
रविवार	पित्तप्रकृति, कार्यक्षेत्र में निपुणता, झागडालू, दानी, उत्साही, उग्र सस्वभाग।
सोमवार	बुद्धिमान, प्रिय कथावाचक, राजकृपा पाने वाला, सुख–दु:ख को बराबर मानने वाला।
मंगवार	दीर्घायु, वीर, महाबली, अपने परिवार में प्रधान तथा कुबुद्धि वाला होता है।
बुधवार	विद्वान् पण्डित, मधुरभाशी, सम्पत्ति से युक्त, सुन्दर आकषति लेखन कार्य से जीविका निर्वाह करने वाला तथा धनी होता है।
गुरूवार	प्रशंसनीय कार्यकर्ता, विवेकी, विद्वान्, ग्रन्थकर्ता, राजा का मन्त्री, साधारण लोगों से

पूजित होता है।

शुक्रवार बुद्धिमान, मनोहर रूप वाला, चंचल, देवता से द्वेश करने वाला, वाचाल होता है।

वर के अनुसार कर्म

रविवार :– राज्याभिशेक, गाना बाजाना, नयी सवारी पर चढ़ना, राज्यसेवा, गाय–बैलों का क्रय–विक्रय, हवन–यज्ञादि, मन्त्रोपदेश, क्रय–विक्रय, औषधि, शस्त्रव्यवहार तथा युद्ध।

सोमवार :– पेड़–पौधे, पुष्प व उपवन लगान, बीजारोपणा, स्त्रीविहार, गायन, यज्ञादिकार्य, नये वस्त्र धारण करना।

मंगलवार :– फूट डालना, झूठ बोलना, चोरी, विश, अग्नि, शस्त्र–प्रयोग, संग्राम, वध, कपअ, घमण्ड, सैन्यकर्म तथा विराम।

बुधवार :– चतुरता पूर्ण पुण्यकर्म, लिखना–पढ़ना, कलाकौशल, शिल्प–चित्र बनाना, धातु–क्रिया, नौकरी, प्रवेश, युक्ति, मैत्री, सन्धि, व्यायाम और वाद–विवाद।

गुरूवार :– धार्मिक कृत्य, नवग्रहों की पूजा, यज्ञ, विद्याभ्यास, मांगलिक कृत्य, वस्त्र–व्यवहार, गृहकार्य, यात्रारम्भ, रथ, घोड़ा, औशधि एवं आभूषण सम्बन्धी सभी शुभ कार्य।

शुक्रवार :– स्त्री, गायन,शय्या, मणि, रत्न, हीरा, सुगन्धि, वस्त्र, अलंकार, जमीन–जायदाद, व्यापार, गाय, द्रव्य, भण्डार व खेतीबाडत्री के कार्य।

शनिवार :– पाप, मिथ्याभाशण, चोरी, विश, अर्क निकालना, शस्त्र, नौकर–चाकर सम्बन्धी कार्य, हाथी बाँधना, मन्त्र की दीक्षा, गृह–प्रवो तथा सभी स्थिरकार्य।

जिसका जन्म दिन में होता है वह धर्माचरण से युक्त, अधिक पुत्र वाला, भोगी, सुवस्त्रों को धारणकर्ता, बुद्धिमान व सुन्दर आकृति वाला होता है।

रात्रि में जन्म लेने वाला जातक कम बोलने वाला, मलिन हृदय, पापात्मा, छिप कर पाप करने वाल, अधिक कामचेष्टा वाला होता है।

1.3.18 पंचकों में क्या करें और क्या नहीं ? (पंचक नक्षत्र – धनिष्ठा, शतभिशा, पू.भा., उ.भा., रेवती**)** :–

कुम्भ व मीन राशि में चन्द्रमा के रहते हुए धनिष्ठा के उत्तराभाद्रपद और रेवती ये पांच नक्षत्र पंचकों के माने गये है। पंचकों में मुख्य रूप से शवदाह, चारपाई बुनना, पलंग शय्या, चटाई, कुर्सी तखत, व्यवसाय गद्दी तैयार कराना, मकान की छत डालना, लैन्टर सैट करना, खम्भों को सैट करना, काष्ठ/ईंधन/लोहे के सरिये संग्रह करना तथा दक्षिण दिशा की यात्रा, दक्षिणाभिमुख नये भवन की सीढ़ियों पर चढ़ना आदि 'श्रीपति' के अनुसार वर्जित माना गया है।

पंचक के पांच नक्षत्रों में किए गये कृत्यों का फल पांच गुणा होता है। इसी तरह त्रिपुष्कर योग त्रिगुधित और द्विपुष्कर योग दुगुणित फल देते है। पंचाकों में पांच गुणा, त्रिपुष्कर योग में तिगुना और द्विपुष्कर योग में दोगुना हानि लाभ हुआ करता है। मृत्यु, व्याधि अन्याय व्यथा रोगोपद्रव होने पर शांति विधान की आवश्यकता पड़ती है। पंचक नक्षत्रों (धनि, शत, पूभा, उभा, रेवती) का विशेश विचार उपरोक्त वर्णित कृत्यों मे ही किया जाता है। शुभ कर्म विवाह मुण्डन, यज्ञोपवीत, गृहारंभ, गृहप्रवेष, वाणिज्यकर्म, वाहनादि के लेन–देन, फर्म संचालन, मूर्तिप्रतिष्ठा आदि सभी श्रेश्ठ मुहूर्तो में तो पंचक के पांचो नक्षत्र शुभ कहे गए है। सभी पर्वोत्सव, व्रत, रक्षाबन्धन, भैय्यादूज, महालक्ष्मी पूजानादि में पंचको का विचार नहीं किया जाता है। 'वृहछ्ज्योतिशसार' गन्ध में तो धनि, उभा, रेवती नक्षत्र सभी कार्यो में सिद्धिप्रद माने गये है। पूभा एवं शतभिशा नक्षत्र को साधारण रूप से सिद्धिदायक कहा गया है।

2.3.19 अग्निवास :–

जिस दिन हवन करना हो उस दिन तिथि और वार की संख्या जोड़कर एक ओर जोड़ना, पुनः 4 का भाग देना, यदि पूरा भाग लग जाए, 0 शेष रहे अथवा 3 शेष रहेतब अग्नि का वास पृथ्वी पर सुखकारक होता हैं। शेष 1 बचने पर आकाश में प्राणघातक, शेष 2 में पाताल में धननाशकारक होता हैं। तिथि की गणना शुक्ल प्रतिपदा से तथा वार की रविवार से करनी चाहिए।

नक्षत्र :– सम्पूर्ण आकाशमण्ड़ल को 12 राशियों के अतिरिक्त 27 नक्षत्रों में विभाजित किया गया है।

नक्षत्र	आकृति	तारा	स्वामी
1. अश्विनी	अश्वमुख3		अश्विनी कुमार
2. भरणी	योनि	3	यम
3. कृतिका	नापितक्षुर	6	अग्नि
4. रोहिणी	शकट	5	ब्रह्मा
5. मृगशिरा	हिरणमुख	3	चन्द्र
6. आर्द्रा	मणि	2	शिव
7. पुनर्वसु	गृह	4	अदिति
8. पुश्य	बाण	3	बृहस्पति
9. अश्लेशा	चक्राकार	5	सर्प
10. मघा	भवन	5	पितर
11. पूर्वाफाल्गुनी	चारपाई	2	भग

12. उत्तराफाल्गुनी	शय्या	2	अर्यमा
13. हस्त	हाथ	5	रवि
14. चित्रा	मोती	1	विश्वेदेव
15. स्वाती	मूंगा	1	वायु
16. विशाखा	तोरण	4	इद्राग्नि
17. अनुराधा	बलिर्भक्तपुंज	4	मित्र
18. ज्येष्ठा	कुण्ड़ल	3	इन्द्र
19. मूल	सिंहपुच्छ	11	राक्षस
20. पूर्वाशाढ़ा	हाथीदाँत	2	जल
21. उत्तराषाढ़ा	सिंहासन2		विश्वेदेव
अभिजित्	त्रिभुज	3	ब्रह्मा
22. श्रवण	वामन	3	विष्णु
23. धनिष्ठा	मृदंग	4	वसु
24. शतभिशा	वृत्त	100	वरूण
25. पूर्वाभाद्रपद	मंच	2	अजपाद
26. उत्तराभाद्रपद	युगल–पुरूष	2	अहिर्बुध्न्य
27. रेवती	मृदंग	32	पूशा

2.3.21 नक्षत्रों की सज्ञा एवं उनमें करणीय कर्म :–

संज्ञा	**नक्षत्र**	**करणीय कर्म**
ध्रुव–स्थिर	रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद	बीजरोपण, उद्यान लगाना, नगरप्रवेश, ग्रामवास वियकशान्ति, गायनविद्या का प्रथम अभ्यास, नूतन वस्त्रधारण, काम आभूषण–निर्माण–धारण

		तथा मैत्री आदि सभी स्थिर कार्य इसमें श्रेष्ठ हैं।
चल–चल	पुनर्वसु, स्वामी,	हाथी–घोड़ा–ऊँट–मोटर–गाड़ी आदि की सवारी,
		श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा वाटिका लगाना या प्रथम प्रवेश, व्यापार प्रारम्भ, मैथुन
		क्रिया, स्वर्ण–चाँदी–मणि–रत्नादि युक्त आभूषण निर्माण तथा विद्या को सीखने का प्रारम्भ आदि कर्म।
उग्र–क्रूर	भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी,	शत्रुताड़न, अग्नि का यत्र–तत्र प्रज्वलन, शठता करना,
	पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद	विष सेवन करना/कराना, यन्त्र–मन्त्र के माध्यम से किसी पर घात करना जैसे क्रूर कार्य तथा पशुओं का वशीकरण इस नक्षत्र में करणीय कर्म है।
मिश्र–साधारण	कृतिका व विशाखा	अग्निकार्य, वृषोत्सर्ग, अग्निहोत्र प्रारम्भ, वस्तु का सम्मिश्रण, बन्दी बनाना, विष–प्रयोग आदि हेय व भयंकर कर्म।
क्षिप्र–लघु	अश्विनी, पुष्य, हस्त अभिजित्	वस्तुओं का विक्रय, रतिक्रया, शास्त्रों का अध्ययन, आभूषण धारण करना, सहितय–संगीत–कला विषय कर्म व औषधि का आदान–प्रदान।
मृदु–मैत्र	मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा रेवती	गीत–वाद्य सम्बन्धी कर्म, नवीन परिधान–धारण, रतिक्रिया, मित्रता करना तथा अलंकार निर्माण
तीक्ष्ण–दारूण	आर्द्रा, अश्लेषा, ज्येष्ठा मूल	अभिचार कर्म (मारण, उच्चाटन, विद्वेषण आदि), कलोत्पादन, हाथी–घोड़ों का प्रशिक्षण, बीजवपन,

उद्यानारम, शान्तिक–पौष्टिक कर्म, गृह–ग्राम

प्रवेश,

संगीतविद्या का प्रारम्भ, आमोद–प्रमोद तथा नवीन

वस्त्र–आभूषण का धारण।

जन्मनक्षत्र विचार :–

1. अन्नप्राशन, उपनयन, चूड़ाकरण, राज्याभिषेक आदि में जन्मनक्षत्र प्रशस्त होता है।

2. यात्रा, सीमन्तोन्नयन तथा विवाह में जन्मनक्षत्र अनिष्ट होता है।

3. मुहूर्त्तदीपिका के अनुसार चूड़ाकरण, औषधि सेवन, विवाद, यात्रा व कर्णवेध में ही जन्म–नक्षत्र का निषेध है।

4. जन्म नक्षत्र से 25 वाँ तथा 27 वाँ नक्षत्र शुभकर्मों में त्याज्य है।

2.3.22 पंचांग में योगविचार :–

योग को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है। ''नैसर्गिक'' व ''तात्कालिक''। नैसर्गिक योगों का सदैव एक ही क्रम रहता है ये एक के बाद एक आते हैं। विष्कुम्भादि 27 योग नैसर्गिक श्रेणी में आते है, परन्तु तात्कालिक योग तो तिथि–वार–नक्षत्र आदि के विशेष संगम से बनते हैं। आनन्द प्रभृति एवं क्रकच, उत्पाद, सिद्धि तथा मृत्यु आदि योग तात्कालिक है।

योग	स्वामी	फल
1. विश्कुम्भ	यम	अशुभ
2. प्रीति	विष्णु	शुभ
3. आयुष्मान्	चन्द्र	शुभ
4. सौभाग्य	ब्रह्म	शुभ
5. शोभन	बृहस्पति	शुभ
6. अतिगण्ड्	चन्द्र	अशुभ
7. सुकर्मा	इन्द्र	शुभ

8. धृति	जल	शुभ
9. शूल	सर्प	अशुभ
10. गण्ड	अग्नि	अशुभ
11. वृद्धि	सूर्य	शुभ
12. ध्रुव	भूमि	शुभ
13. व्याघात	वायु	अशुभ
14. हर्शण	भग	शुभ
15. वज्र	वरूण	अशुभ
16. सिद्धि	गणेश	शुभ
17. व्यतिपात	रूद्र	अशुभ
18. वरियान	कुबेर	शुभ
19. परिघ	विश्वकर्मा	अशुभ
20. शिव	मित्र	शुभ
21. सिद्ध	कार्तिकेय	शुभ
22. साध्य	सावित्री	शुभ
23. शुभ	लक्ष्मी	शुभ
24. शुक्ल	पार्वती	शुभ
25. ब्रह्म	अश्विनी कुमार	शुभ
26. ऐन्द्र	पितर	अशुभ
27. वैधृति	दिति	अशुभ

2.3.23 व्यतिपात :–

यह उपद्रवी योग है। यह योग नैसर्गिक व तात्कालिक दोनों श्रेणियों मे आता हैं। अमावस्या को रविवार या श्रवण, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्लेशा अथवा मृगशिरा नक्षत्र के योग से ''व्यातिपातयोग'' बनता है।

2.3.24 वैधृति :–

यह भी व्यतिपात के समकक्ष ही है। इसे भी शुभकर्मो में त्याज्य बताया है।

शेष अशुभ योगों में परिघ का पूर्वार्द्ध, विष्कुम्भ व वज्र की आदिम 03 घटीख व्याघात की प्रारम्भिक 09 घटी, शूल की प्रथम 05 घटी तथा गण्ड–अतिगण्ड की आदिम 6–6 घटियाँ विशेषतः त्याज्या है।

2.3.25 आनन्दादि 28 योग :–

वार व नक्षत्र के योग से तात्कालिक आनन्दादि 28 योगों का आनयन होता है। इन योगों को ज्ञात करने के लिए वार विशेष को निर्दिष्ट नक्षत्र से विद्यमान नक्षत्र तक साभिजित् गणना की जाती है। रविवार को अश्विनी से सोमवार को भरणी से, मंगलवार को अश्लेशा से, बुधवार को हस्त से, गुरू को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराशाढ़ा से तथा शनिवार को शतभिशा से तद्दिन के चन्द्रर्क्ष तक गिनने पर आप्त संख्या को ही उस दन वर्तमान आनन्दादि योग का क्रमांक प्राप्त होता है।

चक्र

योग	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि	फल
आनन्द अर्थसिद्धि	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.शा.	शतभिशा	
कालदण्ड	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा	मृत्युभय
धूम्र	कृत्ति.	पुन.	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	दुःख
प्रजापति (धाता)	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	सौभाग्य
सुधाकर (सौम्य)	मृगशिरा	अश्लेशा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शत.	अश्विनी	बहुमुखी
ध्वाड्क्ष	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	अर्थनाश
ध्वजा (केतु)	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	सौभाग्य

श्रीवत्स	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	ऐश्वर्य	
वज्र	अश्लेषा	हस्त	अनुराध	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	क्षयक्षय	
मुद्गर	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आद्रा	धननाश	
छत्र	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु		
राजसम्मान									
मित्र	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	राहिणी	पुष्य	सौख्य	
मानस	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शत.	अश्विनी	मृग.	अश्लेषा	सौभाग्य	
पद्म	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	धनागम	
लुम्बक	स्वाती	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.		
लक्ष्मीनाश									
उत्पात	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	प्राणनाश	
मृत्यु	अनुराधा	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	मरणभय	
काण	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा		
क्लेशवृद्धि									
सिद्धि	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती		
अभीष्टसिद्धि									
शुभ	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	कल्याण	
अमृत	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा		
राजसम्मान									
मुसल	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अर्थक्षय	
अन्तक	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	मूल		
रोग/बुद्धिनाश									
(गद)									
कुंजर	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	कुलवृद्धि	
(मातंग)									

राक्षस	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	अश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	बहुपीड़ा
चर	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित्	कार्यलाभ
सुस्थिर	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाती	मूल	श्रवण	गृहप्राप्ति
(प्र) वर्धमान	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	सुमंगल

दोष नरिहार :– पूर्वोक्त योगों में साधारण श्रेणी के योगों की प्रारम्भिक घटियों का त्याग कर देने के पश्चात् उनकी अशुभता की दोषपत्ति नहीं रहती है, परन्तु कालदण्ड, उत्पात, मृत्यु व राक्षस योग समग्र रूप से त्याज्य है। अन्य योगों की त्याज्य घटियाँ चक्र में प्रदिष्ट की गयी है।

योग	धूम्र	ध्वांक्ष	वज्र	मुद्गर	मद्म	लुम्ब	काण	मुसल	अन्तक
घटियाँ	1	5	5	5	4	4	2	2	7

नोट :– कुयोग के समय यदि कोई अन्य सिद्धि आदि सुयोग भी वर्तमान हो तो सुयोग का ही फल मिलता है, कुयोग का नहीं। यथा –

अयोगः सिद्धियोगश्च द्वावेतौ भवतो यदि।

आयोगो हन्यते तत्र सिद्धियोगः प्रवर्त्तते।। – राजमार्त्तण्ड

क्रकचादि तात्कालिक योग :–

तिथि–वार तथा नक्षत्र के विशिष्ट संगम से आविर्भूत योगों का मुहूर्तशोधन में महत्वपूर्ण स्थान है। अतः ऐसे ही कुछ प्रचलित योगों का विवरण चक्रों में उल्लेखित है :–

तिथिवार जनित योग

योग	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
क्रकच	12	11	10	9	8	7	6
संवर्त	7	×	×	1	×	×	×
दग्ध	12	11	5	3	6	8	9
विष	4	6	7	2	8	9	7
अग्निजिव्हा	12	6	7	8	9	10	11
मृत्यु	1, 6	2, 7	1, 6	3, 8	4, 9	2, 7	5, 10

	11	12	11	13	14	12	15/30
सिद्धि	×	×	3, 8	2, 7	5, 10	1, 6	4, 9
			12	12	15, 30	11	14
कुलिक	7	6	5	4	3	2	1
अमृत	5, 10	5, 10	2, 7	1, 6	3, 8	4, 9	1, 6
	15, 20	15, 20	12	11	13	14	11
रत्नांकर	3, 8	1, 6	4, 9	4, 10	2, 7	5, 10	3, 8
	13		14	15/30	12	15/30	13

तिथिवार जनित योग

योग	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरू	शुक्र	शनि
यमघण्ट	मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृतिका	रोहिणी	हस्त
दग्ध	भरणी	चित्रा	उ.षा.	धनिष्ठा	उ.फा.	ज्येष्ठा	रेवती
अमृत	हस्त	मृगशिरा	अश्विनी	अनुराधा	पुष्य	रेवती	रोहिणी
उत्पाद	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.
सर्वार्थसिद्धि	अश्विनी	रोहिणी	अश्विनी	कृतिका	अश्विनी	अश्विनी	रोहिणी
	पुष्य	मृगशिरा	कृतिका	रोहिणी	पुनर्वसु	पुनर्वसु	स्वाती
	उत्तरात्रय	पुष्य	अश्लेषा	मृगशिरा	पुष्य	अनुराध	श्रवण
	हस्त, मूल	अनुराधा	उ.फा.	हस्त	अनुराधा	श्रवण	
		श्रवण		अनुराधा	रेवती	रेवती	
अमृत	रोहिणी	अश्विनी	कृतिका	कृतिका	पुनर्वसु	अश्विनी	रोहिणी
	उत्तरात्रय	रोहिणी	पुष्य	राहिणी	पुष्य	पू.फा.	स्वाती

	पुष्य, हस्त	मृगशिरा	अश्लेषा	अनुराधा	स्वाती	उ.फा.	
	मूल, रेवती	पू.फा.	स्वाती	शतभिषा	अनुराधा	अनुराधा	
		उ.फा.	उ.भा.			श्रवण	
		हस्त	रेवती			उ.भा.	
		श्रवण				पू.भा.	
		धनिष्ठा					
		पू.भा.					
		उ.भा.					
प्रशस्त	रेवती	हस्त	पुष्य	रोहिणी	स्वाती	उ.फा.	मूल

क्रकचादि योग–प्रयोजन :–

क्रकच, संवर्त, दुग्ध, विष, अग्निजिव्हा, मृत्यु, कुलिक, उत्पात और यमघण्टकादि तिथि, वार, नक्षत्र से उद्गत समस्त योग, मंगल कर्मो में अशुभ होने के कारण वर्जित है। परंच, सिद्धि, अमृत–सिद्धि, सर्वार्थसिद्धि, अमृत रत्नांकुर एवं प्रशस्तादि योग अपने नाम के अनुसार (यथानाम तथा गुणाः) ही फलदायी होते है।

2.3.27 करण :–

तिथि का आधा भाग करण कहलाता है। कृष्णपक्ष में तिथि संख्या को सात से विभाजित करने पर प्राप्त अवशिष्ट संख्यक करण तिथि के पूर्वार्द्ध में तथा शुक्लपक्ष में द्विगुणित तिथि संख्या में 02 घा कर सात का भाग देने पर शेषांक क्रमसंख्या वाला करण उस तिथि के पूर्वार्द्ध मे स्थित होते है। उससे अग्रिम क्रम प्राप्त करण तिथि के उत्तरार्ध में होता है। बवादि 11 करणें का क्रम उनके स्वामी तथा विभिन्न तिथियों में उनके अस्तित्व का निम्न चक्र में प्रदर्शन किया जाता है।

करण	**स्वामी**	**शुक्लपक्षतिथि**	**कृष्णपक्ष तिथि**
चर करण :			
बव	इन्द्र	5, 12 पूर्वार्द्ध, 1, 8 15 उत्तरार्ध	4, 11 पूर्वार्द्ध
बालव	ब्रह्मा	2, 9 पूर्वार्द्ध, 5, 12 उत्तरार्ध	1, 8 पूर्वार्द्ध, 4, 11 उत्तरार्ध
कौलव	मित्र	6, 13 पूर्वार्द्ध, 2, 9 उत्तरार्ध	5, 12 पूर्वार्द्ध, 1, 7, 8 उत्तरार्ध
तैतिल	विश्वकर्मा	3, 10 पूर्वार्द्ध, 6, 13 उत्तरार्ध	2, 9 पूर्वार्द्ध, 5, 12 उत्तरार्ध

गर	भूमि	7, 14 पूर्वार्द्ध, 3, 10 उत्तरार्ध	6, 13 पूर्वार्द्ध, 2, 9 उत्तरार्ध
वणिज	लक्ष्मी	4, 11 पूर्वार्द्ध, 7, 14 उत्तरार्ध	3, 10 पूर्वार्द्ध, 6, 13 उत्तरार्ध
विष्टि	यम	8, 15 पूर्वार्द्ध, 4, 11 उत्तरार्ध	7, 14 पूर्वार्द्ध, 3, 10 उत्तरार्ध

स्थिर करण :

शकुनि	कलि	×	14 उत्तरार्ध
चतुष्पद	यद्र	×	30 उत्तरार्ध
नाग	सर्प	×	30 उत्तरार्ध
किंस्तुघ्न	मरूत्	1 पूर्वार्द्ध	×

2.3.27.1 करण का शुभ व अशुभ विवेचन :–

बावादि प्रथम सप्त **''चरसंज्ञक''** तथा शकुन्यादि चतुष्ट्य **''स्थिरसंज्ञक''** होते हैं। बवादि छः करणों में मांगलिक कर्म शुभ, भद्रा सर्वथा त्याज्य तथा अन्तिम चार करणोंमें पितृकर्म प्रशस्त है।

करण	**करणीय कर्म**
बल	बलवीर्यवद्धक पौष्टिक कर्म
बालव	अध्ययन, अध्यापन, यज्ञ, दान
कौलव	स्त्रीकर्म एवं मैत्रीकरण
तैतिल	सौभाग्यवती स्त्री के प्रियकर्म
गर	बीजारोपण व हल–प्रवहण
वणिज	व्यापारकर्म
विष्टि	अग्नि लगाना, विष देना, युद्धारम्भ, दण्ड देना तथा समस्त दुष्टकर्म
शकुनि	औषधि निर्माण व सेवन, मन्त्र साधन तथा पौष्टिक कर्म
चतुष्पद	राज्यकर्म व गौ–ब्राह्मण विषयक कर्म
किंतुघ्न	मंगलजनक कर्म

नाग	मंगलिकर्म वर्जित

2.3.28 भद्राविचार :–

देव–दानवों के समरकालिक अवसर पर महादेव की रौद्ररस सम्पनन आँखों ने उनके शरीर पर दृष्टिपात किया। तत्काल उनकी देह से गर्दभ – मुख, तीन चरण, सप्तभुजा, कृष्णवर्ण, सुविकसित दाँत, प्रतवाहनवाली तथा मुख से अग्नि उगलत हुई देवी की प्रादुर्भाव हुआ। प्रस्तुत देवी ने राक्षसों का शमन करते हुए देवताओं का संकटशमन किया। अतः देवों ने प्रसन्न होकर देवी को विष्टि–भद्रादि संज्ञाओं से विभूषित करके कारणों में स्थापित किया।

तिथियों के पूर्वार्द्ध और परार्द्ध के अनुरूप ही भद्रा की विद्यमानता जाननी चाहिए। उत्तरार्ध की भद्रा दिन में तथा पूर्वार्द्ध की भद्रा रात्रि में शुभ होती है।

पक्ष		कृष्ण			शुक्ल			
तिथि	3	7	10	14	4	8	11	15
पूर्वार्द्ध	×	भद्रा	×	भद्रा	×	भ्रदा	×	भद्रा
उत्तरार्ध	भद्रा	×	भद्रा	×	भद्रा	×	भद्रा	×

चन्द्रमा की राशि–संचरण के अनुसार भद्रा का वास होता है :–

लोकवास	**मृत्यु**	**स्वर्ग**	**पाताल**
चन्द्रराशि	4, 5, 11, 12	1, 2, 3, 8	6, 7, 9, 10
भद्रामुख	सम्मुख	ऊर्ध्वमुख	अधोमुख

भद्रा में यात्रा निषिद्ध है, परन्तु आवश्यक होने पर जिस दिशा में भद्रा का वास, वही दिशा प्रयाणार्थ विशेषतः त्याज्य है :–

तिथि	दिग्वास	तिथि	दिग्वास
3	ईशान	4	वश्चिम
7	दक्षिण	8	आग्नेय
10	वायव्य	11	उत्तर
14	पूर्व	15	नैर्ऋत्य

2.3.28.1 भद्रा मुख–मुख :– निम्नलिखित चक्र में विभिन्न प्रहरों की निर्दिष्ट घटियों में भद्रा के मुख और पुच्छ का संकेत किया गया है। शुक्लपक्ष की भद्रा मे आदिम और कृष्णपक्ष की अन्तिम घटियाँ ही इस विषय में ज्ञातव्य है।

पक्ष	**कृष्ण**	**भाुक्ल**	**कृष्ण**	**भाुक्ल**	**कृष्ण**	**भाुक्ल**	**कृष्ण**	**भाुक्ल**
तिथि	3	4	7	8	10	11	14	15
प्रहर	8	5	3	2	6	7	1	4
मुखघटी	5	5	5	5	5	5	5	5
प्रहर	7	8	2	1	5	6	4	3
पुच्छघटी	3	3	3	3	3	3	3	3

भद्रामुख व पुच्छ दोनों ही शुभकार्यों में त्याज्य है तथापि आवश्यक होने पर शुक्लपक्ष में ''भद्रापुच्छ'' और कृष्णपक्ष में ''भद्रामुख'' मंगलकार्यों में ग्राह्य है। प्रहर–गणना तिथि के प्रारम्भ से ही करनी चाहिए। सूर्योदय से नहीं।

2.3.28.2 भद्रा अंगविभाग :–

एक तिथि का अर्धभाग 30 घटी परिमित होती है। अतः भद्रा के विभिन्न अंगों में यथा–प्रदिष्ट घटियों का न्यास और तज्जनित फल निम्न है :–

घटी	5	1	11	4	6	3
भद्रांग	मुख	गर्दन	वक्षस्थल	नाभि	कमर	पुच्छ
फल	कार्यनाश	मष्त्यु	द्रव्यनाश	कलह	बुद्धिनाश	कार्यसिद्धि

प्रत्येक भद्रा की अन्तिम तीन घटियों में शुभकार्य किये जा सकते है। विभिन्न तिथियों मे विद्यमान भद्रा को पक्ष–भेद के अनुसार संज्ञाएँ प्रदान की गयी है। कृष्णपक्ष की भद्रा को में ''वृश्चिकी'' तथा शुक्लपक्ष की भद्रा ''सर्पिणी'' के रूप में बताया गया है। बिच्छु का डंक पुच्छ में तथा सर्प का दंश (विष) मुख में होने के कारण वृश्चिकी भद्रा की पुच्छ और सर्पिणी भद्रा का मुख विशेषतः त्याज्य है।

2.3.28.3 भद्रा में शुभाशुभ करणीय कर्म :– विष्श्किाल में किसी को बाँधना/कैद करना, विष देना, अग्नि जलाना, अस्त्र–शस्त्र का प्रयोग, कर्तन (काटना) भैंस, घोड़ा और ऊँट सम्बन्धी अखिल कर्म तथा उच्चाटनादि कर्म प्रशस्त है।

विवाहादि मांगलिक कष्त्य, यात्रा और गष्हारम्भ व गष्हप्रवेष भद्रा में त्याज्य बताये गये है।

भद्रा में अपवाद :–

1. यदि दिन की भद्रा रात्रि और भद्रा दिन में प्रवेश कर जाये तो भद्रा निर्दोष हो जाती है। यथा

रात्रिभद्रा यदह्नि स्याद् दिवा भद्रा यदा निशि।

न तत्र भद्रादोशः स्यात् सा भद्रा भद्रदायिनी।। – पीयूषधारा

2. मंगलवार, भद्रा, व्यतिपात, वैधृति तथा प्रत्यरि, जन्मतारादि मध्यान्ह्न के उपरान्त शुभ होते हैं।

3. मीन संक्रान्ति में महादेव व गणेश की आराधना–अर्चना में, देवी पूजा हवनादि में तथा विष्णु–सूर्य साधना में भद्रा सर्वथ शुभदायक होती है। यथा –

स्यात्तु भद्राय भद्रा न शंभोर्जपे मीनराशिर्न योगस्तथाप्यर्चने।

होमकाले शिवायास्तमा तद्भुवः साधने सर्वकालोऽथ मेशेनयोः।। – ज्योर्विदाभरण

2.3.29 राहुकाल का यथार्थ :– अभीष्ट तारीख को स्थानीय सूर्योदय और सूर्यास्तकाल का अन्तर कर दिनमान ज्ञात कीजिए। इस दिनमान को आठ (8) से भाग देने पर यामार्ध (आधा प्रहर) ज्ञात होगा। प्रथम यामार्ध का प्रारम्भकाल सूर्योदयकाल ही है। इसमें यामार्ध के घ.मि. जोडने पर प्रथम यामार्ध का समाप्तिकाल (अथवा द्वितीय यामार्ध का प्रारम्भकाल) ज्ञात होगा। इसमें पुनः यामार्ध के घ.मि. जोड़ने पर द्वितीय यामार्ध का समाप्तिकाल निकल आएगा। एसी प्रकार उत्तरोत्तर बार–बार जोड़ने पर आठों यामार्धो के यथार्थ प्रारम्भ और समाप्तिकाल ज्ञात हो जाएंगे। रविवार को आठवां, सोमवार को दूसरा, मंगलवार को सातवां, बुधवार को पाँचवा, गुरू को छठा, शुक्र को चौथा एवं शनि को तीसरा यामार्ध राहुकाल कहलाता है। आजकल प्रयोग में लाया जाने वाल राहुकाल का प्रारम्भ–समाप्तिकाल अशास्त्रीय है।

2.3.30 शिववास जानने का प्रकार –

तिथिं तु द्विगुणीं कृत्य पुनः पंच समान्वितम्।

मुनिभिस्तु हरेद्भागं भोशं च शिववासनम्।।

अर्थात् तिथि का 2 से गुणा करके 5 जोडे तत्पश्चात् 7 का भाग देवे, शेष 1 रहे तो शिववास कैलाशपर्वत पर, 2 में गौरीपार्श्व में, 3 में वृषारूढ़, 4 से सभा में सामान्य, 5 भोजन में, 6 से क्रीडा तथा शून्य में श्मशान में शिव का वास होता है।

शिवार्चन के लिए भाुभ तिथियाँ :–

शुक्लपक्ष में :– 2, 5, 6 ,7 9, 12, 13, 14 एवं कृष्णपक्ष में :– 1, 4, 5, 6, 8, 11, 12, 30

शिववास का फल – कैलाश में यदि शिवाजी का वस हो सुखकारक होता है। गौरी के साथ शुभकारक, वृषभ पर आरूढ़ हो तो धन व वैभव से युक्त, क्रीडा में हो तो सन्तापकारक, सभा व भोजन में मध्यम फलदायी, श्मशान में मृत्युदायी होता है।

2.4 सारांश :–

पंचांग के व्यापारिक जीवन में उपयोग से सम्बन्धित इस इकाई के वर्णनों का अध्ययन करके आपने जाता कि पूर्व में पंचांग के पाँच अंग न होकर तीन अथवा दो ही अंग होते थे। आधुनिक पंचांग पाँच आंगों वाला होकर विभिन्न क्षेत्रों के ज्ञान व निर्णय में सहायक है। संवत्सर से सम्बद्ध महत्वपूर्ण तथ्य, विभिन्न तिथि–वार–नक्षत्र–मुहूर्त्त कालादि में करणीय एवं अकरणीय की जानकारी प्रस्तुत इकाई का कर्ण्य–विषय है। उक्त इकाई में योग विचार, ग्रहों के काल विचार, तिथियों आदि के विभागशः वर्णन सम्यक् तालिकाओं का निर्माण कर स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार विभिन्न मांगलिक कार्यों के वर्णन आदि के सहायक रूप तथ्यों के चित्रण द्वारा पंचांग की विस्तष्त जानकारी कराने का प्रयास इस इकाई के अन्तर्गत किया गया है।

अतः प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप दैनिक कर्मों से लेकर मनुष्य जीवन के समस्त मांगलिक एवं आसन्न कार्यों का काल निर्णय करने में सक्षम होते हुए पंचांग से सम्बन्धितत समस्त तथ्यों को समझा सकेंगे।

2.5 शब्दावली :–

1. पंचांग = जिसके पाँच अंग हो,
2. सम्वत्सर = भारतीय वर्ष
3. अयन = सूर्य परिभ्रमण चक्र
4. सौरमास = सूर्य संक्रान्ति मास
5. गण्ड़ान्त = पर्व का आदि व अनत
6. काल = समय
7. स्वयंसिद्ध = अबूझ
8. आनयन = स्पष्ट करना
9. पुनिभिः = सप्तऋषि

2.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न –1 : पंचांग के पाँच अंग कौनसे है ?

उत्तर : तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण – इनसे मिलकर पंचांग का निर्माण होता है।

प्रश्न –2 : सम्वत्सर कितने होते है ?

उत्तर : सम्वत्सर 60 होते है।

प्रश्न –3 : दैवी ऋतु एवं पितर ऋतुओं के नाम लिखिए ?

उत्तर : बसन्त, ग्रीष्म एवं वर्षा को दैवी ऋतु एवं शरद्, हेमन्त एवं शिशिर ऋतु को पित ऋतु कहते हैं।

प्रश्न –4 : सौरवर्ष व चान्द्रवर्ष का मान लिखिए ?

उत्तर : सौरवर्ष 365 दिन – 15 घटी – 31 पल – 30 विपल

चान्द्रवर्ष : 354 दिन – 22 घटी – 01 पल – 33 विपल

प्रश्न –5 : अमावस्या व पूर्णिका के भेद बताईये?

उत्तर : प्रातः काल व्यापिनी अमावस्या को **''सिनीवाली''**, चतुर्दशी से विद्धा को **''दर्श''** तथा प्रतिपदा से युक्त अमावस्या को **''कुहू''** संज्ञक कहते हैं।

रात्रि का एक कलाहीन और दिन में पूर्णचनद्र से सम्पन्न **''अनुमति''** संज्ञक पूर्णिमा चतुर्दशीयुक्त होती है, परन्तु रात्रि में पूर्ण चन्द्रमा सहित पूर्णिमा प्रतिपदा से युक्त **''राका''** संज्ञक होती है।

प्रश्न –6 : तिथियों की संज्ञा बताइये ?

उत्तर : नन्दा (1–6–11), भद्रा (2–7–12), जया (3–8–13), रिक्ता (4–9–14) व पूर्णा (5–10–15)।

प्रश्न –7 : तिथि गण्ड़ान्त व नक्षत्र बताईये ?

उत्तर : पूर्णा व नन्दा तिथियों की क्रम से अन्त व आदिम दो–दो घटियों को तिथि गण्ड़ान्त कहते है। कर्क–सिंह, वृश्चिक–धनु, मीन–मेष राशियों के अन्त और आदिम की आधी–आधी घटी को लाग्नगण्ड़ान्त कहते हैं; रेवती–अश्विनी, अश्लेषा–मघा तथा मीन–मेष के नक्षत्रों में अन्त व आदिम की दो–दो घटियों को नक्षत्र गण्ड़ान्त कहते हैं।

प्रश्न –8 : नक्षत्र व दिनमान के अनुसार अभिजित् का मान बताइये ?

उत्तर : उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की 15 घटी व श्रवण नक्षत्र की 04 घटी मिलकर अभिजित् संज्ञक होती है। तथा दिनमान क मध्यभाग में 48 मिनट का काल अभिजित् मुहूर्त कहलाता है।

प्रश्न –9 : सोमवार का करणीय कर्म बताइये ?

उत्तर : पेड़–पौधे? पुष्प व उपवन लगाना, बीजारोपण, स्त्रीविहार, गायन, यज्ञादिकार्य व नये वस्त्र धारण सोमवार को श्रेष्ठ रहता है।

प्रश्न –10 : चर करणों के नाम लिखिए ?

उत्तर : बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि – ये सात चर करण है।

2.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न –1 : साठ सम्वत्सरों में नाम व उनके स्वामी बताइये ,

प्रश्न –2 : तिथि का परिचय दीजिये ?

प्रश्न –3 : नक्षत्र का परिचय दीजिये ?

प्रश्न –4 : योग का परिचय दीजिये ?

प्रश्न –5 : करण का परिचय दीजिये ?

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. **धर्मशास्त्र का इतिहास**

   लेखक – डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे

   प्रकाशन :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2. **ज्योतिष सम्राट् पंचांग,**

   सम्पादक डॉ. रवि शर्मा

   प्रकाशन :– अ.भा. प्रा. ज्यो. शो. सं., जयपुर

3. **कालमाधव,**

   सम्पादक – ब्रजकिशोर स्वाई

   प्रकाशन – चौख बा संस्कृत संस्थान वाराणासी

4. **मुहूर्त्त चिन्तामणि,**

   व्याप्याकार – केदारदत्त जोशी

   प्रकाशन – मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी

इकाई – 3

षोड़श संस्कारों का परिचय एवं यज्ञोपवीत का पूजन सहित धारण विधि

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 वर्ण्य विषय – सोलह संस्कार

3.4 शब्दावली

3.5 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

3.6 लघुत्तरात्मक प्रश्न

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.1 प्रस्तावना

संस्कृति और संस्कार दोनों अनन्यार्थ शब्द है। संस्कार शब्द का अर्थ स्पष्ट करने के लिए जड़ वस्तु के संस्कार का उदाहरण दिया है, किन्तु हम तो यहाँ मनुष्य के संस्कार का विचार कर रहे है। स्नानादि द्वारा शरीर की शुद्धि के लिए शरीर–संस्कार शब्द से हमारा हेतु मनुष्य के मन, बुद्धि, भावना, सामाजिकता आदि को विकसित करने से है।

मानव जीवन विशुद्ध और उन्नत बनाने के उद्देश्य से संचालित षोड़श संस्कार व्यवस्था अनादिकाल से भारतीय संस्कृति का अभिन्न अङ्ग रही है। संस्कार–संज्ञक क्रिया–कलाप प्रत्येक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के लिए अनिवार्य कर्तव्य है, परन्तु कालान्तर में यह विशेषतया ब्राह्मणों के लिए ही करणीय माना जाने लगा है।

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद्द्विज उच्यते अर्थात्मनुष्य जन्म से द्विज नहीं होता है, अपितु संस्कारों के पश्चात्ही उसकी द्विज संज्ञा होती है। अपने–अपने कर्म के अनुसार ही वर्णों का निर्धारण होता है।

षोड़श संस्कारों की संख्या के विषय में स्मृतिकारों के विभिन्न मत :–

महर्षि	मतानुसार संस्कार
आश्वलायन	११
पारस्कर	१२

महर्षि मनु	१३
वेदव्यास	१६
अङ्गिरा	२५
गौतम	४०

षोड़श संस्कार निम्नलिखित है :–

१. गर्भाधान	२. पुंसवन	३. सीमन्तोन्नयन	४. जातकर्म
५. नामकरण	६. निष्क्रमण	७. अन्नप्राशन	८. चूड़ाकरण
६. कर्णवेध	१०. उपनयन	११. वेदारम्भ	१२. केशान्त
१३. समावर्तन	१४. विवाह	१५. त्रेताग्नि संग्रह संस्कार	१६. अन्त्येष्टि।

3.2 उद्दे□य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्जिज्ञासु विभिन्न विषयों का ज्ञान कर पायेंगे :–

१. जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त सभी संस्कारों का ज्ञान

२. संस्कारों का महत्त्व एवं जीवन में उनका व्यावहारिक ज्ञान

3.3 वर्ण्य विशय – सोलह संस्कार

आजकल बहुत से ऐसे दम्पति है जो सन्तान न होने के कारण दुःखी है लेकिन ऐसा नहीं है कि उनके सन्तान हो ही नहीं सकती। आयुर्वेद में ऐसे कई उपाय दिए गये है जिनके द्वारा गर्भाधान हो सकता है। यहाँ हम उन्हीं उपायों की विशद विवेचना करेंगे।

गर्भ क्या है? :– गर्भ शब्द से मन, चेतना, पञ्चमहाभूतों के विकारों का बोध होता है। गर्भाशय में स्थित पुरुष का शुक्र और स्त्री का शोणित जब एक दूसरे से युक्त हो जाते है और उनमें आत्मा का अधिष्ठान हो जाता है, तो वह अष्ट प्रकृति और षोड़श विकृतियों से युक्त सजीवपिण्ड ही गर्भ कहलाता है।

गर्भावक्रान्ति का अर्थ :– गर्भावक्रान्ति का अर्थ पुरुष और स्त्री बीजों का आपस में मिलकर गर्भोत्पत्ति की क्रिया करना है। अवक्रान्ति से अवक्रमण, अवतरण, उपगमन आदि का बोध होता है। शुक्र और आर्त्तव के सम्मिश्रण से गर्भ के उत्पन्न होने तक की विधि गर्भावक्रान्ति कहलाती है।

विवाह का गर्भाधान पारस्परिक निकटतम सम्बन्ध है इसलिए गर्भाधान हेतु दोनों (स्त्री–पुरुष) का वयस्क होना अत्यावश्यक है। इससे पहले यदि गर्भाधान होता है तो सन्तान अल्पजीवी, नष्ट या दुर्बल होती हैं। जब माता–पिता का शारीरिक–मानसिक दृष्टि से सम्पूर्ण विकास होगा तभी स्वस्थ्य सन्तान हो सकती है।

गर्भस्य आधानं गर्भाधानम् अर्थात्जिस कर्म के द्वारा गर्भ में बीज का स्थापन पुरुष द्वारा स्त्री में किया जाता है, उसे गर्भाधान कहा जाता है। इस संस्कार से वीर्य सम्बन्धि अथवा गर्भ सम्बन्धित पापों का नाश हो जाता है। सर्वप्रथम ऋतु स्नान के पश्चात्भार्या स्त्रीधर्म में होने से या रजोदर्शन से १६ दिन तक गर्भाधान के योग्य होती है।

रजोदर्शन से कन्या प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट दिवस – ५, ७, ६, ११, १३, १५

रजोदर्शन से पुत्र प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट दिवस – ६, ८, १०, १२, १४, १६

रजोदर्शन दिन के चार के पश्चात्गण्डान्त आदि व्यतिपात, वैधृति, श्राद्ध, दूषित नक्षत्र को त्यागकर उपरोक्त दिवसों में व्यक्ति को गणेश–मातृका–पुण्याहवाचनादि कर्म करके शुभरात्रि में रतिक्रिया करनी चाहिए। किन्तु आचरण के लिए कठोर विषय है।

मैथुन और सगर्भता :– मैथुन क्रिया में प्रवृत्त होने के पहले कुछ आवश्यक आहुतियाँ देकर एवं निम्नलिखित मन्त्रों को पढ़ते हुए ही मैथुन में प्रवृत्त होना चाहिए :–

आयुरसि सर्वतः प्रतिष्ठासि धात्वा दधातु विधातात्वा दधातु ब्रह्मवर्चसा भवेदिति।

ब्रह्मा बृहस्पतिर्विष्णुस्सोम सूर्यस्तथाऽश्विनौ भगोऽथ मित्रावरुणौ वीरं ददातु मे सुतम्

अहिरसि आयुरसि सर्वतः प्रतिष्ठासि धातात्वा।

दधातु विधातात्वा दधातु ब्रह्मवर्चसा भवेदिति

ब्रह्माबृहस्पतिर्विष्णुः सोमः सूर्यस्तथाऽश्विनौ।

भगोऽथ मित्रा वरुणौ पुत्रं वीरं ददातु मे

इसके बाद जब शुक्रक्षरण होने लगे तो निम्न लिखित मन्त्रों को पढ़ते रहना चाहिए :–

पूषाभगसविता मे दधातु रुद्रः कल्पयति ललामगुं विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा।

रुपाणिपिुशतु असिञ्चितु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु में।

गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि पृथुष्टुके।

गर्भं ते अश्विनौ देवा वाधत्तां पुष्करस्रजौवितिस सृजेथास्ते जो वैश्वानरो।।

दद्याद् ब्राह्मणमामन्त्रयते ब्रह्मगर्भं दधात्विति।

प्राङ्मुख उदङ्मुखो बोपविष्टो मन्थेद्रतो मूत्रेमिति चौके स्रावणं कुर्यात्

इन उपरोक्त मन्त्रों से ज्ञात होता है कि मैथुन सगर्भता हेतु निमित्त मात्र माना गया है, उसे सफल और मनोऽनुकूल बनाने के लिए धाता, विधाता की ही नहीं अपितु ब्रह्मादि विभिन्न शक्तियों की भी आराधना की गयी है, जिससे जीवात्मा की प्रतिच्छाया अपनी शाश्वत सत्ता को स्थूल :प में अधगुष्ठित करते हुए गर्भ की सार्थकता सिद्घ कर सकेंगे। हमारे प्राचीन मुनियों ने भी मैथुन की इस भौतिक प्रक्रिया को सफल बनाने के लिए अनुकूल ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त एवं आसनादि की भी व्यवस्था कर दी है।

पुंसवन

गर्भ में स्थित बालक तीन मास का हो जाता है और गर्भिणी के शरीर में गर्भ के विविध :प प्रकट होने लगते है, तब पुंसवन संस्कार (गर्भस्थ सन्तान को पुरुष का :प देने हेतु यह संस्कार किया जाता है।) इसमें किया जाता है। पुम्नामक नरक से मुक्ति पाने हेतु पुत्र की कामना की जाती है।

पितृऋण से मुक्ति हेतु पुत्रप्राप्ति आवश्यक है, जिसके लिए पुंसवन कार्य किया जाता है।

पुंसवन हेतु शुभ नक्षत्र :– रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, पुनर्वसु, हस्त, मूल व मघा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, श्रवण।

पुंसवन हेतु शुभ तिथियाँ :– कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, शुक्लपक्ष की द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी।

पुंसवन हेतु शुभ वार :– रविवार, मङ्गलवार तथा गुरुवार।

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्वटवृक्ष के नवीन अंकुर या पल्लव तथा गिलोय को पीसकर कपड़े से छानकर गर्भिणी स्त्री के दाहिनी नासिका से यह आसव पिलाया जाता है। मन्त्र :–

ऊँ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

सदाधार पृथिवी द्यामुते मा कस्मै देवाय हविषा विधेम्।।

एकान्त में जाकर पत्नी के पेट पर हाथ रखकर अर्थात्गर्भस्थ शिशु को सहलाते हुए निम्नलिखित मन्त्र पढ़े :

ऊँ सुपर्ण्णोसि गरुत्क्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्त्रंञ्चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ।

स्तोमऽ आत्माच्छन्दा स्यङ्ग्[ानि जू षिनाम ।

साम ते तनूर्व्वामदेव्यँञ्ज्ञा यज्ञियं पुच्छन्धिष्ण्या शफा।

सुपर्ण्णोसि गरुत्क्मान्दिवङ्ग्च्छस्व् पत्।।

सीमन्तोन्नयन :–

जब तक सन्तान माता के पेट में रही रहती है, तब तक उसका शारीरिक–मानसिक विकास पूर्णतः माता पर ही निर्भर है इसलिए शारीरिक व मानसिक विकास की पुष्टि हेतु सीमन्तोन्नयन संस्कार करना चाहिए।

सीमन्तोन्नयन हेतु शुभ :–

नक्षत्र	मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, मूल, श्रवण
तिथि	शुक्लपक्ष – २, ३, ५, ७, १०, ११, १३
वार	रविवार, मङ्गलवार, गुरुवार
लग्न	१, ३, ५, ७, ६, ११
मास	गर्भधारण से ६, ८ मास

सीमन्तोन्नयन का अर्थ है सिर (मस्तिष्क) का उन्नयन अर्थात् मस्तिष्क का विकास। पुंसवन संस्कार गर्भस्थ शिशु के शारीरिक एवं मानसिक विकास का संस्कार है। यह विवाह के पश्चात्प्रथमगर्भ के अवसर पर ही करणीय संस्कार है। इसमें गर्भिणि स्त्री के केशों (सीमन्त) को सँवारा जाता है। यह विधि मत–मताक्षरों में मान्य है।

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात् पति स्वभार्या के केशों को गूलर के कच्चे फलों का गुच्छा, कुशा, साही के काँटे लेकर अथवा आधुनिक काल की कँघी से सँवारता है। निम्न मन्त्र पढ़े :–

अयभूर्ज्ज स्वतो वृक्ष उज्ज्वेव फलिनी भव।।

अथवा

ऊँ वीरसूस्त्वं भव, ऊँ जीवसूस्त्वं भव, ऊँ जीवपत्नी त्वं भव।

जातकर्म संस्कार :–

जातक के जन्म के पश्चात् पिता अपने पुत्र के मुख का दर्शन करने के पश्चात् नान्दी श्राद्धावसान जातकर्म विधि को सम्पन्न करे :–

जातं कुमारस्य स्वं दृष्ट्वा स्नात्वाऽनीय गुरुम् पिता।

नान्दी श्राद्धावसाने तु जातकर्म समाचरेत्।।

आधुनिकर्ता में जातक के जन्म के पश्चात्डॉक्टर, नर्स इत्यादि बालक के शरीरक से जरायु पृथक्करके मुख, नाक, कान, आँख इत्यादि को शुद्ध वस्त्र अथवा रुई से शुद्ध (साफ) करके बालक को पिता की गोद में देवे। पिता नाड़ीछेदन संस्कार करने के बाद ऊष्ण जल से बालक को स्नान करवाकर प्रसूति–गृह से बाहर आकर विधिपूर्वक गणपत्यादि देवों का स्मरण करे।

बालक की जिह्वा पर स्वर्णशलाका अथवा दक्षिण हाथ की अनामिका अंगुली से शहदमिश्रित घृत से ऊँ का अङ्कन करे। बालक को सात अथवा चार बार शहद व घी चटायें, जिसमें दो बूँद घी हो तो पाँच बूँद शहद चटायें। शहद के अभाव में गुड़ का भी प्रयोग किया जा सकता है। मन्त्र :–

ऊँ भुस्त्वयि दधामि। **ऊँ भुवस्त्वयि दधामि।**

ऊँ स्वस्त्वयि दधामि। **ऊँ भूर्भुवः स्वः सर्वं त्वयि दधामि।**

अथवा

ऊँ सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषँ स्वाहा।।

बालक के कान में दीर्घायु/आशीर्वाद मन्त्र का उच्चारण करे :–

ऊँ मेधा ते देवः सविता मेधां देवी सरस्वती।

मेधां ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ।।

नामकरण :–

जीवन का सम्पूर्ण आधार नाम ही है, इसके बिना मनुष्य की पहचान तो असम्भव ही हो जाती है। व्यक्ति–संज्ञा का महत्व जीवन में सर्वोपरि है। यथा –

नामाखिलस्य व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मसु भाग्येहेतुः।

नाम्रैव कीर्तिं लभेत्मनुष्यस्ततः प्रशस्तं खलु नामकर्म।।

प्रायः बालकों का नाम सम अक्षरों में रखना चाहिए तथा बालिकाओं का नाम विषम अक्षरों रखना चाहिए। बालकों के नाम प्रायः पुल्लिग ही होने चाहिए तथा बालिकाओं का नाम स्त्रीलिङ्ग अक्षरों में ही होना चाहिए। दैत्यों (रावण, महिषासुर, चण्ड़–मुण्ड़, शूर्पणखा, सुरसा, खर–दूषण) के नाम पर जातक का नाम नही होना चाहिए।

संक्रान्तिकाल, ग्रहणकाल व श्राद्धकाल में नामकरण नहीं करना चाहिए। गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्कांस्य के पात्र में चावल फैलाकर पाँच पीपल के पत्तों पर पाँच नामों का उल्लेख करते हुए उनका पञ्चोपचार पूजन करे। पुनः माता की गोद में पूर्वाभिमुख बालक के दक्षिण कर्ण में घर के बड़े पुरुष द्वारा पूजित नामों में से निर्धारण करते हुए नाम चुनना चाहिए।

२७ नक्षत्र एवं उनके स्वामी :–

नक्षत्र	स्वामी	जन्माक्षर
अश्विनी	अश्विनी कुमार	चू, चे, चो, ला

भरणी	यम	ली, लू, ले, लो
कृतिका	अग्नि	अ, इ, उ, ए
रोहिणी	प्रजापति	ओ, वा, वि, वु
मृगशिरा	सोम	वे, वो, का, कि
आर्द्रा	रुद्र	कू, घ, ङ, छ
पुनर्वसु	अदिति	के, को, हा, ही
पुष्य	बृहस्पति	हू, हे, हो, डा
अशश्लेषा	सर्प	डी, डू, डे, डो
मघा	पितृ	म, मी, मू, मे
पूर्वाफाल्गुनी	भग	मो, टा, टी, टू
उत्तराफाल्गुनी	अर्यमन्	टे, टो, पा, पी
हस्त	सवितृ	पू, ष, ण, ठ
चित्रा	त्वष्ट्रा	पे, पो, र, री
स्वाती	वायु	रु, रे, रो, ता
विशाखा	इन्द्राग्नि	ती, तू, ते, तो
अनुराधा	मित्र	न, नी, नू, ने
ज्येष्ठा	इन्द्र	नो, या, यी, यू
मूल	नैर्ऋति	ये, यो, भ, भी
पूर्वाषाढ़ा	आपः	भू, धा, फा, ढ़ा
उत्तराषाढ़ा	विश्वेदेव	भे, भो, ज, जी
श्रवण	विष्णु	खी, खू, खे, खो
धनिष्ठा	वसु	गा, गी, गू, गे

शतभिषा	वरुण	गो, सा, सी, सू
पूर्वाभाद्रपद	अजेकपाद्	से, सो, दा, दी
उत्तराभाद्रपद	अहिर्बुध्न्य	दू, थ, झ, ञ
रेवती	पूषन्	दे, दो, चा, ची

उपरोक्त नक्षत्रों में जन्म होने पर भी चरण के अनुसार बालक का उसी अक्षर पर नामकरण करें।

जन्मराशि व प्रचलित नाम की राशि का महत्व तथा संयुक्त–अक्षर में राशि–निर्णय :–

जन्मराशि तथा प्रसिद्ध नाम की राशि के शुभाशुभ फल मे अन्तर रहता है। सभी कार्यों में जन्मराशि की प्रधानता नहीं रहती है तो सभी कार्यों में प्रसिद्धनाम की राशि की भी प्रधानता नहीं होती है।

विवाहे सर्वमाङ्गल्ये यात्रादौग्रहगोचरे। जन्मराशेः प्रधानत्वं नामराशिं न चिन्तयेत्।।

विवाह–कार्य, सभी माङ्गलिक कार्य, मुहूर्त, दिन–मान, ग्रहगोचर गणना, दिनदशा हेतु जन्मराशि से ही विचार करना चाहिए। प्रचलित नामराशि हेतु भी शास्त्रीय वचन मिलता है –

देशग्रामेगृहेयुद्धेसेवायां व्यवहारके। नामराशेः प्रधानत्वं जन्मराशिं न चिन्तयेत्।।

अथवा

देशग्रामगृहज्वरव्यवहृतिषु दाने मनौ। सेवाकाकिणिवर्गसङ्गरपुनर्भूमेलके नामभ।।

अथवा

काकिण्यां वर्गशुद्धौ च वादे द्युते स्वरोदये। मन्त्रे पुनर्भूवरणे नामराशेः प्रधानता।।

अर्थात् देश, ग्राम, गृह, ज्वर, व्यवहार, धूत, दानकार्य, मन्त्रप्रयोग, सेवाकर्म में, काकिणी विचार, वर्गशुद्धि, संग्राम तथा पुनर्विवाह के मेलापक में नाम राशि में नाम राशि से ही विचार करना चाहिए।

नामाखिलस्य व्यवहार हेतुः शुभावहं कर्म सुभाग्यं हेतुः।

नाम्नैव कीर्ति लभते मनुष्य ततः प्रशस्तं खलु नाम कर्म।।

जातक के नामकरण की महिमा सर्वविदित विषय है, नामकरण–संस्कार भी जन्म से ११वें या १२वें दिन किया जाता है। नामकरण की गरिमा हेतु शास्त्रों में लिखा है –

यन्नामाद्याक्षरं यस्य नक्षत्रस्य परे भवेत्।

तथैव तस्य नक्षत्रं विज्ञेयं गणकोत्तमैः।।

किसी भी नाम के व्यक्ति का प्रथम अक्षर नक्षत्र के जिस चरण में हो, वही उसका नक्षत्र होता है तथा यह नक्षत्र जिस राशि के अन्तर्गत होता है, वह उसकी राशि होनी चाहिए।

यदि नामिन्भवेद्वर्णः संयुक्ताक्षर लक्षणः।

ग्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्तं ब्रह्मयामले।।

यदि नाम के प्रारम्भ में संयुक्त अक्षर हो तो उस नाम के प्रारम्भ के प्रथम वर्ण का ही अक्षर ग्रहण करना चाहिए।

अ आ, इ ई, उ ऊ, ए ऐ, ओ औ, द्वो थिः सामौ।

ब वौ, श सौ, तथैवात्र, ज्ञेयो देवविदा सदा।।

पाणिनीय व्याकरण भाषासूत्र के अनुसार ज्ञानप्रकाश नाम के प्रारम्भ का ज्ञ (ज्+ञ = ज्ञ) शब्द से बना है। अतः ज्ञानप्रकाश का नक्षत्र उत्तराषाढ़ा का तीसरा चरण हुआ। क्ष (क्+ष्= क्ष) होने से क्षेम को मृगशिरा के तीसरे चरण में रखेंगे। श्त्रय (त्+र्= त्र) होने से त्रिलोक को विशाखा के प्रथम चरण में रखेंगे। द्वारिका में द प्रथम अक्षर होने से इसे पूर्वाभाद्रपद के तीसरे चरण में रखेंगे।

व्यवह्रितमध्य अक्षर को छोड़कर स्वर सहित अक्षर प्रथमाक्षर से ही नक्षत्र मान्य होता है। जैसे द्रुपद की राशि मीन व उत्तराभाद्रपद का प्रथम चरण ही मान्य होगा।

अनुक्तत्वाद्वकारस्य रेफो ग्राह्यो विचक्षणैः।

ऋद्धिनाथस्य नक्षत्रं यथा चित्रारव्यमेव हि।।

अवकहडा शतपदचक्र अधिन्यास नियामक व्याकरण शास्त्र के अनुसार अकार व आकार, इकार व ईकार, उकार व ऊकार, एकार व ऐकार तथा ओकार व औकार परस्पर समान माने गये है। इसी प्रकार से ब, व श, स को समान माना गया है, परन्तु ष की इससे भिन्न नक्षत्र में गणना की गयी है। जैसे श्रीचन्द व श्रवण कुमार के प्रारम्भ में संयुक्तवर्ण श्श्रय के प्रथमवर्ण श कार होने से तथा श व स में भेद नहीं होने से वह शतभिषा का द्वितीय चरण होगा।

शतपदचक्र में ऋकार को ग्रहण नहीं करने से ऋकार के स्थान में रेफ (र) ग्रहण करना चाहिए। जैसे किसी का नाम ऋषि है तो उसे चित्रा नक्षत्र के तृतीय चरण (तुला राशि) में रखेंगे।

यदि किसी का जन्म आर्द्रा के तृतीय चरण (ङ), हस्त का तृतीय चरण (ण) तथा उत्तराभाद्रपद का चतुर्थ चरण (ञ) पर हो तो उनका नाम क्रमशः घ, ठ, झ पर रखा जा सकता है।

निष्क्रमण :–

प्रथम बार शिशु को घर से बाहर अथवा आँगन में सूर्य की धूप का सेवन करना निष्क्रमण कहलाता है :–

ततस्तृतीये कर्तव्यं मासि सूर्यस्य दर्शनम्।

चतुर्थे मासि कर्तव्य शिशोश्चन्द्रस्य दर्शनम् ।।

तिथि कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, शुक्लपक्ष की द्वितीया–तृतीया–पञ्चमी–सप्तमी–दशमी–एकादशी–त्रयोदशी पूर्णिमा

वार सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार

नक्षत्र अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा

लग्न २, ३, ४, ५, ६, ७, ६, १०, ११

मास जन्म से तृतीय या चतुर्थ मास। मतान्तर से १२वाँ दिन

पारस्कर गृह्यसूत्र ने जन्म चतुर्थ मास (चतुर्थे मासि निष्क्रमणिका) भी निष्क्रमण हेतु शास्त्रसम्मत बताया है। इसी संस्कार के बाद बालक को निरन्तर बाहर लाया जाता है। बालक को माता गोद में लेकर आये और गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्कुलदेवता के समक्ष देवार्चन करे।

निष्क्रमण यदि तृतीय मास में हो तो सूर्यदेव के दर्शन करवायें तथा चतुर्थ मास में यदि निष्क्रमण संस्कार करना हो तो चन्द्रमा के दर्शन करवाने चाहिए।

पिता अपने पुत्र को उत्तरदिशा में बालक का सिर तथा दक्षिण दिशा में पैर करके अपनी भार्या की गोद में देवे तथा निम्न मन्त्र का उच्चारण करे :–

ऊँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ठं० शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीना स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्।।

रात्रि में चन्द्रमा प्रकाशवान्हो तो बालक को उसी प्रकार बालक का सिर तथा दक्षिण दिशा में पैर करके अपनी भार्या की गोद में देवे तथा निम्न मन्त्र का उच्चारण करे :–

ऊँ इमन्देवा ऽ असपत्न सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।

इमममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ठं० राजा।।

आशीर्वादमन्त्र :–

ऊँ अप्रमत्तं प्रमत्तं वा दिवारात्रावथापि वा।

रक्षन्तु सततं सर्वे देवाः शक्र पुरोगमाः।।

गीत, मङ्गलाचरण करते हुए बालक के मामा द्वारा भी आशीर्वाद दिलायें।

अन्नप्राशन :–

वेदों और उपनिषदों में भी अन्नप्राशन हेतु निर्देश किया गया है। माता के दूध से पोषित होने वाले बालक को प्रथम बार अन्नप्राशन कराने का प्रचलन प्रायः सभी स्थानों पर बहुत ही धूम–धाम से आयोजित किया जाता है।

जन्मतो मासि षष्ठे स्यात्सौरेणोत्तममन्नदम्।

तदभावेऽष्टमे मासे नवमे दशमेऽपि वा।

द्वादशे वापि कुर्वीत प्रथमान्नाशनं परम्।

सम्वत्सरे वा सम्पूर्णे केचिदिच्छन्ति पण्डिताः।। – नारद

षण्मासञ्चौनमन्नं प्राशयेल्लघु हितञ्च।। – सुश्रुत

अन्नप्राशन हेतु शुभकाल :–

तिथि शुक्लपक्ष की द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, सप्तमी, दशमी, त्रयोदशी, पूर्णिमा

वार सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार

नक्षत्र अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, उत्तरात्रय, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती

लग्न २, ३, ४, ५, ६, ६, १०, ११

मास जन्म से षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम व द्वादश

पुत्र के लिए – षष्ठ, अष्टम, **कन्या के लिए** – पञ्चम, सप्तम

विधि–विधान से अन्नप्राशन वाले दिन सर्वप्रथम यज्ञीय भोजन के पदार्थ गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्मन्त्रों के उच्चारण के साथ पक्वान्न बनायें। मधु–घृत–पायस से बालक को प्रथम कौल (ग्रास) पिता अथवा घर के बुजुर्गों द्वारा दिया जाये। मन्त्र :–

ऊँ अन्पतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः।

पप्रदातारं तारिषऽऊर्ज्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।।

चूड़ाकरण (चौलकर्म अथवा मुण्डनसंस्कार अथवा वपनक्रिया) :–

यह संस्कार जातक के तृतीय, पञ्चम अथवा सप्तम वर्ष में किया जाता है। धर्मशास्त्रों के अनुसार प्रत्येक जातक के लिए दीर्घायु, सौन्दर्य तथा कल्याण की प्राप्ति, तेजवृद्धि हेतु यह संस्कार किया जाता है, इसे न करने पर आयु क्षीण होती है। यथा –

तेन ते आयुषे वपामि सुशखोकार्य स्वस्तये।। – आश्वलायन गृह्यसूत्र

आयुर्वेद के अनुसार भी चूड़ाकरण के प्रयोजन का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। सुश्रुत के अनुसार – *केश, नख, लोम अथवा केशों के अपमार्जन छेदन से हर्ष, लाघव, सौभाग्य और उत्साह की वृद्धि तथा पाप* का उपशमन होता है। यथा –

पापोशमनं केशनखरोमापमार्जनम्।

हर्षलाघवं सौभाग्यकरमुत्साहवर्धन।। – चिकित्सास्थान

शिशु की माता के रजस्वला होने पर उसके शुद्ध होने तक यह संस्कार स्थगित कर दिया जाता है क्योंकि इस अवधि में यह संस्कार होने पर अनेक दुष्परिणाम (वैधव्य, मूर्खता, मृत्यु) की आशंका होती है।

इस पर मध्यभाग में जहाँ बालों का भँवर होता है, वहाँ शरीर की सम्पूर्ण नाडियों का मेल होता है। इस स्थान को श्ब्रह्मरन्ध्र अथवा मर्मस्थलत्र्च कहते है। इसी मर्मस्थान की सुरक्षा के लिए चोटी रखने का विधान है।

चूड़ाकरण में शिखावपन का निषेध है क्योंकि शिखा वाले स्थान पर ही ब्रह्मरन्ध्र होता है। केशों द्वारा ब्रह्मरन्ध्र से होकर सूर्य रश्मि शरीर में प्रवेश करते है और उसी मार्ग से शरीर में स्थित प्राण सूर्य की ओर जाते है इसीलिए उपासना आदि कर्मों के समय शिखाबन्धन का नियम है, जिससे अन्तःकरण का प्रकाश अथवा तेज धूप सूर्य के आकर्षण से बाहर न निकल सके।

नि वर्तयाभ्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय।।
– यजुर्वेद

अर्थात ̖हे बालक! मैं तेरी दीर्घायु के लिए तथा तुझे अन्न के ग्रहण करने में समर्थ बनाने के लिए उत्पादन शक्ति प्राप्त करने के लिए, ऐश्वर्य वृद्धि के लिए तेरा चूड़ाकरण संस्कार करता हूँ।

उपर्युक्त मन्त्र उच्चारित करते हुए शुभमुहूर्त्त में कुशल नाई से बालक का मुण्डन करवाकर, सिर में दही–मक्खन हल्दी आदि अथवा हल्दी लगाकर बालक को स्नान करवाकर माङ्गलिक क्रियाएँ करनी चाहिए।

कर्णवेध :–

यह संस्कार बालक के छठे मास से लेकर १६वें मास तक या तृतीय अथवा पञ्चम आदि विषम वर्ष में किया जाता है। आभूषण धारण करने हेतु विभिन्न अङ्गों के छेदन की प्रथा सम्पूर्ण संसार की जातियों में प्रचलित है।

आयुर्वेद के अनुसार कानों में छेद करने से एक ऐसी नस विद्ध हो जाती है, जिससे अन्त्र वृद्धि या हार्निया रोग नहीं होता है। कर्णेन्द्रिय का वीर्यवाहिनी नाडियों से सम्बन्ध होने के कारण पुंसत्व नष्ट करने वाले रोगों से भी रक्षा होती है।

सुश्रुत संहिता में षष्ठ अथवा सप्तम मास में शुक्लपक्ष में शुभदिन में तथा बृहस्पति के अनुसार जन्म से १०, १२ अथवा १६वें दिन वैद्य द्वारा माता की गोद में मधुर वस्क खाते हुए बालक का अत्यन्त निपुणता से कर्णवेध करना चाहिए।

आभूषण धारण और वैज्ञानिक :प से कर्ण छेदन का महत्व होने के कारण इस प्रक्रिया को संस्कार :प में स्वीकार किया गया। सुश्रुत के अनुसार कर्णछेदन करने से अण्डकोष वृद्धि, अन्त्रवृद्धि आदि का निरोध होता है। अतः जीवन के प्रारम्भ में ही इस क्रिया को वैद्य द्वारा सम्पादित किया जाता है। यथा –

शङ्खो परि च कर्णान्ते त्यक्त्वा यत्नेन सेवनीयम्।

व्यत्यासाद्वा शिरां विध्येद् अन्त्रवृद्धि निवृत्तये।। – सुश्रुत

ऐसी मान्यता है सूर्य की किरणें कानों के छिद्र से प्रवेश करके बालक–बालिका को पवित्र करती है तथा उन्हें तेजवान् बनाती है। स्वर्णशलाका से कर्णछिद्र बनाये जाते है। बालक को पहले दायें कान में तत्पश्चात्बायें कान में सूई से छेद किया जाता है। बालिका को बायें कान में, इसके बाद दायें कान में तत्पश्चात्बायीं नासिक में छेद किया जाता है। कर्णवेध के तीसरे दिन ऊष्णजल से कानों को धोना चाहिए और स्नान कराना चाहिए।

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्क्रमशः दक्षिण–वाम कर्णों की वेध की प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है।

उपनयन :–

वर्तमान युग में उपनयन संस्कार प्रतीकात्मक :पधारण करता जा रहा है। विरल परिवारों में यथाकाल विधि–व्यवस्था के अनु:प उपनयन संस्कार होते है। एक ही दिन अल्पावधि में चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ और केशान्त कर्म के साथ समावर्तन संस्कार सहित सभी महत्वपूर्ण संस्कार एकसाथ कर दिये जाते है।

गृह्यसूत्रों के अनुसार विभिन्न वर्णों के लिए आयु की सीमा का निर्धारण किया गया है। यथा –

ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।

राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे।।

– मनुस्मृति

यदि किसी वटु की गुरुशुद्धि नहीं हो तो क्या करे ? – ज्योतिषचन्द्रिका के अनुसार गोचराष्टक वर्गों से यदि किसी वटु की गुरुशुद्धि नहीं बनती हो तो सूर्य के मीन राशि में आने पर चौत्र में उपनयन संस्कार करना चाहिए।

यथा :– **गोचराष्टकवर्गाभ्यां यदि शुद्धिर्न जायते।**

तस्योपनयनं कुर्वीत चौत्रे मीनगते रवौ।।

क्या आठवें वर्ष में भी गुरुशुद्धि देखनी चाहिए ? – पौलस्त्यजी के मतानुसार आठवें वर्ष में गुरुशुद्धि नहीं हो तो उपनयन नहीं करना चाहिए।

यथा : – यदा गर्भाष्टमे वर्षे शुद्धिर्नास्ति बृहस्पतेः।

अष्टमे वा तथाऽप्येवं व्रतं तत्र न कारयेत।।

उपनयन संस्कार किस समय करे ? – सामान्यतया मन्वादि ऋषियों ने वटु के उपनयन का समय ब्राह्मणों के लिए गर्भ से आठवाँ वर्ष, क्षत्रियों के लिए ग्यारवाँ वर्ष तथा वैश्यों के लिए बारहवाँ वर्ष निर्धारित किया है।

यथा :– गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।

गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः।।

द्विज :– श्द्वाभ्यां जन्मसंस्काराभ्यां जायते इति द्विजः।

मलमूत्र त्याग करते समय यज्ञोपवीत को दाहिने कान में क्यों लपेटते हैं ? – १. गृह्यसूत्रकारों ने उपवीत को शौच, लघुशंका के समय दाहिने कान में लपेटने का विधान बताया है।

यथा :– दिवासन्ध्यासु कर्णस्थबह्मसूत्र उदङ्मुखः।

कुर्यान्मूत्रपुरीषे तु रात्रौ च दक्षिणामुखः।।

अन्य :– निवीती दक्षिणकर्णे यज्ञोपवीतं कृत्वा.....पुरीषे विसृजेत।।

(वैखानसधर्मप्रश्न, २–६–१, शौचविधि)

अन्य :– यज्ञोपवीतं शिरसि दक्षिणकर्णे वा कृत्वा। (बौधायनगृह्यसूत्र)

अन्य :– ....कर्णस्थब्रह्मसूत्र उदङ्मुखः। कुर्यान्मूत्रपुरीषे च...।।

अन्य :– कर्णस्थब्रह्मसूत्रो मूत्रपरीषं विसृजति।। (आग्निवेश्य गृह्यसूत्र)

और भी कई अन्य कारण है जैसे सिर मानव शरीर में ज्ञान का केन्द्र होता है तथा दाहिने कान में रुद्र, आदित्य, वसु आदि देवताओं का वास बताया गया है, अतः इस क्षेत्र को अपवित्रता से मुक्त रखने हेतु यज्ञोपवीत को कान पर रखने का विधान किया गया है।

यथा :– आदित्या वसवो रुद्रा वायुरग्निश्च धर्मराट्।

विप्रस्य दक्षिणेकर्णे नित्यं तिष्ठन्ति देवताः।।

अन्य :– मरुत्सोम इन्द्राग्नी मित्रावरुणौ तथैव च।

एते सर्वे च विप्रस्य नित्यं तिष्ठन्ति दक्षिणे।। (गोभिल)

यज्ञोपवीत का हमारे स्वास्थ्य से भी गहरा सम्बन्ध है। यह हमें शुचिता–पवित्रता का पाठ पढ़ाता है। यह मलमूत्र त्याग के पूर्व दाहिने कान को बाँधकर आँतों की अपकर्षण शक्ति को बढ़ाता है, जिससे कब्ज दूर होता है। मूत्राशय की मांसपेशियों का संकोचन वेग से होने लगता है। इसके परीक्षण विदेशों में होते रहे है और यज्ञोपवीत को कान में लपेटने से वीर्यक्षरण और रक्तचाप में नियन्त्रण से होने वाले लाभ को वहाँ स्वीकार किया गया है। योगशास्त्र में स्मरणशक्ति तथा नेत्रज्योति बढ़ाने के लिए श्कर्णपीडासन्त्र योग का महत्व बताया गया है। इटली के प्रसिद्ध न्यूरो सर्जन प्रोफेसर ऐनारीका पिरांजली ने यह सिद्ध किया है कि कान में जनेऊ लपेटने से रक्तचाप नियन्त्रित रहता है और हृदय मजबूत होता है।

उपनयन विधि :–

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन सहित ग्रहशान्त्यादि कर्म के पश्चात्प्रातः काल शुद्ध वस्त्र धारण करके मण्ड़प पर प्रवेश करके प्रायश्चित सङ्कल्प करे :–

तद्यथा देशकालौ सङ्कीत्र्य – श्ममम सकलपाप क्षयपूर्वकमस्यकुमारस्य उपनयनकर्मणि स्वस्योनेतृत्वाधिकारसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं कृच्छ्रत्रयात्मक प्रायश्चित्तं तत्प्रत्याम्नाय गोनिष्क्रयीभूत यथाशक्तिरजतममुकगोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृज्येच्च। इति सङ्कल्प्य रजत द्रव्योदकसहितं ब्राह्मणाय दद्यात्।

ऊँ स्वस्तीति प्रतिवचनम्।

प्रायश्चित सङ्कल्प के पश्चात्बटुक सहित तीन अथवा आठ ब्राह्मणों को चावल, घी, बूरा अथवा मिष्ठान्नादि खिलावे। कर्मकर्ता अथवा आचार्य बटुक को अपने दक्षिणहस्त पर बिठावे।

आचार्य अथवा कर्मकर्ता बटुक का दायाँ हाथ साङ्गुष्ठ पकड़कर बोले :– ऊँ ब्रह्मचर्यमागामिति।

बटुक बोले :– ऊँ ब्रह्मचर्यमागाम्।

आचार्य बोले :– ऊँ ब्रह्मचर्यसानि।

बटुक बोले :– ऊँ ब्रह्मचार्यसानि।

बटुक कौपीन वस्त्र धारण करे :–

ऊँ येनेन्द्राय बृहस्पतिर्वासः पर्यदधादमृतम्।

तेन त्वा परि दधाम्यायुषे दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे।।

इसके पश्चात्दो बार आचमन करे।

बटुक मेखला धारण करे :– **ऊँ इयं दुरुक्तं परि बाधमानां वर्णं पवित्रं पुनती मऽआऽगात्।**

प्राणापानाभ्यां बलमादधाना स्वसा देवी सुभगा मेखलेयम्।।

गायत्री मन्त्र अथवा प्रणव से बटुक शिखाबन्ध करे ।

भाण्डाष्टक दान :– श्मम द्विजत्वसिद्धिवेदाध्ययनाधिकारार्थं यज्ञोपवीत धारणाधिकारसिद्धिद्वारस श्रीसवितृ सूर्यनारायण प्रीतये च इमानिष्टौ भाण्डानि यज्ञोपवीत फलाक्षत दक्षिणासहितानि नाना नामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमहमुत्सृज्ये।

उपरोक्त सङ्कल्प से आठ बर्तनों का दान करे।

निम्न मन्त्रों से यज्ञोपवीत का प्रक्षालन करे :–

ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तानऽऊर्ज्जे दधातनः। महे रणाय चक्षसे।।१।।

यो व शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नष्। उशतीरिव मातर।।२।।

तस्माऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नङ्ग।।३।।

यज्ञोपवीत की ग्रन्थिओं का पूजन करे :–

ॐ ब्रह्म यज्ञानं प्रथम पुरस्ताद्वि सीमत सुरुचो व्वेनऽआव्।

स बुध्न्याऽउपमाऽअस्य विष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः।। – ब्रह्मणे नमः।।

ॐ इदं विष्णुर्व्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पा सुरे स्वाहा।। – विष्णवे नमः।।

ॐ नमस्ते रुद्द्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमष् बाहुभ्यामुत ते नमः।। – रुद्राय नमः।।

यज्ञोपवीत के नवतन्तुओं का पूजन :–

१. ॐ ओंकाराय नमः। २. ॐ अग्न्ये नमः। ३. ॐ नागेभ्यो नमः। ४. ॐ सोमाय नमः।

५. ॐ इन्दाय नमः। ६. ॐ प्रजापतये नमः। ७. ॐ वायवे नमः। ८. ॐ सूर्याय नमः।

६. ॐ विश्वेभ्ये देवेभ्यो नमः। – गन्धाक्षत सहित यथोपचार पूजन करे।

यज्ञोपवीत अभिमन्त्रण :– यज्ञोपवीत को बायें हाथ में रखकर दायें हाथ से ढ़ककर १० बार गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करके सूर्य के दर्शन निम्न मन्त्र से करावे :–

ॐ उपयाम गृहीतोऽसि सावित्रोऽसि च नो धाश्च नो धाऽअसि च नो मयि धेहि।

जिन्व यज्ञं जिन्वयज्ञपतिम्भगाय देवाय त्वा सवित्रे।।

यज्ञोपवीत धारण करने का विनियोग –

ऊँ यज्ञोपवीतमिति मन्त्रस्य परमेष्ठि ऋषिस्त्रिष्टुपछन्दो लिङ्गोक्ता देवता–

श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठान सिद्धये यज्ञोपवीतपरिधाने विनियोगः।

बटुक अपने दाहिने हाथ को ऊपर करे, पाँच ब्राह्मण अथवा घर के यज्ञोपवीत धारण कर चुके व्यक्ति बटुक को पीतयज्ञोपवती धारण करवाये।

यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र –

ऊँ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात।

आयुष्यम् अग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।।

यज्ञोपवीत धारण के पश्चात्दो बार आचमन करे।

मृगचर्म धारण :–

ऊँ मित्रस्य चक्षुर्द्धरुणं बलीयस्तेजस्तेजो यशस्वि स्थरि समिद्धम्।

अनाहनस्यं वसनं जरिष्णुः परीदं जरिष्णुः वाज्यजिनन्दधेऽहम्।।ग्च्य इति।

दण्ड़धारण का मन्त्र (बटुक के कान तक लम्बाई का वृक्ष का दण्ड़ धारण करना चाहिए) :–

ऊँ यो मे दण्डः परा पतद्वैहायसोऽसि भूम्याम्।

तमहं पुनराददऽआयुषे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय।।

आचार्य स्व–अञ्जलि में जल भरकर बटुक पर मार्जन करे :–

१. ऊँ आपो हिष्ठा मयोभुवः।	२. ऊँ तानऽऊर्ज्जे दधातनः।	३. ऊँ महे रणाय चक्षसे।
४. ऊँ यो वष शिवतमो रसः	५. ऊँ तस्य भाजयतेह नष।	६. ऊँ उशतीरिव मातरष।
७. ऊँ तस्माऽअरङ्गमाम वः	८. ऊँ यस्य क्षयाय जिन्वथ।	९. ऊँ आपो जनयथा च नड्ड।।

बटुक सूर्य के दर्शन करे :–

ऊँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत।

पश्येम शरदष शतं जीवेम शरदः शत शृणुयाम शरदष शतं प्रब्रवाम शरदः

शतमदीना स्याम शरदष शतम्भूयश्च शरदः शतात।।

आचार्य बटुक के दक्षिण हाथ की ओर से हृदय का आलम्भन करे :–

ऊँ मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तम् अनुचित्तं तेऽअस्तु।

मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियनक्तु मह्यम्।

आचाय बटुके के दाहिने हाथ को साङ्गुष्ठ पकड़कर बोले :– को नामाऽसि

बटुक :– अमुकशर्माहं भो ३

आचार्य :– कस्य ब्रह्मचार्यसि।

बटुक :– भवतः

आचार्य बटुक को दिशाओं का नमन करवाये :–

ऊँ प्रजापतये त्वा परिददामि – पूर्व में नमस्कार करे।

ऊँ देवाय त्वा सवित्रे परि ददामि – दक्षिण में नमस्कार करे।

ऊँ अद्भयस्त्वौषधीभ्यः परि ददमि – पश्चिम में नमस्कार करे।

ऊँ द्यावा पृथिवीभ्यां त्वा परि ददामि – उत्तर में नमस्कार करे।

ऊँ विश्श्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परि दधामि – अधः (भूमि को) में नमस्कार करे।

ऊँ सर्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्यः परि ददाभ्यरिष्टयै – ऊर्ध्व (आकाश) में नमस्कार करे।

तत्पश्चात्वेदी पर कुशकण्डिका आदि कार्य करने के पश्चात्वेदी के दक्षिण ओर ब्रह्माजी का पूजन करते हुए हवन प्रारम्भ करे।

अग्रिपूजन :–

ऊँ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य।

त्रिधा बद्धो व्वृषभो रोरवीति महो देवो मत्र्याँ २ आविशेष।। – पावकाग्न्ये नमः ।।

ऊँ प्रजापये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम इति।।१।। मनसा त्यागं कुर्यात्।

ऊँ इन्द्राय स्वाहा, इदमिन्द्राय न मम।।२।।

ॐ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।।३।।

ॐ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम।।४।।

ॐ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।।५।।

ॐ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।।६।।

ॐ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।।७।। (एता महाव्याहृतयः)

ॐ त्वन्नोऽअग्ने व्वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठा् यजिष्ठो

व्वह्नितम् शोशुचानो विश्वा द्वेषासि प्र मुमुगध्यस्मत्स्वाहा।। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।।८।।

ॐ स त्वन्नोऽ अग्नेऽवमो भवीती नेदिष्ठोऽअस्याऽउषसो व्युष्टौ।

अव यक्ष्व नो व्वरुणरराणो व्वीहिमृडीक सुहवो नऽएधि स्वाहा।।

इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।।९।।

ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयाऽ असि।

अया नो यज्ञं वहस्यया नो धेहि भेषज स्वाहा।। इदग्नये अयसे न मम।।१०।।

ॐ येते शतं वरुण ये सहस्रं य्यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः।

तेभिर्नोऽद्य सवितोत विष्णुर्व्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा।।

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भयः स्वर्केभ्यश्च न मम।।११।।

ॐ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यम श्रथाय।

अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा।।

इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।।१२।।

ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम।।१३।।

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।।१४।।

संस्रवप्राशन व आचमन :–

सङ्कल्प :– ऊँ तत्सद्अद्य ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थं इदं पूर्णपात्रं (दक्षिणां वा) यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे। आचार्य द्वारा ब्रह्मचारी को आदेशित नियम :–

आचार्य – ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् इति प्रथमं पादं ब्यात्।

ब्रह्मचारी – ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् इति पठेत्।

आचार्य – भर्गो देवस्य धीमहि इति द्वितीयं पादं श्रावयेत्।

ब्रह्मचारी – भर्गो देवस्य धीमहि इति पठेत्।

आचार्य – धियो यो नः प्रचोदयात् इति तृतीयं पादं श्रावयेत्।

ब्रह्मचारी – धियो यो नः प्रचोदयात् इति पठेत्।

द्वितीयवारम्– ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि इत्यर्धञ्च श्रावयेत्।

ब्रह्मचारी – ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि इति पठेत्।

आचार्य – धियो यो नः प्रचोदयात् इति द्वितीयमर्धञ्च श्रावयेत्।

ब्रह्मचारी – धियो यो नः प्रचोदयात् इति पठेत्।

ततस्तृतीयवारम्– ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात् इत्याचार्योऽपि ब्रह्मचारिणा सह सर्वां गायत्रीं पठेत्।

गोमयपिण्ड़ (समिधा) दान – यज्ञोपवीत धारक गोयमक पिण्डों को निम्न मन्त्रों से घीसहित अग्नि में समर्पित करे–

ऊँ अग्ने सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु ।।१।।

ऊँ यथा त्वमग्ने सुश्रवः सुश्रवा असि ।।२।।

ऊँ एवं मा सुश्रवः सौश्रवसं कुरु ।।३।।

ऊँ यथा त्वग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपाऽअसि ।।४।।

ऊँ एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम् ।।५।।

जल से अग्नि का पर्युक्षण करे।

पालाश समिधादान (निम्न मन्त्र को तीन बार उच्चारित करते हुए समिधा का दान करे) :–

ॐ अग्नये समिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे।

यथा त्वमग्ने समिधा समिध्यसऽएवमहमायुषा मेधया व्वर्चसा प्रजया

पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन समिन्धे जीवपुत्रे ममाचार्यो मेधाव्यहमसान्यनिराकरिष्णुर्यशस्वी

तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यन्नादोभूयास स्वाहा।।

तत्पश्चात्बैठकर श्अग्ने सुश्रवःच इत्यादि पञ्चमन्त्रों से शुष्क घृताक्तगोमय को अग्नि में समर्पित करे।

तत्रमन्त्राः –

ॐ अग्ने सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु।।१।।

ॐ यथा त्वमग्ने सुश्रवः सुश्रवा असि।।२।।

ॐ एवं मा सुश्रवः सौश्रवसं कुरु।।३।।

ॐ यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपाऽअसि।।४।।

ॐ एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम्।।५।। इति।

तत्पश्चात्निम्न मन्त्रों से कुमार प्रदक्षिणा क्रम से अग्नि का पुर्यक्षण करके निम्न मन्त्रों से अपने हाथों के द्वारा अग्नि ताप को स्वशरीर पर धारण करे।

ॐ तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।।१।।

ॐ आयुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि।।२।।

ॐ व्वर्चोदाऽअग्नेऽसि व्वर्चो मे देहि।।३।।

ॐ अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण।।४।।

ॐ मेधाम्मे देवः सविता आदधातु।।५।।

ॐ मेधाम्मे देवी सरस्वती आदधातु।।६।।

मेधामश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ।।७।। इति।

तत्पश्चात्निम्न मन्त्रों से यज्ञोपवतीत धारक कुमार बायें हाथ में जल लेकर दायें हाथ से शरीर के अङ्गों को स्पर्श करे।

१. ऊँ अङ्गानि च मऽआप्यायन्ताम् – शिरः प्रभृतिपादान्तं सर्वाङ्गमालभ्य

ततो दक्षिणहस्ताग्रेण – २. ऊँ वाक्च म आप्यायताम्। – मुखं

३. ऊँ प्राणश्चमऽआप्यायन्ताम् – नासिकारन्ध्रे

४. ऊँ चक्षुश्च मऽआप्यायन्ताम्। – चक्षुषी

५. ऊँ श्रोत्रं च मऽआप्यायन्ताम्। – दक्षिणं–वामं श्रोत्रं स्पृशेत्।

६. ऊँ यशो बलं च मऽआप्यायन्ताम्। – इति बाहू परस्परं

अथ त्र्यायुषकरणम्–

१. ऊँ त्र्यायुषं जमदग्नेः – ललाटे। २. ऊँ कश्यपस्य त्र्यायुषं – ग्रीवायाम्।

३. ऊँ यद्देवेषु त्र्यायुषं – दक्षिण स्कन्धे। ४. ऊँ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्– हृदि।

ब्रह्मचारी सिर झुकाकर व हाथ जोड़कर वैश्वानरादि का निम्न विधि से अभिवादन करे –

अमुक गोत्रोऽमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माहं भो वैश्वानर! त्वामभिवादये।

अमुकगोत्रः अमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो वरुण! त्वामभिवादये।

अमुकगोत्रः अमुक प्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो सूर्य! त्वामभिवादये।

ब्रह्मचारी दायें हाथ से दाहिने पैर का अङ्गूठे का स्पर्श करके सिर झुकाकर गुरु/आचार्य का अभिवादन करे :–

अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो आचार्य!/भो गुरु! त्वामभिवादये।

अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो ब्राह्मणाः! त्वामभिवादये।

आयुष्मान्भव सौम्य।।

भिक्षाचार्य चरण –

ब्रह्मचारी सर्वप्रथम पालाशदण्ड़ तथा मृगचर्म काष्ठोपाहन धारण करके अपनी माता के पास भिक्षापात्र लेकर भिक्षा हेतु जाये।

ब्राह्मण ब्रह्मचारी – भवति भिक्षां देहि।

क्षत्रिय ब्रह्मचारी :– भिक्षां भवति देहि।

वैश्य ब्रह्मचारी :– भिक्षां देहि भवति

पुरुषों से भिक्षा माँगते समय यह बोले :– भवान्भिक्षां देहि

भिक्षा प्राप्त करने के बाद ब्रह्मचारी बोले – ऊँ स्वस्तीतिच

तत्पश्चात्आचार्य अथवा गुरु को भिक्षा समर्पित करे।

ब्रह्मचारी के पालनीय नियम :–

अधः शयीस्यात्। अक्षारलवणाशी स्यात्। समावर्तनपर्यन्तं दण्ड़धारणम्। अग्निपरिचरणम्। प्रत्यहं समिदाहरणम्। गुरुशुश्रुषा कर्तव्या। सायंप्रातर्भोजनार्थं भिक्षाचरणं कर्तव्यम्मधुमांसाशनं न कर्तव्यम्। मज्जनं न कर्त्तव्यम्। उद्धृतोदकेन स्नायात्। स्त्रीणां मध्ये अवस्थानं न कर्तव्यम्। स्त्रीगमनम्, अनृतवदनम्, अदत्तादानम्, ताम्बूलम्, अभ्यङ्गम्, अञ्जनम्, आदर्शम्, छत्रोपानहौ एतानि वर्जयेत्। परिधृवस्त्रं क्षालनं विना न दधीत। अस्तसमये भास्कराद्यवलोकनं न कुर्यात्। शुष्कवादं परिवादादि च वर्जयेत्। पर्युषितमन्नं भिस्सटान्नं च न भक्षयेत्। कांस्यायसंग मृत्पातत्रेषु भोजनं तेभ्यः पानं च न कुर्यात्। वृक्षारोहण विषमभूमि लङ्घनं नग्नस्त्री ि नरीक्षणं स्त्री सम्भोग व्यसन व्यावृत्तिःपा ब्रह्मचारिणो नियमाः। तद्दिने ब्रह्मचारी वाग्यतोऽग्रौ पूर्ववत्पर्युक्षण परिसमूहने कृत्वा वाचं विसृजेत्।

तत्पश्चात् ब्रह्मग्रन्थि का विसर्जन करते हुए बर्हिहोम तथा नानादानादि सहित ब्राह्मणदक्षिणा व भोजनादि का यथोचित सङ्कल्प करे।

शिखा रखने के लाभ को निम्न रूप से दृष्टिगत किया जा सकता है –

१. शिखा रखने के तथा उसके नियमो का यथावत् पालन करने से मनुष्य सद्बुद्धि, सदाचार आदि की प्राप्ति होती है।

२. शिखा रखने से आत्म शक्ति प्रबल होती है।

३. शिखा रखने से मनुष्य धार्मिक, सात्त्विक और संयमी बनता है।

४. श्खिा रखने से मनुष्य प्राणयाम, अष्टाङ्गयोगादि यौगिक क्रियाओ को ठीक–ठीक कर सकता है।

५. शिखा रखने से मनुष्य लौकिक तथा पारलौकिक समस्त कार्यों मे सफलता मिलती है।

६. शिखा रख्ने से मनुष्य देवता की रक्षा करते है।

७. शिखा रखने से मनुष्य की नेत्रज्योति सुरक्षित रहती है।

८. शिखा रखने से मनुष्य स्वस्थ, बलिष्ट, तेजस्वी और दीर्घायु होता है।

९. बलायुर्वयो वृद्धिश्च चूडाकर्मफलं स्मृतम् – बल, आयु एवं तेज की वृद्धि ही चूडाकर्म–संस्कार फल है। महर्षि वसिष्ठ का वचन है–श्चौलेनैवायुषो वृद्धिश।

१०. चूडाकरण से त्वचा सम्बन्धी रोगों का नाश होता है। शिखा रखकर शेष बालों को मुँडा देने से रक्तविकार, तापजन्य (गरमीजन्य) तापमान कम हो जाता है। बालकों के फोडे–फुंसी समाप्त हो जाते है।

११. मुण्डन के पश्चात् सिर में मलाई की मालिश करने से मस्तिष्क को शीतलता मिलती है। और बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है।

१२. गोखुराकार अर्थात् गाय के खुर के सदृश प्रमाण की शिखा रखने से दशमद्वार की रक्षा होती है।

१३. शिखा धारण से सुषुम्णा नाडी की रक्षा होती है। सुषुम्णा के नीचे बुद्धि तत्त्व का केन्द्र है, इसकी रक्षा शिखाधारण से होती है।

वेदारम्भ :–

वेदारम्भ उपनयन संस्कार के पश्चात्किया जाता है जो अब प्रतीकात्मक ही रह गया है। वेद की विभिन्न शाखाओं की रक्षा के लिए वेदाभ्यास हेतु यह संस्कार प्रचलित था। कालान्तर में यह संस्कार केवलमात्र पुरोहितों के परिवारों में ही सीमित रह गया है, यही कारण है कि वेदों की अधिकांश शाखाओं का लोप हो चुका है।

इस संस्कार के पहले मेधाजनन नामक एक उपाङ्ग संस्कार होता है, इसे करने से बालक की मेधा, विद्या तथा श्रद्धा बढ़ती है। इस संस्कार में ब्रह्मचारी बटुक अनेक विद्याओं में पारङ्गत हो जाता है।

विद्यया लुप्यते पापं विद्ययाऽऽयुः प्रवर्धते।

विद्यया सर्वसिद्धः स्याद्विद्ययाऽमृतश्नुते।। – ज्योतिर्निबन्ध

अर्थात्वेद विद्या के अध्ययन से सभी पापों का लोप हो जाता है, आयु की वृद्धि होती है, सारी सिद्धियाँ प्राप्त होती है। यहाँ तक कि उसके समक्ष साक्षात्अमृत रस अशन–पान के :प में उपलब्ध हो जाता है।

वर्तमान पद्धतियों में चतुर्वेदों के मन्त्रों का संग्रह कर दिया जाता है, जिसे उपनयन के बाद सावित्री–सरस्वती–लक्ष्मी–गणेश आदि की अर्चना के बाद उपनीत बटुक से उसका औपचारिक उच्चारण मात्र करवा दिया जाता है। अतः वर्तमान में यह संस्कार उपयन के साथ ही कर दिया जाता है।

द्वितीय, तृतीय वर्षों में क्रमशः श्वैदिक महाव्रतत्र्य तथा श्उपनिषद्–व्रतत्र्य किया जाता था, जिसमें वेदों की ऋचाओं तथा उपनिषदों का श्रद्धापूर्वक पाठ किया जाता था और अन्त में सावित्री स्नान होता था। इसके पश्चात्ही वेदाध्यायी श्स्नातकत्र्य कहलाता है।

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन, अग्निस्थापन, पञ्चभूसंस्कार सहित ग्रहशान्त्यादि कर्म के पश्चात्प्रातः काल शुद्ध वस्त्र धारण करके मण्ड़प पर प्रवेश करके प्रायश्चित सङ्कल्प करे :–

अद्य अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं (वर्मागुप्तोऽहं वा) खब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वर्मा, वैश्य के लिए गुप्ता, अस्य ब्रह्मचारिणः सद्ब्रह्मताप्राप्तये श्रीपरमेश्वर प्रीतये च स्व शाखापूर्वक वेदारम्भमहं करिष्ये।

अग्निपूजन :– हाथ में अक्षत लेकर अग्नि का ध्यान करें

ऊँ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य।

त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मत्र्या ँ२ आविशेष।। – समुद्भवाग्न्ये नमः ।।

अथाज्यहोम –

१. ऊँ प्रजापये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम।।

२. ऊँ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय न मम।।

३. ऊँ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये न मम।।

४. ऊँ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम।

अथ ऋग्वेदाहुतयः –

१. ऊँ पृथिव्यै स्वाहा। इदं पृथिव्यै न मम।

२. ऊँ अग्रये स्वहा। इदमग्रये न मम।

३. ऊँ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ऊँ छन्दोभ्यः स्वाहा। इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथ यजुर्वेदाहुतयः –

१. ऊँ अन्तरिक्षाय स्वाहा। इदमन्तरिक्षाय न मम।

२. ऊँ वायवे स्वाहा। इदं वायवे न मम।

३. ऊँ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ऊँ छन्दोभ्यः स्वाहा। इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथ सामवेदाहुतयः –

१. ऊँ दिवे स्वाहा। इदं दिवे न मम्।

२. ऊँ सूर्याय स्वाहा। इदं सूर्याय न मम्।

३. ऊँ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ऊँ छन्दोभ्यः स्वाहाच्च इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथर्ववेदाहुतयः –

१. ऊँ दिग्भ्यः स्वाहा। इदं दिग्भ्यो न मम।

२. ऊँ चन्द्रमसे स्वाहा। इदं चन्द्रमसे न मम।

३. ऊँ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ऊँ छन्दोभ्यः स्वाहाच्च इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथ सामान्याहुतयः –

१. ऊँ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम।

२. ऊँ देवेभ्यः स्वाहा। इदं देवेभ्यो न मम।

३. ऊँ ऋषिभ्यः स्वाहा। इदमृषिभ्यो न मम।

४. ऊँ श्रद्धायै स्वाहा। इदं श्रद्धायै न मम।

५. ऊँ मेधायै स्वाहा। इदं मेधायै न मम।

६. ऊँ सदसस्पतये स्वाहा। इदं सदसस्पतये न मम।

७. ऊँ अनुमतये स्वाहा। इदमनुमतये न मम।

ततो ब्रह्मणाऽन्वारब्धः –

१. ऊँ भूः स्वाहा। इदमग्नये न मम।

२. ऊँ भुवः स्वाहा। इदं वायवे न मम।

३. ऊँ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।

४. ऊँ त्वन्नोऽ अग्ने व्वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽअव यासिसीष्ठा्।

यजिष्ठो व्वह्नितम् शोशुचानो विश्वा द्वेषा सि प्र मुमुगध्यस्मत्स्वाहा।। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५. ऊँ स त्वन्नोऽ अग्नेऽवमो भवोति नेदिष्ठोऽअस्याऽउषसो व्युष्टौ।

अव यक्ष्व नो व्वरुण रराणो व्वीहि मृडीक सुहवो न एधि स्वाहा।। इदमग्नी वरुणाभ्यां न मम।

६. ऊँ अयाश्चाग्रेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयाऽअसि।

अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज स्वाहा। इदमग्नये अयसे न मम।

७. ऊँ ये ते शतं व्वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा व्वितता महान्तः।

तेभिर्नोऽअद्य सवितो विष्णुर्विव्वश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा।।

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८. ऊँ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यम श्रथाय।

अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा।। इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

९. ऊँ प्रजापतये स्वाहाच इदं प्रजापतये न मम।

१०. ऊँ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहाच इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्रवप्राशन व आचमन :–

सङ्कल्प :– ऊँ तत्सद्अद्य ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थं इदं पूर्णपात्रं (दक्षिणां वा) यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

2 उपर्यूक्त संकल्प के द्वारा शास्त्रानुसार किसी मिट्टी के पूर्ण पात्र (चावल, फल, दक्षिणा आदि से पूरित अथवा लोकाचार के अनुसार अन्नादि से पूरित पात्र संकल्प पूर्वक, ब्रहम्कर्म के लिए ब्राह्मण को समर्पित करें।

इसके बाद बर्हिहोम एवं अन्य भूयसी दक्षिणा इत्यादि ब्राह्मण दक्षिणा आदि का दान करने हेतु प्रयोजन के अनुसार संकल्प कर दान करें।

अथ वेदाध्ययनम्–

लोकाचार के अनुसार ब्रह्मचारी वेदाध्ययन के लिए वाराणसी (काशी) गमन करे। सौभाग्यती स्त्री (बहन/बुआ/जीजा/फूफा) ब्रह्मचारी को पुनः घर की देहली के पास तक ले जाकर ब्रह्मचारी नियमों का पालन कराते हुए पुनः पूजन–स्थल पर ले आये।

ब्रह्मचारी अपने गुरुजी का पूजन करते हुए यथोचित दक्षिणा प्रदान करे तत्पश्चात्ॐकार सहित वेदसरस्वत्यै नमः ।च से अपनी–अपनी शाखा के अनुसार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद का पूजन करे। गणपति/गायत्री/स्ववेदादि मन्त्रों का उच्चारण सस्वर ब्रह्मचारी को कराये।

– गणपतिमन्त्रः –

ॐ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा

निधिपति हवामहे व्वसोमम । आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्ध

– गायत्रीमन्त्रः –

हरिष ॐ भूर्भुव् स्वष तत्सवितुर्व्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नष प्रचोदयात्।।

– ऋग्वेद मन्त्रः –

ॐ अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।।

– यजुर्वेदमन्त्रः –

ॐ इषे त्त्वोर्ज्जे त्वा व्वायवस्थ देवो वष सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठत माय कर्मणऽआ प्यायध्वमध्न्याऽइन्द्राय

भागम्प्रजावतीरनमीवाऽ अयक्ष्ममावस्तेनऽईशत माघ श सो ध्रुवाऽ अस्मिन्गोपतौ स्यात्बह्वीर्यज मानस्य

पशून्पाहि।।

– सामवेद मन्त्रः –

ॐ अग्नऽआयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि।।

– अथर्ववेद मन्त्रः –

ॐ शन्नो देवीरभिष्ट्यऽआपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः।।

ततो गुरुः शिक्षयेत्–

आचार्येणाऽऽहूतं उत्थाय। प्रतिवचनं दद्यात्। शयनं चेदाह्वयति तदा आसीनः (उपविष्टः) सन्प्रतिवचनं दद्यात्। आसीनं चेदाह्वयति तदा उत्थितः सन्प्रतिवचनं दद्यात्। उत्थितमाह्वयति तदा गुरुमभिमुखं गच्छन्प्रतिवचनं दद्यात्। अभिमुखमागच्छन्तमाह्वयति तदा गुरुमभिमुखं धावन्सन्प्रतिवचनं दद्यात्। स एवं वर्तमानोऽमुत्राद्यवसतयमुत्राद्य वसतीति तस्य स्नातकस्य कीर्तिर्भवति।

भिक्षाचार्य चरण –

ब्रह्मचारी पलाशदण्ड़ तथा मृगचर्म काष्ठोपाहन धारण करके अपनी माता के पास भिक्षापात्र लेकर भिक्षा हेतु जाये।

ब्राह्मण ब्रह्मचारी – भवति भिक्षां देहि। – आप भिक्षा दें।

क्षत्रिय ब्रह्मचारी – भिक्षां भवति देहि। – कल्याण हो, शुभ हो।

वैश्य ब्रह्मचारी – भिक्षां देहि भवति

पुरुषों से भिक्षा माँगते समय यह बोले – भवान्भिक्षां देहि

भिक्षा प्राप्त करने के बाद ब्रह्मचारी बोले – ॐ स्वस्तीतिय

तत्पश्चात्आचार्य अथवा गुरु को भिक्षा समर्पित करे।

अथ त्र्यायुषकरणम्–

१. ॐ त्र्यायुषं यमदग्नेरिति – ललाटे।

२. ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्– ग्रीवायाम्।

३. ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्– दक्षिण बाहूमूले।

४. ॐ तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्– हृदि।

इति चतुर्भिर्मन्त्रैर्ललाटादिषु त्र्यायुषं कुर्यात्।

ततो देशकालौ स्मृत्वा – श्कृतस्य वेदारम्भ कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थम्आचार्याय दक्षिणां तुभ्यमहं सम्प्रददेये इति दद्यात्। ऐसा कहकर आचार्य को वेदोरम्भ संस्कार की दक्षिणा समर्पित करें।

तत्पश्चात्ब्रह्मग्रन्थि का विसर्जन करते हुए बर्हिहोम तथा नानादानादि सहित ब्राह्मणदक्षिणा व भोजनादि का यथोचित सङ्कल्प करे।

समावर्तन संस्कार :–

समावर्तन का अर्थ है विद्याध्ययन प्राप्तकर ब्रह्मचारी युवक का गुरुकुल से घर की ओर प्रत्यावर्तन।

तत्र समावर्त्तनं नाम वेदाध्यनानन्तरं गुरुकुलात्स्वगृहागमनम्वीर मित्रोदय।।

विष्णुस्मृति के अनुसार कुब्ज, वामन, जन्मान्ध, बधिर, पङ्गु तथा रोगियों को यावज्जीवन ब्रह्मचर्य में रहने की व्यवस्था है :–

कुब्जवामनजात्यन्धक्लीब पङ्वार्त रोगिणाम्।

व्रतचर्या भवेत्तेषां यावज्जीवमनंशतः।।

समावर्तन संस्कार गृहस्थ जीवन में प्रवेश की अनुमति देता है। उपनयन संस्कार से प्रारम्भ होने वाली शिक्षा की पूर्णता के बाद ब्रह्मचर्य का कठोर जीवन व्यतीत करने वाले संस्कारित युवक को इस संस्कार के माध्यम से गार्हस्थ जीवन जीने की शिक्षा दी जाती थी। ऐसे संस्कारित युवक की श्स्नातक्य संज्ञा होती है। स्नातक के तीन प्रकार है – १. विद्या स्नातक, २. व्रत स्नातक, ३. विद्याव्रत स्नातक। इनमें तीसरे प्रकार के स्नातक को ही गृहस्थ जीवन में प्रवेश का अधिकार मिलता था क्योंकि ऐसा ही ब्रह्मचारी विद्या की पूर्णता के साथ ब्रह्मचर्य व्रत की भी पूर्णता प्राप्त कर लेता था। वर्तमान काल में भले १०–१२ वर्ष के बालक का उपनयन संस्कार किया जाता हो, किन्तु उसे तत्काल समावर्त्तन का अधिकारी बना दिया जाता है।

वर्तमान में शिक्षण संस्थाओं में दीक्षान्त समारोह किया जाता है, वह समावर्त्तन संस्कार का अनुकरण ही है। इसके बाद शिष्य को गृहस्थाश्रम में जाने की अनुमति मिल जाती है। शिष्य आचार्य के निम्न उपदेशों का जीवनभर अनुसरण करता है :– १. सत्यं वद। २. धर्मं चर। ३. स्वाध्यायान्माप्रमदः।

आश्रमहीन रहना दोषपूर्ण है, अतः समावर्त्तन के बाद गृहस्थ बनना अपरिहार्य है, अन्यथा प्रायश्चित्त करना होता है। यथा –

अनाश्रमी न तिष्ठेच्च क्षणमेकमपि द्विजः।

आश्रमेण विना तिष्ठन्प्रायश्चित्तीयते हि सः।। – दक्षस्मृति

शुभ मुहूर्त्त में गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्आठ मन्त्रपूरित कलशों का अभिषेक किया जाता है तत्पश्चात्स्नातक दही–तिल का भक्षण करके और क्षौरकर्म करके गूलर की दातून से मुख की शुद्धि करके उबटन लगाकर ऊष्णजल से स्नानकर नाक, कान और नेत्रों में चन्दन लगाता है। इसके बाद शुद्ध वस्त्र, पुष्पमाला आदि धारण करता है। वर्तमान काल में यह संस्कार भी उपनयन संस्कार के साथ ही सम्पन्न कर दिया जा रहा है।

पूजन विधि :–

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन, अग्निस्थापन, पञ्चभूसंस्कार सहित ग्रहशान्त्यादि कर्म के पश्चात्प्रातः काल शुद्ध वस्त्र धारण करके मण्ड़प पर प्रवेश करके प्रायश्चित सङ्कल्प करे :–

अस्य ब्रह्मचारिणः गृहस्थाद्याश्रमान्तरप्राप्तसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वर प्रीत्यर्थं समावर्तनाख्यं कर्म करिष्ये।ध्

अग्निपूजन :–

ॐ चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽअस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽअस्य।

त्रिधा बद्धो व्वृषभो रोरवीति महो देवो मत्र्या ँ२ आविशेष।। – वैश्वानराग्न्ये नमः ।।

तद्यथा देशकालौ सङ्कीत्र्य – श्मम स्नानाधिकारसिद्धये गोप्रत्याम्नायनिष्क्रयीभूतं सुवर्णं रजतं वा आचार्य तुभ्यमहं सम्प्रददे।ध् इति गुरवे वर दत्वा –

श्भो गुरो अहं स्नास्यामिध् इति ब्रह्मचारी सम्प्रार्थ्य श्स्नाहिध् इत्याचार्येणानुज्ञातः समावर्तनं कुर्यात्।

अथाज्यहोमः –

१. ॐ प्रजापये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम।

२. ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय न मम।

३. ॐ अग्नये स्वाहा। इदमग्नये न मम।

४. ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय न मम।

अथ ऋग्वेदाहुतयः –

१. ॐ पृथिव्यै स्वाहा। इदं पृथिव्यै न मम।

२. ॐ अग्नये स्वहा। इदमग्नये न मम।

३. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा। इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथ यजुर्वेदाहुतयः –

१. ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा। इदमन्तरिक्षाय न मम।

२. ॐ वायवे स्वाहा। इदं वायवे न मम।

३. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ॐ छन्दोभ्यः स्वाहा। इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथ सामवेदाहुतयः –

१. ॐ दिवे स्वाहा। इदं दिवे न मम्।

२. ॐ सूर्याय स्वाहा। इदं सूर्याय न मम्।

३. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ॐ छन्दोभ्यः स्वाहाध् इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथर्ववेदाहुतयः –

१. ॐ दिग्भ्यः स्वाहा। इदं दिग्भ्यो न मम।

२. ॐ चन्द्रमसे स्वाहा। इदं चन्द्रमसे न मम।

३. ॐ ब्रह्मणे स्वाहा। इदं ब्रह्मणे न मम।

४. ॐ छन्दोभ्यः स्वाहाध् इदं छन्दोभ्यो न मम।

अथ सामान्याहुतयः –

१. ऊँ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। २. ऊँ देवेभ्यः स्वाहा। इदं देवेभ्यो न मम।

३. ऊँ ऋषिभ्यः स्वाहा। इदमृषिभ्यो न मम। ४. ऊँ श्रद्धायै स्वाहा। इदं श्रद्धायै न मम।

५. ऊँ मेधायै स्वाहा। इदं मेधायै न मम। ६. ऊँ सदसस्पतये स्वाहा। इदं सदसस्पतये न मम।

७. ऊँ अनुमतये स्वाहा। इदमनुमतये न मम।

ततो ब्रह्मणाऽन्वारब्धः –

१. ऊँ भूः स्वाहा। इदमग्नये न मम।

२. ऊँ भुवः स्वाहा। इदं वायवे न मम।

३. ऊँ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय न मम।

४. ऊँ त्वन्नोऽ अग्ने व्वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽअव यासिसीष्ठा्।

यजिष्ठो व्वह्नितम् शोशुचानो विश्वा द्वेषा सि प्र मुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा।। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम।

५. ऊँ स त्वन्नोऽ अग्नेऽवमो भवोति नेदिष्ठोऽअस्याऽउषसो व्युष्टौ।

अव यक्ष्व नो व्वरुण रराणो व्वीहि मृडीक सुहवो न एधि स्वाहा।। इदमग्नी वरुणाभ्यां न मम।

६. ऊँ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयाऽअसि।

अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज स्वाहा। इदमग्नये अयसे न मम।

७. ऊँ ये ते शतं व्वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः।

तेभिर्नोऽअद्य सवितो विष्णुर्विव्वश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा।।

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम।

८. ऊँ उदुत्तमं व्वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यम श्रथाय।

अथा वयमादित्य व्व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा।। इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।

९. ऊँ प्रजापतये स्वाहाय इदं प्रजापतये न मम।

१०. ऊँ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहाय इदमग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्रवप्राशन व आचमन :–

सङ्कल्प :– ऊँ तत्सद्अद्य ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थं इदं पूर्णपात्रं (दक्षिणां वा) यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।

तत्पश्चात् ब्रह्मग्रन्थि का विसर्जन करते हुए बर्हिहोम करे। ब्रह्मचारी शुष्क गोमय के खण्ड़ों को घी में डुबोकर अग्नि में आहुति देवे।

१. ऊँ अग्रे सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु।।१।।

२. ऊँ यथा त्वमग्रे सुश्रवः सुश्रवाऽसि।।२।।

३. ऊँ एवं मा सुश्रवः सौश्रवसं कुरु।।३।।

४. ऊँ यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपाऽसि।।४।।

५. ऊँ एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयासम्।।५।।

जल से अग्नि का पर्युक्षण करे।

तत्पश्चात्निम्न मन्त्रों से कुमार प्रदक्षिणा क्रम से अग्नि का पुर्यक्षण करके निम्न मन्त्रों से अपने हाथों के द्वारा अग्निताप को स्वशरीर पर धारण करे।

ऊँ तनूपाऽअग्नेऽसि तन्वं मे पाहि।।१।।

ऊँ आयुर्दाऽअग्नेऽस्यायुर्मे देहि।।२।।

ऊँ व्वर्चोदाऽअग्नेऽसि व्वर्चो मे देहि।।३।।

ऊँ अग्ने यन्मे तन्वाऽऊनं तन्मऽआपृण।।४।।

ऊँ मेधाम्मे देवः सविता आदधातु।।५।।

ऊँ मेधाम्मे देवी सरस्वती आदधातु।।६।।

मेधामश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ।।७।। इति।

तत्पश्चात् निम्र मन्त्रों से यज्ञोपवतीत धारक कुमार बायें हाथ में जल लेकर दायें हाथ से शरीर के अङ्गों को स्पर्श करे।

१. ऊँ अङ्गानि च मऽआप्यायन्ताम् – शिरः प्रभृतिपादान्तं सर्वाङ्गमालभ्य

ततो दक्षिणहस्ताग्रेण – २. ऊँ वाक्च म आप्यायताम्। – मुखं

३. ऊँ प्राणश्चमऽआप्यायन्ताम् – नासिकारन्ध्रे

४. ऊँ चक्षुश्च मऽआप्यायन्ताम्। – चक्षुषी

५. ऊँ श्रोत्रं च मऽआप्यायन्ताम्। – दक्षिणं–वामं श्रोत्रं स्पृशेत्।

६. ऊँ यशो बलं च मऽआप्यायन्ताम्। – इति बाहू परस्परं

अथ त्र्यायुषकरणम्–

१. ऊँ त्र्यायुषं जमदग्नेः – ललाटे। २. ऊँ कश्यपस्य त्र्यायुषं – ग्रीवायाम्।

३. ऊँ यद्देवेषु त्र्यायुषं – दक्षिण स्कन्धे। ४. ऊँ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्– हृदि।

ब्रह्मचारी सिर झुकाकर व हाथ जोड़कर वैश्वानरादि का निम्न विधि से अभिवादन करे –

अमुक गोत्रोऽमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माहं भो वैश्वानर! त्वामभिवादये।

अमुकगोत्रः अमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो वरुण! त्वामभिवादये।

अमुकगोत्रः अमुक प्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो सूर्य! त्वामभिवादये।

ब्रह्मचारी दायें हाथ से दाहिने पैर का अङ्गूठे का स्पर्श करके सिर झुकाकर गुरु/आचार्य का अभिवादन करे :–

अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो आचार्य!/भो गुरु! त्वामभिवादये।

अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरान्वितः अमुकशर्माऽहं भो ब्राह्मणाः! त्वामभिवादये।

आयुष्मान्भव सौम्य।।

ब्रह्मचारी अपने मृगचर्म व दण्डादि को त्यागकर सूर्योपस्थापन करे, दधि–तिलादि शुभपदार्थों को सेवन करे, लोमादि का छेदन (केशान्त संस्कार) करते हुए क्षौरकर्म करे, दन्तधावन के पश्चात्स्नानादि कर्म करके तिलक धारण करते हुए द्वितीय यज्ञोपवीत (विधि–विधान प्रथम यज्ञोपवीत की भाँति) धारण करे। लोकाचार के अनुसार भाभी/मामी यज्ञोपवीतधारी के नेत्रों को काजल से सुशोभित करे।

नवीन वस्त्रादि (लोकाचार से मामा/बहिन/बुआ आदि के द्वारा भेंट में प्राप्त वस्त्र) धारण करे। तत्पश्चात्यज्ञोपवीतधारी स्व–कुलरीति के अनुसार आरता आदि विधियों के पश्चात्सभी व्यक्तियों से आशीर्वाद ग्रहण करे तथा सभी सज्जन आशीर्वाद स्वःप (तृतीय भिक्षा) यथाशक्ति भेंट प्रदान करे।

तत्पश्चात्नानादानादि सहित ब्राह्मणदक्षिणा व भोजनादि का यथोचित सङ्कल्प करे।

केशान्त संस्कारः—

यह संस्कार प्रायः १६वें वर्ष में किया जाता है । इस संस्कार का सम्बन्ध भी गुरुकुल प्रथा से है। केशान्त अथवा प्रथम क्षौरकर्म चार वैदिक व्रतों में से एक था। केशान्त संस्कार में ब्रह्मचारी के श्मश्रु का सर्वप्रथम क्षौर किया जाता था। इसे श्शगोदानच्च भी कहा जाता है क्योंकि इस अवसर पर आचार्य को गौ का दान किया जाता था तथा नाई को उपहार दिये जाते थे। गोदान करके किशोर नयी अवस्था में प्रवेश करने का सङ्कल्प लेता था। पहले अध्ययन का कार्य १२वें से १६वें वर्ष तक रहता था और अध्ययन के बीच में यह संस्कार सम्पन्न होता था लेकिन अब तो यह संस्कार यज्ञोपवीत संस्कार के साथ प्रतीकात्मक :प में कर दिया जाता है।

इस संस्कार में सभी संस्कारों की भाँति गणेश—मातृका—नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्सभी अन्तर्भूत कर्मों का सम्पादन किया जाता था। इसके बाद श्मश्रु—वपन (क्षौरकर्म अथवा दाढ़ी बनाना) की क्रिया सम्पन्न की जाती थी इसलिए इसे श्मश्रु—संस्कार भी कहते है। संस्कार दीपक के अनुसार :—

केशानां अन्तः समीपस्थितः श्मश्रुभाग इति व्युत्पत्या केशान्तशब्देन श्मश्रुणामभिधानात्श्मश्रु—संस्कार एव केशान्त शब्देन प्रतिपाद्यते। अत एवाश्वलायनेनापि। श्शमश्रुणीहोन्दत्तिच्च इति श्मश्रुणां—संस्कार एवात्रोपदिष्टः।

श्मश्रु—संस्कार ही केशान्त संस्कार है, इसे गोदान—संस्कार भी कहा जाता है क्योंकि श्शगौच्च नामक केश (बालों) का भी अर्थ है। केशों का अन्त भाग अर्थात्समीप श्मश्रु भाग ही कहलाता है। मल्लिनाथ के अनुसार :—

गावो लोमानिकेशा दीयन्ते खड्यन्तेऽस्मिन्नति व्युत्पत्या श्शगोदानंच्च नाम ब्राह्मणादीनां षोड्शादिषु वर्षेषु कर्त्तव्यं केशान्ताख्यकर्मोच्यते।।

इस संस्कार में उच्चारित मन्त्र चौल—संस्कार के समान ही है। केवलमात्र केशान्त—संस्कार में सिर के स्थान पर दाढ़ी—मूँछों का क्षौर होता था। चूड़ाकरण के समान ही दाढ़ी तथा मूँछ के बाल और नख गोबर के पिण्ड या आटे के पिण्ड में डालकर जल में फेंक दिये जाते थे।

विवाह संस्कार :—

विवाहमास :— चौत्र, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक तथा पौष इन मासों को विवाह के लिए निषिद्घ मानते है। गर्ग तथा राजमर्त्तण्डकार तथा अन्य ज्योतिष के ग्रन्थकारों ने चौत्र तथा पौष मासों को वर्जित करके शेष दस मासों को विवाह के लिए शुभ माना हैं।

अथ जन्ममासादिषु निषेधः :— सबसे बड़े लड़के अथवा लड़की के जन्ममास (जन्मतिथि से ३० दिन), जन्मनक्षत्र अथवा जन्मतिथि में विवाह करना अशुभ हैं। द्वितीयादि गर्भोत्पन्न का दोष नहीं होता।

अथ जन्ममासादिषु निषेधः :— सबसे बड़े लड़के अथवा लड़की के जन्ममास (जन्मतिथि से ३० दिन), जन्मनक्षत्र अथवा जन्मतिथि में विवाह करना अशुभ हैं। द्वितीयादि गर्भोत्पन्न का दोष नहीं होता।

यदि एक साथ दो कार्य करने हो तो :— एक घर में दो शुभ काम करना मना हैं परन्तु अति आवश्यकता में ६ दिन का अन्तर देकर दो घरों में अलग—अलग मण्डप रोपण करके जो पुरोहित पहला कार्य करा चुका

हैं उसी से दूसरा कार्य न करावें, दूसरे आचार्य से कराए। इसी प्रकार जिस गृह में पहला कार्य हुआ हो तो दूसरे कार्य में दूसरे घर में मण्डप रोपण करके कार्य करें।

ज्येष्ठ विचारः :– ज्येष्ठ पुत्र व कन्या का विवाह ज्येष्ठ मास में करना अशुभ हैं। अतिआवश्यकता में कृत्तिका नक्षत्रस्थ सूर्य को छोड़कर दानादिपूर्वक करें।

छः मास के भीतर दो विवाह आदि का निर्णय :– दो सगी बहनों का विवाह एक साथ या छः मास के बाद करें तो निस्सन्देह ३ वर्ष के भीतर अशुभ परिणाम मिलता हैं। पुत्र के विवाह के भीतर छःमास तक कन्या का विवाह न करें और कन्या–पुत्र के विवाह बाद छःमास तक यज्ञोपवीत न करें अर्थात् पहले कर ले और मङ्गल कार्य के पीछे अमङ्गल अर्थात् श्राद्घ तिलतर्पण, मुण्डन भी न करें। वर्ष परिवर्तन पर कर सकते है। वहाँ छःमास का विचार नहीं हैं। यह छःमास का निषेध तीन पीढ़ी तक ही हैं।

विवाहादि शुभ कार्यों में मरणाशौच :– साहे चि–ी (कुमकुम पत्रिका) आने पर विवाह दिन निश्चित हो जाने पर किसी की मृत्यु हो जावे तो माता की मृत्यु से ६ मास, पिता की मृत्यु से एक वर्ष, स्त्री कीमृत्यु से ३ मास, भाई व पुत्र कीमृत्यु से ४५ दिन, कुल वालों कीमृत्यु से साढ़े २२ दिन तक कोई शुभ कार्य नहीं करें। अति सङ्कट में ३० दिन के बाद शान्ति करके अथवा विशेष शान्ति और गौदान करके अशौच के बाद करें।

त्रिबलशुद्घि :– विवाह में उत्तम मुहूर्त देखकर उसी दिन वर की राशि से सूर्य चन्द्र देखिए तथा कन्या की राशि से चन्द्र गुरु देखिए, यही त्रिबलशुद्घि हैं। यह त्रिबलशुद्घि जिस दिन उत्तम विवाहलग्न में मिले वही विवाह दिन उत्तम होता हैं।

विवाह विधान (गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्विवाह–विधान करे)–

कन्यापिता ऊर्ध्वजानु पूर्वाभिमुख बैठे हुए वर को सम्बोधन करता हुआ यह कहे :–

ऊँ साधु भवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तम्।

वर कहे :– ऊँ अर्चय।

पुरोहित कहे :– ऊँ विष्टरो विष्टरो विष्टरः।

यजमान एक विष्टर लेकर कहे :– ऊँ विष्टरं प्रतिगृह्यताम्।

वर विष्टर लेकर कहे :– ऊँ विष्टरं प्रतिगृह्णामि।

वर दाता के पास से दोनों हाथों से चुपचाप विष्टर लेकर उत्तराग्र आसन के नीचे रख ऊपर बैठता हुआ यह मन्त्र बोले।

ऊँ वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः।

इमं तमभि तिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति।।

पुरोहित कहे :— ऊँ पाद्यं पाद्यं पाद्यम्।

यजमान कहे :— ऊँ पाद्यं प्रतिगृह्यताम्।

वर कहे :— ऊँ पाद्यं प्रतिगृह्णामि।

वर यजमान की अञ्जलि से पाद्यपात्र ग्रहण करके भूमि पर रख अञ्जलि से पाद्य के जल से ब्राह्मण स्वयं दायाँ पैर फिर बायाँ पैर धोवे। क्षत्रिय, वैश्य हो तो पहिले बायाँ पैर फिर दायाँ पैर धोवे। वर मन्त्र पढ़े। —

ऊँ विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीयमयि पाद्यायै विराजो दोहः।।

पुरोहित दूसरा विष्टर लेकर कहे :— ऊँ विष्टरो विष्टरो विष्टरः।

यजमान कहे :— ऊँ विष्टरः प्रतिगृह्यताम्।

वर कहे :— ऊँ विष्टरं प्रतिगृह्णामि।

वर दाता के पास से विष्टर उत्तराग्र पैरों के नीचे रखे और यह मन्त्र बोले :—

ऊँ व्वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः।

इमं तमभि तिष्ठामि यो मा कश्चाऽभिदासति।

यजमान एक पात्र में दूर्वा, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन और जल लेवे :—

पुरोहित कहे :— ऊँ अर्घो अर्घो अर्घः।

यजमान कहे :— ऊँ अर्घं प्रतिगृह्यताम्।

वर कहे :— ऊँ अर्घं प्रतिगृह्णामि।

वर यजमान के हाथ से अर्घ्यपात्र को ग्रहण करता हुआ मस्तक के लगाकर यह मन्त्र पढ़े :—

ऊँ आपःस्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानि।

पात्रस्थ जल को ईशान दिशा में छोड़ता हुआ यह मन्त्र पढ़े :—

ऊँ समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत।

अरिष्टामस्माकं व्वीरा मा पराऽसेचि मत्पयः।

यजमान आचमनीय पात्र लेवे :—

पुरोहित कहे :– ऊँ आचमनीयं आचमनीयं आचमनीयम्।

यजमान कहे :– ऊँ आचमनीयं प्रतिगृह्यताम्।

वर कहे :– ऊँ आचमनीयं प्रतिगृह्णामि।

वर यजमान के हाथ से आचमनीय पात्र लेकर अपने बायें हाथ में रखकर दायें हाथ से एक बार आचमन करे और दो बार बिना मन्त्र के आचमन करते हुए मन्त्र बोले :–

ऊँ आमाऽगन्यशसा स सृज व्वर्चसा।

तं मा कु: प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम्।

यजमान काँसी की कटोरी में शुद्ध दही, शहद व घी मिलावे और दूसरी काँसी की कटोरी से ढँक लेवे।

पुरोहित कहे :– ऊँ मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्क:।

यजमान कहे :– ऊँ मधुपर्क: प्रतिगृह्यताम्।

वर कहे :– ऊँ मधुपर्कं प्रतिगृह्णामि।

यजमान के हाथ में स्थित मधुपर्क को खोलकर वर देखे और यह मन्त्र पढ़े :–

ऊँ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे।

वर दोनों हाथ से ग्रहण करता हुआ यह मन्त्र पढ़े :–

ऊँ देवस्य त्वा सवितु: प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्प्रतिगृह्णामि।

तत्पश्चात् बायें हाथ में रखकर ऊपर की कटोरी हटाकर दायें हाथ की अनामिका अंगुली से तीन बार चलाकर अनामिका और अंगूठे से थोड़ा सा भूमि पर पर फेंकता हुआ यह मन्त्र पढ़े :–

ऊँ नम: श्यावास्यायान्नशने यत्तऽआविद्धं तत्ते निष्कृन्तामि।

इस मन्त्र से तीन बार प्रक्षेप करके तीनबार फिर नीचे के मन्त्र से मधुपर्क का सेवन करता हुआ तीनों बार यन्मधुनो मन्त्र का उच्चारण करे :–

ऊँ यन्मधुनो मधव्यं परम :पमन्नाद्यम्।

तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण :पेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि।

फिर उच्छिष्ट शेष मधुपर्क पात्र में कुछ द्रव्य रखवाकर नाई या और किसी से उठवाकर बाहर रखवा देवे।

फिर वर तीन बार आचमन करके तर्जनी मध्यमा व अनामिका अंगुली से मुख का स्पर्श करे :– ऊँ वाङ्मऽआस्ये अस्तु।

तत्पश्चात् तर्जनी व अंगुष्ठ से नासिका का स्पर्श करे :– ऊँ नसोर्मे प्राणः अस्तु।

तत्पश्चात् अनामिका व अंगुष्ठ से नेत्रों का स्पर्श करे :– ऊँ अक्ष्णोर्मे चक्षुः अस्तु।

तत्पश्चात् मध्यमा व अंगुष्ठ से कानों का स्पर्श करे :– ऊँ कणयोर्मे श्रोत्रमस्तु।

तत्पश्चात् हाथ के अग्रभाग से दोनों भुजाओं का स्पर्श करे :– ऊँ बाह्वोर्मे बलम् अस्तु।

तत्पश्चात् दोनों हाथों से जंघाओं का स्पर्श करे :– ऊँ ऊर्वोर्मे ओजः अस्तु।

तत्पश्चात् दोनों हाथों से सम्पूर्ण अंगों का स्पर्श करे :–

ऊँ अरिष्टानि मे अङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।

यजमान वर के साथ दूर्वादल पकड़कर तीन बार यह कहे :– ऊँ गौर्गौर्गौः।

वर यह मन्त्र पढ़े :– ऊँ माता :द्राणां दुहिता वसूना स्वसाऽऽदित्यानाम मृतस्य नाभिः। प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मागामनागामदितिं व्वधिष्ट (गाय रुद्रों की माता, वसुओं की पुत्री, अदितिपुत्रों की बहिन और घृतःप अमृत का खजाना है, प्रत्येक विचारशील पुरुष को मैंने ही समझाकर कहा हैं कि निरपराध एवं अवध्य गाय का वध नहीं करना)। मम (स्वस्य) चामुष्य (अमुक शर्मणो यजमानस्य) च पाप्मा हतः। ऊँ उत्सृजत तृणामन्यत्तु। उच्चस्वर से यह कहकर दूर्वादल (तृण) को ईशान कोण में छोड़ देवे और गौदान का सङ्कल्प करे।

अत्र अत्राऽऽचारात् गोदानम्।

ततो देशकालौ संकीत्र्य :– मधुपर्कोपयोगिनो गोःत्सर्गकर्मणः साद्गुण्यार्थं गोनिष्क्रयीभूतम् इदं (गोतृप्त्यर्थं तृणनिष्क्रय द्रव्यं वा) द्रव्यम् अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहम् उत्सृजे।

यहाँ ब्राह्मण कहे :– ऊँ स्वस्ति।

अथ अग्निस्थापन

ऊँ अग्नि दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँऽआसादयादिह।

इस मन्त्र से योजकनाम की अग्नि को वेदी पर स्थापन करके समिधा अग्निरक्षार्थ रखे।

कन्या का पिता यजमान हाथ में जल अक्षत, पुश्पादि अथवा यथाचार लेकर संकल्प करे

कन्यादानकर्मणः पूर्वाङ्गत्वेन वराय वस्त्रचतुष्टय सम्प्रददे। कन्या का पिता वर को चार वस्त्र देवे, वर उन वस्त्रों में दो वस्त्र कन्या के लिए देवे और दो वस्त्र स्वयं धारण करे।

पहले वधू के लिए अधोवस्त्र देता हुआ वर मन्त्र पढ़े

ऊँ जरां गच्छ परिधत्स्व वासो भवाऽऽकृष्टीलनायभिशस्ति पावा।

शतं च जीव शरदः सुवर्च्चा रयिं च पुत्राननु संव्ययस्वाऽऽयुष्मतीदं परिधत्स्व व्वासः।।

फिर उत्तरीय (ओढ़नी) वस्त्र कन्या के लिए देता हुआ वर यह मन्त्र पढ़े :

ऊँ या अकृन्नतन्नवयन् याऽअतन्वत।

याश्चदेवीस्तन्तूनभितो ततन्थ तास्त्वा देवीर्जरसे संव्ययस्वाऽऽयुष्मतीदं परिधत्स्व व्वासः।

तत्पश्चात् वर स्वयं अधोवस्त्र (धोत्ती) पहने :

ऊँ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घयुत्वाय जरदष्टि रश्मि।

शतं च जीवामि शरदः पुःची रायस्पोषमभि संव्ययिष्ये।

तत्पश्चात् उत्तरीय धारण करे :

ऊँ यशसा मा द्यावापृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती।

यशोभगश्च मा विदद्यशो मा प्रतिगृह्यताम्।

वस्त्र पहनने के बाद वर कन्या दोनों दो बार आचमन करे, तत्पश्चात् यजमान दोनों को आज्ञा देवे कि परस्पर एक–दूसरे को देखे :– परस्परं समञ्जयातम्।

वर कन्या को देखता हुआ मन्त्र पढ़े :–

ऊँ समञ्जन्तु विश्वेदेवा समापो हृदयानि नौ।

सम्मातरिश्वा सन्धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ।

कन्या का पिता द्रव्य, पुष्प व अक्षत आदि कन्या के वस्त्र में बाँध करके वस्त्र में बाँध देवे ।

तत्पश्चात् कन्या के पीले हाथ (हरिद्रालेपन) करके हाथ में द्रव्य रखे और पुरोहित शाखोच्चार अथवा गोत्राचारी करे।

हरिद्रालेपन का मन्त्र :–

श्लक्ष्मीर्प्रिया अर्थदात्री लक्ष्मीरिव जनप्रिया।

सौभाग्यदा सदा स्त्रिणां हरिद्रे श्रीः सदास्तु मे।।ॠच

कन्यादान

कन्यादाता अपने दायें भाग में अपनी पत्नी को बिठाकर वर के पास उदङ्मुख बैठकरके आचमन प्राणायाम कर हाथ में दूर्वा, चावल, सुपारी, पुष्प, चन्दन, द्रव्य और जल लेकर शुभ लग्र में कन्या दान का संकल्प करे :—

ऊँ दाता अहं व:णो राजा द्रव्यमादित्य दैवतम्।

वरो असौ विष्णु:पेण प्रतिगृह्णात्वयं विधि:।।

कन्यादान का सङ्कल्प

हरि: ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु: ऊँ तत्सदद्यैतस्य श्रीमद्भगवतो महापु:षस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवराहकल्पे सप्तमे वैवस्वतमन्वतरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्त अन्तर्गते अमुकदेशे (अपने देश का नाम) अमुकक्षेत्रे (अपने राज्य का नाम) अमुकनगरे (अपने नगर का नाम) श्री गङ्गायमुनयो: अमुकभागे (अपने स्थान की दिशा) नर्मदाया अमुक भागे (अपने स्थान की दिशा) चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादिषष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्नि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रीमन्नृपति विक्रमार्कसमयादमुकसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे (वर्तमान विक्रम सम्वत्) अमुकायने (वर्तमान सम्वत्) अमुकर्तौ (वर्तमान ऋतु) अमुकमासे (वर्तमान मास) अमुकपक्षे (वर्तमान पक्ष) अमुकतिथौ (वर्तमान तिथि) अमुकवासरे अमुकगोत्र: (यजमान का गौत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वैश्य, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) सपुत्रस्त्रीबान्धवो अहं मम अस्यां अमुकनाम्न्या: (कन्या का नाम) कन्याया: अनेन वरेण (वर का नाम) धर्मप्रजयाउभयोर्वंशयोर्वंशवृद्धि अर्थं तथा च मम समस्तपितृणां निरतिशयानन्द ब्रह्मलोकवाप्त्यादि कन्यादानकल्पोक्तफलऽऽवाप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसंतत्या द्वादशावरान् द्वादशपरान् पु:षान् आत्मानं च पवित्रीकर्तुं श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये ब्राह्मविवाहविधिना कन्यादानम् अहं करिष्ये।

कन्यादाता कन्या का स्पर्श करके प्रार्थना करे :— ऊँ कन्यां कनकसम्पन्ना कनकाभरणैर्युताम्। दास्यामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोक जिगीषया।। विश्वम्भर: सर्वभूता: साक्षिण्य: सर्वदेवता:। इमां कन्यां प्रदास्यामि पितृणां तारणाय च।।

कन्यादाता वर के हाथ में सुप्रोक्षणादि करे :— ऊँ शिवा आप: सन्तु, इति जलम्। (सन्तु शिवा आप इति प्रतिवचनम्।) ऊँ सौमनस्य अस्तु, इति पुष्पम्। ऊँ अक्षतं चारिष्टं चास्तु, इति अक्षतान्। अस्त्वक्षतमरिष्टं च। ऊँ गन्धा: पान्तु इति चन्दनम्, सौमङ्गल्यं चास्तु। ऊँ अक्षता: पान्तु, आयुष्यमस्तु। ऊँ पुष्पाणि पान्तु, सौश्रियमस्तु।

भाोखाचार विधान—

ऊँ यत्पापं यद् रोगो अशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु।

कन्यादाता पृथ्वी पर जल छोड़े।

कन्यादाता शंख में दूर्वा, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन, द्रव्य (यथाशक्ति :पये अथवा कन्यादान की कोई भी वस्तु) और जल लेकर बोले अमुकगोत्रः (कन्यादाता का गोत्र) अमुकशर्मा अहं (वर्मा अथवा गुप्ता) सपुत्रस्त्रीबन्धवो अहं मम समस्तपितृणां निरतिशयानन्द ब्रह्मलोकवाप्त्यादि कन्यादानकल्पोक्तफलाऽवाप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसन्तत्या द्वादशावरान् द्वादशपरान् पुरुषात्मानं च पवित्रीकर्तुं श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः प्रपौत्राय (परदादा का नाम) अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः पौत्राय (दादा का नाम) अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः पुत्राय (पिता का नाम) अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः प्रपौत्रीम् (परदादा का नाम) अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः पौत्रीम् (दादा का नाम) अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः पुत्रीम् (पिता का नाम) (उपरोक्त गोत्रोच्चार को तीन बार पढ़े)

अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे वराय (वर का नाम व गोत्र) श्रीधरःपिणे कन्यार्थिने अमुकगोत्रोत्पन्नाम् अमुकनाम्नीम् इमां कन्यां (कन्या का नाम व गोत्र) श्रीधरःपिणीं वरार्थिनीं यथाशक्त्यलंकृतां सोपस्करां प्रजापतिदैवतां देव अग्नि गुरु ब्राह्मण सन्निधौ अग्रादि साक्षिकृतया प्रजोत्पादनार्थं (सह धर्माचरणाय) पत्नीत्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे।

यजमान शंखस्थ जल कन्यादान की सामग्री सहित कन्या के दाहिने हाथ में रखकर कन्यादान–सङ्कल्प के पश्चात्वर के दाहिने हाथ में उलट देवे। फिर वर कहे :– ॐ स्वस्ति।

उच्चारण करते हुए कन्या के हाथ को वर मन्त्रोच्चारण करते हुए ग्रहण करे।

ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु।

ॐ कोदात्कस्माऽअदात्कामोऽदात्कामायादात्।

कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते।

कन्या प्रार्थना

कन्यादाता प्रार्थना करे :– गौरी कन्यामिमां विप्र! यथाशक्ति विभूषिताम्! गोत्राय शर्मणे तुभ्यं दत्तां विप्र! समाश्रय।। (पत्नीत्वेन मया दत्तां गृहाण च समाश्रय)।। कन्ये ममाग्रतो भूयाः कन्ये मे देवि पार्श्वयोः। कन्ये मे पृष्ठतो भूयास्त्वद्दानान्मोक्षमाप्नुयाम्।। कन्यालक्ष्मीः समाख्याता वरो नारायणः स्मृतः। तस्मात्कन्या प्रदानेन कृष्णो मे प्रीयतामिति।। मम श्रेष्ठकुले जाता पालिता वत्सरैः शुभैः तुभ्यं विप्र! मया दत्ता पुत्रपौत्रविवर्धिनी।।

कन्यादाता कन्यादानप्रतिष्ठार्थ सुवर्णादिदक्षिणा हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :– अद्य कृतैतत्कन्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं सुवर्णांगुलियकमग्निदैवतं (गाय का दान अथवा गाय के मूल्य के बराबर दक्षिणा) अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे वराय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे। दक्षिणा वर के हाथ में देवे ।

वर कहे :– ॐ स्वस्ति।

यहाँ वर भी कन्यादान प्रतिग्रहजनित दोष अद्य निवारणार्थ गोदान (गाय का दान करे अथवा गाय के मूल्य के बराबर ब्राह्मण को दक्षिणा देवे) करे। ॐ मम गृहीतकन्यादानप्रतिग्रहजन्यदोषपरिहारद्वारा शुभफलप्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थञ्च इदं गोनिष्क्रयीभूतं द्रव्यं रजतं चन्द्रदैवतम् अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे तुभ्यमहं सम्प्रददे। मन्त्र का उच्चारण करता हुआ दक्षिणा ब्राह्मण को देवे।

ब्राह्मण कहे :– ॐ स्वस्ति।

वर वधू का हाथ पकड़कर यह मन्त्र बोले :–

ऊँ यदैषि मनसा दूरं दिशो अनु पवमानो वा।

हिरण्यपर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोतु अमुकिदेवि।

वधू का नाम बोलता हुआ अग्नि के पास आवे। यहाँ वेदी के दायें भाग में दृढ़ पुरुष (ब्राह्मण ईशानकोण खड़ा रहे) जल से भरा हुआ कलश कन्धे पर रखकर शान्तिपूर्वक अभिषेक पर्यन्त खडा रहे। लोटे में कुछ दक्षिण रख देवे।

कन्यादाता कहे :– ऊँ परस्परं समीक्षेथाम्।

वर इन मन्त्रों से वधू को देखे और मन्त्र पढ़े :–

ऊँ अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमना सुवर्च्चाः। वीरसूर्द्देवकामा स्योना शन्नोभव द्वीपदे शं चतुष्पदे।। सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविदऽउत्तरः। तृतीयोऽग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः।। सोमोऽदद्गन्धर्वाय गन्धर्वोऽदद्ग्रये। रयिञ्च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथोऽइमाम्।। सा नः पूषा शिवतमामेरय सा नऽऊःषती विहर। यस्यामुशन्तः प्रहरामशेपं यस्यामु कामा बहवो निविष्टयै।।

अथ आज्यहोमः –

ऊँ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम। इति मन्त्रं मनसोच्चारयेत्।

ऊँ इन्द्राय स्वाहा, इदं इन्द्राय न मम। इति आधारौ।

ऊँ अग्नये स्वाहा, इदं अग्नये न मम।

ऊँ सोमाय स्वाहा, इदं सोमाय न मम। इति आज्यभागौ।

ऊँ भूः स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ऊँ भुवः स्वाहा, इदं वायवे न मम।

ऊँ स्वः स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

अथ सर्वप्रायश्चितहोमः –

ऊँ त्वन्नोऽअग्ने व्वःणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः

यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो व्विश्वा द्वेषा सि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा।

इदमग्निव्वःणाभ्यां न मम।। 1।।

ऊँ स त्वं नोऽअग्नेऽवमो भवोती नेदिष्टोऽअस्याऽउषसो व्युष्टौ।

अव यक्ष्व नो व्वःण रराणो व्वीहि मृडीक सुहवो नऽएधि स्वाहा।

इदमग्निवःणाभ्यां न मम।। २।।

ऊँ अयाश्चाग्रेऽस्य नभिशस्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽसि।

अया–नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज स्वाहा। इदमग्रये अयसे न मम।।३।।

ऊँ ये ते शतं व्वःण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः।

तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा।

इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भयः स्वर्केभ्यश्च न मम।।४।।

ऊँ उदुत्तमं व्वःण पाशमस्मदवाधमं विमध्यम □ श्रथाय।

अथा व्वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा।

इदं वरुणायादित्यायादितये न मम।।५।। इति सर्वप्रायश्चित होमः। यहाँ से अन्वारब्ध हटाकर हवन करे।

राष्ट्रभृद्धोमः –

ऊँ ऋतषाड् ऋतधामाग्निर्गन्धर्वः स न ऽ इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा व्वाट्।

इदमृतासाहे ऋतधाम्नेऽग्रये गन्धर्वाय न मम। ।।१।।

ऊँ ऋतषाड्ऋत धामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदमोषधिभ्योऽप्सरोभ्यो मुद्भ्यो न मम। ।।२।।

ऊँ स हितो व्विश्वसामा सूर्य्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरसऽआयुवो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदं मरीचिभ्योऽप्सरोभ्य आयुभ्यो न मम। ।।३।।

ऊँ स हितो व्विश्वासामा सूर्य्यो गन्धर्वः स नऽइदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा व्वाट्।

इदं स œ हिताय विश्वसाम्ने सूर्याय गन्धर्वाय न मम। ।।४।।

ऊँ सुषुम्णः सूर्यरश्मिचन्द्रमा गन्धर्वः स नऽइदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा व्वाट्।

इदं सुषुम्णाय सूर्यरश्मये चन्द्रमसे गन्धर्वाय न मम। ।।५।।

ॐ सुषुम्णः सूर्यरश्मिचन्द्रमा गन्धर्वतस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदं नक्षत्रेभ्योऽप्सरोभ्यो भेकुरिभ्यो न मम। ।।६।।

ॐ इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वः स नऽइदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदमिषिराय विश्वव्यचसे वाताय गन्धर्वाय न मम। ।।७।।

ॐ इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्धर्वस्तस्यापोऽप्सरसऽऊर्जो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदम् अद्भ्योऽप्सरोभ्य ऊर्जो न मम। ।।८।।

ॐ भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वः स नऽइदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदं भुज्यवे सुपर्णाय यज्ञाय गन्धर्वाय न मम। ।।९।।

ॐ भुज्युः सुपर्णा यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणाऽप्सरस्तावा नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदं दक्षिणाभ्योऽप्सरोभ्यस्तावाभ्यो न मम। ।।१०।।

ॐ प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वः स नऽइदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्।

इदं प्रजापतये विश्वकर्मणे मनसे गन्धर्वाय न मम। ।।११।।

ॐ प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वस्तस्यऽऋक्सामान्यप्सरसऽएष्टयो नाम ताभ्यः स्वाहा।

इदम् ऋक्सामेभ्योऽप्सरोभ्य एष्टिभ्यो न मम। ।।१२।। इति राष्ट्रभृद्धोमः

जयहोमः –

ॐ चित्तं च स्वाहा। इदं चित्ताय न मम। ।।१।।

ॐ चित्तिश्च स्वाहा। इदं चित्त्यै न मम। ।।२।।

ॐ आकूतं च स्वाहा। इदमाकूताय न मम। ।।३।।

ॐ आकूतिश्च स्वाहा। इदं आकूत्यै न मम। ।।४।।

ॐ विज्ञातं च स्वाहा। इदं विज्ञाताय न मम। ।।५।।

ॐ विज्ञातिश्च स्वाहा। इदं विज्ञात्यै न मम। ।।६।।

ॐ मनश्च स्वाहा। इदं मनसे न मम। ।।७।।

ऊँ शक्वरीश्च स्वाहा। इदं शक्वरीभ्यो न मम। ।।८।।

ऊँ दर्शश्च स्वाहा। इदं दर्शाय न मम। ।।९।।

ऊँ पौर्णमासं च स्वाहा। इदं पौर्णमासाय न मम। ।।१०।।

ऊँ बृहच्च स्वाहा। इदं बृहते न मम। ।।११।।

ऊँ रथन्तरं च स्वाहा। इदं रथन्तराय न मम। ।।१२।।

ऊँ प्रजापतिर्जयानिन्द्राय व्रृष्णे प्रायच्छद् उग्रः पृतनाजयेषु।

तस्मै विशः समनमन्तः सर्वा सऽउग्रः स इ हव्योबभूव स्वाहा। इदं प्रजापतये न मम। ।।१३।।

इति जयहोमः।

अथ अभ्यातानहोमः –

ऊँ अग्निभूतानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदम् अग्नये भूतानामधिपतये न मम। ।।१।।

ऊँ इन्द्रो ज्येष्ठानामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदम् इन्द्राय ज्येष्ठानामधिपतये न मम। ।।२।।

दक्षिण दिशा में एक पात्र रखकर उसमें जल का त्याग करे।

ऊँ यमः पृथिव्याऽअधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं यमाय पृथिव्या अधिपतये न मम। ।।३।।

पुरोहित वर और कन्या के प्रणीता के जल से छींटा देता हुआ यह मन्त्र पढ़े :–

ऊँ यथा वाणप्रहाराणां कवचं भवति वारणम।

तद्वद्दैवोपघातानां शान्तिर्भवतु वारणम्। ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

ॐ वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं वायवेऽन्तरिक्षस्याधिपतये न मम। ।।४।।

ॐ सूर्यो दिवोऽधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं सूर्याय दिवोऽधिपतये न मम। ।।५।।

ॐ चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं चन्द्रमसे नक्षत्राणामधिपतये न मम। ।।६।।

ॐ बृहस्पतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं बृहस्पतये ब्रह्मणोऽधिपतये न मम। ।।७।।

ॐ मित्रः सत्यानामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं मित्राय सत्यानामधिपतये न मम। ८।।

ॐ वरुणोऽपाम् अधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं वरुणायापाम् अधिपतये न मम। ।।६।।

ॐ समुद्रः स्रोत्यानामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधाायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं समुद्राय स्रोत्यानाम् अधिपतये न मम। ।।१०।।

ॐ अन्न साम्राज्यानाम् अधिपतिः तन्माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदम् अन्नाय साम्राज्यानाम् अधिपतये न मम। ।।११।।

ॐ सोमऽओषधीनामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मि

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं सोमाय औषधिनांपतये न मम। ।।१२।।

ॐ सविता प्रसवानामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं सवित्रेप्रसवानामधिपतये न मम। ।।१३।।

ईशान दिशा में एक पात्र रखकर उसमें त्याग करे :—

ॐ रुद्रः पशूनामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं रुद्राय पशूनामधिपतये न मम। ।।१४।।

पुरोहित जी वर और कन्या के प्रणीता जल का छींटा देते हुए मन्त्र बोले :—

ॐ यथा वाणप्रहाराणां कवचं भवति वारणम्।

तद्वद्दैवोपघातानां शान्तिर्भवतु वारणम। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

ॐ त्वष्टाःपाणामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं त्वष्ट्रे :पाणामधिपतये न मम। ।।१५।।

ॐ विष्णुः पर्वतानामधिपतिः स माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन्

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं विष्णवे पर्वतानामधिपतये न मम। ।।१६।।

ॐ मरुतो गणानामधिपतयस्ते माऽवत्वसिन् ब्रह्मण्यस्मिन

क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं मरुद्भ्यो गणानामधिपतिभ्यो न मम। ।।१७।।

दक्षिण और अग्निकोण के बीच में एक पात्र रखकर उसमें त्याग करे :–

ऊँ पितरः पितामहाः परेऽवरे ततास्ततामहाः।

इह माऽवन्त्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेऽस्यामाशिष्यस्यां

पुरोधायास्मिन् कर्मणस्यां देवहुत्या स्वाहा।

इदं पितृभ्यः पितृभ्यः पितामहेभ्यः परेभ्योऽवरेभ्यस्ततेभ्यस्ततेभ्यस्ततामहेभ्यश्च न मम। ।।१८।।

पुरोहित जी वर और कन्या के प्रणीता जल का छींटा देते हुए मन्त्र बोले :–

ऊँ यथा वाणप्रहाराणां कवचं भवति वारणम।

तद्वद्दैवोपघातानां शान्तिर्भवतु वारणम्। ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

इति आभ्यातान होमः।

पञ्चाहुतयः –

ऊँ अग्निरै तु प्रथमो देवताना सोऽस्यै प्रजां मुञ्चतु मृत्युपाशात।

तदय राजा व्वरुणोऽनुमन्यतां यथेय स्त्री पौमघं न रोदात् स्वाहा। इदम् अग्रये न मम। ।।१।।

ऊँ इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः।

अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्रमानन्दमभिविबुद्धयतामिय स्वाहा।

इदम् अग्रये न मम। ।।२।।

ऊँ स्वस्ति नोऽअग्ने दिवऽआ पृथिव्या व्विश्वानि धेह्य यथा यजत्र।

यदस्यां महि दिवि जातं प्रशस्तं तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्र स्वाहा। इदम् अग्रये न मम। ।।३।।

ऊँ सुगन्नु पन्थां प्रदिशन्नऽएहि ज्योतिष्मद्धेह्यजरन्नऽआयुः

अपैतु मृत्युरमृतंमऽआगाद्वैवस्वतो नोऽअभयं कृणोतु स्वाहा। इदं वैवस्वताय न मम। ।।४।।

पुरोहित जी वर कन्या और अग्नि के बीच में अन्तः पट देकर इस मन्त्र की आहुति देवे :–

ऊँ परं मृत्योऽअनु परेहि पन्थां यस्तेऽअन्यऽइतरो देवयानात

चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजा œ रीरिषो मोतव्वीरान्त्स्वाहा। इदं मृत्यवे न मम। ।।५।।

''यहाँ लोकाचार से अन्तः पट देवे :–

श्शस्थानं प्रधानं न बलं प्रधानं स्थाने स्थितः कापुरुषोऽपि धीरः।

जानामि नागेन्द्र! तव प्रभावं कण्ठं बिना गर्जसि शङ्करस्य ।ग्य।।१।।

श्शगर्जेर्यदा तृणवच्छेदनीयो दृष्ट्वा ब्रह्मा देवतानां च मुख्यः।

वैरमध्ये वैनतेयाहिराजं तयोरन्तः पट्टमादत्तः नूनम् ।ग्य।।२।।

उपरोक्त अन्तः पट का विधान देवी गौरी व भगवान शङ्कर के विवाह में उत्पन्न गरुड़ व नाग के विवाद के बाद आरम्भ हुआ था।

पुरोहित जी अन्तः पट दूर करके कन्या के प्रणीता से जल का छींटा देवे।

(इसी समय वर और कन्या पक्ष के पुरोहित क्रम से मंगलाष्टक या शाखोच्चार करे, तत्पश्चात् स्वस्थानीय प्रथा के अनुसार चँवरी रोपण करे।)

मङ्गलाष्टकम् –

१. श्रीमत्पङ्कजविष्टरो हरिहरौ वायुर्महेन्द्रोऽनलश्चचन्द्रो भास्करवित्तपालवःणाः प्रेताधिपादिग्रहाः।

प्रद्युम्नो नलकूवरः सुरगजश्चिन्तामणिः कौस्तुभः स्वामी शक्तिधरश्च लाङ्गलधरः कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।

२. गङ्गा गोमतिगोपतिर्गणपतिर्गोविन्द गोवर्धनो गीतागोमय गौरिजो गिरिसुता गङ्गाधरो गौतमः ।

गायत्री गरुड़ो गदाधरः गया गम्भीर गोदावरी गन्धर्वग्रहगोपगोकुलगणाः कुर्वन्तु ना मङ्गलम्।।

३. नेत्राणां त्रितयं शिवं पशुपतेरग्नित्रयं पावनं पुण्यं विष्णुपदत्रयं त्रिभुवनं ख्यातं च रामत्रयम्।

गङ्गावाहपथत्रयं सुविमलं देवत्रयं ब्राह्मणं सन्ध्यानां त्रितयं द्विजैः सुविहितं कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।

४. गौरी श्रीः कुलदेवता च सुभगाः भूमिः प्रपूर्णा शुभा सावित्री च सरस्वती सुरनदी सत्यव्रत।

सत्या जाम्बवती च ःक्मभगिनी दुःस्वप्रविध्वंसिनी वेला चाम्बुनिधेः सुमीनमकराः कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।

५. अश्वत्थो वटवृक्षचन्दनतरतर्मन्दारकल्पद्रुमौ जम्बूनिम्बकदम्बचूतसरला वृक्षाश्च ये क्षीरिणः।

सर्वे ते फलसंयुता प्रतिदिनं विभ्राजनं राजते रम्यं चौत्ररथं च नन्दनवनं कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।ग्य

६. वाल्मीकिः सनकः सनन्दनतरुर्व्यासो वसिष्ठो भृगुर्जावालिजमदग्निकच्छजनको गर्गाऽङ्गिरा गौतमः।

मान्धाता भरतो नृपश्च सगरो धन्यो दिलीपो नलः पुण्यो धर्मसुतो ययातिनहुषौ कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।ॠ

7. लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वतरिश्चन्द्रमा गावः कामदुधाः सुरेश्वरगजो रम्भादिदेवाङ्गनाः।

अश्वः सप्तमुखः सुधाहरिधनुः शंखो विषं चाम्बुधे रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।ॠ

८. गङ्गा–सिन्धु–सरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा कावेरी सरयू महेन्द्रतनया चर्मण्वती वेदिका।

क्षिप्रा वेत्रवती महासुरनदी रव्याता गया गाण्डकी पूर्णा पूर्णजलैः समुद्रसहिता कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।।ॠ

इत्येवं वरमङ्गलाष्टकमिदं पापौघविध्वंसनं पुण्यं सन्मतिकालिदास कविना प्रातः प्रबोधे कृतम्। यः प्रातः शृणुयात्समाहितमना दत्वा महादक्षिणां गङ्गासागर सङ्गमोद्भवफलं प्राप्नोति पुण्यं महत्।।

शाखोच्चारः –

श्रीगणनायक सुमर कर मनमें बारम्बार। सीताराम विवाह का वरणूं शाखोच्चार।।१।। पुराजनक मिथिलेश ने यह प्रण किया कठोर। सीता वरणू मैं उसे जो शिव धनु ते तोर।।२।। यह प्रण कर भूपाल ने रचा स्वयंवर फेर। भूपों को न्योता दिया दिया तनिक करी ना देर।।३।। विश्वामित्र के साथ फिर आये श्री रघुनाथ। जिनके लक्ष्मणलालजी अनुजभ्रात थे साथ।।४।। और भी आये बहुत से मिलकर भूप अनेक। खातिर कीनि जनकने कमी रखी ना तेक।।५।। क्षत्री धनुष उठावते मिलकर बारम्बार। पर वह हिलता नहीं गये भूप सब हार।।६।। देख नृपों की यह दशा क्रुद्ध भये मिथिलेश। बोले जाना क्षत्री अब रहे न भूपर शेष।।७।। प्रण करता ना मैं कभी जो यह लेता जान। भूपर भूप रहा नहीं कोई भी बलवान्।।८।। रामचन्द्र ऊठे तभी सुन यह वचन कठोर। उठा धनुष टंकोर कर भू पर गेरा तोर।।६।। धनुके टूटत ही भई तहँ पर जयजयकार। तभी सिया ने राम के जयमाल दी डार।।१०।। दशरथ नृपको फिर तभी नौता दिया भिजाय। पुनः सजाकर जानको वे भी पहुँचे आय।।११।। पुर में पहुँची जब सुनी शुभ बरात भूपाल। खातिर कीनी बहुत सी सभी हुए खुशहाल।।१२।। घोड़े पर चढ़कर चले दूल्हा बन रघुनाथ। पीछे जान सुहावनी चारों भाई साथ।।१३।। बहुविधि बाजा बज रहे भेरी ढ़ोल मृदङ्ग। नृत्य करत तहँ अप्सरा सबके चित्त उमङ्ग।।१४।। तोरण चटकी राम ने कीया आरता फेर। विप्रों को दी दक्षिणा कीनी बहुत बखेर।।१५।। शतानन्द आये तभी वेदी रची अनूप। नारी मङ्गल गावतीं बैठे सजकर भूप।।१६।। मण्डप रत्नों से जड़ा सुन्दर बन्दनवार। कनक कलश पूरति धरे महिमा बड़ी अपार।।१७।। विप्र वेद तहं पढ़त हैं शुद्ध ध्यान के साथ। विष्टरआदिक दे रहे जनक राम के हाथ।।१८।। किया फेर मिथिलेश सादर कन्यादान। लियो राम हर्षाय के सुनियो चतुर सुजान।।१६।। दान घनेरा फिर दिया धेनु रत्न अपार। विप्रों का दी दक्षिणा कीनी जय जयकार।।२०।। हुआ राम का जिस तरह मिथिला मांहि विवाह उसी तरह होवे यहाँ सबके मन उत्साह।।२१।। रविशेखर को सुमिर कर कीना शाखोच्चार। भूल चूक कवियों मेरी लेना आप सुधार।।२२।।

लाजाहोमः –

वधू को आगे करके वधू और वर पूर्वाभिमुख खड़े होकर हथलेवा खोलकर वर की अञ्जली में कन्या की अञ्जली को रखवायें, तत्पश्चात् कन्या का भाई घी मिश्रित शमीपत्र (जांटी के पत्ते) और लाजा (चावलों की खील) को शूर्प (छाजला) में डाल देवे फिर उन खीलों के चार भाग करे और फिर उनमें से एक भाग को

अलग–अलग अपनी अञ्जली से कन्या की अञ्जली में रखे और कन्या मन्त्र पढ़ती हुई उस लाजा की तीन आहुतियाँ अग्नि में देवे।

यह मन्त्र बोलकर कन्या पहली आहुति देवे :–

ऊँ अर्य्यमणं देवं कन्याऽअग्निमयक्षत।

स नोऽअर्य्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा। इदम् अर्य्यमणे न मम। ।।१।।

यह मन्त्र बोलकर कन्या दूसरी आहुति देवे :–

ऊँ इयं नार्युपब्रते लाजानावपन्तिका।

आयुष्मानस्तु मे पतिरेधन्तां ज्ञातयो मम स्वाहा। इदम् अग्नये न मम। ।।२।।

यह मन्त्र बोलकर कन्या तीसरी आहुति देवे :–

इमाँल्लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणं तव।

मम तुभ्यं च संवननं तदग्निरनुमन्यतामिय स्वाहा। इदम् अग्नये न मम। ।।३।।

यदि हाथ में कुछ भी शेष लाजा हो तो अग्नि में डाल देवे।

वर कन्या के दाहिने हाथ को अंगूठे सहित पकड़े और यह मन्त्र पढ़े, हथलेवा पुनः हाथ में रख देवे।

ऊँ गृभ्णाति ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरष्टिर्यथाऽऽसः। भगोऽर्य्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वा दुर्गार्हपत्याय देवाः। अमोऽहमस्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोऽअहम्। सामाहमस्मि ऋक् त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वम्। तावेहि विवाहवहै सह रेतो दधावहै। प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्द्यावहै बहून्। ते सन्तु जरदष्टयः सम्प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत शृणुयाम शरदः शतमिति। फिर वर अग्नि के उत्तर की ओर रखे हुए पत्थर पर वधू का दाहिना चरण रखे।

तत्पश्चात् वर यह मन्त्र बोले :

ऊँ आरोहे ममश्मानमश्येव त्व स्थिरा भव।

अभितिष्ठ पृतन्यतोऽवबाधस्व पृतनायतः।

पत्थर पर स्थित हुई कन्या के वर गाथागान करे :

ऊँ सरस्वति प्रेदमव सुभगे व्वाजिनीवती।

या त्वा विश्वस्य भूतस्य प्रजायामस्याग्रतः।

यस्यां भूत सम्भवद्यस्यां विश्वमिदं जगत्।

तामद्य गाथां गास्यामि या स्त्रीणामुत्तमं यशः।

तत्पश्चात् वधू आगे और वर पीछे हो तो प्रणीता ब्रह्मसहित अग्नि की प्रदक्षिणा करे।

वर यह मन्त्र पढ़े :

ऊँ तुभ्यमग्रे पर्यवहन्त्सूर्यां वहतु ना सह। पुनः पतिभ्यो जायां दाऽग्ने प्रजया सह।

तत्पश्चात् अग्नि के पश्चिम की ओर ठहरकर लाजहोम, पाणिग्रहण, अश्मारोहण, गाथागान, अग्निप्रदक्षिणा ये सभी कर्म दो बार और पुरोहित करावे।

फेरे लेते समय पुरोहित यह मन्त्र पढ़े :–

ऊँ कणकं कणकेश जटामुकुटम् मणिमाणिकमोती या वरणिम्।

गजनील गजेन्द्र गणाधिपतिं मम तुष्ट विनायक हस्तमुखम्।।

तीन बार परिक्रमण करने के बाद कन्या का भाई शूर्प के कोण से कन्या की अञ्जली में खील डाले और कन्या उन लाजाओं को मन्त्र पढ़ती हुई अग्नि में डाले।

यह मन्त्र पढ़ते हुए कन्या चतुर्थ आहुति देवे :–

ऊँ भगाय स्वाहा।।इदं प्रजापतये न मम।

आहुति के पश्चात्वर पूर्व की भांति हथलेवे सहित कन्या का साङ्गुष्ठ हाथ पकड़कर स्वयं आगे होते हुए मौन होकर चौथी परिक्रमा करे। चतुर्थ फेरे के समय पुरोहितजी ईशान कोण में कलश का स्थापन कर देवे।

अत्र प्रोक्षणीपात्रे हुतशेषाज्यप्रक्षेपणं। लोक व्यवहार से यहाँ पर मामा सेवरा भी करवायें।

चँवरी उठाकर यथास्थान रखवा देवे।

श्श्मण्डपे मधुपर्के च लाजहोमे तथैव च।

यावत्कन्या न वामाङ्गे तावत्कन्या कुमारिका।।

अथ सप्तपदी –

उत्तर से उत्तर की ओर सात जगह मेंहदी अथवा चावल अथवा पुष्प धरे ओर उनमें वधू का दायाँ पैर अनुक्रम से वर रखवायें। वधू उत्तराभिमुख हो सात कदम चले और वर एक एक पद पर निम्नलिखित मन्त्र बोले :–

१. ऊँ एकमिषे विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् विष्णुरुप जो मैं वर हूँ अन्नादिकों की रक्षा के लिए तुम्हें प्रथम मण्डल में प्रथम पैर रखवाता हूँ।

तब प्रसन्न होकर वधू वर से कहे :– धन, धान्य, अन्नादि, मीठा व्यञ्जन आदि जो तुम्हारे घर में है वे सभी आप मेरे अधीन कर देवे ताकि मैं उन पदार्थों से सास, ननद, श्वसुर आदि की यथाशक्ति सेवा कर सकूँ।

२. ऊँ द्वे उर्ज्जे विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् मैं विष्णुरुप जो वर हूँ बल के लिए दूसरे मण्डल में दूसरा पैर चलने को प्राप्त करता हूँ।

फिर वधू वर से प्रसन्न होकर कहती है :– मैं तुम्हारे कुटुम्ब को पुष्ट करती हुई पालन कःंगी, मीठे वचन बोलूंगी, कभी कटु वचन नहीं बोलूंगी यदि कोई दुःख आन पड़े तो उसमें धीरज धारण करके रहूंगी अर्थात् आपके सुख में सुखी और दुःखों को मिटाने का प्रयास कःंगी।

३. ऊँ त्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् मैं विष्णुरुप जो वर हूँ धन की बढ़ोतरी के लिए तीसरे मण्डल में तीसरा पैर रखवाता हूँ।

तत्पश्चात् वधू प्रसन्न होकर बाले :– ऋतुनिवृत्ति के बाद शुद्ध स्नान करके मैं आपके साथ ही आनन्द क्रीडा कःंगी, पराये पुरुषों को मनसे भी नहीं ग्रहण कःंगी।

४. ऊँ चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् विष्णुःप जो मैं वर हूँ सुख की उत्पत्ति के लिए चौथे मण्डल में चौथे पैर के चलने में तुझको प्राप्त करता हूँ।

तत्पश्चात् वधू प्रसन्न होकर वर से कहे :– जो सिन्दूर, रोली, फूलों आदि से सोलह शृंगार या अन्य चन्दनादि से सुवासित होकर कपड़े स्वर्ण के आभूषणों से जो मेरे अंग की सुन्दरता होगी, वह आपके ही प्रसन्न करने या लाड़ लड़ाने को होगी।

५. ऊँ पञ्च पशुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् विष्णुःप जो मैं वर हूँ पशुओं के सुख के लिए पाँचवे मंडल पाँचवे चरण के चलने में तुझकों प्राप्त करता हूँ।

तत्पश्चात् वधू वर से प्रसन्न होकर कहती है :– आपकी मङ्गलकामना के लिए अपनी सखियों के सहित गौरी (पार्वती) की आराधना में तत्पर रहती हुई आप में ही भक्ति भाव करती रहूंगी।

६. ऊँ षड् ऋतुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् विष्णुःप जो मैं वर हूँ सभी छः ऋतुओं के सुख के लिए ऋतु–ऋतु के अनुसार भाँति–भाँति के सुखों के लिए तेरे को छठे मण्डल में चरण के चलने में तुझकों प्राप्त करता हूँ।

तत्पश्चात् वधू प्रसन्न होकर कहती है :– यज्ञ, हवन, दान–धर्म में, सभी प्रकार के कार्यों में मैं आपके साथ खड़ी रहूँगी।

७. ऊँ सखे सप्तपदा भव सा मामनुव्रता भव विष्णुस्त्वा नयतु।च्च्य अर्थात् विष्णुःप जो मैं वर हूँ इन सातों लोकों (भूर्भुवः स्वः महः जनः तपः सत्यः) में मेरे साथ मेरी आज्ञा में होकर एवं पतिव्रत शील से उत्पन्न हुए धर्म के अनूकूल रहती हुई सात लोकों में विख्यात होगी।

यह सुन वधू वर से कहती है :– यहाँ सम्पूर्ण सभ्यजनों की साक्षी के होते हुए पहली ब्रह्मा की बनाई वेद विधि से आप मेरे पतिपरमेश्वर हो चुके जिससे मुझे परमानन्द की प्राप्ति हो गयी है अर्थात् अब मेरे जीवन की नदी सागर से मिल गयी है।

पुरोहित जी वर और वधू का हस्तविमोचन (हथलेवा छुडाएँ) करावें तत्पश्चात् कन्यादाता अपने दायें हाथ में हिरण्यादि दक्षिणा लेकर संकल्प करे :–

ऊँ अद्य विवाहकर्मणि हस्त विमोचन साङ्गतासिद्ध्यर्थम् इदं सुवर्णांगुलीयकं अमुकगोत्राय अमुकशर्मण वराय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे।

वर के हाथ में दक्षिणा देवे।   वर कहे :– ऊँ स्वस्ति।

दायीं तरफ स्थित दृढ़पुरुष के कन्धे से जल का लोटा लेकर आम अथवा नागरबेल के पत्ते से या दूर्वा (घास) की प्रोक्षणी से जल लेकर वधू के सिर पर अभिषेचन (छींटे) करे।

उसी प्रकार अपनी आत्मा का वर भी अभिषेचन करे :–

श्ऊँ आपः शिवा शिवतमाः शान्ताः शान्तमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्। ॥

श्ऊँ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तानऽऊर्जे दधातन। महेरणायचक्षसे। ॥

श्ऊँ यो वः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेह नः। उशतीरिव मातरः ॥

श्ऊँ तस्माऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः ॥

विवाहे साक्ष्यः –

(दिन में विवाह हो तो सूर्य भगवान विवाह के साक्षी होते है एवं रात्रि में विवाह हो तो ध्रुवतारा विवाह का साक्षी होता है क्योंकि ये दोनों अपनी कक्षा में युगों से अटल है, जिस प्रकार ये दोनों ये अटल है उसी प्रकार वर–वधू की जोड़ी भी अटल रहे।)

दिन में विवाह हो तो :– वर वधू से कहे कि सूर्य को देखे और वधू सूर्य को देखती हुई मन्त्र बोले :–

श्ऊँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत।

पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ठ० शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम

शरदः शतमदीना स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्।।

वर और वधू कहे :– पश्यामि।

यदि सूर्यास्त के बाद विवाह हो तो :–   श्ऊँ ध्रुवमसि ध्रुवं त्वा पश्यामि ध्रुवैधि पौष्ये मयि।

मह्यं त्वाऽऽदाद् बृहस्पतिर्मया पत्या प्रजापति सञ्जीव शरदः शतम।

वर और वधू कहे :– पश्यामि।

वर वधू के दाहिने कन्धे पर हाथ रखकर वधू के हृदय को स्पर्श करता हुआ यह मन्त्र बोले :– ऊँ मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तम् अनुचित्तं तेऽअस्तु। मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियनक्तु मह्यम्।।

विवाह में कन्या की तरफ के सात वचन –

१. तीर्थव्रतोद्यापनदानयज्ञान् मया सह त्वं यदि कान्त कुर्याः।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं प्रथम्।

भावार्थ :– कन्या कहती है कि मेरे साथ यदि आप तीर्थ, व्रत, उद्यापन, दान, यज्ञ आदि करो तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह प्रथम प्रतिज्ञा वधू बोले।

२. हव्यप्रदानैमरान् पितृँश्च कव्यप्रदानैर्यदि पूजयेथाः।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं द्वितीयम्।

भावार्थ :– आप यदि देवताओं को हव्यप्रदान (हवनीय द्रव्य) तथा पितरों को कव्यप्रदान (श्राद्धीय द्रव्य) करे तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह द्वितीय प्रतिज्ञा वधू बोले।

३. कुटुम्बरक्षाभरणे यदि त्वं कुर्याः पशुनां परिपालनं च।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं तृतीयम।

भावार्थ :– आप यदि कुटुम्ब की रक्षा तथा पशुओं का पालन करे तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह तृतीय प्रतिज्ञा वधू बोले।

४. आयव्ययौ धान्यधनादिकानां दृष्ट्वा गृहे चेदुचितं निदध्याः।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं चतुर्थम्।

भावार्थ :– आप धान्य व धनादि का आय व्यय देखकर घर में उचित व्यवस्था करे तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह चतुर्थ प्रतिज्ञा वधू बोले।

५. देवालयारामतड़ागकूपवापीर्विदध्याः अथ पूजयेथाः।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं च पञ्चम्।

भावार्थ :– आप यदि मन्दिर, बगीचा, तालाब, कुआँ, बावड़ी या अन्य कोई सार्वजनिक स्थान में यथाशक्ति आर्थिक सहयोग करे तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह पाँचवी प्रतिज्ञा वधू बोले।

६. देशान्तरे वा स्वपुरान्तरे वा यदि प्रकुर्याः क्रय विक्रयौ त्वम्।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं च षष्ठम्।

भावार्थ :– आप विदेश या देश कोई भी क्रय–विक्रय का कार्य करे तो उसकी जानकारी मुझे भी देवे तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह छठी प्रतिज्ञा वधू बोले।

७. न सेवनीया परपारकिया स्यात् काले त्वया भाविनी भामिनीति।

वामाङ्गमायामि तदा त्वदीयं भाषेत कन्या वचनं च सप्तम्।

भावार्थ :– आप भविष्य मैं अत्यन्त प्रबल कामना होने पर भी दूसरे की स्त्री को ग्रहण नहीं करे, एकपत्नीव्रत धारण करे तो मै आपके बायें अङ्ग में आऊँगी। यह सातवीं प्रतिज्ञा वधू बोले।

विवाह में वर की तरफ के वचन –

श्श्उद्याने मद्यपस्थाने परगेहे गमनं तथा।

परपुंसारतिर्गीतं हास्यं वर्ज्यं त्वया सदा ।।१।।

अन्तर्गेहे स्थितानित्यं सुखदुःखानुभोगिनी।

यदा तिष्ठसि भद्रे! त्वं पालनीया सदा मम।।ॅ ।।२

भावार्थ :– आप उद्यान में, मधुशाला, पराये घर में अकेली नहीं जाये तथा परपुरुष के साथ क्रीड़ा, गाना–बजाना और हँसना नहीं करना है। घर के भीतर रहती हुई सुख और दुःख को भोगती हुई रहोगी तो मै अवश्य तुम्हारा पालन कःंगा।

उद्याने सोमपाने च पितुर्गृहगमनेऽ पि च।

मदाज्ञां लंघयित्वा तु न गच्छेर्यदि सुन्दरि। ।।३।।

भावार्थ :– उद्यान में, मधुशाला में, अपने पिता के घर में भी यदि मेरी आज्ञा का उल्लंघन करके यदि तुम नहीं जाओगी तो मैं तुम्हारा पालन कःंगा।

सदैव सेवा कुः मे गुःणां मदीयचित्तानुगताश्च भूयाः।

पतिव्रतधर्मपरायणात्वं गृहस्थकार्यं सकलं कुरुष्व।। ।।४।।

भावार्थ :– सदैव मेरे गुरुजनों की, माता–पिता की तथा समस्त बडों की सेवा करते हुए मेरे मन के अनुसार चलना। पतिव्रता धर्म का पालन करती हुई सभी गृहस्थ कार्यों को सुचारु ःप से तुम करती रहो तो मैं तुम्हे वामाङ्ग में ले सकता हूँ।

मदीय चित्तानुगतं च चित्तं सदा मदाज्ञापरिपालनं च।

पतिव्रताधर्मपरायणा त्वं कुर्याः सदा सर्वमिमं प्रयत्नम।

भावार्थ :– मेरे चित्त के अनुसार आपका चित्त हो और मेरी आज्ञा का पालन करो व पतिव्रतधर्म में परायण होती हुई मेरी गृहस्थी को सम्भालो तो मै तो मैं तुम्हारा पालन क्ःंगा।

तत्पश्चात् वधू को वर के वाम भाग में बैठावे। अनामिकाग्र वधू के सिर पर रखकर वर अभिमन्त्रण करे। तत्पश्चात् वर अनामिकाग्र से सिन्दूर वधू के मस्तक पर डाले और मन्त्र पढ़े :–

मांग भरने का मन्त्र :–

ऊँ सुगङ्गलीरियं वधूरिमा समेत पश्यत सौभाग्यमस्यै दत्वा याथाऽस्तं विपरेत न।

वर ब्रह्मा अन्वारब्ध करे :–

ऊँ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इदम् अग्नये स्विष्टकृते न मम।

संस्रवप्राशन कर आचमन करके पूर्णपात्र दक्षिणा सहित ब्रह्मा को देवे।

वर अपने दायें हाथ में पूर्णपात्र लेकर संकल्प करे :–

ऊँ अद्य कृतस्य विवाह होमकर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थमिदंपूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं सदक्षिणाकममुकगोत्राय अमुक शर्मणे ब्राह्मणाय दक्षिणा त्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे।

ब्रह्मा कहे :– **ऊँ स्वस्ति।**

यजमान अपने दायें हाथ में यथाशक्ति आचार्य–दक्षिणा लेकर संकल्प करे :– श्श्अद्य कृतैतद्विवाह होमकर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थं गोप्रत्ययाम्नायीभूतमिदं द्रव्यममुकगोत्राय अमुकशर्मणे आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे।चय

आचार्य कहे :– **ऊँ स्वस्ति।**

तत्पश्चात् विवाह में उपस्थित अन्य पुरोहितों को दक्षिणा देवे।

पुरोहित प्रणीता के जल से वधू और वर एवं कन्यादाता के सिर पर जल के छींटे देवे और पवित्री को अग्नि में छोडते हुए यह मन्त्र पढ़े :– श्श्ऊँ सुमित्रियानऽआपऽओषधयः सन्तु।चय

ईशान दिशा में प्रणीता उल्टा करते हुए यह मन्त्र पढ़े :– **ऊँ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः।**

आस्तरण क्रम से कुशाओं को उठाकर घी में भिगोकर हाथ से आहुति देवे :–

ऊँ देवा गातु विदो गातुं वित्वा गातुमित।

मनसस्पतऽइमं देव यज्ञ स्वाहा व्वाते धाः स्वाहा।

त्र्यायुष करण्

ईशान दिशा से स्रुवे से भस्मी लेकर दायें हाथ की अनामिका के अग्रभाग से वर और वधू के भस्मी लगावे :—

ऊँ त्र्यायुषं जमदग्नेः इति ललाटे।

ऊँ कश्यपस्य त्र्यायुषं इति ग्रीवायाम्।

ऊँ यद्देवेषु त्र्यायुषं इति दक्षिणबाहुमूले।

ऊँ तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्च्य इति हृदि।

भूयस्याः दक्षिणायाः सङ्कल्पः

वर और यजमान अपने अपने दायें हाथ में जल, अक्षत, द्रव्य लेकर सङ्कल्प करे :— अद्य कृतैतद्विवाहकर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थं तन्मध्ये न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारपूर्वकं शुभफलप्राप्त्यर्थमिमां भूयसीं दक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दीनानाथेभ्यो नटनर्तकगायकेभ्यश्च विभज्य दातुम् अहम् उज्सृज्ये।च्य

ब्राह्मण को देवताओं के सम्मुख ही दक्षिणा देवे

देवे दत्वा तु दानानि देवे दद्याच्च दक्षिणाम।

तत्सर्वं ब्राह्मणे दद्यादन्यथा विफलं भवेत

तत्पश्चात् पुरोहित वर और वधू के तिलक लगाकर आरता करे तत्पश्चात् वर के पिता अथवा परिवार का अन्य कोई भी बड़ा व्यक्ति वधू की गोद भरे।

कन्यादाता अपने दायें हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर आवाहित देवताओं का विसर्जन करे :— श्ऊँ यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्। इष्टकाम समृद्धयर्थं पुनरागमनाय च।च्य

वंशगोत्रोच्चारण्

यहाँ वधूपक्ष का पुरोहित पढ़े :—

श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा। .... जी परपौत्रीं .... गोत्रीम्।।१।। श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा .... जी परपौत्रीं .... गोत्रीम्। श्रीमन्त यशवन्त पुण्यं पवित्रं यजमानसा .... परपौत्री .... गोत्रीम्। .... जी पौत्री .... जी पुत्री।

वरकन्या चिरंजीव हो एवं इनकी जोड़ी अमर रहे।।४।। ञ्च

यहाँ वरपक्ष का पुरोहित पढ़े :–

साहनपति श्री साहजी, साहन के सिर छत्र। .... जी परपौत्र है, ... है जिनका गोत्र।। साहनपति श्री साहजी, साहन के सिर छत्र। .... जी परपौत्र है, ... है जिनका गोत्र।। साहनपति श्री साहजी, साहन के सिर छत्र। .... परपौत्र है, ... है जिनका गोत्र।। .... जी पौत्र है .... जी पुत्र।

वरकन्या चिरंजीव हो एवं इनकी जोड़ी अमर रहे।

यहाँ वधूपक्ष का पुरोहित प्रस्थान के समय बोले :– अश्वं गजं नैव हिरण्यदानं कौशेय वस्त्रं न च हेमरत्नं शुद्धां तु कन्यां प्रददामि तुभ्यं भक्ति प्रसादाद् द्विज सम्प्रसीद।।

यहाँ वरपक्ष का पुरोहित प्रस्थान के समय बोले :– श्लोके कीर्तिः कुले वृद्धिर्लक्ष्मीश्च गृहमागता। रत्नत्रयं मया लब्धं त्वत्प्रसादाद् द्विजोत्तम।।

त्रेताग्नि–संग्रह संस्कार (आवसथ्याधान) :–

स्मार्त वैवाहिके वह्नो श्रौतं वैतानिकाग्निषु।। – व्यास स्मृति

स्मार्त या पाकयज्ञ संस्था के सभी कर्म वैवाहिक अग्नि में तथा हविर्यज्ञ एवं सोमयज्ञ संस्था के सभी श्रौतकर्म, अनुष्ठान आदि वैतानाग्नि (श्रोताग्नि–त्रेताग्नि) में सम्पादित किये जाते है।

विवाह के समय घर पर लायी गयी आवसथ्य अग्नि में स्मार्त कर्म आदि अनुष्ठान किये जाते है। उसी स्थापित अग्नि से अतिरिक्त अन्य तीन अग्नियों (दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य तथा आहवनीय) की स्थापना तथा उनकी रक्षा आदि का विधान भी शास्त्रों में निर्देशित है। ये तीन अगियाँ त्रेताग्नि कहलाती है, जिनमें श्रौतकर्म सम्पादित होते है।

जिस प्रकार वेदाध्ययन आवश्यक बताया गया है और वेद के अध्ययन का प्रयोजन यज्ञ कर्मों में समाया हुआ है, जिससे पुण्य और सद्गति प्राप्त होती है, उसी प्रकार त्रेताग्नि क्रिया को आवश्यक तथा महत्त्व का संस्कार बताया गया है। इसी दृष्टि से इसे संस्कार भी माना गया है। शास्त्रों में यह निर्देश है कि गृहस्थ एक स्वतन्त्र यज्ञशाला स्थापित करे, जिसे त्रेताग्निशाला भी कहा गया है। पूर्वोक्त तीनों अग्नियों की विधिवत्स्थापना करे और उसमें अवन आदि कार्य करे।

वर्तमान में यह संस्कार विलुप्त हो चुका है।

अन्त्येष्टि संस्कार :–

अन्त्येष्टि ऐहिक जीवन का अन्तिम अध्याय है। आत्मा की अमरता एवं लोक–परलोक का विश्वासी हिन्दु जीवन इस लोक की अपेक्षा पारलौकिक कल्याण की सतत्कामना करता है। मरणोत्तर संस्कार से ही पारलौकिक विजय प्राप्त होती है। यथा – जात संस्कारेणेमं लोकमभिजयति मृतसंस्कारेणामुं लोकम्।

मरणोपरान्त सर्वप्रथम कर्म करने वाला (पुत्र अथवा उत्तराधिकारी) दक्षिणाभिमुख होकर मुण्डनादि करवाये तथा स्नान करके द्वादश तिलकों को धारण करे, मृतव्यक्ति को भी शुद्ध जल अथवा गङ्गाजल (यथोपलब्ध केवड़ा इत्यादि सुगन्धित जल) से स्नान करवाकर नवीन मृतवस्त्र (मृतचौल अथवा क+फन) धारण करवाये। गोपीचन्दन का तिलक लगाये, पुष्पमाला धारण करवाये तथा यथाशक्ति अर्थी (मृत्युशैय्या) को सुसज्जित करके उसमें मृतक का सिर दक्षिण की ओर रखते हुए अर्थी पर लेटाकर यथोचित सामग्री से इस तरह बाँध लेवे कि शव रास्ते मे अव्यवस्थित ना हो सके।

जौ का आटा व तिलादि को मिलाकर पाँच पिण्ड (देशाचार से छः पिण्ड) बनाये।

१. मृतक शैय्या (मृतस्थान) के पास जाकर अपसव्य होकर जल–तिल–कुश आदि से पितृतीर्थ (अङ्गूठे की ओर से) की मुद्रा से सङ्कल्प करे –

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य मृतस्थाने एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्। – उच्चारित करते हुए पिण्ड को मृतक के हाथ में रख देवे।

२. द्वारदेश का पिण्ड (मृतक के घर की देहली का पिण्ड) :–

. ... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य द्वारदेशे पान्थनिमित्त एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

३. चतुष्पद पिण्ड (चौराहे का पिण्ड) :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य चत्वरे खेचर निमित्त एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

४. विश्राम–स्थल पिण्ड (बीचले वासे का पिण्ड़) :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य विश्रान्तो भूतनाम्ना एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

५. चिता स्थान का पिण्ड :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य साधकनामप्रेतः साधकनामप्रेतः एषः चित्रगुप्तदैवतः चितापिण्डस्ते मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

सभी क्रियाओं के पश्चात्पुत्र/उत्तराधिकारी शव को शैय्या से उठाकर एक वस्त्र में चिता पर लेटाकर क्रव्याद नामक अग्नि को प्रज्ज्वलित करके सिर की ओर से चिता को अग्नि देवे। पञ्चकों में मृत्यु होने पर पञ्चक–शान्ति अवश्य कराये।

पञ्चक–शान्ति :–

धनिष्ठादि पञ्चनक्षत्रों में मृत व्यक्ति की पञ्चक–शान्ति हेतु कुशा से पाँच प्रतिमायें बनाकर सङ्कल्प करे :–

देशकालौ सङ्कीत्र्य .... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य पञ्चकमरणजनितवशारिष्टपरिहारार्थं पञ्चकशान्तिकर्म अमुकामुक अहं करिष्ये।

दर्भमय पाँच प्रतिमाओं को ऊन के वस्त्र से वेष्टन करके निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करके अग्नि में आहुति देकर यथास्थान रखे। धनिष्ठादि पाँच नक्षत्रों की निम्न मन्त्रों से पूजन करके आहुतियाँ देवे :–

१. धनिष्ठा :– ऊँ व्वसो् पवित्रमसि शतधारं व्वसो् पवित्रमसि सहस्रधारम्।

देवस्त्वा सविता पुनातुव्वसो् पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षघ्

१.१. ऊँ प्रेतवाहाय नमः – सिर पर

२. शतभिषा :– ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ

ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

२.१. ऊँ प्रेतसखाय नमः – नेत्रों पर

३. पूर्वाभाद्रपद :– ऊँ उतनोहिर्बुध्न्यः शृणोत्वजऽएकपात्पृथिवीसमुद्रः।

विश्वेदेवा ऋतावृधोहुवानास्तुतामन्त्राः कविशस्ताऽअवन्तु।।

३.१. ऊँ प्रेतमाय नमः – वामकुक्षि पर

४. उत्तराभाद्रपद :– ऊँ शिवो नामासि स्वधितिस्त्ते पिता नमस्त्तेऽअस्त्तु मा मा हि सी।

निवर्त्तयाम्म्यायुषेन्नाद्द्याय प्रजननाय रायस्प्पोषाय सुप्रजास्त्त्वाय सुवीर्य्यायघ्

४.१. ऊँ प्रेतभूमिपाय नमः – नाभि पर

५. रेवती :– ऊँ पूषन्तवव्रतेव्वयन्नरिष्येन्न कदाचन। स्तोतारस्तऽइहस्मसि।।

५.१. ऊँ प्रेतहर्त्रे नमः – चरणों पर

कपाल क्रिया :– शव के अर्द्धदग्ध होने पर कमकर्ता बाँस के डण्डे को आगे से तोड़कर नारियल में घी भरकर सिर के ब्रह्मरन्ध्र का छेदन (कपाल–क्रिया) करे।

तत्पश्चात्सभी व्यक्ति अपने स्थान का परित्याग करते हुए मृतक को गोमयपिण्ड (छाणे/कण्डे/समिधादान) समर्पित करे। अत्येष्टि के पश्चात्शुद्ध जल से स्नानादि करके मृतक के निमित्त पीपलादि वृक्ष में जलाञ्जलि देकर घर को प्रस्थान करे।

3.4 सारांश

इस अध्याय में हमे संस्कारों की महत्ता का ज्ञान हुआ। भारतीय संस्कृति में इनका औचित्य तथा इनका मानव जीवन में गहरा प्रभाव भी परिलक्षित होता है। गर्भाधान से प्रारम्भ करके पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह, त्रेताग्नि संग्रह संस्कार एवं अत्येष्टि तक व्यक्ति का सम्मार्जन करना ही संस्कारों का उद्देश्य होता है, जिससे वह श्रेष्ठ समाज का निर्माण कर सके। प्रायः अधिकांश संस्कारों के विषय में बहुत से लोग अनभिज्ञ है इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात्छात्र सभी संस्कारों का विस्तृत ज्ञापन प्राप्त करते हुए स्वयं धर्मशास्त्रीय कर्मकाण्ड़ का सम्पादन कर सकेंगे।

3.5 शब्दावली

१. षोड़श = सोलह,

२. संस्कार = शुद्धिकरण

३. मैथुन = सम्भोग

४. गर्भाधान = गर्भधारण की प्रक्रिया

५. पुंसवन = पुरुष वाचक संस्कार

६. उपनयन = गुरु के समीप जाना

७. सीमन्तोन्नयन= मस्तिष्क का विकास

८. निष्क्रमण = बाहर निकलना

९. अन्नप्राशन = अन्न का आस्वादन

१०. चूड़ाकरण = मुण्डन्

११. अन्त्येष्टि = मनुष्य का अन्तिम यज्ञ

१२. आज्य = घी

3.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : वेदव्यास के मत से संस्कार कितने होते है?

उत्तर : वेदव्यास के मतानुसार षोड़श संस्कार होते है।

प्रश्न – २ : गर्भाधान की परिभाषा क्या है?

उत्तर : गर्भस्य आधानं इति गर्भाधानम् अर्थात्जिस कर्म के द्वारा स्त्री के गर्भ में बीज की स्थापना पुरुष द्वारा की जाती है, वह प्रक्रिया गर्भाधान कहलाती है।

प्रश्न – ३ : उपनयन संस्कार किस आयु में किया जाता है ?

उत्तर : ब्राह्मणों के लिए गर्भ से आठवाँ वर्ष, क्षत्रिय के लिए ग्याहरवाँ वर्ष तथा वैश्य के लिए बाहरवाँ वर्ष शास्त्रों ने उपनयन हेतु निर्दिष्ट किया है।

प्रश्न – ४ : ब्रह्मचारी के पाँच नियम लिखिए ?

उत्तर : गुरु सेवा, सत्य वचन बोलना, मालिश नहीं करवाना, विषम भूमि का लङ्घन नहीं करना, स्त्री के साथ समागम ब्रह्मचारी के लिए वर्जित है।

प्रश्न – ५ : केशान्त संस्कार किस आयु में किया जाता है ?

उत्तर : सोलहवें वर्ष में केशान्त संस्कार किया जाता है।

प्रश्न – ६ : विवाह के लिए निषिद्धमास कौन से है ?

उत्तर : चौत्र, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक तथा पौषमास विवाह हेतु वर्जित है।

प्रश्न – ७ : विवाह के समय हरिद्रालेपन का मन्त्र लिखिए ?

उत्तर : लक्ष्मीर्प्रिया अर्थदात्री लक्ष्मीरिव जनप्रिया।

सौभाग्यदा सदा स्त्रिणां हरिद्रे श्रीः सदास्तु मे।। इस मन्त्र को उच्चारित करते कन्या के दोनों हाथ तथा वर का केवल दायाँ हाथ हरिद्रा से लेपित करना चाहिए।

प्रश्न – ८ : भारतीय कानून में विवाह की कौनसी विधि सर्वाधिक प्रमाणित है?

उत्तर : सप्तपदी को भारतीय कानून में विवाह हेतु सर्वाधिक प्रमाणिकता दी गयी है।

प्रश्न – ९ : कितने पिण्ड मृतकशय्या से लेकर चिता स्थान तक दिये जाते है ?

उत्तर : प्रथम पिण्ड मृतकशय्या स्थान पर, द्वितीय मृतक की घर की देहली पर, तृतीय पिण्ड़ मार्ग के चौराहे पर, चतुर्थ पिण्ड विश्राम स्थल पर तथा पञ्चम पिण्ड़ चिता की रखा जाता है।

प्रश्न – १० : कपाल क्रिया किस प्रकार की जाती है ?

उत्तर : शव के अर्द्धदग्ध होने पर कर्मकर्ता बाँस के डण्डे को आगे से तोड़कर नारियल में घी भरकर सिर के ब्रह्मरन्ध्र का करता है।

3.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न – १ : षोड़श संस्कारों के नाम बताते हुए संक्षित परियच दीजिये ?

प्रश्न – २ : गर्भाधान का पारिभाषिक परिचय दीजिये ?

प्रश्न – ३ : ब्रह्मचारी के पालनीय नियम बताईये ?

प्रश्न – ४ : सप्तपदी का विवेचन कीजिये ?

प्रश्न – ५ : पञ्चकशान्ति का विवेचन कीजिये ?

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1 धर्मशास्त्र का इतिहास

लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे

प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2 नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,

प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

3 अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा

संकलन ग्रन्थ

प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

4 कर्मठगुरुः

लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

5 हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

6 शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

7 विवाह संस्कार

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – हंसा प्रकाशन, जयपुर

इकाई – 4

संध्या

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 विषय प्रवेश (सन्धा का विस्तृत वर्णन)

4.4 सारांश

4.5 शब्दावलि

4.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

4.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.4 प्रस्तावना

सन्धा वर्णन से संबंधित यह चौथी इकाई है। इसके पूर्व की इकाई में आप सोलह संस्कारों का अध्ययन कर चुके हैं। सन्ध्या शब्द का तात्पर्य दो कालों के मध्य का समय होता है। सन्ध्या तीन प्रकार की होती है – 1. प्रातः सन्ध्या, 2. मध्याह्न सन्ध्या तथा 3. सायं सन्ध्या। तथापि एक और सन्ध्या (रात्रि सन्ध्या) होती है जो सभी के लिए बाध्य नहीं है, यह केलव कार्यविशेष (तान्त्रिक कर्म) के लिए विशेष परिस्थितियों में ही करणीय है। सन्ध्या सभी वर्णों के लिए अनिवार्य है। सन्ध्याकाल में मनुष्य में उद्वेगों की प्रबलता रहती है, जिन्हें शान्त करने के लिए जप–तप आदि का विधान शास्त्रों में बताया गया है। सन्ध्या करने से मनुष्य का मन एकाग्र होता है तथा श्रेष्ठ विचारों का मस्तिष्क में आगमन होता है। शारीरिक व मानसिक व्याधियों के शमन के लिए भी सन्ध्या विशेष लाभदायी है, इससे व्यक्ति के आत्मबल में वृद्धि होती है। अतः इस इकाई के अध्ययन के बाद आप संधा संबंधी समस्त महत्वपूर्ण तथ्यों को बता सकेगें।

4.2 उद्देश्य

सन्ध्या वर्णन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

1. सन्ध्या विधि को समझा सकेंगे।
2. सन्ध्या से प्राप्त होने वाले लाभों को बता सकेगें।
3. सन्ध्या से रहित की हानियां निर्धारित कर सकेंगे।
4. सन्ध्या से जीवन के चतुर्दिक विकासों को समझा सकेंगे।

5. सन्ध्या में करणीय एवं त्याज्य का महत्व बता सकेंगे।
6. त्रिकाल संध्या की विशेषताओं को बता सकेंगे।

4.3 विषय प्रवेश

सन्ध्या का समय :– ब्रह्ममुहूर्त में जब रात्रि चार घड़ी शेष रहे, तब शयन से उठकर भगवान् का स्मरण करे, शौच स्नाान के अनन्तर शुद्ध वस्त्र धारण करके पवित्र तथा एकान्त स्थान में कुश अथवा कम्बल आदि के आसन पर पूर्वदिशा की ओर मुख करके बैठे (तीनों काल की सन्ध्या में उपर्युक्त दिशाओं की ओर ही मुख करके बैठना चाहिए, केवल सूर्याघ्र्यदान, सूर्योपस्थान और गायत्रीजप सूर्याभिमुख होकर करना आवश्यक है।)।

आचमन एवं पवित्रीकरण विधि :– तत्पश्चात् ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः स्वाहा – इन तीन मन्त्रों को पढ़कर प्रत्येक से एक–एक बार (कुल तीन बार) पवित्र जल से आचमन करे (आचमन के समय हाथ जानुओं के भीतर हो, पूर्व, ईशान या उत्तर दिशा की ओर मुख हो। ब्राह्मण इतना जल पिये जो हृदय तक पहुँच सके, क्षत्रिय उतना ही जल ग्रहण करे जो कण्ठ तक पहुँचे, वैश्य उतना ही जल ग्रहण करे जितना तालु तक जा सके। उस समय ओष्ठ बहुत न खोले, अङ्गुलियाँ परस्पर सटी रहे। जल में फेन या बुलबुले आदि न हो)। ब्रह्मतीर्थ से तीन बार आचमन करके के पश्चात्श्ऊँ गोविन्दाय नमः च्यच मन्त्र से हाथ धो लेवे। अंगूठे का मूल ब्रह्मतीर्थ है, तत्पश्चात्मन्त्रोच्चापूर्वक दायें हाथ की अनामिका, मध्यमा अङ्गुली व अङ्गुष्ठ से सर्वप्रथम मुख का स्पर्श करे एवं इसी प्रकार क्रमशः नाक, आँख, कान का स्पर्श करते हुए बायें हाथ से दायें हाथ का तथा दायें हाथ से बायें हाथ का स्पर्श करे तत्पश्चात् घुटने का स्पर्श करते हुए सभी अङ्गों का स्पर्श करे।

तीन बार आचमन करके तर्जनी मध्यमा व अनामिका

अंगुली से मुख का स्पर्श करे :– ऊँ वाङ्मऽआस्ये अस्तु।

तत्पश्चात् तर्जनी व अंगुष्ठ से नासिका का स्पर्श करे :– ऊँ नसोर्मे प्राणः अस्तु।

तत्पश्चात् अनामिका व अंगुष्ठ से नेत्रों का स्पर्श करे :– ऊँ अक्ष्णोर्मे चक्षुः अस्तु।

तत्पश्चात् मध्यमा व अंगुष्ठ से कानों का स्पर्श करे :– ऊँ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु।

तत्पश्चात् हाथ के अग्रभाग से दोनों भुजाओं का स्पर्श करे :– ऊँ बाह्वोर्मे बलम् अस्तु।

तत्पश्चात् दोनों हाथों से जंघाओं का स्पर्श करे :– ऊँ ऊर्वोर्मे ओजः अस्तु।

तत्पश्चात् दोनों हाथों से सम्पूर्ण अंगों का स्पर्श करे :– ऊँ अरिष्टानि मे अङ्गानि तनूस्तन्वा में सह सन्तु।

कुश के अभाव में स्वर्ण, चाँदी अथवा ताँबे की अंगूठी पहनकर भी कार्य किया जा सकता है। ऊँकार और व्याहृतियों सहित गायत्री मन्त्र का उच्चारण करके शिखा बाँध लेवे, यदि पहले से ही शिखा बँधी हो तो, उसका स्पर्शमात्र कर लेवे। एक जोड़ा यज्ञोपवीत धारण किये रहना आवश्यक है, देह पर धौत (श्वेत) वस्त्र

के अतिरिक्त एक उत्तरीय वस्त्र डाले रहना चाहिए। उत्तरीय वस्त्र के अभाव में एक और यज्ञोपवीत (कुल मिलाकर तीन यज्ञोपवीत) धारण किये रहे। फिर किसी पात्र में शुद्ध जल रखकर उसे बायें हाथ में उठा लेवे और दायें हाथ के कुशा से अपने शरीर पर सींचते हुए निम्राङ्कित मन्त्र पढ़े :–

बायें हाथ में तीन कुशा व दायें हाथ में दो कुशों की बनी पवित्री धारण करे :–

ऊँ पविर्त्रेस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्व प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्द्रेण पवित्रेण सूर्स्य रश्मिभि ।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य त्कामल पुनेतच्छकेयम्।

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।। ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु मां।

मनुष्य अपवित्र हो या पवित्र अथवा किसी भी दशा में स्थित हो, जो पुण्ड्रीकाक्ष भगवान्विष्णु का स्मरण करता है, वह बाहर और भीतर सब ओर से शुद्ध हो जाता है।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से आसन पर जल छिड़ककर दायें हाथ से उसका स्पर्श करे :–

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

हे पृथ्वी देवि! तुमने सम्पूर्ण लोकों को धारण कर रखा है और भगवान्विष्णु ने तुमको धारण किया है। हे देवि! तुम मुझे धारण करो और मेरे आसन को पवित्र कर दो।

इसके बाद यथारुचि शास्त्रानुकूल चन्दन, भस्म, जल आदि का तिलक करे :–

ललाट में केशवाय नमः, कण्ठ में पुरुषोत्तमाय नमः, हृदय में बैकुण्ठाय नमः, नाभि में नारायण नमः, पीठ में पद्मनाभाय नमः, दायें पार्श्व में वामनाय नमः, बायें पार्श्व में विष्णवे नमः, दाहिने कान में गङ्गायै नमः, बाये कान में यमुनायै नमः, दाहिनी भुजा में हरये नमः, बायी भुजा में कृष्णाय मनः, मस्तक में हृषीकेशाय नमः तथा गर्दन में दामोदराय नमः का स्मरण करते हुए तेरह स्थानों पर तिलक करे।

भस्मधारण –

१. ऊँ त्र्यायुषं जमदग्नेः – ललाटे। २. ऊँ कश्यपस्य त्र्यायुषं – ग्रीवायाम्।

३. ऊँ यद्देवेषु त्र्यायुषं – दक्षिण स्कन्धे। ४. ऊँ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्– हृदि।

यज्ञोपवीत :– सङ्कल्प करके दो यज्ञोपवीत धारण करे। यदि मलमूत्र त्यागते समय यज्ञोपवीत कान में नही लगाया भूल गये हो तो नवीन यज्ञोपवीत धारण करे। श्रावणी कर्म में पूजन किया हुआ यज्ञोपवीत न हो तो नूतन यज्ञोपवीत को जल से शुद्ध करके दस बार गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करके अधोलिखित मन्त्रों से प्रत्येक सूत्र एवं ग्रन्थि में देवताओं का आवाहन करे :–

प्रथमतन्तौ – ॐ ओंकारमावाहयामि, द्वितीयतन्तौ – ॐ अग्निमावाहयामि,

तृतीयतन्तौ – ॐ सर्पानावाहयामि, चतुर्थतन्तौ – ॐ सोममावाहयामि,

पञ्चमतन्तौ – ॐ पितृनामावाहयामि, षष्ठतन्तौ – ॐ प्रजापतिमावाहयामि,

सप्तमतन्तौ – ॐ अनिलमावाहयामि, अष्टमतन्तौ – ॐ सूर्यमावाहयामि,

नवमतन्तौ – ॐ विश्वान्देवानावाहयामि।

ग्रन्थि में :– ॐ ब्रह्मणे नमः, ब्रह्माणमावाहयामि। ॐ विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि। ॐ रुद्राय नमः, रुद्रमावाहयामि। तत्पश्चात्दस बार गायत्री मन्त्र से यज्ञोपवीत को अभिमन्त्रित करे।

यज्ञोपवीत धारण करे :–

ॐ यज्ञोपवीतमितिमन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः लिङ्गोक्ता देवता त्रिष्टुप्छन्दः यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।

आयुष्यम् अग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ।

यज्ञोपवीत धारण के पश्चात्दो बार आचमन करे।

जीर्णयज्ञोपवीत त्यागने का मन्त्र (पुरानी यज्ञोपवीत को कण्ठी जैसा बनाकर सिर पर से पीठ की ओर निकाल देवे) :–

एतावद्दिनपर्यन्तं ब्रह्म त्वं धारितं मया।

जीर्णत्वात्त्वत्परित्यागो गच्छ सूत्र यथासुखम्।।

तदनन्तर हाथ में जल लेकर निम्नाङ्कित सङ्कल्प करे :–

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव–ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र

यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा–मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशेः नामराशेः वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्घचतुर्थाष्ट्मद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्ट्ं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान–स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं ममोपात्तदुरिक्षयपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातः (सायं अथवा मध्याह्न) सन्ध्योपासनं कर्म करिष्ये।

तत्पश्चात्निम्नाङ्कित विनियोग पढ़े :–

ऋतं चेति त्र्यृचस्य माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृत्तं दैवतमपामुपस्पर्शने विनियोगः।

तत्पश्चात्नीचे लिखे मन्त्र को एक बार पढ़कर आचमन करे :–

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत। ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसम्वत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्यमिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः।।

(महाप्रलय के बाद इस महाकल्प के आरम्भ में) सभी ओर प्रकाशमान तपःप परमात्मा से ऋत (सत्सङ्कल्प) और सत्य (यथार्थ भाषण) की उत्पत्ति हुई। उसी परमात्मा से रात्रि–दिन प्रकट हुए तथा उसी से जलमय समुद्र का आविर्भाव हुआ। जलमय समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात्दिनों और रात्रियों को धारण करने वाला काल स्वःप सम्वत्सर प्रकट हुआ जो कि पलक मारने वाले जङ्गम प्राणियों और स्थावरों से युक्त समस्त संसार को अपने अधीन रखने वाला है। इसके बाद सबको धारण करने वाले परमेश्वर ने सूर्य, चन्द्रमा, स्वर्गलोक, पृथ्वी, अन्तरिक्ष तथा महलोक आदि लोक की भी पूर्वकल्प के अनुसार सृष्टि की।

तदनन्तर प्रणवपूर्वक गायत्री–मन्त्र पढ़कर रक्षा के लिए अपने चारों ओर जल छिड़के। फिर नीचे लिखे विनियोग को पढ़े :– ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषि दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता, सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिऋषिर्गायत्र्युष्णिग्नुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्य छन्दांस्यग्निवायुसूर्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवता, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता, आपोज्योतिरिति शिरसः प्रजापतिऋषिर्यजुश्छन्दो ब्रह्माग्निवायु सूर्यो देवताः प्राणायामे विनियोगः।

इसके पश्चात् आँखे बन्द करके नीचे लिखे मन्त्र से प्राणायाम करे। उसकी विधि इस प्रकार है :–

पूरक :– पहिले दाहिने हाथ के अंगूठे से नासिका का दायाँ छिद्र बन्द करे, छिद्र से वायु को अन्दर खींचे, साथ ही नाभिदेश में नीलकमलदल के समान श्यामवर्ण चतुर्भुज भगवान्विष्णु का ध्यान करते हुए प्राणायाम–मन्त्र का तीन बार पाठ किया जाये (यदि तीन बार न हो सके तो, एक ही बार पाठ करे, परन्तु अधिक का अभ्यास करते रहे)।

कुम्भक :– अनामिका और कनिष्ठिका अङ्गुलियों से नासिका के बायें छिद्र को बन्द करके तब तक श्वास को रोके रहे, जब तक कि प्राणायाम–मन्त्र का तीन बार पाठ न हो जावे। इस समय हृदय के बीच कमल के आसन पर विराजमान अरुण–गौर–मिश्रित वर्णवाले चतुर्भुज ब्रह्माजी का ध्यान करे।

रेचक :– अंगूठा हटाकर नासिका के दाहिने छिद्र से वायु को धीरे–धीरे तब तक बाहर निकाले, जब तक प्राणायाम के मन्त्र तीन बार पाठ न हो जाये। इस समय शुद्ध स्फटिक के समान श्वेत वर्ण वाले त्रिनेत्रधारी भगवान्शङ्कर का ध्यान करे।

उपरोक्त तीन विधियाँ मिलकर प्राणायाम कहलाती है। प्राणायाम का मन्त्र :–

ऊँ भूः ऊँ भुवः ऊँ स्वः ऊँ महः ऊँ जनः ऊँ तपः ऊँ सत्यम्ऊँ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।। ऊँ आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।।

हम स्थावर–जङ्गमःप सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते है, जो कि हमारी बुद्धि को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते है और जो भू, भुवः स्वः, महः, जनः, तपः और सत्य नामवाले समस्त लोकों में व्याप्त है तथा जो सच्चिदानन्दस्वःप जलःप से जगत्का पालन करने वाले, अनन्त तेज के धाम, रसमय,अमृतमय और भूर्भुवः स्वःप ब्रह्म है।

तत्पश्चात् निम्न विनियोग पढ़े :–

सूर्यश्च मेति नारायण ऋषिः प्रकृतिश्छन्दः सूर्यमन्युमन्युपतयो रात्रिश्च देवता अपामुनस्पर्शने विनियोगः।।

तत्पश्चात्निम्राङ्किंत मन्त्र को एक बार पढ़कर एक बार आचमन करे :–

ऊँ सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पदभ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तवलुम्पतु। यत्किञ्च दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा।।

सूर्य, क्रोध के अभिमानी देवता और क्रोध के स्वामी – ये सभी क्रोधवश किये हुए पापों से मेरी रक्षा करे (अर्थात्कृत पापों को नष्ट करके होने वाले पापों से बचावे)। रात्रि में मैंने मन, वाणी, हाथ, पैर, उदर और शिश्न (उपस्थ) इन्द्रिय से जो पाप किये हो, उन सभी को रात्रिकालाभिमानी देवता नष्ट करे। जो कुछ भी पाप मुझ में वर्तमान है, इसको और इसके कर्तृत्व का अभिमान रखने वाले अपने को मैं मोक्ष के कारण भूत प्रकाशमय सूर्यःप परमेश्वर में हवन करता हूँ (अर्थात्हवन के द्वारा अपने समस्त पाप और अहंकार को भस्म करता हूँ)। इसका भलीभांति हवन हो जाये।

उपर्युक्त आचमन–मन्त्र प्रातः काल की सन्ध्या का है। मध्याह्न और सायं काल के केवल आचमन–मन्त्र प्रातः काल से भिन्न है। मध्याह्न का विनियोग और मन्त्र इस प्रकार है :–

आपः पुनन्त्विति नारायण ऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपः पृथिवी ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्म च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः। यह पढ़ते हुए हथेली का जल नीचे अर्पित करना चाहिए।

इस विनियोग को पढ़े, तत्पश्चात्नीचे लिखे मन्त्र को एक बार पढ़कर एक बार आचमन करे।

ऊँ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्टमभोज्यं यद्वा दुश्चरितं मम। सर्वं पुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिग्रह ऽ स्वाहा।।

जल से पृथिवी का प्रोक्षण करे। पवित्र हुई पृथ्वी मुझे पवित्र करे, वेदों के पति परमात्मा मुझे शुद्ध करे। मैंने जो कभी किसी भी प्रकार उच्छिष्ट या अभक्ष्य भक्षण किया हो अथवा इसके अतिरिक्त भी मेरे जो पाप हो, उन सभी को दूर करके जल मुझे शुद्ध कर दे तथा नीच पुरुषों से लिए हुए दानःपादि दोषों को भी दूर करके जल मुझे पवित्र करे। पूर्वोक्त सभी दोषों का भलीभांति शमन हो जाये।

सायंकाल के आचमन का विनियोग और मन्त्र :–

अग्रिश्च मेति नारायणऋषिः प्रकृतिश्छन्दोऽग्निमन्युमन्युपतयोऽहश्च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।।

इस विनियोग को पढ़े, तत्पश्चात्नीचे लिखे मन्त्र को एक बार पढ़कर एक बार आचमन करे।

ऊँ अग्रिश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यदह्ना पापकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पदभ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्च दुरितं मयि इदमहं मामृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा।।

अग्नि, क्रोध के अभिमानी देवता और क्रोध के स्वामी – ये सभी क्रोधवश किये हुए पापों से मेरी रक्षा करे (अर्थात्कृत पापों को नष्ट करके होने वाले पापों से बचावे)। मैंने दिन में मन, वाणी, हाथ, पैर, उदर और शिश्र (उपस्थ) इन्द्रिय से जो पाप किये हो, उन सभी को दिन के अभिमानी देवता नष्ट करे। जो कुछ पाप मुझमें वर्तमान है इसको तथा कर्तृत्व का अभिमान रखने वाले अपने को मैं मोक्ष के कारणभूत सत्यस्वःप प्रकाशयम परमेश्वर में हवन करता हूँ (अर्थात्हवन के द्वारा अपने सारे पाप और अहङ्कार को भस्म करता हूँ)। इसका भलीभांति हवन हो जाये।

मार्जन :–

तत्पश्चात् निम्नलिखित विनियोग करे :–

आपो हिष्ठेति त्र्यृचस्य सिन्धुद्वीप ऋषिर्गायत्री छन्द आपो देवता मार्जने विनियोगः।

तत्पश्चात्निम्नाङ्कित तीन ऋचाओं के नौ चरणों में सात चरणों को पढ़ते हुए सिर पर ही जल सींचे, आठवें से पृथ्वी पर जल डाले और फिर नवें चरण को पढ़कर सिर पर ही जल सींचे। यह मार्जन तीन कुशों अथवा तीन अङ्गुलियों से करना चाहिए।

मार्जन मन्त्र :–

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवः। ऊँ तानऽऊर्ज्जे दधातन। ऊँ महेरणायचक्षसे। ऊँ ोवः शिवतमोरसः। ऊँ तस्यभाजयते हनः। ऊँ उशतीरिवमातरः। ऊँ तस्माऽअरङ्गमामवः। ऊँ यस्यक्षयायजिन्वथ। ऊँ आपोजनयथाचनः।

हे जल! तुम निश्चय ही कल्याणकारी हो, अतः (अन्नादि रसों के द्वारा) बल की वृद्धि के लिए तथा अत्यन्त रमणीय परमात्मदर्शन के लिए तुम हमारा पालन करो, जिस प्रकार पुत्रों की तुष्टि चाहने वाली माताएँ उन्हें अपने स्तनों का दुग्धपान कराती है, उसी प्रकार तुम्हारा जो परमकल्याणःप रस है, उसके भागी हमे बनाओं। हे जल! जगत्के जीवनाधारभूत जिस रस के अंश से तुम समस्त विश्व को तृप्त करते हो, उस रस की

पूर्णता को हम प्राप्त हो (अर्थात्उस रस से हम पूर्णतया तृप्ति लाभ करे)। हे जल! तुम हमे उस रस के भोक्ता बनाओ (अर्थात्उसे भोगने की क्षमता दो)।

तत्पश्चात्अधोलिखित विनियोग को पढ़े :–

द्रुपदादिवेत्यश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयोऽनुष्टप्छन्द आपो देवताः शिरस्सेके विनियोगः।

तत्पश्चात्हाथ में जल लेकर उसे दाहिने हाथ से ढक लेवे और नीचे लिखे मन्त्र से अभिमन्त्रित करके उसे सिर पर छिड़क देवे :–

ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः।

जैसे पादुका से अलग होता हुआ मनुष्य पादुका के मलादि दोषों से मुक्त हो जाता है, जिस प्रकार पसीने से भीगा हुआ पुरुष स्नान करके मल से रहित होता है तथा जैसे पवित्रक आदि घी से शुद्ध हो जाते है, उसी प्रकार जल मुझे पापों से शुद्ध करे (अर्थात्मुझे सर्वथा निष्पाप कर देवे)।

४.३.५. अघमर्षण

ऋतञ्चेति त्र्यृचस्य माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप्छन्दो भाववृत्तं दैवतमघमर्षणे विनियोगः।

तत्पश्चात्दाहिने हाथ में जल लेकर नासिका में लगावे और (यदि सम्भव हो तो श्वास रोककर) नीचे लिखे मन्त्र को तीन बार या एक बार पढ़ते हुए मन–ही–मन यह भावना करे कि यह जल नासिका के बायें छिद्र से भीतर घुसकर अन्तः करण के पापों को दायें छिद्र से निकाल रहा है, तत्पश्चात्जल की ओर दृष्टि न डालकर अपनी बायीं ओर फेंक देवे (अथवा वामभाग में शिला की भावना करके उस पर पाप को पटककर नष्ट कर देने की भावना करे)।

अघमर्षण–मन्त्र :–

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधि सम्वत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्ववस्यमिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः।।

इसके बाद नीचे लिखे विनियोग वाक्य को पढ़े :–

अन्तश्चरसीति तिरश्चीन ऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

तत्पश्चात्निम्नाङ्कित मन्त्र को एक बार पढ़कर एक बार आचमन करे :–

ॐ अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः।

त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योती रसोऽमृतम्।।

हे जलःप परमात्मन्! तुम समस्त प्राणियों के भीतर उनकी हृदय :प गुह्य में विचरते हो, तुम्हारा सभी ओर मुख है, तुम्ही यज्ञ हो, तुम्ही वषट्कार (इन्द्रादि का भाग हविष्य) हो और तुम्ही जल, प्रकाश, रस एवं अमृत हो।

सूर्याघ्र्य :–

तत्पश्चात्नीचे लिखे विनियोग करे :–

ऊँकारस्य ब्रह्मऋषिर्दैवी गायत्रीछन्दः परमात्मा देवता तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिग्नुष्टुभछन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सूर्याघ्र्यदाने विनियोगः।

तत्पश्चात् सूर्य के सामने एक चरण की एड़ी (पिछला भाग) उठाये हुए अथवा एक पैर से खड़ा होकर या एक पैर के आधे भाग से खड़ा हो ऊँकार और व्याहृतियों सहित गायत्री–मन्त्र को तीन बार पढ़कर पुष्प मिले हुए जल से सूर्य को तीन बार अर्घ्य देवे। प्रातः काल और मध्याह्नकाल का अर्घ्य जल में देना चाहिए। यदि जल न हो तो स्थल को भलीभांति जल से धोकर उसी पर अर्घ्य का जल गिरावे, परन्तु सायंकाल का अर्घ्य कदापि जल में न देवे। खड़ा होकर अर्घ्य देने का नियम केवल प्रातः और मध्याह्न की सन्ध्या में है, सायंकाल में तो बैठकर भूमिपर ही अर्घ्य का जल छोडना चाहिए। मध्याह्न की सन्ध्या में एक ही बार अर्घ्य देना चाहिए और प्रातः एवं सायं सन्ध्या में तीन–तीन बार सूर्याघ्र्य देने का मन्त्र (प्रणव–व्याहृतिसहित गायत्रीमन्त्र) :–

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रयोदयात्।।

इस मन्त्र को पढ़कर ब्रह्मस्वःपिणे सूर्यनारायणाय इदमर्घ्यं दत्तं न मम्वय ऐसा कहकर प्रातः काल अर्घ्य समर्पण करे (मध्याह्नकाल में श्ब्रह्मस्वःपिणे के स्थान पर श्रुद्रस्वःपिणे और सायंकाल में श्विष्णुस्वःपिणे – ऐसा परिवर्तन कर लेना चाहिए)।

तत्पश्चात्अधोलिखित मन्त्रों को पढ़कर विनियोग करे :–

1. उद्वयमित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिरनुष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

2. उदुत्यमित्यस्य प्रस्कण्व ऋषिर्निचृद्गायत्रीछन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

3. चित्रमित्यस्य कुत्साङ्गिरस ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

4. तच्चक्षुरित्यस्य दध्यङ्गाथर्वण ऋषिरेकाधिका ब्राह्मी त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

तत्पश्चात्प्रातः काल में खड़ा होकर सायंकाल में बैठे हुए ही अञ्जलि बाँधकर तथा मध्याह्नकालमें खड़े होकर दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर (यदि सम्भव हो तो) सूर्य की ओर देखते हुए श्उद्वयम्य इत्यादि चार मन्त्रों को पढ़कर उन्हें प्रणाम करे, तत्पश्चात्अपने स्थान पर ही सूर्यदेव की एक बार प्रदक्षिणा करते हुए उन्हें नमस्कार करके बैठ जाये।

मध्याह्नकाल में गायत्रीमन्त्र, मैत्रसूक्त, पुरुषसूक्त, शिसङ्कल्पसूक्त ओर मण्डलब्राह्मण का भी यथासम्भव पाठ करना चाहिए।

१. ॐ उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्।

हम अन्धकार से ऊपर उठकर उत्तम स्वर्गलोक को तथा देवताओं में अत्यन्त उत्कृष्ट सूर्यदेव को भलीभांति देखते हुए उस सर्वोत्तम ज्योतिर्मय परमात्मा को प्राप्त हो।

२. ॐ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्।।

उत्पन्न हुए समस्त प्राणियों के ज्ञाता उन सूर्यदेव को छन्दोमय अश्व सम्पूर्ण जगत्के उनका दर्शन कराने (या दृष्टि प्रदान करने) के लिए ऊपर ही ऊपर शीघ्रगति से लिये जा रहे है।

३. ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्रेः।

आप्राद्यावापृथिवी अन्तरिक्ष œ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।।

जो तेजोमयी किरण के पुञ्ज है, मित्र, वरुण तथा अग्नि आदि देवताओं एवं समस्त विश्व के नेत्र है और स्थावर तथा जङ्गम – सभी के अन्तर्यामी आत्मा है, वे भगवान्सूर्य आकाश, पृथ्वी और अन्तरिक्ष लोक को अपने प्रकाश से पूर्ण करते हुए आश्चर्यःप से उदित हुए है।

4. ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत।

पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत œ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः

शतमदीना स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात।।

देवता आदि सम्पूर्ण जगत् का हित करने वाले और सभी के नेत्रःप वे तेजोमय भगवान्सूर्य पूर्वदिशा से उदित हो रहे है (उनके प्रसाद से) हम सौ वर्षो तक देखते रहे, सौ वर्षो तक जीते रहे, सौ वर्षो तक सुनते रहे, सौ वर्षो तक हममें बोलने की शक्ति रहे तथा सौ वर्षो तक हम कभी दीन–दशा को प्राप्त न हो। इतना ही नहीं, सौ वर्षो से अधिक काल तक भी देखे, जीवें, सुने, बोले एवं दीन–हीन न हो।

तत्पश्चात्:–

तेजोऽसीति धामनामासीत्यस्य च परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्यजुस्त्रिष्टुबृगुष्णिहौ छन्दसी सविता देवता गायत्र्यावाहने विनियोगः।

इस विनियोग को पढ़कर निम्नाङ्कित मन्त्र से विनयपूर्वक गायत्री देवी का आवाहन करे :–

ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि। धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि।।

हे सूर्यस्वःपा गायत्री देवि! तुम देदीप्यमान तेजामयी हो, शुद्ध हो और अमृत (नित्य ब्रह्मःपा) हो, तुम्हीं परमधाम और नामःपा हो। तुम्हारा किसी से भी पराभव नहीं होता। तुम देवताओं की प्रिय और उनके यजन की साधनभूत हो (मैं तुम्हारा आवाहन करता हूँ)।

तत्पश्चात्अधोलिखित विनियोग वाक्य को पढ़े (गायत्री उपस्थान्) :–

गायत्र्यसीति विवस्वान्ऋषिः स्वराण्महापङ्क्तिश्छन्दः परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोगः।

तत्पश्चात्अधोलिखित मन्त्र से गायत्री को प्रणाम करे :–

ऊँ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदसि न हि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शनाय पदाय परोरजसेऽसावदो मा प्रापत्।।

हे गायत्री! तुम त्रिभुवनः प्रथम चरण से एकपदी हो, ऋक्, यजु एवं सामःप द्वितीय चरण से द्विपदी हो। प्राण, अपान तथा व्यानःपी तृतीय चरण से त्रिपदी हो और तुरीय ब्रह्मःप चतुर्थ चरण से चतुष्पदी हो। निर्गुण स्वःप से अचिन्त्य होने के कारण तुम अपद हो (इसलिए वेद नेति–नेति कहकर तुम्हारे स्वःप का वर्णन करते है)। अतएव मन–बुद्धि के अगोचर होने से तुम सभी के लिए प्राप्य नहीं हो। तुम्हारे दर्शनीय (अनुभव करने योग्य) चतुर्थपद को, जो प्रपञ्च से परे वर्तमान शुद्ध परब्रह्मःप है, नमस्कार है। तुम्हारी प्राप्ति में विघ्न डालने वाले के राग–द्वेष, काम–क्रोध आदिःप पाप मेरे पास न पहुँच सके (अर्थात्परब्रह्मस्वःपिणी तुमको मैं निर्विघ्न प्राप्त कःँ)।

गायत्री शाप विमोचन :–

ब्रह्मा, वसिष्ठ, विश्वामित्र व शुक्र के द्वारा गायत्री मन्त्र शापित है। अतः शापविमोचन करना आवश्यक है।

1 ब्रह्मशापविमोचन (हथेली पर जल लेकर विनियोग करें)

विनियोग :– ऊँ अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमन्त्रस्य ब्रह्माऋषिर्भुक्तिमुक्तिप्रदा ब्रह्मशापविमोचनी गायत्री शक्तिर्देवता गायत्री छन्दः ब्रह्मशापविमोचने विनियोगः।

मन्त्र :–

ऊँ गायत्रीं ब्रह्मेत्युपासीत्यद्रूपं ब्रह्मविदो विदुः।

तां पश्यन्ति धीराः सुमनसो वाचमग्रतः।।

ऊँ वेदान्तनाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात्। ऊँ देवि! गायत्रि! त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव।

2 वसिष्ठशापविमोचन :–

विनियोग :– ऊँ अस्य श्रीवसिष्ठशापविमोचनमन्त्रस्य निग्रहानुग्रहकर्ता वसिष्ठ ऋषिर्वसिष्ठानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता विश्वोद्भवा गायत्री छन्दः वसिष्ठशापविमोचननार्थं जपे विनियोगः।

मन्त्र :–

ऊँ सोऽहमर्कमयं ज्योतिरात्मज्योतिरहं शिवः।

आत्मज्योतिरिहं शुक्रः सर्वज्योतीरसोऽस्म्यहम्।।

योनिमुद्रा दिखाकर तीन बार गायत्री का जाप करे।

ऊँ देवि! गायत्रि! त्वं वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव।

3 विश्वामित्र शापविमोचन :–

विनियोग :– ऊँ अस्य श्रीविश्वामित्रशापविमोचनमन्त्रस्य विश्वामित्रऋषिर्विश्वामित्रानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता वाग्देहा गायत्री छन्दः विश्वामित्रशापविमोचनार्थं जपे विनियोगः।

मन्त्र :–

ऊँ गायत्रीं भजाम्यग्निमुखीं विश्वगर्भां यदुद्भवाः।

देवाश्चक्रिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये।।

ऊँ देवि! गायत्रि! त्वं विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव।

4 शुक्रशापविमोचन :–

विनियोग :– ऊँ अस्य श्रीशुक्रशापविमोचनमन्त्रस्य श्रीशुकऋषिः अनुष्टुप्छन्दः देवी गायत्री देवता शुक्रशापविमोचनार्थं जपे विनियोगः।

मन्त्र :–

ऊँ सोऽहमर्कमयं ज्योतिरात्मज्योतिरहं शिवः।

आत्मज्योतिरिहं शुक्रः सर्वज्योतीरसोऽस्म्यहम्।।

ऊँ देवि! गायत्रि! त्वं शुक्रशापाद्विमुक्ता भव।

प्रार्थना :–

ऊँ अहो देवि! महादेवि! सन्ध्ये विद्ये सरस्वति!।

अजरे अमरे चौव ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तु ते।।

ऊँ देवि गायत्रि त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव, वसिष्ठशापाद्विमुक्ता भव, विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव, शुक्रशापाद्विमुक्ता भव।

जप के पूर्व की चौबीस मुद्रायें :–

१. सुमुखम्ः– दोनों हाथों की अङ्गुलियों को मोड़कर मिलाये।

२. सम्पुटम्ः– दोनों हाथों के मध्य में रिक्त स्थान रखते हुए मिलाये।

३. विततम्ः– दोनों हाथों की हथेलियों को परस्पर आमने–सामने करे।

४. विस्तृतम्ः– दोनों हाथों की अङ्गुलियाँ खोलकर कुछ अधिक दूर करे।

५. द्विमुखम्ः– दोनों हाथों की कनिष्ठिकाओं तथा अनामिकाओं का पोरभाग आपस में मिलाये।

६. त्रिमुखम्ः– दोनों हाथों की मध्यमाओं, कनिष्ठिकाओं तथा अनामिकाओं के पोरभाग को मिलाये।

७. चतुर्मुखम्ः– दोनों हाथों की तर्जनियों, मध्यमाओं, अनामिकाओं तथा कनिष्ठिकाओं के पोरभाग को मिलाये।

८. पञ्चमुखम्ः– दोनों हाथों के अङ्गुष्ठों, तर्जनियों, मध्यमाओं, अनामिकाओं तथा कनिष्ठिकाओं के पोरभाग को मिलाये।

९. षड्मुखम्ः– दोनों हाथों की सभी अङ्गुलियों को मिलाकर कनिष्ठिकों को पृथक् करे।

१०. अधोमुखम्ः– उल्टे हाथ की अङ्गुलियों को मोड़कर तथा मिलाकर नीचे की ओर करे, अङ्गुष्ठ को पृथक्रखे।

११. व्यापकाञ्जलिम्ः– दोनों हाथों को आपस में मिलाकर (अञ्जलि की तरह) सीधा करे।

१२. शकटम्ः– दोनों हाथों को उल्टा करके अङ्गुष्ठ से अङ्गुष्ठ मिलाकर तर्जनीयों को सीधा रखते हुए शेष अङ्गुलियों से मु–ी बाँधे।

१३. यमपाशम्ः– तर्जनी से तर्जनी बाँधकर दोनों मु–ीयाँ विपरीत दिशा में बाँधे।

१४. ग्रथितम्ः– दोनों हाथों की अङ्गुलियों को परस्पर एक–दूसरे फंसाये।

१५. उन्मुखोन्मुखम् :– हाथों की पाँचों अङ्गुलियों को मिलाकर प्रथममुद्रा (सुमुखम् की भांति बायें हाथ पर दाहिना, फिर दाहिने पर बायाँ हाथ रखे।

१६. प्रलम्बम्ः– अङ्गुलियों को थोड़ा मोड़कर दोनों हाथों को उल्टा करके नीचे की ओर सीधा करे।

१७. मुष्टिकम्ः– दोनों अङ्गुष्ठ ऊपर रखते हुए दोनों मु–ियाँ बाँधकर आपस में मिलाये।

१८. मत्स्य :– दाहिने हाथ की पीठ पर बायाँ हाथ उल्टा रखकर दोनों अङ्गुष्ठों को हिलाये।

१६. कूर्म :– सीधे बायें हाथ की मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठिका को मोड़करउल्टे दायें हाथ की मध्यमा, अनामिका को उन तीनों अङ्गुलियों के नीचे रखकर तर्जनी पर दाहिनी कनिष्ठिा और बायें अङ्गुष्ठ पर दाहिनी तर्जनी रखे।

२०. वराह :– दाहिने हाथ की तर्जनी को बायें हाथ के अङ्गुष्ठ से मिलाये तथा दोनों हाथों की शेष अङ्गुलियों को परस्पर बाँधे।

२१. सिंहाक्रान्तम्:– दोनों हाथों को कानों के समीप पूर्वाभिमुख खड़ा करे।

२२. महाक्रान्तम्:– दोनों हाथों की अङ्गुलियों को कानों के समीप हथेलियों को आमने–सामने रखते हुए खड़ा करे।

२३. मुद्गरम् :– मुट्ठी बाँधकर दाहिनी कोहिनी बाँये हाथ की हथेली पर रखे।

२४. पल्लवम्:– दाहिने हाथ की अङ्गुलियों को मुख के सामने हिलाये।

४.३.१०. गायत्री जप :–

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग वाक्य को पढ़े :–

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्देवी गायत्रीछन्दः परमात्मा देवता, तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिग्नुष्टु भश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता जपे विनियोगः।

तत्पश्चात्अधोलिखित गायत्री–मन्त्र का कम से कम १०८ बार माला आदि से गिनते हुए जप करे (अधिकस्य अधिकं फलम्)। जप के समय गायत्री के तेजोमय स्वःप का ध्यान और मन्त्र के अर्थ का अनुसन्धान होता रहे तो बहुत ही उत्तम है।

गायत्री ध्यान (प्रातः) :–

ॐ बालां विद्यां तु गायत्रीं लोहितां चतुराननाम्।

रक्ताम्बरद्वयोपेतामक्षसूत्रकरां तथा।।

कमण्डलुधरां देवीं हंसवाहनसंस्थिताम्।

ब्रह्माणीं ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम्।।

मन्त्रेणावाहयेद्देवीमायान्तीं सूर्यमण्डलात्।

गायत्री ध्यान (मध्याह्न) :–

ऊँ मध्याह्ने विष्णु:पां च तार्क्ष्यस्थां पीतवाससाम्।

युवतीं च यजुर्वेदां सूर्यमण्डलसंस्थिताम्।।

गायत्री ध्यान (सायं) :–

ऊँ सायाह्ने शिव:पां च वृद्धां वृषभवाहिनीम्।

सूर्यमण्डलमध्यस्थां सामवेदसमायुतम्।।

गायत्री मन्त्र :–

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रयोदयात्।।

हम स्थावर–जङ्घम:प सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वर को भजने योग्य तेज का ध्यान करते है जो हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते है तथा जो भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक :प सच्चिदानन्दमय परब्रह्म है।

जप के पश्चात्करणीय आठ मुद्रायें :–

१. सुरभि :– दोनों हाथों की अङ्गुलियाँ गूँथकर बांये हाथ की तर्जनी से दायें हाथ की मध्यमा, तथा मध्यमा से तर्जनी, अनामिका से कनिष्ठिका और कनिष्ठिका से अनामिका को मिलाये।

२. ज्ञानम्:– दाहिने हाथ की तर्जनी से अङ्गुष्ठ मिलाकर हृदय के समीप रखे तथा बायाँ हाथ बायें घुटने पर सीधा रखे।

३. वैराग्यम्:– दोनों हाथों की तर्जनियों से दोनों हाथों के अङ्गुष्ठ मिलाकर घुटनों पर सीधा रखे।

४. योनि :– दोनों मध्यमाओं के नीचे बायीं तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी पर बायीं अनामिका रखकर दोनों तर्जनियों से बाँधकर दोनों मध्यमाओं को ऊपर करे।

५. शङ्खम् :– बायें अङ्गुष्ठ को दाहिनी मु–ी में पकड़कर दाहिने अङ्गुष्ठ से बायीं अङ्गुलियों का मिलाये।

६. पङ्कजम् :– दोनों हाथों के अङ्गुष्ठ तथा कनिष्ठिका अङ्गुलियों को खुला हुआ मिलाये तथा शेष अङ्गुलियों को आमने–सामने खुला हुआ रखे तथा हाथों के मणिबन्धों को आपस में मिलाये।

७. लिङ्गम्:– दाहिने अङ्गुष्ठ को सीधा रखते हुए दोनों हाथों की अङ्गुलियों को गूँथकर बायां अङ्गुष्ठ दाहिने अङ्गुष्ठ की जड़ के ऊपर रखे।

८. निर्वाणम् :– उलटे हुए बायें हाथ पर दाहिना हाथ सीधा रखकर अङ्गुलियों को परस्पर गूँथे तथा दोनों हाथ अपनी ओर से घुमाकर दोनों तर्जनीयों को सीधा कान के समीप मिलाये।

सूर्य की प्रदक्षिणा :–

तत्पश्चात्अधोलिखित विनियोग का उच्चारण करे :–

ऊँ विश्वतश्चक्षुरिति भौवन ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो विश्वकर्मा देवता सूर्यप्रदक्षिणायां विनियोगः।

तत्पश्चात्अधोलिखित मन्त्र से अपने स्थान पर खड़े होकर सूर्यदेव की एक बार ही प्रदक्षिणा करे :–

ऊँ व्विश्श्वतश्च्चक्षुरुत व्विश्श्वतोमुखो व्विश्श्वतोबाहुरुत व्विश्श्वत स्प्पात।

सम्बाहुब्भ्यान्धमति सम्पतत्रैद्द्यावाभूमी जनयन्देवऽ एक् ।

वे एकमात्र परमात्मा पृथ्वी और आकश की रचना करते समय धर्माधर्मःप भुजाओं और पतनशील पञ्च महाभूतों से सङ्गत होते अर्थात्काम लेते है। तात्पर्य है कि धर्माधर्मःप निमित्त और पञ्चमहाभूत उपादान कारणों से अन्य साधन की सहायता लिए बिना ही सभी की सृष्टि करते है। उनके सभी ओर नेत्र है, सभी ओर मुख है, सभी ओर भुजाएँ है, सभी ओर चरण है (अर्थात्सर्वत्र उनकी सभी इन्द्रियाँ है अथवा सभी प्राणी परमेश्वर स्वःप है, अतः उनके जो नेत्र आदि है, वे उनमें व्याप्त परमात्मा के ही नेत्र आदि है)।

जप–निवेदन :–

तत्पश्चात्बैठकर अधोलिखित विनियोग का पाठ करे :–

ऊँ देवा गातुविद इति मनसस्पतिर्ऋषिर्विराडनुष्टुप्छन्दो वातो देवता जपनिवेदने विनियोगः।

ऊँ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित मनसस्पत इमं देव यज्ञ ँ स्वाहा व्वाते धाः।।

हे यज्ञवेता देवताओं! आप लोग हमारे इस जपःपी यज्ञ को पूर्ण हुआ जानकर गन्तव्य मार्ग को पधारे। हे चित्त के प्रवर्तक परमेश्वर! मैं इस जप–यज्ञ को आपके हाथ में अर्पण करता हूँ, आप इसे वायुदेवता में स्थापित करे।

अधोलिखित मन्त्र को पढ़कर नमस्कार करे :–

अनेन यथाशक्तिकृतेन गायत्रीजपाख्येन कर्मणा भगवान्सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम।

तत्पश्चात्विनियोग करे :–

उत्तमे शिखरे इति वामदेव ऋषिरनुष्टुप्छन्दः गायत्री देवता गायत्री विसर्जने विनियोगः।

तत्पश्चात्अधोलिखित मन्त्र को पढ़कर गायत्री देवी का विसर्जन करे :–

ऊँ उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वतमूर्धनि।

ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम्।।

हे गायत्री देवि! अब तुम अपने उपासक ब्राह्मणों के पास से उनकी अनुमति लेकर भूमि पर स्थित जो मेरुनामक पर्वत है, उसकी चोटीपर विद्यमान जो सुरम्य शिखर है, वही तुम्हारा वास स्थान है, उसमें निवास करने के लिए सुखपूर्वक जाओ।

इस मन्त्र को पढ़कर गायत्री देवी का विसर्जन करे, फिर निम्नाङ्कित वाक्य पढ़कर यह सन्ध्योपासनकर्म परमेश्वर को समर्पित करे :–

अनेन सन्ध्योपासनाख्येन कर्मणा श्रीपरमेश्वरः प्रीयतां न मम।

ऊँ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु।

तदनन्तर भगवान्का स्मरण करे :–

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।

।। श्रीविष्णवे नमः।। श्रीविष्णवे नमः।।

नित्यहोम (अग्निहोत्रि के लिए नित्य सन्ध्या के उपरान्त हवन–कर्म आवश्यक है, अन्य के लिए वैकल्पिक है)

प्रातः काल नित्यहोम करना चाहिए। नित्यहोम प्रातः और सायंकाल में किया जाता है। साग्निक स्थापित अग्नि में नित्यहोम करते है, निरग्निक पुरुष पृष्ठो दिवि–विधान के अनुसार नित्य हवनकाल में अग्नि स्थापित कर लेते है। आजकल अधिकांश लोग निरग्निक ही है, अतः उनकी सुविधा के लिए अग्निस्थापन पूर्वक हवन का विधान दिया जा रहा है। प्रातः काल सूर्योदय से पूर्व हवन का मुख्य काल है, उसके बाद गौणकाल है। सायंकाल में जब तक पश्चिम में लाली दिखायी दे और ताराएँ अच्छी तरह न उगी हो, तभी तक हवन का मुख्यकाल है, उसके पश्चात्गौणकाल है।

संकल्प :– पूर्वाभिमुख आसन पर बैठकर आचमन और प्राणायाम करके हाथ में कुश की पवित्री और जल लेकर निम्नाङ्कित वाक्य को पढ़कर सङ्कल्प करे :–

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव–ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य

सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा–मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशेः नामराशेः वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्घचतुर्थाष्ट्मद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान–स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं ममोपात्तदुरिक्षयपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सायंप्रातर्होमं करिष्ये।

इसके बाद वेदी अथवा स्थण्ड़िल में पञ्चभूसंस्कार करना चाहिए। तीन कुशों से भूमि अथवा स्थण्डिल को झाड़ देवे, उन कुशाओं को ईशानकोण में त्यागकर गोमय और जल से लेपन करे। तत्पश्चात्स्रुवा अथवा तीन कुशों द्वारा उत्तरोत्तर क्रम से तीन–तीन पूर्वाग्र रेखायें करे। उल्लेखन क्रम से अनामिका और अङ्गुष्ठ द्वारा तीन बार मृत्तिका उठाकर ईशान में फेंक देवे, फिर वहाँ जल छिड़के। इस प्रकार संस्कार करके निम्नाङ्कित मन्त्र से वहाँ अग्नि ले आवे।

अग्न्याहरण मन्त्र :–

अन्वग्निरित्यस्य पुरोधा ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता अग्न्यानयने विनियोगः।

ऊँ अन्वग्निरुषसामग्रमक्ख्यदन्वहानि प्रथमो जात वेदाः।

अनु सूर्य्यस्य पुरुत्रा च रश्मीननु द्यावा पृथिवीऽआततन्थ।

तत्पश्चात्निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़कर पूर्वोक्त वेदी अथवा स्थण्डिल में अग्नि की स्थापना करे।

अग्निस्थापन मन्त्र :–

पृष्टो दिवीत्यस्य कुत्सऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो वैश्वानरो देवता अग्निस्थापने विनियोगः।

ऊँ पृष्टो दिवि पृष्टोऽग्निः पृथिव्यां पृष्टो विश्वाऽओषधीरा विवेश।

वैश्वानरः सहसा पृष्टोऽग्निः स नो दिवा स रिषस्पातु नक्तम्।।

तत्पश्चात्निम्नाङ्कित मन्त्रों से अग्नि का उपस्थान करे (प्रार्थना एवं प्रणाम करे)।

उपस्थान मन्त्र :–

समिधाग्निमिति तं त्वेति च देवा ऋषयो गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता अग्न्युपस्थाने विनियोगः।

ऊँ समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। अस्मिन्हव्या जुहोतन।।

ऊँ तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामासि बृहच्छोचा यविष्ठ्य।।

तत्पश्चात्अधोलिखित (व्याहृतियों सहित तीन) मन्त्रों से अग्नि को प्रज्वलित करे।

अग्नि–प्रज्वालन मन्त्र :–

त्रिव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभछन्दांस्यग्रिवायुसूर्या देवताः ता ऽँ सवितुरिति कण्व ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सविता देवता, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता, विश्वानि देवेतिनारायण ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सन्धुक्षणे विनियोगः।

ऊँ भूर्भुवः स्वः ता ऽँ सवितुर्व्वरेण्यस्य चित्रामाहऽहं व्वृणे सुमतीं व्विश्वजन्याम्! यामस्य कण्ण्वोऽअदुहत प्रपीना ऽँ सहस्रधारां पयासामहीं गाम्।।

ऊँ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रयोदयात्।।

ऊँ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्नऽआसुव।।

इस प्रकार इन मन्त्रों से अग्नि को प्रज्वलित करके बायें हाथ में तीन कुश रखे और खड़े होकर प्रादेशमात्र लम्बी तीन घृताक्त समिधाएँ अग्नि में छोड़े। अग्निसमिन्धन का मन्त्र :–

पुनस्त्वेति प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता अग्निसमिन्धने विनियोगः।

पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धताम्पुनर्ब्ब्रह्माणो व्वसुनीथ यज्ञैः।

घृतेन त्वन्तन्वं व्वर्धयस्वः सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः।।

तत्पश्चात् बैठकर जल से अग्नि का पर्युक्षण करे और घृत, दधि, खीर अथवा घृताक्त यव, चावल या तिल आदि से अथवा मधुर फल से निम्नलिखित मन्त्रों द्वारा चार आहुतियाँ देवे। (इनमें आरम्भ की दो आहुतियाँ सायंकाल में दी जाती है और अन्त की दो आहुतियाँ प्रातः काल में दी जाती है, सायंकाल से आरम्भ करे। सायं–प्रातः मिलकर एक दिन का होम है, सायंकाल में जिस द्रव्य से होम करे, उसी से प्रातः काल भी करे।)

प्रातः होम :–

ऊँ सूर्याय स्वाहा, इदं सूर्याय न मम।

ऊँ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।।

साय होम :–

ऊँ अग्नये स्वाहा, इदमग्नये न मम।

ऊँ प्रजापतये स्वाहा, इदं प्रजापतये न मम।।

तत्पश्चात्अग्नि की प्रदक्षिणा करे प्रणाम करे और विनियोग करे :–

त्र्यायुषमिति नारायण ऋषिरुष्णिक्छन्द आशीर्देवता भस्मधारणे विनियोगः।

भस्माचरण :–

तत्पश्चात्भस्म से तिलक करे :–

ऊँ त्र्यायुषं जगदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्।।

उपरोक्त मन्त्र से क्रमशः भस्म को ललाट, ग्रीवा, दक्षिण बाहुमूल व हृदय में लगावे। इसके बाद निम्नाङ्कित श्लोक पढ़कर न्यूनतापूर्ति के लिए भगवान्से प्रार्थना करे :–

ऊँ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।। ।। ऊँ विष्णवे नमः।। ऊँ विष्णवे नमः।।

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्जप व प्राणायाम का महत्त्व सभी को ज्ञात होगा, सूर्य सृष्टि में साक्षात्देव है, आत्मा के कारक है और सूर्य की आराधना सन्ध्या के अन्तर्गत आती है। सूर्य की आराधना से मनुष्य का आत्मज्ञान चरम पर पहुँचता है। इस इकाई में यज्ञोपवीत धारण का महत्त्व बताय है। जप से पूर्व में सम्मुख, सम्पुट, वितत, विस्तृत, द्विमुख, त्रिमुख, चतुर्मुख, षड्मुख , अधोमुख आदि २४ मुद्राओं का परिचय देते इनका विवेचन किया गया है तथा जप के पश्चात्सुरभि, ज्ञान, वैराग्य, योनि, शङ्ख, पङ्कज, लिङ्ग, निर्वाण आदि ०८ मुद्राओं का परिचय तथा नित्यहोम की विधि सहित सन्ध्या का साङ्गोपाङ्ग वर्णन दिया गया है।

4.5 शब्दावली

१. जीर्ण = पुराना

२. प्राणवायु = प्राण वायु का आधान

३. पूरक = प्राणवायु का समाहित करना

४. कुम्भक = प्राणवायु को स्थिर करना

५. रेचक = प्राणवायु को बाहर निकालना

६. मार्जन = जल का छींटा देना

७. मुद्रा = पूजन में आकृति विशेष

८. करमाला = हाथ से जप गणना

4.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : प्राणायाम की तीन अवस्थायें लिखिए ?

उत्तर : प्राणायाम की तीन अवस्थायें – कुम्भक, पूरक, रेचक।

प्रश्न – २ : जप के पूर्व कितनी मुद्रायें शास्त्रों में वर्णित है?

उत्तर : जप के पूर्व २४ मुद्रायें शास्त्रों में वर्णित है।

प्रश्न – ३ : जप के पश्चात्कितनी मुद्रायें शास्त्रों में वर्णित है ?

उत्तर : जप के पश्चात्०८ मुद्रायें शास्त्रों में वर्णित है।

प्रश्न – ४ : ज्ञान मुद्रा का परिचय दीजिए ?

उत्तर : ज्ञानमुद्रा में दाहिने हाथ की तर्जनी से अङ्गुष्ठ मिलाकर हृदय के समीप रखते हुए बायाँ हाथ बायें घुटने पर सीधा रखते है।

प्रश्न – ५ : ब्रह्ममुहूर्त्त क्या है ?

इकाई – 5

पंचदेव – उपसना

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 प्रारम्भिक पूजन

5.4 गणपति पञ्चायतन पूजन

5.5 शिव पञ्चायतन पूजन

5.6 देवी पञ्चायतन पूजन

5.7 सूर्य पञ्चायतन पूजन

5.8 विष्णु पञ्चायतन पूजन

5.9 सारांश

5.10 शब्दावली

5.11 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

5.12 लघुत्तरात्मक प्रश्न

5.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.1 प्रस्तावना

जिस प्रकार ब्रह्माण्ड में पञ्चमहाभूत (पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु, आकाश) विराजमान है, उसी प्रकार शरीर का निर्माण भी पञ्चभूत के बिना असम्भव है। देवों में पञ्चदेव अपना विशेष महत्त्व रखते है, इसी को आधार बनाते हुए पञ्चेदव उपासना का प्रादुर्भाव माना जाता है। यदि हम किसी भी देवता की पूजन–अर्चन करते है, तो उसकेमूल में पञ्चदेव में से ही किसी एक देव की शक्ति विद्यमान रहती है। अपने इष्टदेव के साथ पञ्चदेवों का पूजन करने मात्र से सभी देवताओं की पूजन का लाभ होता है।

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।

पञ्चदैवत्यमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्।।

सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव तथा विष्णु पञ्चदेव है। इनका पूजन सभी कार्यों में से करना चाहिए, अन्यथा पूजनकर्म निष्फल हो जाता है।

प्रतिदिन पञ्चेदव पूजन अवश्यक करना चाहिए, यदि वेदोक्त मन्त्र का अभ्यास न हो तो भी व्यक्ति को प्रचलित व शास्त्रोक्त विधि के अनुसार श्लोक अथवा नाममात्र से जल–चन्दन–पुष्पादि से पञ्चदेवों का यथोचित पूजन करना चाहिए। यदि व्यक्ति के पास कोई भी सामग्री इत्यादि उपलब्ध नही हो तो व्यक्ति को पृथ्वीःपी गन्ध का अनुलेपन करते हुए तथा भावना से ही वायुःपी धूप, अग्रिःपी दीपक (सूर्य) तथा अमृतःपी नैवेद्य का ध्यान करते हुए अर्चन करना चाहिए।

पूजनक्रम में यदि पूजन सामग्री उपलब्ध न हो तो अधोलिखित मन्त्रों से मानस पूजन किया जा सकता है :–

ऊँ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि। – हे प्रभु! मैं पृथ्वीःप गन्ध (चन्दन) आपको अर्पित करता हूँ।

ऊँ हं आकाशात्मकं पुष्पं परिकल्पयामि। – हे प्रभु! मैं आकाशःपी पुष्प आपको अर्पित करता हूँ।

ऊँ यं वाय्वात्मकं धूपं परिकल्पयामि। – हे प्रभु! मैं वायुःपी धूप आपको अर्पित करता हूँ।

ऊँ रं वह्न्यात्मकं दीपं परिकल्पयामि। – हे प्रभु! मैं अग्निःपी दीप आपको अर्पित करता हूँ।

ऊँ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं परिकल्पयामि। – हे प्रभु! मैं अमृतःपी नैवेद्य आपको अर्पित करता हूँ।

तत्पश्चात्क्रमानुसार पञ्चदेवों का पूजन करे।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकेंगे कि –

1 पञ्चदेवों (सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव तथा विष्णु) की विशिष्ट पूजा किस विधि से होती है।

2 पञ्चदेवों में पृथक् पृथक् कर्म के अनुसार पञ्चायतन पूजन का क्या विधान है।

3 पञ्चदेवों के अथर्वशीर्ष का पाठज्ञान करके उनका प्रयोग किस प्रकार किया जायेगा।

4 पञ्चेदेवों की जपविधि क्या है, उससे क्या लाभ संभव है।

5.3 प्रारम्भिक पूजन

चौकी स्थापित करके उस पर पञ्चदेवों के क्रम में यथाक्रम स्थापित करे। ईशान कोण में घी का दीपक रखे और अपने दायें हाथ में पूजा सामग्री रख लेवे। शुद्ध नवीन वस्त्र पहनकर पूर्वाभिमुख बैठे। कुंकुम

(रोली) का तिलक करके अपने दायें हाथ की अनामिका में सुवर्ण की अंगुठी पहनकर आचमन प्राणायाम कर पूजन आरम्भ करे।

कलशोदकेन शरीरप्रोक्षणम्(कलश के जल से शरीर का प्रोक्षण करे) :—

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहिमा।।

ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ३

आचमन (तीन बार आचमन करे) :—

ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः।

प्राणायाम :—

गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे—धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

पवित्रधारणम् — ॐ पविन्नस्त्थो व्वैष्णव्यौसवितुर्व्व प्प्रसवऽउत्पन्नुनाम्यच्छिन्नद्वेण पवित्रेण सूर्स्य रश्मिभिः । तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य त्कान्नमल प ुनेतच्छन्नकेयम्।।

यथा वज्रं सुरेन्द्रस्य यथा चक्रं हरेस्तथा।

त्रिशूलं च त्रिनेत्रस्य तथा मम पवित्रकम्।।

सपत्नीकः यजमानभाले स्वस्तितिलकम्ः—

ऊँ स्वस्ति नऽइन्द्रो व्वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा व्विश्ववेदाः।

स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु।।

ऊँ श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्क्न्या वहोरात्रे पाशर्श्वे नक्षत्राणि :पमश्वि नौव्व्यात्त।

इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण।।

त्रिपुण्डधारणम (त्रिपुण्ड़ का तिलक करे) :– परम्परागतनुयसा ही त्रिपुण्ड लगाना चाहिए।

त्र्यायुषञ्जमदग्ने कश्श्यपस्य त्र्यायुषम् ।

यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽ अस्तु त्र्यायुषम्।

रुद्राक्षमाला धारण (माला धारण करे) :–

त्र्यम्बकँ य्यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवद्र्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीय मामृताम्।

शिखा बन्धन (शिखा का बन्धन करे तथा सिर पर वस्त्र रख देवे) :–

मा नस्तोके तनये मानऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु–रीरिष।

मा नो व्वीरान्रुद्द्र भामिनो व्वधीर्हविष्मन्त सदमित्त्वा हवामहे।

ग्रन्थिबन्धन (लोकाचार से यजमान का सपत्नीक ग्रन्थिबन्धन करे) :–

ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्ब्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः।

नाकङ्गृब्भ्णानाः सुकृतस्यलोके तृतीयपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः।।

भूमिपूजन (भूमि की पूजा करे) :–

ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनि।

च्छा नः शर्म्म सप्प्रथाः।। ॐ कर्मभूम्यै नमः।। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

आसनपूजन (आसन की पूजा करे) :–

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

ॐ कूर्मासनाय नमः।

ॐ अनन्तासनाय नमः।

ॐ विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

भूतापसारण (बायें हाथ में सरसों लेकर उसे दाहिने हाथ से ढककर निम्र मन्त्र पढ़े) –

रक्षोहणं व्वलगहनं व्वैष्णवीमिदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे निष्ट्यो ममात्यो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे समानोमसमानो निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सबर्न्धुम सबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तं व्वलगमुत्किरामि म्मे सजातो मसजातो निचखानोत्कृत्याङि्क्रामि।

ऊँ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।

ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।

सर्वेषामवरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

निम्न मन्त्रों से सरसों का सभी दिशाओं में विकिरण करे :–

प्राच्यैदिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा दक्षिणायै दिशेस्वाहार्व्वाच्यै दिशेस्वाहा प्रतीच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहोदीच्यै दिशे स्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहोद्ध्र्वायै दिशेस्वाहा र्व्वाच्यै दिशे स्वाहा व्वाच्यै दिशे स्वाहार्व्वाच्यै दिशे स्वाहा।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः। दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः। उत्तरे श्रीधरो रक्षेद्ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः। एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

भैरवनमस्कार (भैरव को नमस्कार करके पूजन की आज्ञा लेवे) :–

ऊँ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम।

भैरवाय नमस्तुभ्यम् अनुज्ञां दातुमर्हसि।।

कर्मपात्र पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को अक्षतपुञ्ज पर स्थापित करते हुए पूजन करे) :–

ऊँ तत्वाामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्धयुरुश समानऽ आयुः प्रमोषीः।। ऊँ वरुणाय नमः।

पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।

पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।

मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :–

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।

नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।

मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।

कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।

अ`श्च सहिताः सर्वे कलशाम्बु समाश्रिताः।

गायत्री चात्र सावित्री शान्तिः पुष्टिकरा तथा।

आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।।

ग` च यमुने चौव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन्सन्नुिध कुरु।।

ब्रह्माण्डोदर तीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे।

तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर।।

ऊँ जलबिम्बाय विद्महे नीलपुरुषाय धीमहि। तन्नो अम्बु प्रचोदयाम्। व मूलेन अष्टवारम्भिमन्त्र्य, धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, मत्स्यमुद्रया आच्छाद्य।

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत् (पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :–

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।

योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।

तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

दीपपूजनम् (देवताओं के दाहिने तरफ घी एवं विशेष कर्मों में बायें हाथ की तरफ तेल का दीपक जलाकर पूजन करना चाहिए) :–

अग्निर्द्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्द्रा देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो देवता व्वरुणो देवता।

ऊँ दीपनाथाय नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

सूर्य नमस्कारः (दिन में पूजन कर रहे हो तो सूर्य को नमस्कार करे) :–

ऊँ तच्चक्क्षुर्द्देवहितम्पुरस्त्ताच्छुक्क्रमुच्चरत।

पश्श्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शत श्रृणुयाम शरदः

शतम्प्रब्ब्रवाम शरदः शतमदीना स्याम शरदः शतम्भूयश्च्च शरदः शतात्।

चन्द्र नमस्कारः (रात्रि में पूजन कर रहे हो तो चन्द्रमा को नमस्कार करे) :–

ऊँ इमन्देवा ऽ असपत्न œ सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय।

इमममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना œ राजा।।

प्रार्थना :– ऊँ भो दीप देवःपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत।

यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

शंख पूजन –

1. **ऊँ अग्निर्ऋषि पवमान पाञ्चजन्य पुरोहित। तमीमहेमहागयम्।**

ऊँ पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि। तन्नोशंखः प्रचोदयात्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः शंखस्थ देवतायै नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि।

घण्टा पूजन –

आगमनार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम्।

घण्टानादं प्रकुर्वीत् तस्मात्घण्टां प्रपूजयेत्।

ऊँ सुपर्ण्णोसि गरुत्त्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्त्रंञ्चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ।

स्तोमऽ आत्माच्छन्दाœ स्यङ्ग्ानि जूœ षिनाम ।

साम ते तनूर्व्वामदेव्यँज्ञा यज्ञियं पुच्छन्धिष्ण्या शफा।

सुपर्णोसि गरुत्मान्दिवङ्ग्च्छस्व पत। २। ऊँ भूर्भुवः स्वः घण्टस्थ गरुड़ाय नमः।

सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षत पुष्पाणि समर्पयामि।

हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा (हाथ में अक्षत–पुष्प लेकर प्रार्थना करे) :– ऊँ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः। देवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।१।। देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवाना रातिरभिनोनिवर्त्तताम्। देवाना सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्रतिरन्तुजीवसे।।२।। तान्पूर्वया निविदा हूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्। अर्यमणं व्वरुण सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्।।३।। तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः। तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्।।४।। तामीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पति–न्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम्। पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।५।। स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्र्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु।।६।। पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं ावानो व्विदथेषु जग्मयः। अग्निजिह्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह।।७।। भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा œ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः।।८।। शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा त्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्। पुत्रासो त्र पितरो भवन्ति मानो मद्ध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।९।। अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वेदेवा ऽ अदितिः पञ्चजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्।।१०।। द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष œ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। व्वनस्पतयः शान्तिर्व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व œ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि।।११।। यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः।।१२।। सुशान्तिर्भवतु।।

शिरसाभिवन्द्य गणपतिमण्डलोऽपरि अक्षतपुष्पाणि अर्पयेत्। (अक्षत–पुष्प को सिर से लगाकर गणपति मण्ड़ल पर गणेशजी को समर्पित करे)

गणपत्यादि देवानां स्मरणम्(गणेशादि देवों का स्मरण करे) :–

सुमुखश्चौकदन्तश्च कपिलो गजगर्णकः। लम्बोदरश्च विकटोविघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छ्रुणुयादपि। विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चौव विघ्नस्तस्य न जायते। शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये। अभीप्सितार्थ सिध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः। सर्वमङ्ग्ल माङ्ग्ल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके। शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते। सर्वदा सर्व कार्येषु नास्ति तेषाममङ्ग्गलम्। येषां हृदिस्थो भगवान् मंगलायतनं हरिः। तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव। विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि। लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः। येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः। यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। सर्वेष्वारब्धकार्येषु त्रयस्त्रि भुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु नः सिद्घिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः। विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानी मणिकर्णिकाम्। विनायकं गुरुभानुं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्। सरस्वतीं प्रणौम्यादौ सर्वकार्यार्थ सिद्घये।

ऊँ श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। ऊँ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। ऊँ उमामहेश्वराभ्यां नमः। ऊँ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। ऊँ शचीपुरन्दराभ्यां नमः। ऊँ मातृपितृचरणकमलेभ्यो नमः। ऊँ सर्वपितृदेवताभ्यो नमः। ऊँ इष्टदेवताभ्यो नमः। ऊँ कुलदेवताभ्यो नमः। ऊँ ग्रामदेवताभ्यो नमः। ऊँ स्थानदेवताभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। ऊँ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। ऊँ गुरवे नमः। ऊँ परमगुरवे नमः। ऊँ परात्परगुरवे नमः। ऊँ परमेष्ठिगुरवे नमः।

गुरुः ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीः गुरवे नमः।।

ऊँ एतत्कर्मप्रधानदेवताभ्यो नमः।

संकल्पः –

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव–ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा–मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशेः नामराशेः वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्घचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान–स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं पञ्चदेवपूजनं (सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव तथा विष्णु) करिष्ये।

तत्पश्चात्पञ्चदेवों के अन्तर्गत गणपति आदि देवताओं का पूजन करे।

5.4 गणपति पञ्चायतन पूजन

गणेश पंचायतन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में शिव, नैर्ऋत्यकोण में सूर्य तथ वायव्य कोण में देवी की स्थापना करते मध्य में प्रधानःप में गणपति की स्थापना करते हुए यथोपचार पूजन करना चाहिए।

१. **विष्णु** :– (बाये हाथ में अक्षत लेकर प्रत्येक देव के आवाहन का मंत्र उच्चारित कर उसके स्थान पर छोड़े।)

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम्त्।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम्त्।।

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

२. शिव :–

पञ्चवक्त्रं वृषाःढं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्त्।

खट्वा'धारिणं वन्द्यं शिवमावाहयाम्यहम्त्।।

ऊँ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय शिवतराय च।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः, शिवमावहयामि स्थापयामि।

३. सूर्य :–

जपाकुसुमस'ाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्त्।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्त्।।

ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

4 देवी

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम।।

ऊँ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः दुर्गादैव्यै नमः, दुर्गाम्ावाहयामि स्थापयामि।

५. गणेश :–

ऊँ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजनम्ः– ऊँ तीव्रायै नमः। ऊँ ज्वालिन्यै नमः। ऊँ नन्दायै नमः। ऊँ मोदायै नमः। ऊँ कामःपिण्यै नमः। ऊँ उग्रायै नमः। ऊँ तेजोवत्यै नमः। ऊँ सत्यायै नमः। ऊँ विघ्ननाशिन्यै नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

ततः कलशस्थापनम् (मण्डल पर कल�ा की स्थापना करें) –

ऊँ तत्वाामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः। अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश œ समानऽ आयुः प्रमोषीः।।

ततः ॐ भूर्भुवःस्वः वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः अस्मिन् कलशे सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तुत्त। गन्धाक्षत पुष्पधूपदीपनैवेद्यैः सम्पूज्य।

अग्न्युत्तारणम्

देशकालौ संकीर्त्य अस्य गणपतिदेवता नूतन स्वर्ण–पाषाण–मृदादि यन्त्र–मूर्ति अग्नितपनताडन अवघातादि दोषपरिहारार्थमग्न्युत्तारणं करिष्येत्त। इति स'ल्प्यत्त।

स्वर्णादि निर्मितं मूर्तिं ताम्रपात्रे निधाय घृतेनाभ्यज्य उपरि दुग्धमिश्रित जलधारां कुर्यात।

ॐ स म ुद्रस्य त्वावेंक याग्न` परिंव्ययामसित्त। पा व कोऽअ स्मब्भ्यॆंषशि वो भवत्त।। ॐ हि मस्यें त्वा ज राय ुणाग्न` परिंव्ययामसित्त। पा व कोऽअ स्मब्भ्यॆंषशि वो भेंवत्त।। उप ज्मन्नुपेंवेत सेवेंतर न दीष्वा त्त। अग्नें पि त्तम पामेंसि मण्डूेंकि ताभि रागेंहि सेमेंन्नो ज्ञम्पोंव क वेंर्ण्णऋ शि वेंधित्त।। अ पामि दन्न्यर्येनषसम ुद्रस्यें नि वेशेंनम्त्त। अ न्याँर्स्तेंऽ अ स्मत्तेंपन्तु ह `तय पाव कोऽअ स्मब्भ्यें षशि वोर्भेवत्त।। अग्नेंपावक रा `चिर्षो म न्द्रयों देवजि ह्वयोंत्त। आ द `वान्वेंक्षि क्षिं च त्त।। सनें पावक दीदि वोग्नें द `वाइॅत्त।।ऽइ हावेंहत्त। उपें ज्ञषह विश्वें नलत्त।। पा व कया यश्चि त येंन्त्या क ृपा क्षामेंन्न्रुरु चऽउ षस ो न भा नुनोंत्त। तूव्व 'न्नयाम न्नेतेंशस्य नू रण ऽआ यो घ ृणे न तेंतृषा णोऽअ जरन्न त्त।। नमेंस्त` हरेंसे शा `चिष` नमेंस्तेऽअस्त्व चिंर्चिषेंत्त। अ न्याँर्स्तेंऽअ स्मत्तेंपन्तु ह `तयन्न पाव कोऽअ स्मब्भ्यॆंषशि वोर्भेवत्त।। न ृषद` व्वेडेंप्स ुषद` व्वेड्बेंहि 'षद` व्वेड्वेंन सद` व्वेट्स्व र्बिद `व्वेट्त्त।। ये द `वा द `वानन्नाँ ज्ञियों य ज्ञियोंनासँव्वत्त्स रीण मुपें भा गमासेंतेत्त। अ ह ुतादों ह विषों ज्ञेऽअ स्मिन्त्त्व यम्पिंबन्त ु मर्धुनो घ ृतस्येंत्त।। ` द `वा द `वष्वर्धि देव त्त्वमाय न्ये ब्रह्मेंणल पुरऽए तारोंऽअस्यत्त। येब्भ्या` नऽॠते पर्वेत` धाम किञ्च न नते दि वो न पृंथि व्याऽअधि स्न्नुषुेंत्त।। प्रा ण दाऽअेंपान दा व्व्योंन दा व्वेंच्चा 'दा व्वेंरिवा `दारत्त। अ न्याँर्स्तेंऽअ स्मत्तेंपन्तु ह `तर्येन्न पाव कोऽअ स्मब्भ्यॆंषशि वोर्भेवत्त।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणपतये शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

ततः स्वर्णादिप्रतिमां करेण संस्पृश्य प्राणस्थापनमाचरेत् :– ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः सोऽहं अस्यां मूर्तौ प्राणा इह प्राणाःत्त। ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ जीव इह स्थितःत्त। ॐ आं ह्रीं क्रों अस्यां मूर्तौ सर्वेन्द्रियाणि वाड्मनस्त्वक्चक्षुश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणि पादपायूपस्थानि, इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहात्त।

अस्यै प्राणा प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च।

अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन।। ॐ गं गणपतये नमः(दशधाध्पञ्चदश मूलमन्त्रं जपेत्)त्त।

गणपति ध्यानम्

द्वे भार्ये सिद्धिबुद्धि तदनुसहचरौ वृद्धिसिद्धिप्रियौ च,

द्वौ पुत्रौ लक्षलाभौ वसुदलरचिते मण्डले कल्पवृक्षः।

गेहे यस्य प्रभूता मृगमदतिलकाः सिद्धयः प्रोल्लसन्ति,

भूयात् भूत्यै गणेशः कलिवनदहनो विघ्नविच्छेदको नः।।

१. गणपति :—

ऊँ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम। आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

प्रतिष्ठापनम्:— (हाथ की अञ्जलि में अक्षत पुष्प लेवे)

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्ज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ œ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामो इँ म्प्रतिष्ठ।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि पञ्चदेवताभ्यो नमः।

आसनम् —

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम्।

आसनं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वरः।।

ऊँ पुरुष ऽ एवेद œ सर्व्वंद्भूतँच्च भाव्व्यम्। उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

पाद्यम् —

गौरीसुत नमस्तेस्तु श'रप्रियसूनवे।

पाद्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः फलैः।।

ऊँ एतावानस्य महिमातोज्ज्यॉश्चपूरुषः।

पादोस्य व्विश्श्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० पादप्रक्षालनार्थं पाद्यं समर्पयामि।

अर्घ्यम् –

ताम्रपात्रस्थितं तोयं गन्धपुष्पफलान्वितम्।

सहिरण्यं ददाम्यर्घं गृहाण परमेश्वरः।।

ॐ धामन्तेव्विश्श्वम्भुवनमधिश्रितमन्तः समुद्रेहृद्यन्त रायुषि।

अपामनीकेसमिथेय ऽ आभृतस्तमश्याम मधुमन्तन्त ऽ ऊर्म्मिम्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि।

आचमनीयम् –

सर्वतीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्।

आचम्यार्थं मया दत्तं गृहाण गणनायक।।

ॐ इमम्मेव्वरुणत्त्शुधीहवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० मुखे आचमनीयं समर्पयामि।

जलस्नानम् –

कावेरी नर्मदा वेणी तु'भद्रा सरस्वती।

ग'ा च यमुनातोयं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ ऋतसदन्न्यसि

वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० स्नानार्थे जलं समर्पयामि।।

पञ्चामृत स्नानम् –

पयो दधिघृतं चौव मधुं च शर्करायुतम्त्।

पंचामृतं मयादत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्त्।।

ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्तसस्रोतसः।

सरस्वती तु पञ्चधासो देशेभवत्सरित्।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० मिलितपञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदक स्नानम् –

स्नानार्थे तव देवेश पवित्रं तोयमुत्तम्।

तीर्थेभ्यश्च समानीतं गृहाण गणनायक।।

ॐ शुद्धवालः सर्व शुद्धवालो मणिवालस्त ऽ आश्विनाः श्येतः

श्येताक्षो रुणस्तेरुद्रायपशुपतये कर्ण्णामा अवलिप्ता रौद्वानभोःपाः पार्ज्जन्याः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) –

गणपत्यथर्वशीर्षम्

ॐ नमस्ते गणपतये त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि त्वमेव केवलं कर्त्तासि। त्वमेव केवलं धर्त्तासि। त्वमेव केवलं हर्त्तासि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्मासि नित्यम।१। ।

ऋतं वच्मि। सत्यं वच्मि।२।

अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अव अनूचानम्। अव शिष्यम्। अव पश्चात्तात्। अव पुरस्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्।३।

त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः। त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः। त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि। त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि।४।

सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते। सर्वं जगदिदं त्वत्तस्तिष्ठति। सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति।। सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति। त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलो नभः। त्वं चत्वारि वाक्पदानि। ५।

त्वं गुणत्रयातीतः। त्वं कालत्रयातीतः।। त्वं देहत्रयातीतः। त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम्। त्वं शक्तित्रयात्मकः। त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम्। त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वम् इन्द्रस्त्वम् अग्निस्त्वं वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वम्। ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्। ६।

गणादिं पूर्वमुच्चार्य वर्णादिं तदनन्तरम्। अनुस्वारः परतरः। अर्धेन्दुलसितम्। तारेण रुद्धम्। एतत्तव मनुस्वःपम्।। गकारः पूर्वःपम्।। अकारो मध्यमःपम्। अनुस्वारश्चान्त्यःपम्। बिन्दुरुत्तरःपम्। नादः सन्धानम्। संहिता सन्धिः। सैषा गणेशविद्या। गणकऋषिः निचृद्गायत्रीच्छन्दः। गणपतिर्देवता। ॐ गं गणपतये नमः।७। एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमंकुशधारिणम्। रदं च वरदं हस्तैर्बिभ्राणं मूषकध्वजम्।

रक्तं लम्बोदरं शूर्पकर्णकं रक्तवाससम्। रक्तगन्धानुलिप्ताङ्गं रक्तपुष्पैः सुपूजितम् । भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम्। आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम्।

एवं ध्यायति यो नित्यं। स योगी योगिनां वरः। ६। नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायैकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय श्रीवरदमूर्तये नमः ।१०। ॐ अमृताभिषेकोऽस्तु।

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धि० महा० अभिषेकस्नानं सम०। शुद्घोदकस्नानम।

वस्त्रोपवस्त्रम्—

रक्तवस्त्रमिदं देव देवा'सदृश प्रभो।

सर्वप्रदं गृहाण त्वं लम्बोदर हरात्मज।।

ॐ सुजातोज्ज्योतिषा सहशर्म्म व्वरुथमासदत्स्वः।

व्वासो ऽ अग्ने विश्वःप œ सँव्ययस्वव्विभावसो।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० वस्त्रोपवस्त्रार्थे रक्तसूत्रं समर्पयामि।

यज्ञोपवीतम् —

''यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्यत्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि।।

ॐ ब्रह्मज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनऽआवः।

सबुद्धन्याऽउपमा अस्यव्विष्ठाः सतश्च्चयोनिमसतश्चव्विवः।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

चन्दनम् —

श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

ॐ अ œ शुना ते अ œ शुः पृच्यतां परुषा परुः।

गन्धस्ते सोममवतु मदायरसोऽअच्युतः।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० चन्दनकुंकुमञ्च समर्पयामि।

अक्षताः –

रक्ताक्षतांश्च देवेश गृहाण द्विरदानन।

ललाटपटले चन्द्रस्तस्योपर्यवधार्यताम।।

ॐ अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रियाऽअधूषत।

अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठ्ठयामती ेजान्विन्द्रते हरी।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० अलङ्करणार्थम् अक्षतान् समपर्यामि।

पुष्पाणि (पुष्पमालां) –

सुगन्धीनि च पुष्पाणि धत्तूरादीनि च प्रभो।

विनायक नमस्तुभ्यं गृहाण परमेश्वर।।

ॐ ओषधिः प्रतिमोदद्धवं पुष्पवतीः प्रसूवरीः। अश्श्वाऽ इव सजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्णवः।।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० पुष्पाणि समर्पयामि।

अथ गणेशाङ्गपूजनम् –

ह्रीं गणेश्वराय नमः पादौ पूजयामि। ह्रीं विघ्नराजाय नमः जानुनीं पूजयामि । ह्रीं आखुवाहनाय नमः ऊरुं पूजयामि। ह्रीं हेरम्बाय नमः कटीं पूजयामि। ह्रीं कामारिसूनवे नमः नाभिं पूजयामि। ह्रीं लम्बोदराय नमः उदरं पूजयामि। ह्रीं गौरीसुताय नमः स्तनौ पूजयामि। ह्रीं गणनायकाय नमः हृदयं पूजयामि। ह्रीं स्थूलकण्ठाय नमः कण्ठं पूजयामि। ह्रीं स्कन्दाग्रजाय नमः स्कन्धौ पूजयामि। ह्रीं पाशहस्ताय नमः हस्तौ पूजयामि। ह्रीं गजवक्त्राय नमः वक्त्रं पूजयामि। ह्रीं विघ्नहर्त्रे नमः ललाटं पूजयामि। ह्रीं सर्वेश्वराय नमः शिरः पूजयामि। ह्रीं गणाधिपाय नमः सर्वाङ्गं पूजयामि।

दुर्वाङ्कुरम् –

दूर्वा्ंरान् सुहरितानमृतान्म'ल प्रदान्।

आनीताँस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक।।

ऊँ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।

एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।। ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० दूर्वाङ्कुराणि समर्पयामि।

बिल्वपत्रम् –

त्रिशाखैर्बिल्वपत्रैश्च अच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः।

तव पूजां करिष्यामि गृहाण परमेश्वर।।

ऊँ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो व्वर्मिणे च व्वःथिने च नमः

श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुब्भ्याय चाहनन्याय च।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० बिल्वपत्राणि समर्पयामि।

सुगन्धितद्रव्यम् –

स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकेश्वर दयानिधे।

भक्त्या दत्तं मयादेव स्नेहं ते प्रतिगृह्यताम।।

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्म्मुक्षीयमामृतात।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० सुगन्धितद्रव्यं समर्पयामि।

सिन्दूरम् –

उद्यद्भास्करसंकाशं सन्ध्यावदरुण प्रभोत्त।

वीराल'णं दिव्यं सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम।।

ऊँ सिन्धोरिव प्राद्ध्वने शूघनासो व्वातप्प्रमियः पतयन्ति ह्वाः।

घृतस्य धारा ऽ अरुषो न व्वाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० सिन्दूरं समर्पयामि।

नानापरिमलद्रव्याणि –

अबीरं च गुलालं च चोवा चन्दनमेव च।

अबीरेणार्चितो देव अतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

ऊँ अहिरिव भोगैः र्पेति बाहुञ्ज्याया हेतिं परिबाधमानः।

हस्तग्घ्नो विश्वाव्वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमा œ सम्परिपातुव्विश्वतः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० परिमलद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपम् –

दशा' गुग्गुलं धूपमुत्तमं गणनायक।

गृहाण सर्वं देवेश उमापुत्र नमोस्तु ते।।

धूरसि धूर्व्वधूर्व्वन्तं धूर्व्व तोस्म्मान् धूर्वतितन्धूर्व्वयं व्वयं धूर्व्वामः।

देवानामसि व्वह्नितम œ सस्न्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० धूपम् आघ्रापयामि।

दीपम् –

सर्वज्ञ सर्वलोकेश सर्वेषान्तिमिरापह।

गृहाण म'लं दीपं रुद्रप्रिय नमोस्तु ते।।

ऊँ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूीज्योतिज्ज्योतिः सूः स्वाहा।

अग्रिर्व्वर्चोज्ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहासूीव्वर्च्चोज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा।

ज्योतिः सूः सूीज्योतिः स्वाहा।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० दीपकं दर्शयामि। हस्तौ प्रक्षाल्य।

नैवेद्यम् –

ँ नमो मोदकहस्ताय भालचन्द्राय ते नमः।

नैवेद्यं गृह्यतां देव स'टं मे निवारय।।

नैवेद्यपात्र पुरतो निधाय चन्दनपुष्पाभ्यां समभ्यर्च्च्य। धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य देवस्य अग्रे दक्षिण भागे वा निधाय ग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत् – ऊँ प्राणाय स्वाहा। ऊँ अपानाय स्वाहा। ऊँ व्यानाय स्वाहा। ऊँ उदानाय स्वाहा। ऊँ समानाय स्वाहा।

ऊँ नाभ्याऽआसीदन्तरिक्ष œ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ऽ अकल्पयन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये जलं निवेदयामि।

ऋतुफलम् –

नारिकेलञ्च नार' कदम्बं मातुलि'कम्।

द्राक्षाखर्जूरदाडिम्बं गृहाण गणनायक।।

ऊँ याः फलीर्नीा ऽ अफला ऽ अपुष्पायाश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्व œ हसः।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० फलं निवेदयामि। पुनः आचमनीयं निवेदयामि।

ताम्बूलम् –

पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम।।

एलादिचूण्र संयुक्तं ताम्बूंल प्रतिगृहाताम्।।

ऊँ उतस्म्मास्यद्द्रवतस्तुरण्ण्यतः पर्ण्णन्नवेरनुवाति प्प्रगर्द्धिनः।

श्येनस्ये वद्घ्रजतो ऽ अङ्क सम्परिदधिक्राब्ण्णः सहोा तरित्रतः स्वाहा।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० ताम्बूलं समर्पयामि।

दक्षिणा –

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।

तेन प्रीतो गणाध्यक्ष भव सर्वफलप्रद।।

ऊँ द्त्तँत्परादानँ त्त्पूर्त्तांश्चदक्षिणाः।

तदग्निर्व्वैश्वकर्म्मणः स्वर्द्देवेषु नो दधत्। ॐ भूर्भुवः स्वः गणेशादि० दक्षिणां समर्पयामि।

नमस्कार –

विनायको योऽखिललोकनायकः, यो विघ्नराजोऽपिहि विघ्ननाशकः।

अनेक दन्तार्चित पादयुग्मकं, तमेकदन्तं प्रणमामि सन्ततम्।।

विशेषार्घम् –

रक्ष रक्ष गणाध्यक्षो रक्ष त्रैलोक्यरक्षक। भक्तानामभयं कर्त्ता त्राता भव भवार्णवात्।।

द्वैमातुरकृपासिन्धो षाण्मातुरग्रज प्रभो। वरदस्त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्थद।।

गृहाणार्घ्यमिमं देव सर्वदेव नमस्कृतः। अनेन सफलार्घ्येन फलदोऽस्तु सदा मम।।

अनेन कृताऽर्चनेन श्रीगणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम।

गणेश जी की आरती –

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय, लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।

नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय, गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते।।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

माता जाकी पार्वती पिता महादेवा।

लड्डुअन को भोग लगे सन्त करे सेवा।

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

एकदन्त दयावन्त चारभुजाधारी।

मस्तक सिन्दूर सोहे मूसे की सवारी। जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

अन्धन को आँख देत कोढ़िन् को काया ।

बाँझन को पुत्र देत निर्धन को माया। जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

पान चढ़े फूलचढ़े और चढ़े मेवा।

सभी कार्य सिद्घ करे श्री गणेश देवा। जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

पुष्पाञ्जलि –

त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति।

विद्या प्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव।।१।।

श्वेताङ्गं श्वेतवस्त्रं सितकुसुमगणैः पूजितं श्वेतगन्धैः,

क्षीराब्धौ रत्नदीपैः सुरनरतिलकं रत्नसिंहासनस्थम्।

दोर्भिः पाशाङ्कुशाब्जाभयवरदधतं चन्द्रमौलिं त्रिनेत्रं,

ध्याये शान्त्यर्थमीशं गणपतिममलं श्रीसमेतं प्रसन्नम्।।२।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः श्रीगणेशाम्बिकाभ्यां नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

5.5 शिव पञ्चायतन पूजन

शिव पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में सूर्य, नैर्ऋत्यकोण में गणेश, वायव्यकोण में देवी तथा मध्य में प्रधानःप में शिव की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए। हाथ में अक्षत लेकर ही प्रत्येक देवता का आवाहन करना चाहिए।

१. विष्णु :–

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम।।

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

२. सूर्य :–

जपाकुसुमस'ाशं काश्यपेयं महाद्युतिम।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम।।

ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः सूर्याय नमः, मध्ये सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।

३. गणेश :–

गजास्य गणनाथत्त्वं सर्वविघ्नविनाशनम।

लम्बोदरं त्रिनेत्राढ्यं आगच्छ गणनायकम।।

ऊँ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम। आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

४. देवी :–

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहेत्।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम।।

ऊँ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः दुर्गादैव्यै नमः, दुर्गाम्ावाहयामि स्थापयामि।

५. शिव :–

ऊँ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजन :– ऊँ वामाय नमः, ऊँ ज्येष्ठायै नमः, ऊँ रौद्यै नमः, ऊँ काल्ये नमः, ऊँ कलविकरिण्यै नमः, ऊँ बलविकरिण्यै नमः, ऊँ बलप्रमथिन्यै नमः, ऊँ सर्वभूतदमन्यै नमः, ऊँ मनोन्मन्यै नमः।। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

तत्पश्चात्गणपति पञ्चायनत देव की भांति कलश स्थापन से प्रारम्भ करते हुए प्राणप्रतिष्ठा तक पूजन करे।

ऊँ ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम्,

रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।

पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानम्,

विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।

ऊँ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय शिवतराय च।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः, शिवमावहयामि स्थापयामि।

पूजनं कुर्यात्(यथोपचार गणपति की भांति ही आसनपाद्यादि से मन्त्र पुष्पाञ्जलि तक पूजन करे।) –

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) –

शिव अथर्वशीर्षम्

ऊँ देवा ह वै स्वर्गं लोकमायँस्ते रुद्रमपृच्छन्को भवानिति। सोऽब्रवीदहमेकः प्रथममासवर्तामि च भविष्यामि च नान्यः कश्चिन्मत्तो व्यतिरिक्त इति। सोऽन्तरादन्तरं प्राविशत्दिशश्चान्तरं प्राविशत्सोऽहं दक्षिणाञ्च उदञ्चोहं अधश्चोर्ध्वं चाहं दिशश्च प्रतिदिशश्चाहं पुमानपुमान्स्त्रियश्चाहं गायत्र्हं सावित्र्यहं त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्चाहं छन्दोऽहं गार्हपत्यो दक्षिणाग्निराहवनीयोऽहं सत्योऽहं गौरहं गौर्यहमृगहं यजुरहं सामाहमथर्वाङ्गिरसोऽहं ज्येष्ठोऽहं श्रेष्ठोऽहं वरिष्ठोऽहमापोऽहं तेजोऽहं गुह्योऽहमरण्योऽहमक्षरमहं क्षरमहं पुष्करमहं पवित्रमहमुग्रं च मध्यं च बहिश्च पुरस्ताज्ज्योतिरित्यहमेव सर्वेभ्यो मामेव स सर्वः स मां यो मां वेद स सर्वान्देवान्वेद सर्वांश्च वेदान्साङ्गानपि ब्रह्म ब्राह्मणैश्च गां गोभिर्ब्राह्मणान्ब्राह्मणेन हविर्हविषा आयुरायुषा सत्येन सत्यं धर्मेण धर्मं तर्पयामि स्वेन तेजसाद्ध ततो ह वै ते देवा रुद्रमपृच्छन्ते देवा रुद्रमपश्यन्। ते देवा रुद्रमध्यायन्ततो देवा ऊर्ध्वबाहवो रुद्रं स्तुवन्ति।।१।।

ऊँ यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च ब्रह्मा तस्मै वै नमो नमः।।१।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च विष्णुस्तस्मै वै नमो नमः।।२।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च स्कन्दस्तस्मै वै नमो नमः।।३।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च यश्चेन्द्रस्तस्मै वै नमो नमः।।४।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्चाग्निस्तस्मै वै नमो नमः।।५।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च वायुस्तस्मै वै नमो नमः।।६।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च सूर्यस्तस्मै वै नमो नमः।।७।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च सोमस्तस्मै वै नमो नमः।।८।। यो वै रुद्रः स भगवान्ये चाष्टौ ग्रहास्तस्मै वै नमो नमः।।६।। यो वै रुद्रः स भगवान्ये चाष्टौ प्रतिग्रहास्तस्मै वै नमो नमः।।१०।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च भूस्तस्मै वै नमो नमः।।११।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च भुवस्तस्मै वै नमो नमः।।१२।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च स्वस्तस्मै वै नमो नमः।।१३।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च महस्तस्मै वै नमो नमः।।१४।। यो वै रुद्रः स भगवान्या च पृथिवी तस्मै वै नमो नमः।।१५।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्चान्तरिक्षं तस्मै वै नमो नमः।।१६।। यो वै रुद्रः स भगवान्या च द्यौस्तस्मै वै नमो नमः।।१७।। यो वै रुद्रः स भगवान्याश्चापस्तस्मै वै नमो नमः।।१८।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च तेजस्तस्मै वै नमो नमः।।१६।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च कालस्तस्मै वै नमो नमः।।२०।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च यमस्तस्मै वै नमो नमः।।२१।। यो वै रुद्रः स भगवान्यश्च मृत्युस्तस्मै वै नमो नमः।।२२।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्चामृतं तस्मै वै नमो नमः।।२३।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्चाकाशं तस्मै वै नमो नमः।।२४।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च विश्वं तस्मै वै नमो नमः।।२५।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च स्थूलं तस्मै वै नमो नमः।।२६।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च सूक्ष्मं तस्मै वै नमो नमः।।२७।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च शुक्लं तस्मै वै नमो नमः।।२८।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च कृष्णं तस्मै वै नमो नमः।।२६।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च कृत्स्नं तस्मै वै नमो नमः।।३०।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च सत्यं तस्मै वै नमो नमः।।३१।। यो वै रुद्रः स भगवान्यच्च सर्वं तस्मै वै नमो नमः।।३२।। ।।२।।

भूस्ते आदिर्मध्यं भुवस्ते स्वस्ते शीर्षं विश्वःपोऽसि ब्रह्मैकस्त्वं द्विधा त्रिधा वृद्धिस्त्वं शान्तिस्त्वं पुष्टिस्त्वं हुतमहुतं दत्तमदत्तं सर्वमसर्वं विश्वमविश्वं कृतमकृतं परमपरं परायणं च त्वम्। अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान्। किं नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृतं मात्र्यस्य। सोमसूर्यपुरस्तात्सूक्ष्मः पुरुषः। सर्वं

जगद्धितं वा एतदक्षरं प्राजापत्यं सौम्यं सूक्ष्मं पुरुषं ग्राह्यमग्राह्येण भावं भावेन सौम्यं सौम्येन सूक्ष्मं सूक्ष्मेण वायव्यं वायव्येन ग्रसति तस्मै महाग्रासाय वै नमो नमः। हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः। हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः। तस्योत्तरतः शिरो दक्षिणतः पादौ य उत्तरतः स ओङ्कारः य ओङ्कारः स प्रणवः स सर्वव्यापी यः सर्वव्यापी सोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं यत्तारं तच्छुक्लं यच्छुक्लं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तद्वैद्युतं यद्वैद्युतं तत्परं ब्रह्म यत्परं ब्रह्म स एकः य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान्महेश्वरः।।३।।

अथ कस्मादुच्यत ओङ्कारो यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणानूर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः। अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुः सामाथर्वाङ्गिरसं ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः। अथ कस्मादुच्यते सर्वव्यापी यस्मादुच्चार्यमाण एव सर्वान्लोकान्व्याप्नोति स्नेहो यथा पललपिण्ड़मिव शान्तःपमोतप्रोतमनुप्राप्तो व्यतिषक्तश्च तस्मादुच्यते सर्वव्यापी। अथ कस्मादुच्यतेऽनन्तो यस्मादुच्चार्यमाण एव तिर्यगूर्ध्वमधस्ताच्चास्यान्तो नोपलभ्यते तस्मादुच्यतेऽनन्तः। अथ कस्मादुच्यते तारं यस्मादुच्चार्यमाण एव गर्भजन्मव्याधिजरामरणसंसारमहाभयात्तारयति त्रायते च तस्मादुच्यते तारम्। अथ कस्मादुच्यते शुक्लं यस्मादुच्चार्यमाण एव क्लन्दते क्लामयति च तस्मादुच्यते शुक्लम्। अथ कस्मादुच्यते सूक्ष्मं यस्मादुच्चार्यमाण एव सूक्ष्मो भूत्वा शरीराण्यधितिष्ठति सर्वाणि चाङ्गान्यभिमृशति तस्मादुच्यते सूक्ष्मम्। अथ कस्मादुच्यते वैद्युतं यस्मादुच्चार्यमाण एव व्यक्ते महति तमसि द्योतयति तस्मादुच्यते वैद्युतम्। अथ कस्मादुच्यते परं ब्रह्म यस्मात्परमपरं परायणं च बृहद्बृहत्या बृहंयति तस्मादुच्यते परं ब्रह्म। अथ कस्मादुच्यते एकः यः सर्वान्प्राणान्सम्भक्ष्य सम्भक्षणेनाजः संसृजति विसृजति तीर्थमेके व्रजन्ति तीर्थमेके दक्षिणाः प्रत्यञ्च उदञ्च प्राञ्चोऽभिव्रजन्त्येके तेषां सर्वेषामिह सङ्गति। साकं स एको भूतश्चरति प्रजानां तस्मादुच्यत एकः। अथ कस्मादुच्यते रुद्रः यस्मादृषिभिर्नान्यैर्भक्तैर्द्रुतमस्य :पमुपलभ्यते तस्मादुच्यते रुद्रः। अथ कस्मादुच्यते ईशानः यः सर्वान्देवानीशते ईशानीभिर्जननीभिश्च शक्तिभिः। अभित्वा शूर नोनुमो दुग्धा इव धेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुष इति तस्मादुच्यते ईशानः। अथ कस्मादुच्यते भवागन्महेश्वरः यस्माद्भक्ताञ्ज्ञानेन भजत्यनुगृह्णाति च वाचं संसृजति विसृजति च सर्वान्भावान्परित्यज्यात्मज्ञानेन योगैश्वर्येण महति महीयते तस्मादुच्यते भगवान्महेश्वरः। तदेतद्रुद्रचरितम्।।४।।

एषो ह देवः प्रदिशो नु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः। स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः। एको रुद्रो न द्वितीयाय तस्मै य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः। प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सञ्चुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवनानि गोप्ता। यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको येनेदं सर्वं विचरति सर्वम्। तमीशानं वरदं देवमीड्यं निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति। क्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः। शाश्वतं वै पुराणमिषमूर्जेण पशवोऽनुनामयन्तं मृत्युपाशान्। तदेतेनात्मन्नेतेनार्धचतुर्थेन मात्रेण शान्तिं संसृजति पशुपाशविमोक्षणम्। या सा प्रथमा ब्रह्मदेवत्या रक्ता वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्ब्रह्मपदम्। या सा द्वितीया मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेद्वैष्णवं पदम्। या सा तृतीया मात्रा ईशानदेवत्या कपिला वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेदैशानं पदम्। या सार्धचतुर्थी मात्रा सर्वदेवतयाऽव्यक्तीभूता खं विचरति शुद्धस्फटिकसन्निभा वर्णेन यस्तां ध्यायते नित्यं स गच्छेत्पदमनामयम्। तदेतदुपासीत मुनयो वाग्वदन्ति न तस्य ग्रहणमयं पन्था विहित उत्तरेण येन देवा यान्ति येन पितरो येन ऋषयः परमपरं परायणं चेति। वालाग्रमात्रं हृदयस्य मध्ये विश्वं देवं जातःपं वरेण्यम्। तमात्मस्थं ये नु पश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिर्भवति नेतरेषाम्। यस्मिन्क्रोधं यां च तृष्णां क्षमां चाक्षमां हित्वा हेतुजालस्य मूलं बुद्ध्या सञ्चितं स्थापयित्वा तु रुद्रे रुद्रमेकत्वमाहुः। रुद्रो हि शाश्वतेन वै पुराणेनेषमूर्जेण तपसा नियन्ता। अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्व ऽ ह वा इदं भस्म मन एतानि चक्षूंषि यस्माद्व्रतमिदं पाशुपतं यद्भस्म नाङ्गानि संस्पृशेत्तस्माद्ब्रह्म तदेतत्पाशुपतं पशुपाशविमोक्षणाय।।५।।

योऽग्नौ रुद्रो योऽप्स्वन्तर्य ओषधीर्वीरुध आविवेश। य इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय नमोऽस्त्वग्नये। यो रुद्रोऽग्नौ यो रुद्रोऽप्स्वन्तर्यो रुद्र ओषधीर्वीरुध आविवेश। यो रुद्र इमा विश्वा भुवनानि चक्लृपे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः। यो रुद्रोऽप्सु यो रुद्र ओषधीषु यो रुद्रो वस्पतिषु येन रुद्रेण जगदूर्ध्वं धारितं पृथिवी द्विधा त्रिधा धर्ता धारिता नागा येऽन्तरिक्षे तस्मै रुद्राय वै नमो नमः।

मूर्धानमस्य संसेव्याप्यथर्वा हृदयं च यत्। मस्तिष्कादूर्ध्वं प्रेरयत्यवमानोऽधिशीर्षतः। तद्वा अथर्वणः शिरो देवकोशः समुज्झितः। तत्प्राणोऽभिरक्षति शिरोऽन्तमथो मनः। न च दिवो देवजनेन गुप्ता न चान्तरिक्षाणि न च भूम इमाः। यस्मिन्निदं सर्वमोतप्रोतं तस्मादन्यन्न परं किञ्चनास्ति। न तस्मात्पूर्वं न परं तदस्ति न भूतं नोत भव्यं यदासीत्। सहस्रपादेकमूर्ध्ना व्याप्तं स एवेदमावरीवर्ति भूतम्। अक्षरात्सञ्जायते कालः कालाद्व्यापक उच्यते। व्यापको हि भगवान्रुद्रो भोगायमानो यदा शेते रुद्रस्तदा संहार्यते प्रजाः। उच्छ्वसिते तमो भवति तमस आपोऽप्स्वङ्गुल्या मथिते मथितं शिशिरे शिशिरं मथ्यमानं फेनं भवति फेनादण्डं भवत्यण्डाद्ब्रह्मा भवति ब्रह्मणो वायुः वायोरोङ्कार ॐकारात्सावित्री सावित्र्या गायत्री गायत्र्या लोका भवन्ति। अर्चयन्ति तपः सत्यं मधु क्षरन्ति यद्ध्रुवम्। एतद्धि परमं तपः आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों नम इति।।६।।

य इदमथर्वशिरो ब्राह्मणोऽधीते अश्रोत्रियः श्रोत्रियो भवति अनुपनीत उपनीतो भवति सोऽग्निपूतो भवति स वायुपूतो भवति स सूर्यपूतो भवति स सोमपूतो भवति स सत्यपूतो भवति स सर्वपूतो भवति स सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति स सर्वैर्वेदैरनुध्यातो भवति स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति तेन सर्वैः क्रतुभिरिष्टं भवति गायत्र्याः षष्टिसहस्राणि जप्तानि भवन्ति इतिहासपुराणानां रुद्राणां शतसहस्राणि जप्तानि भवन्ति। प्रणवानामयुतं जप्तं भवति। स चक्षुषः पङ्क्तिं पुनाति। आ सप्तमात्पुरुषयुगान्पुनातीत्याह भगवानथर्वशिरः सकृज्जप्त्वैव शुचिः स पूतः कर्मण्यो भवति। द्वितीयं जप्त्वा गणाधिपत्यमवाप्नोति। तृतीयं जप्त्वैवमेवानुप्रविशत्यों सत्यमों सत्यमों सत्यम्।।७।। ।। इति ।।

तत्पश्चात्रुद्र सूक्त के षोड़श मन्त्रों से भी अभिषेक अथवा पूजन किया जा सकता है।

। हरिः ॐ । भूर्भुव स्व्। नमस्ते रुद्द्र मन्न्यवऽउतोतऽइषवे नम्। बाहुब्भ्यामुतते नम्। १। या ते रुद्द्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी । तया नस्तन्न्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि। २। यामिषुङ्गिरिशन्त हस्त्ते बिभर्ष्यस्तवे। शिवाङ्गिरित्र्र ताङ्कुरुमा हि सी पुरुषञ्जगत्। ३। शिवेन व्वचसा त्त्वा गिरिशाच्छा व्वदामसि। यथा न सर्व्व मिज्जगदयक्ष्म सुमनाऽअसत्। ४। अद्ध्यवोचदधिवक्त्ता प्प्रथमो दैव्व्यो भिषक्। अहींश्च सर्व्वाञ्जम्भयन्त्सर्व्वाश्च्च यातुधान्न्योधराची परासुव।५। असौ यस्ताम्म्रोऽअरुणऽउत बब्भ्रु सुमङ्गल्। ये चौन रुद्द्राऽअ भितो दिक्क्षु त्त्श्रिता सहस्रशोवैषाœ हेडऽईमहे।६। असौ योवसर्प्पति नीलग्ग्रीवो व्विलोहित। उतैनङ्ग्गोपाऽअदृ त्त्श्रन्नदृत्त्श्रन्नुदहार्य्य़ स दृष्ट्टो मृडयाति न। ७। नमोस्त्तु नीलग्ग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे। अथो येऽअस्य सत्त्वानो हन्तेब्भ्यो करन्नम्। ८। प्प्रमुञ्च धन्वनस्त्त्वमुभयोरात्क्न्योर्ज्ज्याम्। याश्च्चते हस्त्तऽइषव परा ता भगवो व्वप। ६। व्विज्ज्यन्धनु कपर्द्दिनो व्विशल्ल्यो बाणवाँ२।ऽउत। अनेश न्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्ग्धि। १०। या ते हेतिर्म्मीढुष्ट्टम हस्त्ते बभूव ते धनु। तयास्म्मा न्विश्श्वत स्त्त्वमयक्ष्मया परिभुज। ११। परि ते धन्न्वनो हेतिरस्म्मान्वृणक्त्तु व्विश्श्वत्। अथो यऽइषुधिस्त्तवारेऽ अस्म्मन्निधेहि तम्। १२। अवतत्त्य धनुष्ट्ट्व सहस्राक्ष शतेषुधे। निशीर्य्य शल्ल्या नाम्मुखा शिवो न् सुमना भव। १३। नमस्त्तऽ आयुधायानातताय धृष्ण्णवे। उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्न्वने। १४। मा नो महान्तमुतमानोऽ अर्ब्भकम्मा नऽउक्क्षन्तमुत मा नऽउक्षितम्। मा नो व्वधी पितरम्मोत मातरम्मा न् प्प्रियास्तन्वो रुद्द्र रीरिष। १५। मा नस्त्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मानोऽअश्श्वे षुरीरिष। मा नो व्वीरान्न्रुद्द्र भामिनो व्वधीर्हविष्म्मन्त सदमित्त्वा हवामहे। १६।

वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गन्धं समर्पयामि। अक्षतान्समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि।

शिवाङ्ग्पूजनम् (गन्धाक्षतपुष्पैः) –

१. ऊँ ईशानाय नमः पादौ पूजयामि ।

२. ऊँ शङ्क्राय नमः जङ्घे पूजयामि ।

३. ऊँ शूलपाणये नमः गुल्फ ौ पूजयामि ।

४. ऊँ शम्भवे नमः कटिं पूजयामि ।

५. ऊँ स्वयम्भुवे नमः गुह्यं पूजयामि ।

६. ऊँ महादेवाय नमः नाभिं पूजयामि ।

७. ऊँ विश्वकर्त्रे नमः उदरं पूजयामि ।

८. ऊँ सर्वतोमुखाय नमः पार्श्वे पूजयामि ।

९. ऊँ स्थाणवे नमः स्तनौ पूजयामि ।

१०. ऊँ नीलकण्ठाय नमः कण्ठं पूजयामि ।

११. ऊँ शिवात्मने नमः मुखं पूजयामि ।

१२. ऊँ त्रिनेत्राय नमः नेत्रे पूजयामि ।

१३. ऊँ नागभूषणाय नमः शिरः पूजयामि ।

१४. ऊँ देवाधिदेवाय नमः सर्वाङ्ग् पूजयामि ।

परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्। नैवेद्यं समर्पयामि। मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुनः आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

शिवजी की आरती –

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्रहारम।

सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।

ऊँ जय शिव ओङ्क्रा हो शिव पार्वती प्यारा

ब्रह्मा विष्णु सदा शिव अद्र्घाङ्गी धारा । १। ऊँ हर हर हर महादेव।

एकानन चतुरानन पञ्चानन राजै।

हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै। २। ऊँ हर हर हर महादेव।

दोयभुज चार चतुर्भुज दशभुज ते सोहै।

तीनो रुप निरखता त्रिभुवनजन मोहै। ३। ऊँ हर हर हर महादेव।

अक्षमाला वनमाला रुण्डमाला धारी।

चन्दन मृगमद चन्दा भाले शुभकारी ।४। ॐ हर हर हर महादेव।

श्वेताम्बर पीताम्बर बाघम्बर अंगे।

सनकादिक प्रभुतादिक भूतादिक संगे। ५। ॐ हर हर हर महादेव।

कर मध्ये कमण्डलु चक्र त्रिशूल धरता।

जगकर्ता जगहर्ता जगपालनकर्ता । ६। ॐ हर हर हर महादेव।

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका।

प्रणवाक्षर ॐ मध्ये ये तीनों एका । ७। ॐ हर हर हर महादेव।

काशी मे विश्वनाथ विराजत नन्दी ब्रह्मचारी।

नित उठ भोग लगावत महिमा अतिभारी। ८। ॐ हर हर हर महादेव।

त्रिगुण स्वामी की आरती जो कोई नर गावे।

भजत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित फ ल पावै। ६। ॐ हर हर हर महादेव।

ॐ जै शिव ओङ्कारा, हो मन भज शिव ॐकारा, हो मन रट शिव ओङ्कारा, हो शिव गलरुण्डन माला, हो शिव ओढ़त मृगछाला, हो शिव पीते भंग प्याला, हो शिव रहते मतवाला, हो शिव पार्वतीप्यारा, हो शिव ऊपर जलधारा, जटा में गङ्ग् विराजत, मस्तक पे चन्द्र विराजत रहते मतवाला। ॐ हर.।

पुष्पाञ्जलिः –

सद्द्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगा।

अस्य होतु प्रदिश्यृतस्य व्वाचि स्वाहाकृत हविरदन्तु देवा।

यऽ आत्क्मदा बलदा यस्य व्विश्वऽउपासते प्रशिषँय्यस्य देवा।

यस्य छायामृतँ य्यस्य मृत्यु कस्म्मै देवाय हविषा व्विधेम।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य् साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्म्महे। स मे कामान् काम कामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः।

ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्त पर्यायीस्यात् सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापराद्र्धात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति। तदप्येष शखोकोभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे। आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वे देवाः सभासद इति।

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्।

सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावा भूमी जनयन् देव एकः।

ॐ एक दन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्। ॐ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्धयै च धीमहि। तन्नो गौरी प्रचोदयात्।

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुंवन्दे जगत्कारणम्,

वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनाम्पतिम्।

वन्दे सूर्य शशाङ्क् वह्नि नयनं वन्दे मुकुन्दप्रियम्,

वन्दे भक्तजनाश्रयञ्च वरदं वन्दे शिवं शङ्कर्म्।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।

त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव।

पापोऽहं पाप कर्माहं पापात्मा पापसम्भवः।

त्राहि मां पार्वतीनाथ सर्वपापहरो भवः।

श्श्कालहर कण्टकहर दुःखहर द्रारिर्द्यहरस्चय

निरावलम्बस्य ममावलम्बं विपाटिताशेषविपत्कदम्बम्।

मदीयपापाचलपातशम्बं प्रवर्ततां वाचि सदैव बम् बम्।

ॐ साङ्ग्गाय सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय

ॐ नमो भगवते रुद्राय नमः। मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

5.6 देवी पञ्चायतन पूजन :–

देवी पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में शिव, नैर्ऋत्यकोण में गणेश, वायव्यकोण में सूर्य तथा मध्य में प्रधानःप में देवी की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए।

१. विष्णु :–

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम।।

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

२. शिव :–

पञ्चवक्त्रं वृषाःढं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम।

खट्वा'धारिणं वन्द्यं शिवमावाहयाम्यहम।।

ऊँ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय शिवतराय च।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः, शिवमावहयामि स्थापयामि।

३. गणेश :–

गजास्य गणनाथत्त्वं सर्वविघ्नविनाशनम।

लम्बोदरं त्रिनेत्राढ्यं आगच्छ गणनायकत्त।।

ऊँ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम। आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।

ऊँ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

४. सूर्य :–

जपाकुसुमस'ाशं काश्यपेयं महाद्युतिम।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्।।

ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः सूर्याय नमः, मध्ये सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।

५. देवी :–

ऊँ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजन :– ॐ नन्दायै नमः। ॐ भगवत्यै नमः। ॐ रक्तदन्तिकायै नमः। ॐ शाकम्भर्यै नमः। ॐ दुर्गायै नमः। ॐ भीमायै नमः। ॐ कालिकायै नमः। ॐ भ्रामर्यै नमः। मध्ये– ॐ शिवदूत्यै नमः। इति गंधादिभिः सम्पूज्य। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

तत्पश्चात्गणपति पञ्चायनत देव की भांति कलश स्थापन से प्रारम्भ करते हुए प्राणप्रतिष्ठा तक पूजन करे।

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम्।।

ॐ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।
ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गादैव्यै नमः, दुर्गाम्आवाहयामि स्थापयामि।

पूजनं कुर्यात्(यथोपचार गणपति की भांति ही आसनपाद्यादि से मन्त्र पुष्पाञ्जलि तक पूजन करे।) –

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) –

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति।१। साब्रवीत् – अहं ब्रह्मस्वःपिणी। मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत्। शून्यं चाशून्यं च ।२। अहमानन्दानानन्दौ। अहं विज्ञानाविज्ञाने। अहं ब्रह्माब्रह्मणी वेदितव्ये। अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि। अहमखिलं जगत्।३। वेदोऽहमवेदोऽहम्। विद्याहमविद्याहम्। अजाहमनजाहम्। अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम्।४। अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि। अहमादि–त्यैरुत विश्वदेवैः। अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि। अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ।५। अहं सोमं त्वष्ट्ारं पूषणं भगं दधामि। अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि। ६। अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते। अहं राष्ट्री सङ्ग्मनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्। अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे। य एवं वेद। स दैवीं सम्पदमाप्रोति।७। ते देवा अब्रुवन्– नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्। ८। तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं, वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्ट्ाम्। दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः। ९। देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वःपाः पशवो वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु। १०। कालरात्रिं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम्। सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम्। ११। महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि। तन्नो देवी प्रचोदयात्।१२। अदितिर्ह्यजनिष्ट् दक्ष या दुहिता तव। तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः। १३। कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः। पुनर्गुहा सकला मायया च पुःच्यैषा विश्वमातादिविद्योम्। १४। एषाऽऽत्मशक्तिः। एषा विश्वमोहिनी। पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा एषा श्री महाविद्या एवं वेद स शोकं तरति। १५। नमस्ते अस्तु भगवति मातरस्मान् पाहि सर्वतः। १६। सैषाष्टौ वसवः। सैषैकादश रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः। सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च। सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्घाः। सैषा सत्त्वरजस्तमांसि। सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्रःपिणी। सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः। सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि। कलाकाष्ठ्ादिका–लःपिणी। तामहं प्रणौमि नित्यम्। पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्ति–प्रदायिनीम्। अनन्तां विजयां शुद्घां शरण्यां शिवदां शिवाम्।१७। वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम्। अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम्। १८। एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः शुद्घचेतसः। ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः।१९। वाङ्माया ब्रह्मसूस्त–स्मात् षष्ठ्ं वक्त्रसमन्वितम्। सूर्योऽवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्ताष्ट्ात्तृतीयकः। नारायणेन सम्मिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः। विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः।२०। हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातः सूर्यसम–प्रभाम्। पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम्।

त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे।२१। नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीम्। महादुर्गप्रशमनीं महाकारुण्यरुपिणीम्।२२। यस्याः स्वःपं ब्रह्मा–दयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया। यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता। यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या। यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा। एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका। एकैव विश्वःपिणी तस्मादुच्यते नैका। अत एवोच्यते अज्ञेयानन्ता–लक्ष्याजैका नैकेति।२३। मन्त्राणां मातृकादेवी शब्दानां ज्ञानःपिणी। ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी। यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता। २४। तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम्। नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम्। २५। इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति। इदमथर्वशीर्ष–मज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति शतलक्षं प्रजप्त्वापि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति। शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः। दशवारं पठेद् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते। महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः।२६। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति। निशीथे तुरीयसंध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति। नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासांनिध्यं भवति। प्राणप्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति। भौमाश्विन्यां महादेवीसंनिधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति। स महामृत्युं तरति य एवं वेद। इत्युपनिषत्।

नोट :– श्रीसूक्त से भी अभिषेक अथवा यथोपचार पूजन किया जा सकता है।

अथ श्रीसूक्तम् –

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्त्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वहत्त।।१त्त।। तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्त्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्त्।।२त्त।। अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम्त्। श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्त्।।३त्त।। कां सोस्मितां ुहरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्त्। पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोप ह्वये श्रियम्त्।।४त्त।। चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्त्। तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्ये ऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ।।५त्त।। आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वःत्त। तस्य फलानि तपसा नुदन्तु या अन्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मीःत्त।।६त्त।। उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सहत्त। प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मेत्त।।७त्त।। क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्त्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्त।।८त्त।। गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्त्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्त्।।९त्त।। मनसः काममाकूत वाचः सत्यमशीमहित्त। पशूनां ःपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशःत्त।।१०त्त।। कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दमत्त। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्त्।।११त्त।। आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहेत्त। नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुलेत्त।।१२त्त।। आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंलां पद्ममालिनीम्त्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वहत्त।।१३त्त।। आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्त्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वहत्त।।१४त्त।। तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्त्। यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान्विन्देयं पुरुषानहम्त्।।१५त्त।। यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्त्। सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्।।१६ ।।

वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गन्धं समर्पयामि। अक्षतान्समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि।

अङ्ग्पूजनम् (गन्धाक्षतपुष्पैः) –

ह्रीं दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि। ह्रीं मंगलायै नमः गुल्फौ पूजयामि। ह्रीं भगवत्यै नमः जंघे पूजयामि। ह्रीं कौमार्यै नमः जानुनी पूजयामि। ह्रीं वागीश्वर्यै नमः ऊः पूजयामि। ह्रीं वरदायै नमः कटिं पूजयामि। ह्रीं

पद्माकरवासिन्यै नमः स्तनौ पूजयामि। ह्रीं महिषमर्दिन्यै नमः कण्ठं पूजयामि। ह्रीं उमासुतायै नमः स्कन्धौ पूजयामि। ह्रीं इन्द्राण्यै नमः भुजौ पूजयामि। ह्रीं गौर्यै नमः हस्तौ पूजयामि। ह्रीं मोहवत्यै नमः मुखं पूजयामि। ह्रीं शिवायै नमः कर्णौ पूजयामि। ह्रीं अन्नपूर्णायै नमः नेत्रे पूजयामि। ह्रीं कमलायै नमः ललाटं पूजयामि। ह्रीं महालक्ष्म्यै नमः सर्वांगं पूजयामि। देव्या दक्षिणे सिंहं पूजयामि। वामे महिषं पूजयामि।

परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्। नैवेद्यं समर्पयामि। मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुनः आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

अम्बे मैय्या की आरती :—

जय अम्बे गौरी, मैय्या जय श्यामा गौरी। तुमको निशिदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिवजी।

माँग सिन्दूर विराजत, टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोऊ नैना, चन्द्रवदन नीको।

कनकसमान कलेवर, रक्ताम्बर राजै। रक्तपुष्पगले माला, कण्ठन पर साजै।

केहरिवाहन राजत, खडग खप्परधारी। सुर—नर—मुनिजन सेवत, तिनके दुःखहारी।

कानन कुण्ड़लशोभित, नासाग्रेमोती। कोटिकचन्द्र दिवाकर, राजत सम ज्योति।

शुम्भनिशुम्भ विड़ारे, महिषासुरघाती। धूम्रविलोचन नैना, निशिदिन`मदमाती।

चण्ड़मुण्ड़ संहारे, शोणितबीज हरे। मधुकैटभ दोऊ मारे, सुरभयहीन करे।

ब्रह्माणी रु द्राणी, तुम कमलारानी। आगमनिगम बखानी, तुमशिव पटरानी।

चौंसठयोगिनी गावत, नृत्यकरत भैरों। बाजत तालमृदङ्गा अः बाजत डमः।

तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। भक्तन की दुःख हरता, सुख सम्पत्ति करता।

भुजाचार अतिशोभित, वरमुद्राधारी। मनवाञ्छित फलपावै, सेवत नरनारी।

कञ्चनथाल विराजत, अगर कर्पूरबाती। श्रीमालकेतु में राजत कोटिरतन ज्योति।

माँ अम्बेभवानी की आरती, जो कोई नर गावे। कहत शिवानन्दस्वामी, सुखसम्पत्ति पावै।

पुष्पाञ्जलिः —

गौर्याद्याः सुकलाः सदाशिवनुतामाङ्गल्यमूलाः शिवाः,

देवानामपि मातरः किमु मनुष्याणां सदा सौख्यदाः।

श्रीराद्या घृतमातरौ गणपतिं क्रौड़ेर्वहन्योभृशम्,

तासां पादनवाम्बुजन्य सुचिरं पुष्पाञ्जलीं राजताम्।।१।।

5.7 सूर्य पञ्चायतन पूजन

सूर्य पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में शिव, अग्निकोण में गणेश, नैर्ऋत्यकोण में विष्णु, वायव्यकोण में देवी तथा मध्य में प्रधानः में सूर्य की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए।

ऊँ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजन :– ऊँ दीप्ताय नमः, ऊँ सूक्ष्मायै नमः, ऊँ जयायै नमः, ऊँ भद्रायै नमः, ऊँ विभूत्यै नमः, ऊँ विमलायै नमः, ऊँ अघोराय नमः, ऊँ विद्युताय नमः, ऊँ सर्वतोमुख्यै नमः।। (गन्धाक्षत–पुष्प से पूजन करे)

तत्पश्चात्गणपति पञ्चायनत देव की भांति कलश स्थापन से प्रारम्भ करते हुए प्राणप्रतिष्ठा तक पूजन करे।

जपाकुसुमस'ाशं काश्यपेयं महाद्युतिम।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम्।।

ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः सूर्याय नमः, सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।

पूजनं कुर्यात्(यथोपचार गणपति की भांति ही आसनपाद्यादि से मन्त्र पुष्पाञ्जलि तक पूजन करे।) –

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) –

हरिः ऊँ।। षट्स्वराःढेन बीजेन षडङ्गं रक्ताम्बुजसंस्थितम्। सप्ताश्वरथिनं हिरण्यवर्णं चतुर्भुजं पद्मद्वयाभयवरदहस्तं भानवे मृत्योर्मां पाहि भ्राजिष्णवे विश्वहेतवे नमः। सूर्याद् भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु। सूर्ये लयं प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोऽहमेव च। चक्षुर्नो देवः सविता चक्षुर्न उत पर्वतः। चक्षुर्धाता दधातु नः। आदित्याय विद्महे सहस्रकिरणाय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्।

सविता पश्चात्तात्सविता पुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सविताधरात्तात्। सविता नः सुवतुसर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः।

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म घृणिरिति द्वे अक्षरे। सूर्य इत्यक्षरद्वयम्। आदित्य इति त्रीण्यक्षराणि। एतस्यैव सूर्यस्याष्टाक्षरों मनुः।

यः सदाहरहर्जपति स वै ब्राह्मणो भवति। स वै ब्राह्मणो भवति। सूर्याभिमुखो जप्त्वा महाव्याधिभयात्प्रमुच्यते। अलक्ष्मीर्नश्यति। अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति। अगम्यागमनात्पूतो भवति। पतितसम्भाषणात्पूतो भवति। असत्सम्भाषणातपूतो भवति। मध्याह्ने सूर्याभिमुखः पठेत्। सद्योत्पन्नपञ्चमहापातकात्प्रमुच्यते। सैषां सावित्रीं विद्यां न किञ्चिदपि न कस्मैचित्प्रशंसयेत्। य एतां महाभागः प्रातः पठति स भाग्यवाञ्जायते। पशून्विन्दति। वेदार्थाँल्लभते। त्रिकालमेतज्जप्त्वा क्रतुशतफलमवाप्नोति। यो हस्तादित्ये जपति स महामृत्युं तरति। स महामृत्युं तरति। य एवं वेद। इति।।

तत्पश्चात्मैत्रसूक्त के षोड़श मन्त्रों से भी अभिषेक अथवा पूजन किया जा सकता है।

। हरिः ऊँ । विभ्राड्बृहत्पिबतु सोम्यम्मद्ध्वायुर्द्दधद्यज्ञपता—वविह्रुतम्। व्वातजूतो योऽअभिरक्षति त्त्मना प्रजा पुपोष पुरुधा विराजति। १। उदुत्त्यञ्जातवेदसन्देवँ व्वहन्ति केतव्। दृदृशेव्विश्श्वाय सूर्य्यम्। २। येना पावक चक्षसा भुरण्ण्यन्तञ्जनाँ २।ऽ अनु। त्वँ व्वरुणपश्श्यसि। ३। दैव्व्यावद्ध्वर्य्यूऽआगत रथेन सूर्य्यत्त्वचा। मद्ध्वा यज्ञ समञ्जाथे। तम्प्रत्क्रथायँव्वेनश्च्चित्रन्देवानाम्। ४। तम्प्रत्क्रथा पूर्व्वथा व्विश्श्वथेमथा ज्ज्येष्—ता तिम्बर्हिषदœ स्वर्व्विदम्। प्रतीचीनँ व्वृजनन्दोहसे धुनिमा शुञ्जयन्तमनु यासुव्वद्र्धसे। ५। अयँव्वेनश्च्चोदयत्त्पृश्निगर्ब्भा ज्ज्योतिर्ज्जरायू रजसो विमाने। इममपाœ सङ्ग्मे सूर्य्यस्य शिशुन्न विप्प्रा मतिभी रिहन्ति। ६। चित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्त्रस्य व्वरुण स्याग्ग्रे। आप्प्रा द्द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्ष सूर्य्यऽआत्क्मा जगतस्त स्त्थुषश्च्च। ७। आ नऽइडाभिर्व्विदथे सुशस्ति विश्श्वानर सविता देवऽएतु। अपि यथा युवानो मत्त्सथा नो विश्श्वञ्जगदभि पित्त्वे मनीषा। ८।यदद्द्य कच्च्व वृत्रहन्नुदगाऽ अभि सूर्य्य। सर्व्वन्तदिन्द्र ते व्वशे। ६। तरणिर्व्विश्श्वदर्शतो ज्ज्योतिष्कृदसि सूर्य्य। विश्श्वमाभासि रोचनम्। १०। तत्सूर्य्यस्य देवत्त्वन्तन्महित्त्वम्मद्ध्या कर्त्तोर्व्वितत सञ्जभार। यदेदयुक्त हरित् सधस्त्थादाद्द्रात्त्री व्वासस्तनुते सिमस्मै। ११। तन्मित्त्रस्य व्वरुणस्याभिचक्क्षे सूर्य्यो :पङ्कृणुते द्द्योरुपस्त्थे। अनन्तमन्न्यद्द्रुशदस्य पाज् कृ ष्ण्ण—मन्न्यद्घरित सम्भरन्ति। १२। बण्णमहाँ २।ऽ असि सूर्य्य बडादित्त्य महाँ २।ऽअसि। महस्त्ते सतो महिमा पनस्यतेद्घा देव महाँ २।ऽ असि। १३। बट्ट्सूर्य्य त्त्श्रवसा महाँ २।ऽ असि सत्रा देव महाँ २।ऽ असि। मह्ना देवानामसुर्य्य़ पुरोहितो व्विभु ज्ज्योतिरदाब्भ्यम्।१४। श्रायन्तऽइव सूर्य्यँ विश्श्वेदिन्द्रस्य भक्क्षत। व्वसूनि जाते जनमानऽओजसा प्रति भागन्न दीधिम। १५। अद्द्या देवाऽउदिता सूर्य्यस्य निर हस पिपृता निरवद्द्यात्। तन्नो मित्त्रो व्वरुणो मामहन्तामदिति सिन्धु पृथिवीऽउत द्द्यौ। १६। आ कृष्ण्णेन रजसा व्वर्त्तमानो निवेशयन्न मृतम्मत्र्यञ्च। हिरण्ण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्श्यन्। १७।

वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गन्धं समर्पयामि। अक्षतान्समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि

अङ्ग्पूजनम् (गन्धाक्षतपुष्पैः) –

ऊँ आदित्याय पादौ पूजयामि, ऊँ दिवाकराय नमः गुल्फौ पूजयामि, ऊँ भास्कराय नमः जङ्घे पूजयामि, ऊँ प्रभाकराय नमः जानुनि पूजयामि, ऊँ सहस्रांश्वे नमः ऊरु पूजयामि, ऊँ पूष्णे नमः गुह्यं पूजयामि, ऊँ त्रिलोकेशाय नमः कटिं पूजयामि, ऊँ हरिदश्वाय नमः नाभिं पूजयामि, ऊँ रवये नमः उदरं पूजयामि, ऊँ दिवाकराय नमः हृदयं पूजयामि, ऊँ दशात्मकाय नमः स्कन्धौ पूजयामि, ऊँ अहस्कराय नमः हस्तौ पूजयामि, ऊँ त्रयीमूत्तये नमः कण्ठं पूजयामि, ऊँ सूर्याय नमः मुखं पूजयामि, ऊँ ब्रह्मःपाय नमः कर्णौ पूजयामि, ऊँ महेश्वराय नमः नेत्रं पूजयामि, ऊँ विष्णवे नमः ललाटं पूजयामि, ऊँ भानवे नमः शिरः पूजयामि, ऊँ दिवाकराय मनः सर्वाङ्गं पूजयामि।

परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्। नैवेद्यं समर्पयामि। मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुनः आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

आरति :–

ऊँ अग्निर्देवता व्वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता व्वसवो देवता रुद्द्रा

देवतादित्त्या देवता मरुतो देवता विश्श्वे देवा देवता बृहस्प्पतिर्द्देवतेन्द्रो

देवता व्वरुणो देवता।

पुष्पाञ्जलि :–

ऊँ ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्तीनारायण सरसिजासनसन्निविष्ट।

केयूरवान्मकरकुण्डलवान्किरीटीहारि हिरण्यमय वपुद्धृतशङ्खचक्रः।।

5.8 विष्णु पञ्चायतन पूजन :–

विष्णु पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में शिव, अग्निकोण में गणेश, नैर्ऋत्यकोण में सूर्य, वायव्यकोण में देवी तथा मध्य में प्रधानःप में विष्णु की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए।

१. शिव :–

पञ्चवक्त्रं वृषाःढं प्रतिवक्त्रं त्रिलोचनम्त्।

खट्वा'धारिणं वन्द्यं शिवमावाहयाम्यहम्त्।।

ऊँ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय शिवतराय च।।

ऊँ भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः, शिवमावहयामि स्थापयामि।

२. गणेश :–

गजास्य गणनाथत्त्वं सर्वविघ्नविनाशनम्त्।

लम्बोदरं त्रिनेत्राढ्यं आगच्छ गणनायक!त्।।

ऊँ गणानान्त्वा गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपति हवामहे निधीनान्त्वा निधिपति हवामहे व्वसोमम। आहम् जानिगर्ब्भधमा त्त्वमजासिगर्ब्भधम्।

ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि स्थापयामि।

३. सूर्य :–

जपाकुसुमस'ाशं काश्यपेयं महाद्युतिम।

तमोऽरिं सर्वपापघ्नं सूर्यमावाहयाम्यहम।।

ॐ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्याय नमः, मध्ये सूर्यमावाहयामि स्थापयामि।

४. देवी :–

पत्तने नगरे ग्रामे विपिने पर्वते गृहे।

नानाजाति कुलेशानीं दुर्गामावाहयाम्यहम।।

ॐ अम्बेऽअम्बिके म्बालिकेनमानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्।।
ॐ भूर्भुवः स्वः दुर्गादैव्यै नमः, दुर्गाम्ावाहयामि स्थापयामि।

५. विष्णु :– ॐ

ॐ मण्डूकादिपीठदेवताभ्यो नमः। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

नवशक्ति पूजन :– ॐ विमलायै नमः, ॐ उत्कर्षिण्यै नमः, ॐ ज्ञानायै नमः, ॐ त्रियायै नमः, ॐ योगायै नमः, ॐ प्रभव्यै नमः, ॐ सत्यायै नमः, ॐ ईशानायै नमः, ॐ अनुग्रहायै नमः। (गन्धाक्षत–पुष्प से पूजन करे)

तत्पश्चात्गणपति पञ्चायनत देव की भांति कलश स्थापन से प्रारम्भ करते हुए प्राणप्रतिष्ठा तक पूजन करे।

क्रमात्कौमोदकी पद्मशङ्कचक्रधरं विभुम्त्।

भक्तकल्पद्रुमं शान्तं विष्णुमावाहयाम्यहम्त्।।

ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः, विष्णुमावाहयामि स्थापयामि।

पूजनं कुर्यात् (उपलब्ध सामग्री के अनुसार गणपति की भांति ही आसनपाद्यादि से मन्त्र पुष्पाञ्जलि तक पूजन करे।) –

आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। पादयोः पाद्यं समर्पयामि। हस्तयोः अर्घ्यं समर्पयामि। मुखे आचमनं समर्पयामि। सर्वांगे स्नानं समर्पयामि। मिलितपंचामृतस्नानं समर्पयामि। शुद्धोदक स्नानं समर्पयामि।

अभिषेकः (गन्धादिभिः सम्पूज्य) –

ॐ अथ पुरुषो ह वै नारायणोऽकामयत प्रजाः सृजेयेति। नारायणात्प्राणो जायते मनः सर्वेन्द्रियाणि च। खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी। नारायणाद्ब्रह्मा जायते। नारायणाद्रुद्रो जायते। नारायणादिन्द्रो जायते। नारायणात्प्रजापतिः प्रजायते। नारायणाद्द्वादशादित्या रुद्रा वसवः सर्वाणि छन्दांसि नारायणादेव समुत्पद्यन्ते। नारायणात्प्रवर्तन्ते। नारायणे प्रलीयन्ते। एतदृग्वेदशिरोऽधीते।।१।।

अथ नित्यो नारायणः। ब्रह्मा नारायणः। शिवश्च नारायणः। शक्रश्च नारायणः। कालश्च नारायणः। दिशश्च नारायणः। विदिशश्च नारायणः। ऊर्ध्वं च नारायणः। अधश्च नारायणः। अन्तर्बहिश्च नारायणः। नारायण एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्। निष्कलङ्को निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणो न द्वितीयोऽस्ति कश्चित्। य एवं वेद स विष्णुरेव भवति स विष्णुरेव भवति। एतद्यजुर्वेदशिरोऽधीते।।२।।

ओमित्यग्रे व्याहरेत्। नम इति पश्चात्। नारायणायेत्युपरिष्टात्। ओमित्येकाक्षरम्। नम इति द्वे अक्षरे। नारायणायेति पञ्चाक्षराणि। एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदम्। यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्येति। अनपब्रुवः सर्वमायुरेति। विन्दते प्राजापत्यं रायस्पोषं गौपत्यं ततोऽमृतत्वमश्नुते ततोऽमृतत्वमश्नुत इति। एतत्सामवेदशिरोऽधीते।।३।।

प्रत्यगानन्दं ब्रह्मपुरुषं प्रणवस्वःपम्। अकार उकारो मकर इति। ता अनेकधा समभवत्तदेतदोमिति। यमुक्त्वा मुच्यते योगी जन्मसंसारबन्धनात्। ॐ नमो नारायणायेति मन्त्रोपासको वैकुण्ठभुवनं गमिष्यति। तदिदं पुण्डरीकं विज्ञानघनं तस्मात्तडिदाभमात्रम्। ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनः। ब्रह्मण्यः पुण्डरीकाक्षो ब्रह्मण्यो विष्णुरच्युत इति। सर्वभूतस्थमेकं वै नारायणं कारणपुरुषमकारणं परं ब्रह्मोम्। एतदथर्वशिरोऽधीते।।४।।

प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। तत्सायं प्रातरधीयानः पापोऽपापो भवति। मध्यन्दिनमादित्याभिमुखोऽधीयानः पञ्चमहापातकोपपातकात्प्रमुच्यते। सर्ववेदपारायणपुण्यं लभते। नारायणसायुज्यमवाप्नोति श्रीमन्नारायणसायुज्यमवाप्नोति य एवं वेद।।५।। इति।।

तत्पश्चात्पुरुषसूक्त के षोड़श मन्त्रों से भी अभिषेक अथवा पूजन किया जा सकता है।

। हरिः ॐ । सहस्रशीर्षा पुरुष सहस्राक्ष सहस्रपात। सभूमि सर्व्वत स्पृत्त्वात्यतिष्–द्दशाङ्गुलम्। १। पुरुषऽएवेद सर्व्वँ य्यद्भूतँ य्यच्च भाव्यम् । उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति। २। एतावानस्य महिमातो ज्ज्यायाँश्च्च पूरुष । पादोस्य व्विश्श्वाभूतानि त्त्रिपादस्यामृतन्दिवि। ३। त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुष पादोस्येहाभवत्पुन् । ततो व्विष्ष्वङ्ङ्व्यक्क्रामत्साशनानशनेऽअभि। ४। ततो व्विराडजायत व्विराजोऽअधिपूरुष। सजातो ऽअत्त्यरिच्च्यत पश्च्चाद्भूमिमथो पुर । ५। तस्म्माद्द्यज्ञात्त्सर्व्वहुत सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम्। पशूँस्ताँश्चक्क्रे व्वायव्व्यानारण्ण्या ग्ग्राम्म्याश्च ये। ६। तस्म्माद्यज्ञात्त्सर्व्वहुतऽऋच सामानि जज्ञिरे। छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्म्माद्द्यजुस्त्तस्म्मादजायत। ७। तस्म्मादश्श्वाऽअजायन्त ये के चोभयादत। गावो ह जज्ञिरे तस्म्मात्तस्म्माज्जाताऽ अजावय् । ८। तँय्यज्ञम्बर्हिषि प्प्रौक्क्षन्न्पुरुषञ्जातमग्ग्रत। तेन देवाऽअयजन्त साद्धयाऽऋषयश्च्च ये। ९। यत्पुरुषँ व्व्यदधु कतिधा व्व्यकल्प्पयन्। मुखङ्किमस्यासी त्त्किम्बाहू किमू पादाऽउच्च्येते। १०। ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्न्य् कृत । ऊः तदस्य य्द्वैश्श्य् पद्भ्याꣳ शूद्द्रोऽ अजायत।११। चन्द्रमा

मनसो जातश्च्वक्षो सूर्य्योऽ अजायत। श्रोत्त्राद्वायुश्च्व प्प्राणश्च्व मुखादग्निरजायत। १२। नाब्भ्याऽ आसीदन्तरिक्ष शीर्ष्णो द्यौ समवर्त्तत। पद्भ्या म्भूमिर्दिश श्रोत्त्रात्तथा लोका २ँ। ऽअकल्प्पयन्।१३। यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। व्वसन्तो स्यासी दाज्ज्यङ्ग्रीष्मऽइध्म शरद्घवि ।१४। सप्प्तास्यासन्परिधयस्त्रि सप्प्तसमिध्कृता। देवा यद्द्यज्ञन्तन्वानाऽ अबध्नन्पुरुषम्पशुम्।१५। यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्प्रथमान्यासन्। तेहनाकम्महिमान् सचन्त यत्रपूर्व्वे साद्ध्या सन्ति देवा। १६।

वस्त्रं समर्पयामि। यज्ञोपवीतं। वस्त्रयज्ञोपवीतान्ते आचमनं समर्पयामि। गन्धं समर्पयामि। अक्षतान्समर्पयामि। पुष्पमालां समर्पयामि।

अङ्ग्पूजनम् (गन्धाक्षतपुष्पैः) –

ऊँ दामोदरायै नमः पादौ पूजयामि, ऊँ माधवाय नमः जानुनिं पूजयामि, ऊँ कामपतये नमः गुह्यं पूजयामि, ऊँ वामनाय नमः कटिं पूजयामि, ऊँ पद्मनाभाय नमः नाभिं पूजयामि, ऊँ विश्वमूर्त्तये नमः उदरं पूजयामि, ऊँ ज्ञानगम्याय नमः हृदयं पूजयामि, ऊँ श्रीकण्ठं नमः कण्ठं पूजयामि, ऊँ सहस्रबाहवे नमः बाहौ पूजयामि, ऊँ योगिने नमः नेत्रं पूजयामि, ऊँ उरगाय नमः ललाट पूजयामि, ऊँ सुरेश्वराय नमः नासिका पूजयामि, श्रवणेशाय नमः कर्णौ पूजयामि, ऊँ सर्वकर्मप्रदाय नमः शिखा पूजयामि, ऊँ सहस्रशीर्षे नमः शिरः पूजयामि, ऊँ सर्वस्वःपिणे नमः सर्वाङ्ग पूजयामि। (गन्धाक्षत–पुष्प से पूजन करे)

परिमलद्रव्याणि समर्पयामि। सुगन्धिद्रव्यं समर्पयामि। धूपं आघ्रापयामि। दीपं दर्शयामि। हस्तप्रक्षालनम्। नैवेद्यं समर्पयामि। मध्ये आचमनं समर्पयामि। फलं समर्पयामि। पुनः आचमनं समर्पयामि। ताम्बूलं समर्पयामि। द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

आरति :–

ऊँ जय जगदीश हरे प्रभु! जय जगदीश हरे।

भक्तजनों के सङ्कट क्षण में दूर करे। ऊँ।

जो ध्यावे फलपावै, दुःख विनसै मनका। प्रभु।

सुख सम्पत्तिघर आवे, कष्टमिटे तन का। ऊँ।

मात–पिता तुम मेरे, शरणगहूँ किसकी। प्रभु।

तुमबिन और न दूजा, आस करुँ किसकी। ऊँ।

तुम पूरण परमात्मा, तुम अन्तर्यामी। प्रभु।

पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी। ऊँ।

तुम कःणा के सागर, तुम पालनकर्त्ता। प्रभु।

मैं मूरख खलकामी, कृपाकरो भर्त्ता। ऊँ।

तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति। प्रभु।

किसविधि मिलूँ दयामय! तुमको मै कुमति। ऊँ।

दीनबन्धु दुःखहर्त्ता तुम ठाकुर मेरे। प्रभु।

अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे। ऊँ।

विषय विकार मिटाओ, पापहरो देवा। प्रभु।

श्रद्घाभक्ति बढ़ाओ, सन्तनपद सेवा। ऊँ।

तन, मन, धन सबकुछ है तेरा।

तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा। ऊँ।

श्रीजगदीशस्वामीकी आरती जो कोई नर गावे,

कहत शिवानन्द स्वामी मनवाञ्छित फलपावै। ऊँ।

पुष्पाञ्जलि :–

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्,

विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।

लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,

वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।।

इस प्रकार सभी देवताओं का पूजन करके अक्षत पुष्प हाथ में लेकर निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण करे :–

पत्रं पुष्पं फलं तोयं, रत्नानिविविधानि च। गृहाणार्घ्यं मयादत्तं देहि मे वाञ्छितं फलं। %पं देहि जयं देहि, भाग्यं भगवन् देहि मे। पुत्रान देहि धनं देहि, सर्वान् कामांश्च देहि मे। फलेन फलितं सर्वं त्रैलाक्यं सचराचरम्। फलस्यार्घ्यप्रदानेन सफलाः सन्तु मनोरथाः।

निम्न मन्त्रों से अक्षप पुष्प समर्पित करे :–

ऊँ साङ्गाय सायुधाय सावाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय। ऊँ नमो .... नमः। मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

प्रदक्षिणा :– यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च।

तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे। (भगवान्‌शिव की आधी परिक्रमा, देवी की एक परिक्रमा, विनायक की तीन परिक्रमा, विष्णु की चार तथा सूर्य की सात परिक्रमा करनी चाहिए।)

तत्पश्चात्‌देवताओं को पञ्चाङ्ग–प्रणाम करते हुए उनका विसर्जन करे :–

विसर्जन :– यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामकीम्। इष्टकाम समृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च लक्ष्मी कुबेरौ विहाय।

इसके बाद अपने परिवार वालों के साथ निम्न मन्त्र द्वारा भगवान को नमस्कार करें –

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

5.8 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्‌छात्रों को पञ्चमहाभूतों (पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु, आकाश) पर आधारित पञ्चदेवों (सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव और विष्णु) की उपासना के महत्त्व का ज्ञान अर्जित होगा। प्रत्येक पूजन कर्म ने इन पञ्चदेवों का पूजन परम आवश्यक है। इस इकाई में इन्हीं का विशेष पूजन साङ्गोपाङ्ग दिया गया है। पञ्चदेवों का अथर्वशीर्ष, वैदिक सूक्तों का भी इस इकाई में समावेश किया गया है, जिससे छात्र पञ्चदेव पूजन को विधिवित्‌स्वयं के स्तर पर सम्पादित कर सकेंगे।

5.10 शब्दावली

१. पञ्च	=	पाँच
२. आवाहन	=	देवों का पूजन में आवाहन
३. पञ्चायतन	=	समूह के पाँच देवता
४. अग्न्युत्तारण	=	मूर्ति को अग्नि में तपाना
५. अभिषेक	=	देवप्रतिमा को स्नान कराना
६. ताम्बूल	=	पान

5.11 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : पञ्चमहाभूत कौनसे है ?

उत्तर : पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु तथा आकाश।

प्रश्न – २ : पञ्चदेवों के नाम बताईये ?

उत्तर : सूर्य, गणेश, दुर्गा, शिव और विष्णु।

प्रश्न – ३ : गणपति पञ्चायन में किस देव की किस दिशा में स्थापना होती है ?

उत्तर : गणेश पंचायतन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में शिव, नैर्ऋत्यकोण में सूर्य तथ वायव्य कोण में देवी की स्थापना करते मध्य में प्रधान:प में गणपति की स्थापना करते हुए यथोपचार पूजन करना चाहिए।

प्रश्न – ४ : देवी के पूजन में किस अथर्वशीर्ष का पाठ करना चाहिए् ?

उत्तर : देवी के पूजन में देव्युथर्वशीर्ष का पाठ करना चाहिए।

प्रश्न – ५ : शिव पञ्चायन में किस देव की किस दिशा में स्थापना होती है ?

उत्तर : शिव पञ्चायतन पूजन में ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में सूर्य, नैर्ऋत्यकोण में गणेश, वायव्यकोण में देवी तथा मध्य में प्रधान:प में शिव की स्थापन करते हुए पूजन करना चाहिए।

5.12 लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : पञ्चायतन देवताओं में पञ्चायत का क्रम बताइये ?

प्रश्न – २ : गणेशाङ्गपूजन बताइये ?

प्रश्न – ३ : पञ्चदेवों का नवशक्ति पूजन बताइये ?

प्रश्न – ४ : श्रीसूक्त के मन्त्रों का उल्लेख कीजिए ?

प्रश्न – ५ : पुरुषसूक्त के मन्त्रों का उल्लेख कीजिए ?

5.13 सन्दर्भ ग्रन्थ –

१. धर्मशास्त्र का इतिहास

लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे

प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

२. नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,

प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

३. अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा

संकलन ग्रन्थ

प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

४. कर्मठगुरुः

लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

५. हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

६. शुक्लयजुर्वेदीय रुद्राष्टध्यायी

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

७. पञ्चदेव अथर्वशीर्ष संग्रह

प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

८. अनुष्ठाप्रकाश

सम्पादक : चतुर्थीलाल शर्मा

प्रकाशक :– खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई।

इकाई –6

बलि वैश्यदेव

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 बलिवैश्यदेव
6.4 देवयज्ञ
6.5 भूतयज्ञ
6.6 पितृयज्ञ
6.7 मनुष्य यज्ञ
6.8 पंचबलि–विधि
6.8.1 गाय हेतु बलि
6.8.2 श्वान हेतु बलि
6.8.3 काक हेतु बलि
6.8.4 देवताओ हेतु बलि
6.8.5 पिपीलिका हेतु बलि
6.9 भोजन विधि
6.9.1 पाचक शुद्धि
6.9.2 भाव शुद्धि
6.9.3 पात्र शुद्धि
6.9.4 पात्र संख्या
6.9.5 कच्चा पक्का भोजन
6.9.6 भोजन विधि
6.9.7 पञ्चाहुति
6.9.8 प्रार्थना
6.9.9 सांध्यदीप
6.10 सारांश

6.11 शब्दावली

6.12 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

6.13 लघुत्तरात्मक प्रश्न

6.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

6.1 प्रस्तावना :–

इसकी पूर्व ईकाई में अपने पंचदेवों की उपासना विधि का अध्ययन किया है। प्रस्तुत ईकाई में बलि–वैश्यदेव का प्रयोजन एवं उसकी विधियों सम्यक् अध्ययन आपके अध्ययनार्थ प्रस्तुत है। बलिवैश्यदेव मनुष्य के नित्यक्रमों का एक प्रमुख अंग है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः नित्य दिनचार्य में यज्ञ एवं भोजनविधि का महत्त्वपूर्ण क्रम है। सभी जीवों के लिए भोजन का प्रबन्ध एवं समाज में मानवता का उत्थापन प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व है। इसी क्रम में नित्यकर्म का महत्वपूर्ण अंग है बलिवैश्यदेव और भोजनविधि। कहा भी है – **भारीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।**

ये पाँच महायज्ञ है – 1 ब्रह्मयज्ञ, 2. देवयज्ञ, 3. भूतयज्ञ, 4. पितृयज्ञ और 5. मनुष्ययज्ञ। ब्रह्मयज्ञ को ऋषियज्ञ और स्वाध्यायोयज्ञ भी कहते है। मुख्यतः प्रतिदिन वेदों का स्वाध्याय करने से ब्रह्मयज्ञ सम्पन्न होता है, परन्तु याज्ञवल्क्य की सम्मति के अनुसार वेदो के अतिरिक्त पुराण, महाभारत, आध्यात्मविद्या, गीता एवं उपनिषदादि का पाठ अथवा श्रवण करने से भी ब्रह्मयज्ञ सम्पन्न होता है। यह सभी कार्य न हो सके तो गायत्री–जपमात्र से भी ब्रह्मयज्ञ के पालन से द्विज ऋषि–ऋण से मुक्त होकर ज्ञान प्राप्त करता है और इस प्रकार वह सहज ही परमात्मप्राप्ति का अधिकारी हो जाता है। प्रातः कालिक होम के पश्चात् तर्पण के पहले या बलिवैश्यदेव के बाद ब्रह्मयज्ञ करना चाहिए। यथा –

> यैं श्रुतिजपः प्रोक्तो ब्रह्मयज्ञस्तु स स्मृतः।
>
> स चार्वाक्तर्पणात् कार्य पैंद्वा प्रातराहुतेः।।
>
> वैश्यदेवासाने वा नान्यत्र ह्मनिमित्तकान्।।

अतः इस ईकाई के अध्ययन के बाद आप पंचमाहयज्ञों का संक्षिप्त सम्पादन एवं नित्य कर्म में बलि वैश्यदेव का क्या महत्व है। इसे निश्चित ही बता सकेंगे।

6.2 उद्देश्य :– प्रस्तुत ईकाई के अध्ययन के पश्चात् आप निम्नलिखित का ज्ञान भी ले –

1. नित्य प्रतिदिन पूजन में संलग्रता करते हुए समाज का उत्थान।
2. सभी जीवों को भोजन की उपलब्धता।
3. भोजन विधि का ज्ञान।
4. अन्नदान का फल प्राप्त करना।

5. ब्रह्म, देव, भूत, पितृ, मनुष्य को तृप्त करने की विधि का ज्ञान प्राप्त करना इस ईकाई का उद्देश्य है।

6.3 बलिवैश्यदेव :–

द्विजो को प्रतिदिन पंचमहायज्ञ करने के लिए शास्त्रो का निर्देश है। प्रत्येक गृहस्थ के यहाँ चूल्हा, चक्की, झाडू, ओखली और जल का घड़ा– ये पांच हिंसा के स्थान है। इनका उपयोग करने से अनजाने में इच्छा न होते हुए भी कुछ जीवों की हिंसा हो ही जाती है। इस हिंसादोष को दूर करने के लिए पंचमहायज्ञों का विधान है। यथा –

ब्रह्मयज्ञ को छोडकर शेश चार देवयज्ञ आदि संक्षेप से वैश्यदेव कर्म मे ही आ जाते है, अत' प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक वैश्यदेव–कर्म अवश्य करना चाहिए।

देवताओं के निमित्त अग्नि में हवन करना देवयज्ञ कहलाता है। सृष्टि के आदि से ही देवता मनुष्यों को सुख पहुंचाने के लिए उनकी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए पशु, पक्षी, तृण, वृक्ष, औषधि आदि के सहित सभी की पृष्टि कर रहे है तथा अन्न, जल, पुष्प फल, धातु आदि मनुष्योपयोगी समस्त वस्तुएँ मनुष्यों को दे रहे है।

जो मनुष्य उन सभी वस्तुओं को उन देवताओं का ऋण चुकाये बिना उनका न्यायोचित स्वत्व उन्हें अर्पण किये बिना स्वयं अपने कार्य में लीन रहता है, वह गीता (3–12) के अनुसार उसे चोर कहा गया है। समस्त देवताओं को परमात्मा का ही स्वरूप समझकर उनके निमित्त हवन करना चाहिए, इसी में परमकल्याण है।

धाता– विधाता आदि भूताधिष्ठातृदेवताओं के निमित्त अन्न अर्पण करना चाहिए तथा कृषि, कीट, पतग, पशु–पक्षी, आदि के निमित्त भोज्य पदार्थ समर्पण करना चाहिए, यही भूतयज्ञ कहलाता है। अतः इससे द्विजों को शीघ्र ही परमपद की प्राप्ति होती हे। परलोकगत पितरों की तृप्ति के लिए ''स्वधा'' शब्द के उच्चारण पूर्वक अन्नजल समर्पण करना पितृयज्ञ कहलाता है। इससे पितर प्रसन्न होकर अपने कल्याणमय आशीर्वाद यजमान को अनुहीत करते है। द्वार पर आये हुए अतिथि को अन्नादि से तृप्त सनकादि द्विव्य मनुष्यों के निमित्त अन्न समर्पण करना मनुष्ययज्ञ कहलाता है। इससे अतिथिरूपी नारायण देव की आराधना होती है, जो मानवमात्र के लिए कल्याणकारी है।

बलिवैश्यदेव प्रतिदिन एक ही बार होता है। श्राद्ध के दिन सागिक के श्राद्ध के प्रथम और निरगक को भी श्राद्ध के अन्त में बलिवैश्यदेव करना चाहिए। नान्दी–मुख श्राद्ध निरगक को भी श्राद्ध के प्रथ ?म ही बलिवैश्यदेव करना चाहिए। जननाशौच और मरणशौच में बलिवैश्यदेव नही होता है। पाक के अभाव में उड़द, चना, मसूर, कोद, कुल्थी, लवण, मटर, पक्कातेल, मक्का, पर्युषित+ अन्न, भुक्तशेष अनादि वर्जित है।

बलिवैश्यदेव के प्रथम अतिथि–अभ्यागत उपस्थित हो जाये तो बलिवैश्यदेवनिमित्त अन्न को पृथक करके अतिथि को देना चाहिए। यदि दो भाई परस्पर अलग हो जाये, उनका पाककर्म पृथक्–पृथक् होने लगे तो श्राद्ध और बलिवैश्यदेव भी उन्हे अलग–अलग करना चाहिए।

यदि पाककर्म एक ही स्थान पर हो तो उनमें से जो भी ज्येष्ठ हो, उसे ही करना चाहिए। घर में अलग न होने पर भी यदि एक भाई परदेस में रहता हो, तो उसे अलग ही श्राद्ध अथवा बलिवैश्यदेव करना चाहिए। नित्य बलिवैश्यदेव करने से मनुष्य के समस्त पाप दूर हो जाते है। बलिवैश्यदेव से बचा हुआ अन्न यज्ञशिष्ट

अन्न होता है, यह अमृत के समान माना गया है, जो केवल अपने लिए भोजन बनाते हैं, वे पाप के भागी होते हैं यथा –

एकपाके निवसतां पितृदेवद्विजार्चनम्।

एकं भवेद् विभक्तानां तदेव स्याद् गृहे गृहे।। – गीता (3–13)

बलिवैश्यदेव के अनुष्ठान से बहुत बड़ा लाभ और त्याग से बहुत बड़ी हानि होती है– यह समझकर सभी को निरालस्य भाव से प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक बलि बलिवैश्यदेव करना चाहिए।

विधि :–

सर्वप्रथम आचमन और प्राणयाम करके दायें हाथ की अनामिका अंगुली ें मन्त्रसहित (ओम् पवित्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्त रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्) कुश की पवित्री धारण करे, तत्पश्चात् निम्नाकिंत संकल्प करें।

संकल्प :–

हरिः ओम् विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ओम तत्सदद्यैतस्तय महापुरूषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्यश्रीब्रह्मणो द्वितीय परार्द्धे तदादौ श्रीश्वेतवराहकल्पे, सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमें कलियुगे कलिः प्रथमचरणे जम्बुद्वीपे भरतखण्डे तत्रापि परमपवित्रे भारतवर्षे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गत पुण्यक्षेत्रे (अपने देश का नाम) अमुक देशे (अपने राज्य का नाम) अमुक नगरे (अपने नगर का नाम) श्रीगग्यमुनयोः पश्चिमे भग नर्मदाया उत्तरे भागे, चान्द्रसंज्ञकानां प्रभवादि।

षष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुक नाम्रि सम्वत्सरे (सम्वत्सर का नाम) श्रमत्रृपतिवीरविक्रमार्कसमयादमुसंख्यापरिमिते विक्रमाब्दे अमुकायने (उत्तरायण अथवा दक्षिणायन) अमुक ऋतौ (ऋतु का नाम) अमुकमासे (मास का नाम) अमुकपक्षे (पक्ष का नाम) अमुकतिथौ (तिथि का नाम) अमुकवासरे (वार का नाम) अमुकगोत्रः (गोत्र) अमुकशर्मा अहं (ब्राह्मण के लिए शर्मा, क्षत्रिय के लिए वर्मा, वैश्य के लिए गुप्ता, शूद्र के लिए दासान्त) मम गृहे पच्चसूनाजनितसकलदोषपरिहापूर्वकं नित्यकर्मानुष्ठानसिद्धिद्वारा श्रीपरमेंश्वरप्रीत्यर्थं बलिवैश्यदेवाख्यं कर्म करिष्ये।''

नोट :– पंचबलि के कर्म में पंचबलि कर्म करिष्ये का उच्चारण करना चाहिए।

सन्ध्या व तर्पण के अनुसाद देश, काल, नाम आदि की योजना कर लेनी चाहिए।

इसके पश्चात् लौकिक अग्नि प्रज्जवलित करके अग्निदेव का निम्नांकित मन्त्र पढ़ते हुए ध्यान करना चाहिए :–

ओम चत्वारि श्रृग्त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।

त्रिधा वृषभो रोरवीति महादेवो मर्त्यां आविवेश।।

इस अग्निदेव के चार सींग, तीन पैर, दो सिर, सात हाथ है। कामनाओं की वर्षा करने वाला यह महान् देव तीन स्थानों में बंधा हुआ शब्द करता है और प्राणियों के भीतर जठदाग्नि से प्रविष्ट है।

तत्पश्चात् निमोक्त मन्त्र को पढ़कर अग्निदेव को मानसिक आसन देवें : –

ओम एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जा स उ गर्भे अन्तः।

स एव जातः स जनिष्यमाणः प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सर्वतोमुखः।।

यह अग्निस्वरूप परमात्मादेव ही सम्पूर्ण दिशा–विदिशाओं में व्याप्त है। यही हिरण्यगर्भरूप में सबसे प्रथम उत्पन्न हुआ था, माता के गर्भ में भी यही रहता है और यही उत्पन्न होने वाला है। हे मनुष्यों! यही सर्वव्यापक और सभी ओर मुखों वाला है।

तत्पश्चात् अग्निदेव को नमस्कार करके पात्र में बिना लवण का सपुक्क अन्न रख लेवे और यज्ञोपवीत को सव्यभाव में करके दाहिने घुटनों को पृथ्वी पर टिकाकर अन्न की पांच आहुतियाँ नीचे लिखे पांच मन्त्रों को क्रमशः पढ़ते हुए एक–एक करके अग्नि में छोड़े। अग्नि के अभाव में एक पात्र में जल रखकर उसी में आहुतियां छोड सकते है।

6.4 देवयज्ञ :–

1. ओम ब्रह्मणे स्वाहा, इदं ब्रह्मणे न मम। अर्थात् ब्रह्माजी के लिए इस अन्न का हवन किया जाता है, यह ब्रह्मा जी के लिए ही प्राप्त हो, इस पर मेरा अधिकार नही है।

इसी प्रकार अग्रिम 2,3,4 मन्त्रों में क्रमशः प्रजापति, गृह्मा, कश्यप तथा अनुमति के लिए हवन किया गया है।

2. ओम गृह्माभ्यः स्वाहा, इदं गृह्माभ्यो नमः।

3. ओम कश्यपाय स्वाहा, इदं कश्यपाय न मम।

4. ओम अनुमतये स्वाहा, इदं अनुमतये न मम।

पुनः अग्नि के पास ही एक चौकोना चक्र बनाकर क्रमशः बीस ग्रास अन्न देना चाहिए। निमोक्त चक्र से भी अर्थ स्पष्ट है, जहाँ केवल अप्र रखा है, उसमें जहाँ एक है, वहाँ प्रथम ग्रास और दो की जगह ग्रास देना चाहिए। इसी प्रकार तीन से चलकर बीस तक क्रमशः निर्दिष्ट स्थान पर ग्रास देना चाहिए।

निमोक्त बीस मन्त्रों को पढ़ते हुए एक–एक मन्त्र पढ़कर एक एक ग्रास अर्पित करना चाहिए।

6.5 भूतयज्ञ :– प्राणियों की तृप्ति हेतु किया जाने वाला भूत यज्ञ कहलाता है।

यज्ञोपवीत को सव्य करके पके हुए अन्न के 17 ग्रास अंकित मण्डल में यथायोग्य स्थान पर नीचे लिखे हुए मन्त्रों द्वारा क्रमशः छोडे :–

1. ओम धात्रे नमः, इदं धात्रे न मम।

2. ओम विधात्रे नमः, इदं विधात्रे न मम।

3. ओम वायवे नमः, इदं वायवे न मम।

4. ओम वायवे नमः, इदं वायवे न मम।

5. ओम वायवे नमः, इदं वायवे न मम।

6. ओम वायवे नमः, इदं वायवे न मम।

7. ओम प्राच्यै नमः, इदं प्राच्यै न मम।

8. ओम अवाच्यै नमः, इदमवाच्यै न मम।

9. ओम प्रतीच्यै नमः, इदं प्रतीच्यै न मम।

10. ओम उदीच्यै नमः, इदमुदीच्यै न मम।

11. ओम ब्राह्मणे नमः, इदं ब्राह्मणे न मम।

12. ओम अन्तरिक्षाय नमः, इमन्तरिक्षाय न मम।

13. ओम सूर्याय नमः, इदं सूर्याय न मम।

14. ओम विश्वेभ्यो देवोभ्यो नमः, इदं विश्वेभ्यो देवोभ्यो न मम।

15. ओम विश्वेभ्यो भूतेभ्यो नमः, इदं विश्वेभ्यो भूतेभ्यो न मम।

16. ओम उषसे नमः, इदमुषसे न मम।

17. ओम भूतानां पतये नमः, इदं भूतानां पतये न मम।

6.6 पितृयज्ञ :–

यज्ञोपवीत को अपसव्य करके बायें घुटने को पृथ्वी पर रखकर दक्षिण की ओर मुख करके हाथ में तिल लेकर, पकाअन्न सहित अंकित मण्डल में निर्दिष्ट स्थान पर मन्त्र पढ़तें हुए छोड देवें।

18. ओम पितृभ्यः स्वधा नमः, इदं पितृभ्यः स्वधा न मम।

निर्णेजनम् :– यज्ञोपवीत को सव्य करे अन्न के पात्र को धोकर वह जल अंकित मण्डल में 19वें अंक की जगह मन्त्र को पढ़कर छोड दें।

19. ओम यक्ष्मैतत्ते निर्णेजनं नमः, इदं यक्ष्मणे न मम।

6.7 मनुष्ययज्ञ :—

अतिथियों का सम्मान सहित भोजन करवान चाहिए। मनुष्य यज्ञ मे जो सनकादि मनुष्यों को अन्न दिया जाता है, उससे भिन्न अन्न श्रेष्ठ ब्राह्मणो को दिया जाता है, वह मनुष्ययज्ञ कहलाता है। यह भी देखना होता है कि नियमित भोजन कराने वाले जो भृत्य है, उनका उपरोध किसी भी प्रकार न हो। अभाव की स्थिति में श्रेष्ठ आचरण से अतिथि को प्रसन्न करना चाहिए। आसन बिछाकर स्थान ग्रहण कराते हुए जलपान की व्यवस्था करें। अतिथियों का सत्कार ज्योतिष्टोम यज्ञ से भी अधिक पुण्यदायी होता है। अतिथि को लौटाना नही चाहिए, ऐसा करने से पाप लगता है। मध्याह में आये हुए अतिथि की अपेक्षा सूर्यास्त के समय आये हुए अतिथि का आठगुणा अधिक फल मिलता है। सूर्यास्त के समय आये हुए अतिथि को सूर्योढ़ कहते है। सूर्योढ़ अतिथि यदि असमय भी आ जाये तो उसे बिना भोजन करवाये नही जाने देना चाहिए। वेश्यदेव के समय आगत अतिथि को नारायण का स्वरूप मानते हुए, उसके कुल शील, आचार, गुण—दोष, विद्या—अविद्या आदि पर विचार नही करना चाहिए।

यज्ञोपवीत को सव्य करके अन्न के पात्र को धोकर पक्का हुए अन्न अंकित मण्डल में 20वें अंक की जगह पर मन्त्र छोड़ देवें।

20. ओम हन्त ते सनकादिमनुष्येभ्यो नमः, इदं हन्त ते सनकादिमनुष्येभ्यो न मम।

6.8 पंचबलि—विधि :—

6.8.1 गाय हेतु बलि (पत्ते पर) :— मण्डल के बाहर पश्चिम की ओर निम्नलिखित मन्त्र (यदि मन्त्र याद न हो तो 'गोभ्यो नमः' आदि मन्त्र से प्रदान कर सकते है।) पढ़ते हुए सव्य एवं दक्षिणाभिमुख होकर गोबलि पत्ते पर देवें —

ओम सौरभेय्यः सर्वहिता पवित्राः पुण्यराशयः।

प्रतिगृह्णन्तु में ग्रासं गावस्त्रैलोक्यमातरः।।

इदं गोभ्यो न मम कहें।

6.8.2 श्वान हेतु बलि (पत्ते पर) :— जनेऊ को कण्ठी करके निम्नलिखित मन्त्र से कुत्ते को बलि देवें —

दो श्वानौ श्यामशबलौ वैवस्वतकुलो(वौ।

ताभ्यामंत्र प्रयच्छामि स्यातामेतावहिंसकौ।।

इदं श्वाभ्यां न मम कहें।

6.8.3 काक हेतु बलि (पृथ्वी पर) :— अपसव्य एवं उत्तराभिमुख होकर निम्नलिखित मंत्र पढ़कर कौओ को भूमि पर अन्न देवे —

ओम ऐन्द्रवारूणवायव्या याम्या वै नै)तास्तथा।

वायसा प्रतिगृह्णन्तु भूमौ पिण्डं मयोज्झितम्।।

इदं अन्नं वायसेभ्यो न मम कहें।

6.8.4 देवताओं हेतु बलि (पत्ते पर) :– सव्य होकर निम्नलिखित मंत्र पढ़कर देवता आदि के लिए अन्न देवें– ओम देवा मनुष्याः पशवो वयांसि, सि(ाः सयक्षोरगदैत्यसलः।

प्रेता पिशाचास्तरवः समस्ताः,

ये चान्नमिच्छन्ति मया प्रदत्तम्।।

इदं देवादिभ्यो न मम कहें।

6.8.5 पिपीलिका हेतु बलि (पत्ते पर) :– इसी प्रकार निम्नलिखित मन्त्र से चींटी आदि को बलि देवे–

पिपीलिकाः कीटपतङ्गकाद्या,

बुभुक्षिताः कर्मनिबन्धब(ाः।

तेषां हि तृप्त्यर्थमिदं मयान्नां,

तेभ्यो विसृष्टं सुखिनो भवन्तु।।

इदं पिपीलिकादिभ्यो न मम कहें।

पंचबलि देने के बाद एक थाली में सभी पकवान परोसकर अपसव्य और दक्षिणाभिमुख होकर निम्न संकल्प करे – अद्य अमुक गोत्रः अमुक शर्माऽहममुकगोत्रस्वय मम पितुः (पितामहस्य मातुः वा) वार्षिकश्राद्धे (महालयश्राद्धे वा) अक्षयतृप्त्यर्थमिदमन्नं तस्मे (तस्यै वा) स्वधा।

उपयुक्त संकल्प करने के बाद ''ओम इदमन्नाम्', 'ओम इमा आपः', 'ओम इदमाज्यम्', 'ओम इदं हविः' इस प्रकार बोलते हुए अन्न, जल घी तथा पुनः अन्न को दाहिने हाथ के अंगुष्ठ से स्पर्श करें।

तत्पश्चात् दाहिने हाथ में जल, अक्षत आदि लेकर निम्न संकल्प (ब्राह्मण भोजन का संकल्प) करें –

अद्य अमुकगोत्रः अमुकोऽहं मम पितुः ;मातुः वाद्ध वार्षिकश्रा(यथासंख्यकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

पच्चंबलि निकालकर कौओ के निमित्त निकाला गया अन्न कौवे को, कुत्ते का अन्न कुत्ते को, देवताओं का अन्न देवताओं को, चींटियों का अन्न चींटियों को तथा गया को देने के बाद निम्नलिखित मंत्र से ब्राह्मणों के पैर धौकर भोजन करायें।

यत् फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करें।

तत्फलं पाण्डश्रेष्ठ विप्राणां पादसेचने।।

इसके बाद उन्हे अन्न, वस्त्र और द्रव्य–दक्षिणा देकर तिलक करके नमस्कार करे, तत्पश्चात् नीचे लिखे वाक्य यजमान व ब्राह्मण दोनो बोले –

यजमान :– शेषान्नेन किं कर्त्तव्यम्। (श्राद्ध में बचे अन्न का क्या करूं ?)

ब्राह्मण :– इष्टैः सह भोक्तव्यम्। (अपने इष्ट–मित्रों के साथ भोजन करें।)

इसके बाद अपने परिवार वालो के साथ स्वयं भी भोजन करे तथा निम्न मंत्र द्वारा भगवान को नमस्कार करें–

प्रमादात् कुर्वतां कम्र प्रच्यवेताध्वरेषु यत्। स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्ण स्यादिति श्रुतिः।।

तत्पश्चात् सव्यभाव से पूर्वाभिमुख होकर पवित्र भूमिपर थोड़ा अन्न तथा जल रखकर हाथ जोडकर निम्नांकित श्लोको को पढ़े :–

ओम देवा मनुष्याः पशवो वयांसि, सिद्धाः सयक्षोरगदैत्यसंघाः।

प्रेताः पिशाचास्तरवः समस्ताः, ये चान्नामिच्छन्ति मया प्रदत्तम्।।

पिपीलिकाः कीटपतग्काद्याा, बुभुक्षिताः कर्मनिबन्धबद्धाः।

तेषां हि तृप्त्यर्थमिदं मयान्नां, तेभ्यो विससृष्टं सुखिनो भवन्तु।।

भूतानि सर्वाणि तथान्नामेत्दहं च विष्णुर्न ततोऽन्यदसति।

तस्मादहं भूतनिकायभूतमंन्ना प्रयच्छामि भवाय तेषाम्।।

चतुर्दशो भूतगणो य एष तत्र स्थिता येऽखिलभूतसंघाः।

तृप्तर्थमंन्ना हि मया विसृष्टं तेषामिदं ते मुदिता भवन्तु।।

देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, सिद्ध, यक्ष, सर्प, नाग, अन्य भूतसमूह, प्रेत, पिशाच तथा सम्पूर्ण वृक्ष एवं चींटी, कीडे और पतंग आदि जीव जो कर्म–बन्धन में बँधे हुए भूख प्यास से कष्ट पा रहे हो और मुझसे अन्न चाहते हो, उनके लिए यह अन्ना? मैनें रखा है, इससे उनकी तृप्ति हो और वे सुखी हो। सभी जीव, यह अन्न और मैं– सभी विष्णु ही है, उनसे अन्य कुछ भी नही है, इस कारण मैं जीवों के शरीर की उत्पति और पोषण में हेतुभूत इस अन्न को उन प्राणियों की रक्षा के लिए देता हूं। यह जौ चौदह प्रकार का भूतों का समुदाय है, इसमें जो सम्पूर्ण जीव–समूह स्थित है, उनकी तृप्ति के लिए मैंने यह अन्न दिया है, वे प्रसन्न हो।

तत्पश्चात् हाथ धोकर भस्म लगावे और निम्नांकित मन्त्र से अग्नि का विसर्जन करे :–

ओम यज्ञ यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा।

एष ते यज्ञो यज्ञपटे सहसूक्त वाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा।।

हे यज्ञ! तू (अपनी प्रतिष्ठा के लिए) यज्ञस्वरूप विष्णु भगवान् को प्राप्त हो, कर्म के फलरूप से यज्ञपति–यजमान को प्राप्त हो तथा अपनी सिद्धि के लिए तू अपने कारणभूत – वायुदेव की क्रिया– शक्ति को प्राप्त हो, यह हवन सुन्दर रूप से सम्पन्न हो। हे यजमान! स्तपनीय चरू, पुरोड़ाश आदि सभी अगें तथा सूक्त, अनुवाक् और स्तोत्रों के सहित यह किया जाने वाला यज्ञ तुम्हारा हो, तुम इस यज्ञ का सेवन करो। यह हवनकर्म सुन्दर रूप से सम्पन्न हो।

तत्पश्चात् कर्म में न्यूनता की पूर्ति के लिए निम्नकिंत श्लोको को पढ़ते हुए भगवान् प्रार्थना करें :–

ओम प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणोदव तद्विष्णोः सम्पूर्ण स्यादिति श्रुतिः।।

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।

तत्पश्चात् सभी कर्म प्रभु को समर्पित करें :–

अनेन वैस्वदेवाख्येन कर्मणा श्रयज्ञक्राराणस्वरूपी परमेश्रवरवासुदेवः प्रीयतां न मम।

ओम तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु। ओम विष्णवे नमः।

उपयुक्त दोनो कार्यो को करते समय दाहिने हाथ में अक्षत अथवा जल का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

6.9 भोजनविधि :–

6.9.1 पाचक शुद्धि :–

यह भोजन बनाने वाला प्रतिदिन स्ना न करता हो, गंदे कपड़े पहनता हो, अभक्ष्य भक्षण करता हो, मदिरा–तंबाकू पीता हो, शोच के बाद ठीक से हाथ साफ न करता हो, तो उसके हाथ का बनाया भोजन भी शुद्ध नही होता। उक्त दोषों से युक्त लोगों से भोजन नही बनवाना चाहिएं। भोजन मे सबसे बडी बात है शुद्धता की, पवित्रता की। पवित्र भोजन ही रूचि, तुष्टि और पुष्टि प्रदान करता है। माँ, पत्नी आदि जिस प्यार और उदार भाव से भोजन बनाकर खिलाती है, नौकरों से तो उस भाव की आशा ी नही की जा सकती। इसलिए तो कहते है। कि' माता के पर से, मघा के बरसे' ही तृप्ति होती है।

6.9.2 भाव शुद्धि :–

एक व्यक्ति न्याय धन से दूध, बादाम आदि पदार्थ लाता है, पत्नी पवित्र चौके में उससे खीर आदि बनवाती है। सर्व प्रकार से शुद्ध सात्विक खीर को भी यदि पति–पत्नी इस भाव से खाते है कि इससे शरीर पुष्ट होगा तो खूब सांसारिक सुख भोगेंगे तो इस राजस भाव से खाया हुआ सात्विक भोजन भी राजस कामभाव को ही उत्पन्न करेगा। अतः भाव शुद्धि के लिए ही भगवान् का भोग लगाकर प्रसाद रूप में भोजन का विधान है। इससे भाव शुद्धि के अतिरिक्त अज्ञात अन्न दोष का प्रभाव भी नही पडता। धर्मशास्त्र में कहा है –

अन्नां ब्रह्मा रसो विष्णुर्भोक्त ा देवो महेश्वरः।

एवं ध्यात्वा च यो भुङ्क्ते सोऽन्नादोषैर्न लिप्यते।।

'अन्न ब्रह्मा है, रस विष्णु है और खाने वाला महेश्वर है। ऐसा ध्यान करके जो भोजन करता है, वह अन्न के दोषों से लित्प नही होता।'

अपने भावो के अतिरिक्त देखने वाले के भावो का प्रभाव भी पडता ळै इसलिए बच्चो की झिडकता हुआ तथा देखने वालों के बिना दिये न खाये– ऐसा कहा जाता है।

न शिशून् भर्त्ससन् नाप्रादाय प्रेक्षमाणेभ्योऽश्रोयात्।

दृष्टि दोष से बचने के लिए ही कुत्ता, कौआ आदि की दृष्टि से भोजन को बचाने के लिए कहा है, घृणा के कारण नहीं, क्योंकि उन्हीं शास्त्रों में नित्य ही कौआ–कुत्ता को भी रोटी देने का विधान है।

6.9.3 पात्र शुद्धि :–

पात्रो की शुद्धि अशुद्धि तन मन को लाभ हानिप्रद धातुओं से बने होने के कारण और आगन्तुक दोष गुण ग्रहण–अग्रहण के कारण और आगन्तुक दोष गुण से संयुक्त वियुक्त होने के कारण मानी जाती है। आधारों पर विचार उपस्थित किया जा रहा है।

तांबे के पात्र में भोजन करना इसलिए मना किया है कि तांबे में वमनकारक गुण होता है। जैसे लोहे की कच्ची भस्म हानिकारक होती है, वैसे ही लोहे के बर्तन में भोजन करने से लोहे का कच्चा अंश पेट में जाकर रोग पैदा करता है। जैसे लोहे की पक्की भस्म यकृत प्लीहा संबंधी रोगो का नाश तथा रक्त वृद्धि करती है, वैसे ही लोहे की कडाही में बनाये भोजन में लोहे का अंश मिश्रित हो जाने से लाभ होता है। इसीलिए लोहे के पात्र में भोजन करने का निषेध तथा बनाने का विधान किया है। लोहे की अति शुद्ध करके बनाये स्टेनलेस स्टील के बर्तन भी कालान्तर में रोग उत्पन्न करते ही है– ऐसा वैज्ञानिक भी स्वीकार करते है। लोहे की तरह स्टेनलेस स्टील को चुम्बक नही पकडता, इस प्रकार स्टील मे रासायनिक परिवर्तन हो जाने के कारण इनमें भोजन बनाना भी हानिकारक है, ऐसा भौतिक विज्ञानी कहते है। अर्थविज्ञान की दृष्टि से देखे तो स्टेनलेस स्टील महँगा भी बहुत पडता है। पुराने स्टील के बर्तनो से एक पैसा भी नही मिलता, जब कि पुराने पीतल काँसे के बर्तनों का आधा पैसा मिल जाता है। एलमोनियम, प्लास्टिक आदि आधुनिक धातुओं के बर्तन सस्ते होते है किंतु कैंसर जैसे भयावह रोगो के जनक होने से अशुद्ध है।

स्वर्ण तथा चांदी अनेक रोगो के नाशक है। इनमें कोई भी दोष नही है, परन्तु सोना चांदी अति मंहगे होने के कारण सबके पास इनके बर्तन होना सम्भव नही है। अतः सर्वसुलभ निर्दोष तथा गुणयुक्त होने के कारण

पीतल और काँसे के बर्तन ही रखने चाहिए। जो मनुष्य नित्य काँसे के पात्र में भोजन करता है उसकी आयु वृद्धि बल यश की वृद्धि होती है, ऐसा सुश्रुत तथा पैठीनस ऋषि ने कहा है –

नित्यमेव तु यो भुङक्ते विमले कांसाभाजने।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुः प्रज्ञा यशो बलम्।।

मिट्टी के पात्र निर्दोष तन–मन के लिए हितकार है। इन का एक बार प्रयोग करके फेंक देना चाहिए, क्योंकि ये भोजन के रस को ग्रहण कर लेते है। काँच, चीनी मिट्टी के पात्र रस को ग्रहण नही करते है, फिर भी मिट्टी के ही होने से ही इनमें एक बार खाने से ये जूँठे हो जाते है।`इसलिए धर्मशास्त्र की दृष्टि से इनमें पुनः भगवान का भोग नही लगाय जा सकता। आर्थिक दृष्टि से भी हानिकारक है, क्योंकि बाल बच्चो वाले घर में चाहे जितना सम्हाल कर रखा जाए, ये फुटते बहुत है।

कौए, कुत्ते, गोमुख, मल, मूत्र, मद्य आदि के पात्र आगनतुक दोषो से संयुक्त हो जाते है। अतः अनेक बार माँजकर आग में खूब तपाकर यथायोग्य शुद्धि करके ही कम लेने चाहिए। मिट्टी काष्ठ आदि के पात्रों का तो फैंक ही देना चाहिए। वट, अर्क (आक), पीतल आदि के पत्तों में दूध रहता है, उनमें भोजन करने से भोजन से मिश्रण से दोष आ जाते है, इसलिए इनमें भोजन का निषेध किया गया है –

'वटार्काश्रवत्थपत्रेषु भुक्त्वा चान्द्रायण चरेत।'

पलाश, कमल, आम, केला, महुआ आदि के पत्तों में तन–मन के लिए कोई हानि कर दोष नहीं तथा इनमें भोजन रस शीघ्र प्रविष्ट नही होता, अतः इनकी पत्तलों में भोजन का विधान है –

पलाशपानीचतुकर्दलीहेमराजते।

मधुपत्रेषु भोक्तव्यं ग्रासमेकगोफलम्।।

विवाह आदि कार्यो में जहाँ सैंकडो हजारो व्यक्तियों को भोजन कराना हो वहाँ पत्तलों तथा मिट्टी के बर्तनो का प्रयोग ही करना चाहिए, क्योंकि ये निर्दोष है, अर्थ भी कम खर्च होता है, समय की बचत होती है और गरीबो को जीविका मिलती है। धातुओं के तथा काँच या चीनी मिट्टी के हजारो बर्तन किराए से लेने में टूट–फुट तथा गुम होने के पैसे देने में अर्थ बहुत खर्च होता है। इन्हे जुटाने में श्रम तथा समय बहुत नष्ट होता है। इतने अधिक बर्तनो की सफाई ठीक नही हो पाती, जिससे रोग पैदा होते है। अतः विचारने पर प्राचीन प्रणाली आज के लिए भी समीचीन है।

6.9.4 पात्र संख्या :–

भोजन बनाने एवं खाने में जितने कम पात्रो से काम चल जाए उतने ही पात्र काम में लाने चाहिए। इससे समय तथा श्रम की बचत होती है। अतः जो पदार्थ थाली में रखे जा सकते हो उन्हे कटोरा या तस्तरी मे नही रखना चाहिए। चार शाक थोडे–थोडे रोज खाने में तथा एक एक शाक पर्याप्त मात्रा में खाकर चार दिनो में उन्ही चार शाक पर्याप्त मात्रा में खाने में स्वास्थ्य की दृष्टि से कोई अन्तर नही होगा। किंतु चार शाक प्रतिदिन बनाने खाने में बर्तन अधिक होंगे, समय, श्रम नष्ट होगा, जिव्हा की लोलुपता बढेगी। प्रसगतः

शाक के बारे में जान लेना चाहिए कि आयुर्वेद के अनुसार परबल–जैसे उत्तम शाक कम खाना चाहिए। दालों में प्रोटीन अधिक होता है। अतः दालें ज्यादा खानी चाहिए।

6.9.5 कच्चा पक्का भोजन :–

कच्चे भोजन की तरह पक्का भोजन शीघ्र खराब नही होता तथा दोषो को ग्रहण नही करता। इसलिए पक्का भाोजन बासी तथा चौके से बाहर भी खाया जा सकता है। इससे यात्रा काल में सुविधा भी होती है। जितना घी लगाकर पूडी बनाते है उतना ही घी पराठे में रोटी में लगा देने पर भी पूडी की अपेक्षा पराठा और पराठो की अपेक्षा रोटी शीघ्र खराब हो जाएगी। जल बिल्कुल न डालकर केवल घृत में भुने बेसन के लड्डू बनाये तो गर्मी, बरसात में एक माह तक तथा सर्दी में दो तीन माह तक खराब नही होंगे। केवल घृत पक्क की तरह केवल अग्निपक्क भुने हुए चने, चिउडे भी बहुत दिन खराब नहीं होते। इसलिए इन्हे बासी खाने या बाहर ले जाने में दोष नह माना जाता है।

6.9.6 भोजन विधिः–

भोजन के समय पेट दबा रहे तो भोजन अधिक मात्रा में नहीं हो सकेगा, पेट नही बढ़ेगा। अतः पल्थी मार कर बैठना चाहिए। पैरो के बल बैठने से पेट अधिक दबता है। इसलिए 'पादाभ्यां धरणीं स्पृष्टा' ऐसा विधान भी किया है। अतः जिन प्रान्तो में पैर के बल बैठकर भोजन की प्रथा है, उसे असभ्य नही मानना चाहिए। प्राचीन परिपाटियों की वास्तविकता समझे बिना किसी प्रथा को जंगली कहना दुर्विनीतता है।

सुप्रक्षालितपाणिपादोऽयं आचम्य शुचौ संवृते देशे अन्नमुपसंगृहा कामक्रोधलोभमोहानपहत्य सर्वाभिरंगुलिभिः शब्दमकुर्वन् प्राश्श्रोयात्।

अच्छी तरह हाथ पैर धोकर आचमन करके पवित्र देश (चौके में) एकान्त स्थान में भोजन करना चाहिए। काम, क्रोध, लोभ, मोहादि को त्यागकर सभी अंगुलियों से शब्द न करता हुआ भोजन करना चाहिए। गंदे रास्ते मे चलने से पैर गंदे हो जाते है। उन गंदे पेरो` पवित्र चौके में प्रवेश करना तथा गंदे पेरो से पास थाली रखकर भोजन करना उचित नही, इसलिए पैर धोने का विधान है। हाथ–पैर धोकर ही भोजन करना चाहिए। गले की रूक्षता नष्ट होकर स्निग्धता आ जाए, जिससे ग्रास का फन्दा न लगे, (अटके न) इसलिए भोजन से पूर्वआचमन का विधान है। लोगो की दोष दृष्टि से बचाने के लिए बंद जगह में भोजन करने को कहा जाता है। जिस भाव से भावित होकर भोजन किया जाता है, उसी भाव से मन बनता है, इसलिए कामादि भाव के विधान का त्याग किया गया है। सभी अंगुलियों से भोजन आदि वस्त्रो पर नही गिरती। अंगुलियों की अपेक्षा जिव्हा को उष्णता अधिक सहन नही होती है, अतः अंगुलियों से भोजन करने से जिव्हा जलने का डर नही रहता, इसलिए जिन पतले पदार्थो को अंगुलियों से न उठाया जा सकता हो उन्हे ही चम्मच से खाना चाहिए। आवाज न हो इसके लिए मुख बंद कर ही ग्रास चबाना चाहिए। इससे मुख में मच्छर आदि के प्रवेश का भय नही रहेगा। इससे शब्द न करते हुए भोजन का विधान किया है। मुंह खोलकर अन्न चबाने की आदत असामाजिक है, और साथ खाने वालो को भी बुरा लगता है तथा उन्हे घृणा होती है।

एक वस्त्र धारण करके भोजन पूजन करते समय छींक, आंसू आदि से रक्षा न हो सकेगी, इसलिए भोजनादि एक वस्त्र में निषेध किया गया है यदि एक ही वस्त्र हो तो उसके उत्तरी भाग से शरीर को ढ़क ले। भोजन करते समय शरीर में गर्मी उत्पन्न होती है, तथा भारतवर्ष गर्म देश है। यदि बहुत वस्त्र धारण करके भोजन किया जाएगा तो गर्मी और अधिक उत्पन्न होगी। सिर पर वस्त्र बंधा हुआ होगा तो गर्मी निकल न सकेगी,

जिससे सिरपर बुरा असर होगा। इसलिए बहुत वस्त्र धारण करके तथा सिर बाँध करके भोजन का निषेध किया गया है।

एकवस्त्रो न भुज्जीत न कुर्याद् देवतार्चनम्

एकं चेद् वासो भवति

तस्यै वोत्तरवर्गेण प्रच्छादयीद

न वेष्टितशिराश्चापि न बहुतवस्त्रयुतोऽपि वा।।

सुक्ष्म दर्शक यंत्र से देखने पर यह स्पष्ट अनुभव होता है कि जिसमें लार लग जाती है उस भोजन या पानीं में लाखो कीटाणु चिपक जाते हैं इसलिए अपना ही जूँठा भोजन या पानी भी बाद में खाने पीने के लिए मना किया है।

'ग्रासशेष तु नाश्नीयात् पीतशेषं पिवेन्न चं'

प्रत्येक ग्रास में सन्तुष्टि होनी चाहिए तन्मय होकर भोजन करने पर ही पूरा रसास्वादन होता है, इससे मुख तथा अमाशय से पाचक रस अधिक निकलता है, जिससे सूगमता से पच जाता है रस, धातु अधिक बनती है। भोजन के प्रारम्भ में पित्त प्रबल होता है, उसके शमन के लिए मधुर रस खाने का विधान है। मध्य में पित्तवर्धक नमकीन, खटाईयुक्त पदार्थ खाने से जठराग्नि तीव्र होकर पाचन अच्छा होता है। अन्त में कफ प्रबल होता है। उसका शमन करने के लिए कटु–पित्त कषाय खाने को कहा है –

अश्नीयात्तन्मना भूत्वा पूर्वे तु मधुरं रसम्।

लवणाम्लौ तथा मध्ये कटुतिक्तकांसततः।।

प्रारम्भ में पतला पदार्थ खाने से आमाशय की कोमल त्वचा पर आघात नहीं होता है। मध्य में खाया कठिन पदार्थ सुगमता से गल जाए, इसलिए अन्त में भी पतले पदार्थ का विधान किया है–

प्राग्द्रवं पुरूषोऽश्नीयात् मध्ये तु कठिनाशनः।

अन्ते पुनर्द्रवाशी च बलोरोग्ये न मुच्चति।।

'आयुर्वैघृतम्' इस वेदवचनानुसार घृत आयुवर्धक है, बल वीर्यवर्धक तथा पवित्र है। सात्विक भाववर्धक होने से अघनाशक कहा है। इसलिए घृत युक्त भोजन नित्य करने का विधान है–

न भुच्चीताघृतं नित्यं गृहस्थो भोजने स्वयम्।

पत्रित्रमथ वृष्यं च सर्पिराहुरघापहम्।।

आधे पेट अन्न से, चौथाई जल से पूरा करे और चौथाई वायु संचार के लिए खाली रखे –

जठरं पूरयेदर्धमन्नैर्भागं जलेन च।

वायो सच्चारणार्थे तु चतुर्थमवशेषयेत्।।

भोजन के बाद मुख तथा अन्ननलिका को साफ करने के लिए तथा अन्न को अमृत रूप जल से ढकने के लिए थोडा थोडा जिल पीने का विधान किया है –

भुक्त्वाऽमृतधिपनार्थे पिबेत्तोयं सकृत् सकृत्।

२६ जोडी दाँतो में फँसे अन्न को अच्छी तरह साफ करने के लिए २६ कुले करने का विधान किया गय है –

कुर्याद् द्वादश गण्डूषान् पुरीषोतसर्जनेद्विजः।

मूत्राोत्सर्गे तु चतुरो भोजनान्ते तु षोडश।।

मल त्यागकर ५२, मूत्र त्यागकर ४ और भोजन करके ५६ कुल करे। भोजन करके बैठे रहने से स्थूलता, तुरन्त सो जाने से रोग, दौडने से मृत्यु का भय तथा भ्रमण चहलकदमी करने से आयु वृद्धि होती है। ऐसा चिकित्सा शास्त्र कहता है–

भुक्त्वोपविशतः स्थौल्यं शयानस्य रूजस्तथा।

आयुश्चक्रममाणस्वय मृत्युर्धावति धावतः।।

सायंकालीन सन्ध्या वन्दन करके तथा सन्ध्या समाप्त होने पर ही भोजन करना चाहिए।

भोजनालय में प्रवेश करने पूर्व शरीर शुद्धि आवश्यक है। यथाचित्त प्रकार से शरीर की शुद्धि कर लेनी चाहिए। **ओम भूर्भुवः स्वः** – इस मन्त्र से गण्डूष (कुल) करते हुए दो बार आचमन करें। भोजन हेतु पूर्वमुखी अथवा उत्तरतुखी आसन ग्रहण करना चाहिए। भोजन के थाल को चौकी पर रखे तथा चौकी के चारो ओर जल से परिधि (दाहिनी ओर से प्रारम्भ करके) बना देवे। सर्वप्रथम अन्नपूर्णा देवी अथवा अपने आराध्य देव को भोग लगाकर (यदि अशौच आदि अवस्था में भोग नही लगा पावे तो मानसिक स्मरण भी कर सकते है।) अन्न को पात्र में परासकर प्रणाम करें :– ''ऊँ अस्माकं नित्यमस्त्वेतत्।''

तत्पश्चात् हाथ में जल लेकर निम्न मन्त्रों से प्रोक्षण करें :–

दिवाकाल में :–

''सत्यं त्वर्तेन त्वा परिषिच्चमि''।

रात्रिकाल में :–

''ऋतं त्वा सत्येन परिषिच्चमि''।

तत्पश्चात् पात्र से दस या पांच अंगुल हटकर दाहिनी ओर पृथ्वी पर जल का आसन देकर निम्नलिखि मन्त्र पढते हुए तीन ग्रास निकाले :–

1. ओम भूपतये स्वाहा।
2. ओम भूवनपतये स्वाहा।
3. ओम भूतानां पतये स्वाहा।

उपरोक्त मन्त्रो द्वारा पृथ्वी पर चौदह भुवनों तथा सम्पूर्ण प्राणियों के स्वामी परमात्मा की तृप्ति की जाती है, जिससे सभी की तृप्ति स्वतः हो जाती है।

6.9.7 पच्वाहुति :– प्राणो के संदर्भ में –

दाहिने हाथ में थोडा जल लेकर ''ओम अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा'' इस मन्त्र से शान्तिपूर्वक आचमन करें (भोजन से पूर्व अमृतरूपी जल का असन प्रदान करे)। तत्पश्चात् मौन होकर बेर अथवा आंवला के बराबर पांच ग्रास द्वारा निम्नलिखित मन्त्रो से प्राणाहुतियाँ देवें –

1. ओम प्राणाय स्वाहा।
2. ओम अपानाय स्वाहा।
3. ओम व्यानाय स्वाहा।
4. ओम उदानाय स्वाहा।
5. ओम समानाय स्वाहा।

भोजनपूर्व उच्चारणीय मन्त्र :–

यन्तु नदयो वर्षन्तु पर्जन्याः।

सुपिप्पला ओषध्यो भवन्तु।

अन्नावतामोदनवतामामिक्षताम्। एषां राजा भूयासम्।

ओदनमुद्ब्रुवते परमेष्ठी वा एषः यदोदनः।

परमामेवैनम् श्रियं गमयति।।

मा भ्रता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुतस्वसा।

साम्यच्च सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्रौ ब्रह्मणा हुतम्।

ब्रह्मौव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना

6.9.8 प्रार्थना :–

निम्नलिखित मन्त्र में विश्वषभुत्व की भावना कल्पित और प्रस्तुत है। अन्न ग्रहण करके शरीर को पोषण का क्या प्रयोजन है वह इस मन्त्र से अभिभूत हो जाता है –

1. प्रसरति भावः यास्मिन अथवा प्रसादस्तु प्रसन्नता, अर्थात भोग लगाई हुई साम्रगी प्रसाद हो जाती है और उसमें सर्वदा प्रसन्नता का भाव रखने से श्रयंस्कर होता है।

ओम सहनाववतु स नौ भुनक्तु सह वीर्य करवावहै।

तजस्विनावधीतमस्तु मा विद् विषावहै।

ओम शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

तत्पश्चात् हाथ धोकर प्रसाद (ठाकुरजी के भोग लगने के पश्चात् की प्रसादसंज्ञा हो जाती है।) ग्रहण करें। जिनके पिता ज्येष्ठ भाई जीवित हो, उन्हे प्राणाहुतिक ही मौन रखना चाहिए। बचे हुए बरे के बराबर अन्न को दाहिने हाथ में रखकर थोडा जल भी रख लेना चाहिए। इसे निम्नलिखित मन्त्रा पढ़कर बलिस्थान की ओर रख देना चाहिएः–

अस्मत्कुले मृता ये च पितृलोकविवर्जिताः।

भुवन्तु मम चोच्छिष्टं .... पात्राच्चैव बहिः क्षिपेत्।।

तत्पश्चात् दाहिने हाथ में जल लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हुए ''ओम अमृतापिधानमसि स्वाहा।'' आधा जल पी लेना चाहिए और अवशिष्ट जल को निम्न मन्त्र पढते हुए उच्छिष्ट अन्न पर छोड देना चाहिएः–

रौरवेऽपुण्यनिलये पद्मार्बुदनिवासिनाम्।

अर्थिनामुदकं दत्तमक्षय्यमुपतिष्ठात्।।

तत्पश्चात् सभी बलि अन्न को लेकर आंगन में आ जाना चाहिए और उसे कौओं को दे देवे। हाथ और मुंह धोकर बायीं ओर सोलह (16) गण्डूष (कुल) करें। थोडा जल लेकर हथेली पर रखे और इसे दोनो हथेलियों से खूब घिसकर दोनो आँखों में अंगुष्ठ की सहायता से निम्नलिखित मन्त्र पढ़तें हुए डाल देवें :–

शर्यातिं च सुकन्या च च्यवनं शक्रमश्रिवनौ।

भोजनानते स्मरन्नक्ष्णोरङुंलाग्राम्बु निक्षिपेत्।।

उचित परिपाक के लिए निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हुए उदर पर तीन बार हाथ फेरे :–

अगस्त्यं वैनतेयं च शनिं च वडवानलम्।

अन्नस्य परिमाणार्थ स्मरेद् भीमं च पच्चमम्।।

भोजन के पश्चात् भगवान् पर समर्पित तुलसी, लौंग, इलायची आदि का सेवन करें।

भोजन के पश्चात् के कर्म :–

विश्राम :–

भोजन के पश्चात् विश्राम अपेक्षित है, किन्तु दिन में नही सोना चाहिए। भोजन के पश्चात् कम से कम सौ (100) मीटर चलकर आठ (8) श्वास तक चित्त, सोलहह (16) श्वास तक दाहिनी करवट और बत्तीस (32) श्वास तक बायीं करवट लेट जाना चाहिए। इससे पाचन में सुविधा होती है तथा आलस्य भी नहीं आता है।

विश्राम के पश्चात् अपने दैनिक कर्मों में व्यस्त हो जाना चाहिए। शास्त्रानुसार भोजन के पश्चात् धामिक एवं ज्ञानवर्द्धक पुस्तकों के अध्ययन, ज्ञान का सम्प्रेषण तथा दैनिक जीविकोपार्जन में व्यस्त हो जाना चाहिए।

लोकयात्रा व सन्ध्योपासना :–

सूर्य के होने से पूर्व मन्दिरों में दर्शन हेतु अवश्य जाना चाहिए। सूर्यास्त से 24 मिनट पूर्व स्नान के पश्चात् शुद्धवस्त्र धारण करके सन्ध्योपासन हेतु भी समय देना चाहिए। सन्ध्योपासना के पश्चात् नित्य एकाग्रता से भगवत् स्मरण करे तथा अपने इष्टदेव का जप करे। भगवान् पर समर्पित चन्दनादि को भी साफ कर देना चाहिए। भाग लगाकर आरती करने के पश्चात् ठाकुरजी को शयन करवा देना चाहिए।

सांध्यदीप :–

सूर्यास्त के समय दीपक जला देना चाहिए, इससे लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। दीप प्रज्जवल के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से दीपक प्रकाशरूप ब्रह्म समझकर प्रणाम करें :–

दीपो ज्योतिः परं ब्रह्म दीपो ज्योतिर्जनार्दनः।

दीपो हरतु मे पापं सांध्यदीप! नमोऽस्तु ते।।

शुभं करोतु कल्याणमारोग्यं सुखसम्पदाम्।

शत्रुबुद्धिविनाशं च दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते।।

दीपक को अक्षतपुंज (स्टैण्ड) आदि स्थापित करना चाहिए। सीधे जमीन पर रखना वर्जित है। सायंकालिक भोजन के पश्चात् दिनभर अपने कृत्यों का सिंहावलोकन करना चाहिए।

6.10 सारांश :-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् छात्र को ब्रह्म, देव, भूत, पितृ, मनुष्य को तृप्त करने हेतु पूजन का ज्ञान प्राप्त होगा। भोजन विधि के ज्ञान से अनेक रोगों से बचाव का ज्ञान प्राप्त होगा। बलिवैश्वदेव एवं भोजन में पंचबलि का विधान मनुष्य के आत्मरक्षण हेतु बताया गया है। पशुओं में भोजन की पहचान करने की अद्भत शक्ति विद्यमान होती है। यदि हम अपने भोजन का कुछ अंश पशुओं को देते हैं तो उनके आचरण से हमें उस भोजन के भक्ष्य अथवा अभक्ष्य होने के संकेत मिल जाते हैं। सभी मनुष्यों को नित्य दिनचर्या में इस सम्मिलित करते हुए इसका आचरण करना चाहिए।

अतः इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप नित्यकर्म के महत्वपूर्ण अंगभूत बलिवैश्वदेव प्रकरण में वर्णित पंचमहायज्ञों के विधि–विधानों एवं उनके विधि–निषेधों का भली प्रकार ज्ञान करके बलिवैश्वदेव की समग्र विशेषताओं को संक्षेप में समझा सकेंगे।

6.11 शब्दावली –

1. ब्रह्मयज्ञ = शास्त्रों का अध्ययन/वाचन एवं करणीयकर्म
2. देवयज्ञ = देव तृप्ति हेतु पूजन, यजन
3. मनुष्ययज्ञ = मानवसेवा
4. पितृयज्ञ = श्राद्ध करना
5. पंचबलि = गाय, श्वान, काक, अतिथि, चींटी को भोजन देना क्रिया में वाक्यों द्वारा
6. अपसव्य = जनेऊ तथा उपवस्त्र को दाहिने कन्धे के ऊपर डालकर बायें हाथ के नीचे कर लेना।

6.12 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :-

प्रश्न –1 : पंचमहायज्ञों के नाम बताइये ?

उत्तर : ये पाँच महायज्ञ है – 1. ब्रह्मयज्ञ, 2. देवयज्ञ, 3. भूतयज्ञ, 4. पितृयज्ञ और 5. मनुष्ययज्ञ।

प्रश्न –2 : देवयज्ञ से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर : देवताओं के निमित्त अग्नि में हवन करना देवयज्ञ कहलाता है।

प्रश्न –3 : भूतयज्ञ में भोजन के मितने ग्रास दिये जाते हैं ?

उत्तर : भूतयज्ञ में भोजन के सत्रह (17) ग्रास दिये जाते हैं।

प्रश्न –4 : पंचबलि में किस–किस के निमित्त भोजन दिया जाता हैं ?

उत्तर : गाय, कुत्ता, कौआ, अतिथि व कीटादि के निमित्त पंचबल दी जाती है।

प्रश्न –5 : ब्राह्मण–भोजन के पश्चात् शेष अन्न का क्या किया जाता है ?

उत्तर : इष्टमित्रों के साथ परिवासहित प्रसाद ग्रहण किया जाता है।

6.13 लघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न –1 : देवयज्ञ का विधान बताइये ?
प्रश्न –2 : पंचबलि का विधान बताइये ?
प्रश्न –3 : भूतयज्ञ का विधान बताइये ?
प्रश्न –4 : भोजन में पात्र का महत्त्व बताइये ?
प्रश्न –5 : भोजन विधि का वर्णन कीजिये ?

6.14 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. धर्मशास्त्र का इतिहास
   लेखक – डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे
   प्रकाशन – उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2. नित्यकर्म पूजा प्रकाश,
   लेखक – पं. बिहारी लाल मिश्र,
   प्रकाशन :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

3. अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभूसेवा
   संकलन ग्रन्थ
   प्रकाशन – मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

4. कर्मठगुरू :
   लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य
   प्रकाशन – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणासी।

इकाई –7

नित्य तर्पण

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 हाथों में तीर्थ का स्थान

7.3.1 तर्पण विधि

7.3.2 देवतर्पण

7.3.3 ऋषि तर्पण

7.3.4 . दिव्य मनुष्य तर्पण

7.3.5 दिव्य पितृ तर्पण

7.3.6 यमतर्पण

7.3.7 मनुष्य अथवा पितर तर्पण

7.3.8 द्वितीय गोत्र तर्पण

7.3.9 भीष्मतर्पण

7.3.10 अर्घ्यदान

7.3.11 सूर्यापस्थान

7.3.12 मुख माजर्न

7.3.13 विसर्जन

7.3.14 समर्पण

7.4 सारांश

7.5 शब्दावली

7.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

7.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.1 प्रस्तावना

तर्पण का प्रयोजन ऋण से मुक्ति है। इसके पूर्व की इकाई में आपने बलिवैश्यदेव के प्रकरण में पितृयज्ञ का अध्ययन किया है। प्रस्तुत इकाई में नित्यकर्म के अन्तर्गत तर्पण करने की विधि का संगोपांग वर्णन किया गया है।

मनुष्य जीवन में श्राद एवं तर्पण का अपरियार्ह महत्व है। इसी के माध्यम से पितरों का पोषण और परिवार का कल्याण भी मान्य है। तर्पण कार्य प्रतिदिन किया जाना चाहिए। अपरिहार्य परिस्थितियों में यह कार्य श्रादों के अवसर पर सदैव होना चाहिए। तर्पण में तिल मिश्रित जल तीन अज्जली देने का विधान है। शास्त्रीय मान्यताएं है कि तर्पण से मनुयस के पाप नष्ट होते हैं। प्रत्येक मनुष्य के उपर उसके पितरों का ऋण होता है। उससे मुक्त होने के लिए ऋषि मुनियों ने गृहस्थ अथवा अन्य जीवन में भी तर्पण की अनिवार्यता को बताया है। वस्तुतः ''सन्ततिः पितृ स्नोकानां की संकल्पना जो पितृ ऋण से मुक्त कराती है वह तो है ही।

इस इकाई में वर्णित तर्पण विधि (देवाषिपित) का सम्यक् अध्ययन करके आप दैनिक जीवन में तर्पण प्रयोग के महत्व को जानकार तर्पण के द्वारा प्राप्त होने वाले लाभों एवं उससे शमन होने वाले विभिन्न दोषों को समझा सकेगे।

7.2 उद्देश्य

देवर्पिपितृ तर्पण से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप –

1 पितृ तर्पण की महत्ता बता सकेंगे।
2 देव तर्पण और पितृ तर्पण में अन्तर समझा सकेंगे।
3 दिव्य तर्पण की परिभाषा बता सकेंगे।
4 तर्पण विधान का उल्लेख कर सकेंगे।
5 शास्त्रों में तर्पण संबंधी जो विशिष्ट तथ्य है, उनका ज्ञान करा सकेंगे।
6 भीष्म तर्पण, अर्ध्यदान, सूर्यापस्थान इत्यादि की क्रियाओं को समझा सकेंगे।

7.3 हाथों में तीर्थ का स्थान :–

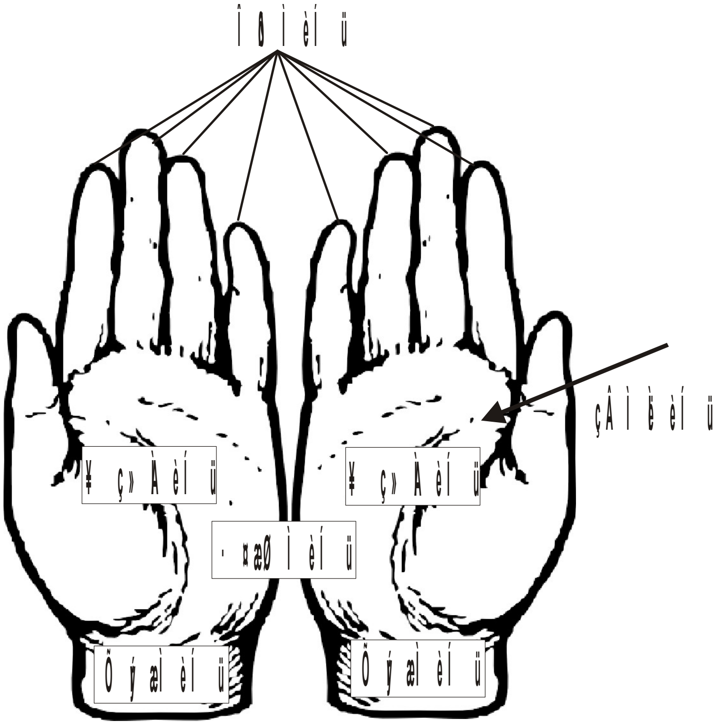

7.3.1 तर्पण विधि

प्रातः काल ब्रह्मवेला के पूर्व शयन से उठकर शौचादि से निवृत्त होकर किसी नदी, सरोवर या कुएँ पर ही अपनी सुविधा के अनुसार स्नान करके शुद्ध उज्ज्वल वस्त्र धारण करके पूर्वाभिमुख हो कुशासन पर बैठकर तर्पण करना चाहिए। स्वर्ण, चाँदी, तांबा, काँसे का पात्र पितरों के तर्पण हेतु श्रेष्ठ बताया गया है। मिट्टी तथा लोहे का पात्र सर्वथा वर्जित है।

सप्तमी एवं रविवार को, घर में, जन्मदिन में, दास, पुत्र और स्त्री की कामना वाला मनुष्य तिल से तर्पण नहीं करे। नन्दातिथि (१–६–११), शुक्रवार, कृतिका, मघा एवं भरणी नक्षत्र, रविवार तथा गजच्छाया योग में तिल से जल में कदापि तर्पण नहीं करे।

तर्पण का फल सूर्योदय से आधे प्रहर तक अमृत, एक प्रहर तक मधु, डेढ़ प्रहर तक दूध तथा साढ़े तीन प्रहर तक जल :प से पितरों को प्राप्त होता है। इसके उपरान्त दिया गया जल राक्षसों को प्राप्त होता है।

कुशा के अग्रभाग से देवताओं का, मध्यभाग से मनुष्यों का और मूलभाग तथा अग्रभाग से पितरों का तर्पण करे। घर में ग्रहणकाल, पितृश्राद्ध, व्यतिपातयोग, अमावस्या, तथा संक्रान्ति के दिन निषेध होने पर भी तिल से तर्पण करना चाहिए, किन्तु अन्य दिनों में घर में तिल से तर्पण नहीं करना चाहिए।

तत्पश्चात्तीन बार आचमन, पवित्रीधारण, प्राणायाम आदि करे :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहिमा।।

ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु (तीन बार उच्चारण करे)

बायें हाथ में जल लेकर तीन बार आचमन करे :– ऊँ केशवाय नमः। ऊँ नारायणाय नमः। ऊँ माधवाय नमः। पुनः गोविन्दाय नमः बोलकर हाथ धोवे और यदि ज्यादा ही कर सके तो तीन बार पूरक (दायें हाथ के अंगूठे से नाक का दायाँ छेद बन्द करके बायें छेद से श्वास अन्दर लेवे), कुम्भक (दायें हाथ की छोटी अंगुली से दूसरी अंगुली द्वारा बाया छेद भी बन्द करके श्वास को अन्दर रोके), रेचक (दायें अंगूठे को धीरे–धीरे हटाकर श्वास बाहर निकाले) करे।

नोट :– नित्य स्नानाङ्ग तर्पण अर्थात्नदी, तालाब अथवा जल में तर्पण के समय भूमि एवं आसनादि की पूजा की आवश्यकता नहीं है परन्तु नित्यकर्म के समय आसनादि भूमि की पूजा, शिखाबन्धन, वरुण पूजन आदि प्रत्येक कार्य में अवश्य करनी चाहिए।

संक्षिप्त भूमिपूजन :–(भूमि का पूजन करें) :–

ऊँ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनि।

च्छा नः शर्म्म सप्रथाः।। ऊँ कर्मभूम्यै नमः।। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

आसनपूजन (आसन की पूजा करे) :–

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

ऊँ कूर्मासनाय नमः।

ऊँ अनन्तासनाय नमः।

ऊँ विमलासनाय नमः। (सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि)

शिखा बन्धन (शिखा का बन्धन करे तथा सिर पर वस्त्र रख देवे) :–

मा नस्तोके तनये मानऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु–रीरिष।

मा नो व्वीरान्रुद्र्र भामिनो व्वधीर्हविष्म्मन्त सदमित्त्वा हवामहे।

प्रार्थना (तीर्थ आवाहन – यदि तीर्थ, सरोवर आदि स्थान पर स्नानाङ्ग तर्पण कर रहे है तो तीर्थों की प्रार्थना अवश्य करें) :–

पुष्कराद्यानि तीर्थानि गङ्गाद्याः सरितस्तथा।

आगच्छन्तु पवित्राणि स्नानकाले सदा मम।।

गङ्गे च यमुने चौव गोदावरि सरस्वति।

नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु।।

त्वं राजा सर्वतीर्थानां त्वमेव जगतः पिता।

याचितं देहि मे तीर्थं तीर्थराज नमोऽस्तुते।।

गङ्गा प्रार्थना :–

विष्णुपादाब्जसम्भूते! गङ्गे! त्रिपथगामिनी!

धर्म्मद्रवेति विख्याते! पापं मे हर जाह्नवी।।

गङ्ग गङ्गेति यो ब्याद्योजनानां शतैरपि।

मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति।।

वरुण पूजन् (ताँबे के पात्र में जलभरकर कलश को स्थापित करते हुए पूजन करे) :–

ऊँ तत्वाामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते जमानो हविर्ब्भिः।

अहेडमानो व्वरुणे हबोद्ध्युरुश œ समानऽ आयुः प्रमोषीः।। ऊँ वरुणाय नमः।

पूर्वे ऋग्वेदाय नमः। दक्षिणे यजुर्वेदाय नमः।

पश्चिमे सामवेदाय नमः। उत्तरे अथर्ववेदाय नमः।

मध्ये साङ्गवरुणाय नमः। सर्वोपचारार्थे चन्दन अक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

अंकुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्सर्वाणि तीर्थानि आवाहयेत् (दायें हाथ की मध्यमा अङ्गुली से जलपात्र में सभी तीर्थों का आवाहन करे) :–

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वति।

नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु।।

कलशस्य मुखे विष्णु कण्ठे रुद्ररू समाश्रितरू।

मूले तत्र स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणारू स्मृतारू।।

कुक्षौ तु सागरारू सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।

ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदरू सामवेदो ह्यथर्वणरू।।

औश्च सहितारू सर्वे कलशाम्बु समाश्रितारू।

गायत्री चात्र सावित्री शान्तिरू पुष्टिकरा तथा।

आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकारू।।

गंगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन्सन्निुध कुरु।।

ब्रह्माण्डोदर तीर्थानि करैरू स्पृष्टानि ते रवे।

तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर।।

ऊँ जलबिम्बाय विद्महे नीलपुरुषाय धीमहि। तन्नो अम्बु प्रचोदयात्। श्श्कंय्च मूलेन अष्टवारम्भिमन्त्र्य, धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, मत्स्यमुद्रया आच्छाद्य।

उदकेन पूजासामग्रीं स्वात्मानं च सम्प्रोक्षयेत्(पात्र के जल से पूजन सामग्री एवं स्वयं का प्रोक्षण करे) :–

ऊँ आपो हिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन। महेरणायचक्षसे।।

ोवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयते हनः। उशतीरिवमातरः।।

तस्म्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ आपोजनयथाचनः।।

निम्न मन्त्रों से सरसों का विकिरण करे अथवा सभी दिशाओं में नमस्कार करे :–

पूर्वे रक्षतु गोविन्द	–	पूर्व में गोविन्द रक्षा करे।
आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः	–	आग्नेय कोण में गरुड़ध्वज रक्षा करे।
दक्षिणे रक्षतु वाराहो	–	दक्षिण में वराह रक्षा करे।
नारसिंहस्तु नैर्ऋते	–	नैर्ऋत्यकोण में नृसिंह रक्षा करे।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद् – पश्चिम में वरुण रक्षा करे।

वायव्यां मधुसूदनः – वायव्यकोण मधुसूदन रक्षा करे।

उत्तरे श्रीधरो रक्षेद् – उत्तर में श्रीधर रक्षा करे।

ऐशान्ये तु गदाधरः – ईशानकोण में गदाधर रक्षा करे।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद् – ऊपर गोवर्धन रक्षा करे।

अधस्ताद्त्रिविक्रमः – नीचे त्रिविक्रम विष्णु रक्षा करे।

एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः – सभी दिशाओं में जनार्दन वासुदेव रक्षा करे।

तत्पश्चात्हाथ दायें हाथ में त्रिकुश, यव, अक्षत और जल लेकर अधोलिखित सङ्कल्प करे :–

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अखिलब्रह्माण्डान्तर्गत भूमण्डल मध्ये सप्तद्वीप मध्यवर्तिनी जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मावर्तैकदेशे गंगायमुनयोः पश्चिमभागे नर्मदाया उत्तरे भागे अर्बुदारण्ये पुष्करक्षेत्रे राजस्थान प्रदेशे गालवाश्रम उपक्षेत्रे (जयपत्तने) अस्मिन् देवालये (गृहे) देव–ब्राह्मणानां सन्निधौ ब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे रथन्तरादि द्वात्रिंशत्कल्पानां मध्ये अष्टमे श्रीश्वेतवाराहकल्पे स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्येऽस्मिन् वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुकवैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् शालिवाहनशके अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथा राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवं गुणगणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्य बेलायां अमुकगोत्रः (शर्मा/वर्मा/गुप्त/दास) अमुकोऽहं ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थं प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकाल संरक्षणार्थं सकलमनईप्सित कामना संसिध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य समस्तभयव्याधि जरापीड़ा–मृत्यु परिहार द्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशेः नामराशेः वा सकाशाद्ये केचिद्विरुद्घचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थितक्रूरग्रहास्तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थान–स्थितवच्छुभफल प्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादि सन्ततेरविच्छिन्न वृद्ध्यर्थं आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिध्यर्थं त्रिविधतापोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थ सिध्यर्थं देव–ऋषि–मनुष्य–पितृ तर्पणमहं करिष्ये।

तत्पश्चात्एक ताम्र पात्र अथवा चाँदी (स्वर्ण अथवा कांस्य का भी ग्राह्य है) के पात्र में श्वेत चन्दन, अक्षत, सुगन्धित पुष्प और तुलसीदल रखे, फिर उस पात्र के ऊपर एक हाथ या प्रादेशमात्र लम्बे तीन कुश रखे, जिनका अग्रभाग पूर्व की ओर रहे। इसके बाद उस पात्र में तर्पण के लिए जल भर देवे, तत्पश्चात्उसमें रखे हुए तीनों कुशों को तुलसी सहित सम्पुटाकार दायें हाथ में लेकर बायें हाथ से उसे ढक लेवे और निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़ते हुए देवताओं का आवाहन करे :–

ऊँ विश्वेदेवास आगत शृणुता म इम ँ हवम्। इदं बर्हिर्निषीदत।।

अर्थात्हे विश्वेदेवगण! हमारे प्रेमपूर्वक किये हुए इस आवाहन को सुने और इस कुश के आसन पर विराजमान हो।

प्रार्थना करे :– हे विश्वेदेवगण! आप लोगों में से जो अन्तरिक्ष में हो, जो द्युलोक (स्वर्ग) के समीप हो तथा अग्नि के समान जिह्वावाले एवं यजन करने योग्य हो, वे सभी हमारे इस आवाहन को सुने और इस कुशासन पर बैठकर तृप्त हो।

आगच्छन्तु महाभागः विश्वेदेवा महाबलाः।

ये तर्पणेऽत्र विहिताः सावधाना भवन्तु ते।।

जिनका इस तर्पण में वेदविहित अधिकार है, वे महान्बलशाली महाभाग विश्वेदेवगण यहाँ आवे और सावधान हो जाये।

इस प्रकार आवाहन करके कुश का आसन देवे और उन पूर्वाग्रकुशों (देवताओं का तर्पण कुश के अग्रभाग से, मनुष्यों का मध्यभाग से और पितरों का मूलाग्र एवं दक्षिणाग्रभाग से करना चाहिए। इसी प्रकार देवतर्पण में पूर्वाभिमुख, मनुष्यतर्पण में उत्तराभिमुख और पितृतर्पण में दक्षिणाभिमुखी रहना चाहिए।) द्वारा दायें हाथ की समस्त अङ्गुलियों के अग्रभाग अर्थात्देवतीर्थ से ब्रह्मादि देवताओं के लिए पूर्वोक्त पात्र में से एक–एक अञ्जलि चावल मिश्रित जल लेकर दूसरे पात्र में गिरावे, और निम्राङ्कित :प से उन–उन देवताओं के नाममन्त्र पढ़ता रहे।

देवताओं को एक–एक, मनुष्यों को दो–दो और पितरों को तीन–तीन अञ्जलि जल देना चाहिए। स्त्रियों में माता, पितामही और प्रपितामही आदि को तीन–तीन, सौतेली माँ और आचार्य–पत्नी को दो–दो तथा अन्य सभी स्त्रियों को एक–एक अञ्जलि जल देना चाहिए। यथा –

एकैकमञ्जलिं देवा द्वौ द्वौ तु सनकादयः।

अर्हन्ति पितरस्त्रींस्त्रीन्स्त्रिय एकैकमञ्जलिम्।।

7.3.2 **देवतर्पण** (देवताओं को एक–एक अञ्जलि जल देना चाहिए।) :–

१. ॐ ब्रह्मास्तृप्यताम्, २. ॐ विष्णुस्तृप्यताम्,

३. ॐ रुद्रस्तृप्यताम्, ४. ॐ प्रजापतिस्तृप्यताम्,

५. ॐ देवास्तृप्यन्ताम्, ६. ॐ छन्दांसि तृप्यन्ताम्,

७. ॐ वेदास्तृप्यन्ताम्, ८. ॐ ऋषयस्तृप्यन्ताम्,

९. ॐ पुराणाचार्यास्तृप्यन्ताम्, १०. ॐ गन्धर्वास्तृप्यन्ताम्,

११. ॐ इतराचार्यास्तृप्यन्ताम्, १२. ॐ सम्वत्सरः सावयवस्तृप्यन्ताम्,

१३. ऊँ देव्यस्तृप्यन्ताम्, १४. ऊँ अप्सरसस्तृप्यन्ताम्,

१५. ऊँ देवानुगास्तृप्यन्ताम्, १६. ऊँ नागास्तृप्यन्ताम्,

१७. ऊँ सागरास्तृप्यन्ताम्, १८. ऊँ पर्वतास्तृप्यन्ताम्,

१९. ऊँ सरितस्तृप्यन्ताम्, २०. ऊँ मनुष्यास्तृप्यन्ताम्,

२१. ऊँ यक्षास्तृप्यन्ताम्, २२. ऊँ रक्षांसि तृप्यन्ताम्,

२३. ऊँ पिशाचास्तृप्यन्ताम्, २४. ऊँ सुपर्णास्तृप्यन्ताम्,

२५. ऊँ भूतानि तृप्यन्ताम्, २६. ऊँ पशवस्तृप्यन्ताम्,

२७. ऊँ वनस्पतयस्तृप्यन्ताम्, २८. ऊँ ओषधयस्तृप्यन्ताम्,

२९. ऊँ भूताग्रामश्चतुर्विधस्तृप्यन्ताम्।

7.3.3 ऋषि तर्पण :–

पूर्ववत्निम्नाङ्कित मन्त्रवाक्यों से मरीचि आदि ऋषियों को भी एक–एक अञ्जलि देवे :–

१. ऊँ मरीचिस्तृप्यताम्, २. ऊँ अत्रिस्तृप्यताम्,

३. ऊँ अङ्गिरास्तृप्यताम्, ४. ऊँ पुलस्त्यस्तृप्यताम्,

५. ऊँ पुलहस्तृप्यताम्, ६. ऊँ क्रतुस्तृप्यताम्,

७. ऊँ वसिष्ठस्तृप्यताम्, ८. ऊँ प्रचेतास्तृप्यताम्,

९. ऊँ भृगुस्तृप्यताम्, १०. ऊँ नारदस्तृप्यताम्,

7.3.4 दिव्यमनुष्य तर्पण (प्रत्येक को दो–दो अञ्जलि यव सहित जल प्राजापत्य तीर्थ से अर्पण करे) :–

इसके पश्चात्यज्ञोपवीत को माला की भाँति गले में धारण करते हुए नींवीबन्धन करके (देवतर्पण तथा अन्य कार्यों में यज्ञोपवीत बायें कन्धे पर रहता है, इसकी उपवीत संज्ञा है, पितृकार्य में यज्ञोपवीत दायें कन्धे पर रहता है, इसको अपसव्य कहते है) पूर्वोक्त कुशों को दायें हाथ की कनिष्ठिका के मूलभाग मे उत्तराग्र रखकर स्वयं उत्तराभिमुख हो निम्नाङ्कित मन्त्र को पढ़ते हुए दिव्य मनुष्यों के लिए प्रत्येक को दो–दो अञ्जलि यव सहित जल प्राजापत्य तीर्थ (कनिष्ठिका के मूलभाग) से अर्पण करे :–

१. ऊँ सनकस्तृप्यताम्, २. ऊँ सनन्दनस्तृप्यताम्,

३. ऊँ सनातनस्तृप्यताम्, ४. ऊँ कपिलस्तृप्यताम्,

५. ऊँ आसुरिस्तृप्यताम्, ६. ऊँ वोढुस्तृप्यताम्,

७. ऊँ पञ्चशिखस्तृप्यताम्।

7.3.5 दिव्यपितृ तर्पण (दिव्य पितरों के लिए तीन–तीन अञ्जलि देवे) :–

तत्पश्चात्उन कुशों को द्विगुण–भुग्न करके उनका मूल और अनुभाग दक्षिण की ओर किये हुए उन ही उन्हें अङ्गुष्ठ और तर्जनी के बीच में रखे और स्वयं दक्षिणाभिमुख होकर बायें घुटने को पृथ्वी पर रखकर अपसव्य–भाव से (जनेऊ को दायें कन्धे पर रखकर) पूर्वोक्त पात्रस्थ जल में काले तिल (तिल और कुशा के साथ श्रद्धा से जो कुछ दिया जाता है, वह अमृतःप होकर पितरों को प्राप्त होता है। याज्ञवल्क्य के अनुसार देवताओं के लिए श्वेत, दिव्य मनुष्यों के लिए शबल और पितरों के लिए काले तिल का उपयोग करना चाहिए। अग्निपुराण के अनुसार जिसका पुत्र जीवित हो, उसके द्वारा तिल–तर्पण का निषेध किया गया है।) मिलाकर पितृतीर्थ से (अङ्गुष्ठ और तर्जनी के मध्यभाग से) दिव्य पितरों के लिए निम्नाङ्कित मन्त्रवाक्यों को पढ़ते हुए तीन–तीन अञ्जलि देवे। यथा –

१. ऊँ कव्यवाडनलस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

२. ऊँ सोमस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

३. ऊँ यमस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

४. ऊँ अर्यमा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

५. ऊँ अग्निष्वात्ताः पितरस्तृप्यन्ताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तेभ्यः स्वधा नमः।।

६. ऊँ सोमपाः पितरस्तृप्यन्ताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तेभ्यः स्वधा नमः।।

७. ऊँ बर्हिषदः पितरस्तृप्यन्ताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तेभ्यः स्वधा नमः।।

7.3.6 यमतर्पण :–

पूर्ववत्निम्नलिखित मन्त्र–वाक्यों को पढ़ते हुए चौदह यमों के लिए भी पितृतीर्थ से ही तीन–तीन अञ्जलि तिलसहित जल देवे :–

१. ऊँ यमाय नमः, २. ऊँ धर्मराजाय नमः, ३. ऊँ मृत्यवे नमः,

४. ऊँ अन्तकाय नमः, ५. ऊँ वैवस्वताय नमः, ६. ऊँ कालाय नमः,

७. ऊँ सर्वभूतक्षयाय नमः, ८. ऊँ औदुम्बराय नमः, ९. ऊँ दध्नाय नमः,

१०. ऊँ नीलाय नमः, ११. ऊँ ऊँ परमेष्ठिने नमः, १२. ऊँ वृकोदराय नमः,

१३. ऊँ चित्राय नमः, १४. ऊँ चित्रगुप्ताय नमः ।

७.१०. मनुष्य अथवा पितर तर्पण :–

तत्पश्चात्निम्नाङि्कत मन्त्र से पितरों का आवाहन करे :–

ॐ उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि।

अशन्नुशत आवाह पितृन्हविषे अत्तवे।।

हे अग्नि! तुम्हारे यजन की कामना करते हुए हम तुम्हे हविष्य स्थापित करते है। यजन की इच्छा रखते हुए तुम्हें प्रज्वलित करते है। हविष्य की इच्छा रखते हुए तुम भी तृप्ति की कामना वाले हमारे पितरों को हविष्य भोजन करने के लिए बुलाओ।

आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः।

अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्।।

हमारे सोमपान करने योग्य अग्निष्वात्त (जिनके शरीर का अग्नि ने आस्वादन किया है अर्थात्इस लोक में मृत्यु के पश्चात्जिनका शरीर दग्ध किया गया है, वे अग्निष्वात्त है।) पितृगण देवताओं के साथ गमन करने योग्य मार्गों से यहाँ आवें और इस यज्ञ में स्वधा से तृप्त होकर हमे मानसिक उपदेश देते हुए हमारी रक्षा करे।

तत्पश्चात्अपने पितृगणों (तर्पण में पितरों का क्रम – पिता, पितामह, प्रपितामह । माता, पितामही, प्रपितामही, सौतेली माता, मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह, मातामही, प्रमातामही, वृद्धप्रमातामही, पत्नी, पुत्र (सपत्नीक एवं पुत्र सहित), पति–पुत्र सहित पुत्री । पत्नी–पुत्रादि सहित फूफा तथा मौसी, बहिन तथा सौतेली बहन। पत्नी आदि सहित श्वसुर, सद्गुरु, शिष्य तथा आप्तपुरुष – ये सभी इसी क्रम से महालयविधि तथा तीर्थश्राद्ध एवं तर्पण के लिए पितर निश्चित किये गये है।) का नाम–गोत्र आदि उच्चारण करते हुए प्रत्येक के लिए पूर्वोक्त विधि से ही तीन–तीन अञ्जलि तिलसहित जल देवे। यथा–

ॐ अमुकगोत्रः अस्मत्पिता (पिता) अमुकशर्मा वसुःपातृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रः अस्मत्पितामहः (दादा) अमुकशर्मा रुद्रःपातृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रः अस्मत्प्रपितामहः (परदादा) अमुकशर्मा आदित्यःपातृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

नोट :– मतान्तर से गोभिल सूत्र के अनुसार स्त्रियों के नाम के अन्त में श्शदाच्य लगाना चाहिए।

अमुकगोत्रा अस्मन्माता (माता) अमुकीदेवी वसुःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रा अस्मत्पितामही (दादी) अमुकीदेवी रुद्रःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रा अस्मत्प्रपितामही (परदादी) अमुकीदेवी आदित्यःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नमाता (सौतेली माँ) अमुकीदेवी वसुःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

तत्पश्चात्अधोलिखित नौ मन्त्रों को पढ़ते हुए पितृतीर्थ से जल गिराते रहे :– ऊँ उदीरतामवर अत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः। असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु।।

इस लोक में स्थित, परलोक में स्थित और मध्यलोक में स्थित सोमभागी पितृगण क्रम से ऊर्ध्वलोक को प्राप्त हो। जो वायुःप को प्राप्त हो चुके है, वे शत्रुहीन सत्यवेत्ता पितर आवाहन करने पर यहाँ उपस्थित होकर हम सभी की रक्षा करे।

१. अङ्गिरसो नः पितरो न वग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः।

तेषां वय ऽ सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम।।

२. आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः।

अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्।।

३. ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्। स्वधास्य तर्पयत मे पितृन्।

४. पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः

स्वधायिभ्यः स्वधानमः। अक्षन्पितरोमीमदन्तपितरोतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम्।

५. ये चेह पितरो ये च नेह यांश्च विद्म याँ उ च न प्रविद्म।

त्वं वेत्थ याति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञ ऽ सुकृतं जुषस्व।।

६. मधु वता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्न सन्त्वोषधीः।।

मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिव ऽ रजः। मधु द्यौरस्तु नः पिता।।

मधुमान्नो वस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः।।

ऊँ मधु। मधु। मधु। तृप्यध्वम्। तृप्यध्वम्। तृप्यध्वम्।

७. ऊँ नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वः

पितरः स्वधायै

नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः पितरो नमो वो गृहान्न पितरो दत्त सतो

वः पितरो द्वेष्मैतद्वः पितरो वास आधत्त।

१. अङ्गिरा के कुल में, अथर्व मुनि के वंश में तथा भृगुकुल में उत्पन्न हुए नवीन गतिवाले एवं सोमपान करने योग्य जो हमारे पितर इस समय पितृलोक को प्राप्त है, उन यज्ञ में पूजनीय पितरों की सुन्दर बुद्धि में तथा उनके कल्याणकारी मन में हम स्थित रहे अर्थात्उनकी मन–बुद्धि में हमारे कल्याण की भावना बनी रहे।

२. हमारे सोमपान करने योग्य अग्निष्वात्त (जिनके शरीर का अग्नि ने आस्वादन किया है अर्थात्इस लोक में मृत्यु के पश्चात्जिनका शरीर दग्ध किया गया है, वे अग्निवात्त है।) पितृगण देवताओं के साथ गमन करने योग्य मार्गों से यहाँ आवें और इस यज्ञ में स्वधा से तृप्त होकर हमे मानसिक उपदेश देवे तथा वे हमारी रक्षा करे।

३. हे जल! तुम स्वादिष्ट अन्न के सारभूत रस, रोग, मृत्यु को दूर करने वाले घी और सभी प्रकार का कष्ट मिटाने वाले दुग्ध का वहन करते हो तथा सभी ओर प्रवाहित होते हो, अतएव तुम पितरों के लिए हविस्वःप हो, इसलिए मेरे पितरों को तृप्त करो।

४. स्वधा (अन्न) के प्रति गमन करने वाले पितरों को स्वधा (स्वधा वै पितृणामन्नम्) संज्ञक अन्न प्राप्त हो, उन पितरों को हमारा नमस्कार है। स्वधा के प्रति जाने वाले पितामहों को स्वधा प्राप्त हो, उन्हें हमारा नमस्कार है। स्वधा के प्रति गमन करने वाले प्रपितामहों को स्वधा प्राप्त हो, उन्हें हमारा नमस्कार है। पितर पूर्ण आहार कर चुके, पितर आनन्दित हुए पितर तृप्त हुए। हे पितरो! अब आपलोग (आचमन आदि करके) शुद्ध हो।

५. जो पितर इस लोक में वर्तमान है और जो इस लोक में नहीं (किन्तु पितृलोक में विद्यमान है) तथा जिन पितरों को हम जानते है और जिनको (स्मरण न होने के कारण) नहीं जानते है, वे सभी पितर जितने है, उन सभी को हे जातवेद अग्निदेव! तुम जानते हो। (पितरों के निमित्त दी जाने वाली) स्वधा के द्वारा तुम इस श्रेष्ठ यज्ञ का सेवन करो, इसे सफल बनाओ।

६. यज्ञ की इच्छा करने वाले यजमान के लिए वायु मधु (पुष्प–रस) की वर्षा करती है। बहने वाली नदियाँ मधु के समान मधुर जल का स्रोत बहाती है। समस्त औषधियाँ हमारे लिए मधुर रस से युक्त हो। हमारे रात–दिन सभी मधुमय हो। पिता के समान पालन करने वाला द्युलोक हमारे लिए मधुमय–अमृतमय हो। माता के समान पोषण करने वाली पृथ्वी की धूल हमारे लिए मधुमयी हो। वनस्पति और सूर्य भी हमारे लिए मधुमान (मधुर रस से युक्त) हो। हमारी समस्त गायें माध्वी – मधु के समान दूध देने वाली है।

७. हे पितृगण! तुम से सम्बन्ध रखने वाली रसस्वःप वसन्त–ऋतु को नमस्कार है, शोषण करने वाली ग्रीष्म–ऋतु को नमस्कार है, स्वधाःप शरद्–ऋतु को नमस्कार है, प्राणियों के लिए घोर प्रतीत होने वाली हेमन्त ऋतु को नमस्कार है, क्रोध स्वःप शिशिर–ऋतु को नमस्कार है। (अर्थात्तुम से सम्बन्ध रखने वाली सभी ऋतुएँ तुम्हारी कृपा से सर्वथा अनुकूल होकर सभी को लाभ पहुँचाने वाली हो) हे षड्ऋतुःप पितरो! तुम हमें (साध्वी पत्नी और सत्पुत्र आदि से युक्त) उत्तम गृह प्रदान करो। हे

पितृगण! इन प्रस्तुत दातव्य वस्तुओं को हम तुम्हे अर्पण करते है, तुम्हारे लिए यह (सूत्रःप) वस्त्र है, इसे धारण करो।

7.3.8 द्वितीय गोत्र तर्पण :–

इसके बाद द्वितीय गोत्र मातामह आदि का तर्पण करे, यहाँ भी पहले की ही भाँति अधोलिखित मन्त्रों को तीन–तीन बार पढ़कर तिलसहित जल की तीन–तीन जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे :–

ऊँ अद्य अमुकगोत्रः अस्मन्मातामहः (नाना) अमुकशर्मा वसुःपस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रः अस्मत्प्रमातामहः (परनाना) अमुकशर्मा रुद्रःपस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकशर्मा अमुकगोत्रः अस्मद्वृद्धप्रमातामहः (वृद्ध परनाना) आदित्यःपस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रा अस्मन्मातामही (नानी) अमुकी देवी वसुःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रा अस्मत्प्रमातामही (परनानी) अमुकी देवी रुद्रःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

अमुकगोत्रा अस्मद्वृद्धप्रमातामही (वृद्धनानी) अमुकी देवी आदित्यःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।।

पत्न्यादि तर्पण :– तत्पश्चात्यहाँ भी पहले की ही भाँति अधोलिखित मन्त्रों को पढ़कर तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे :–

अमुकगोत्रा अस्मत्पत्नी (भार्या) अमुकी देवी वसुःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – एक बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मत्सुतः (पुत्र) अमुकशर्मा वसुःपास्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रा अस्मत्कन्या (पुत्री) अमुकीदेवी वसुःपा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – एक बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मत्पितृव्यः (पिता के भाई) अमुकशर्मा वसुःपस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मन्मातुलः (मामा) अमुकशर्मा वसुःपस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मद्भ्राता (अपना भाई) अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मत्सापत्नभ्राता (सौतेला भाई) अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रा अस्मत्पितृभगिनी (बुआ) अमुकीदेवी वसु:पा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – एक बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रा अस्मन्मातृभगिनी (मौसी) अमुकीदेवी वसु:पा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – एक बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रा अस्मत्आत्मभगिनी (अपनी बहिन) अमुकीदेवी वसु:पा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – एक बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रा अस्मत्सापत्नसापत्नभगिनी (सौतेली बहिन) अमुकीदेवी वसु:पा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – एक बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मच्छ्वशुरः (श्वसुर) अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मद्गुरुः (गुरु) अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रा अस्मदाचार्य पत्नी (आचार्य की पत्नी) अमुकीदेवी वसु:पा तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – दो बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मच्छिष्यः (अपना शिष्य) अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मत्सखा (अपना मित्र) अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

अमुकगोत्रः अस्मदाप्तपुरुषः अमुकशर्मा वसु:पस्तृप्यताम्इदं सतिलं जलं (गङ्गाजलं वा) तस्मै स्वधा नमः।। – तीन बार तिलसहित जल की जलाञ्जलि पितृतीर्थ से देवे।

तत्पश्चात्सव्य होकर पूर्वाभिमुख होकर नीचे लिख श्लोकों को पढ़ते हुए जलाञ्जलि देवे :–

देवाऽसुरास्तथा यक्षा नागा गन्धर्वराक्षसाः।

पिशाचा गुह्यकाः सिद्धाः कूष्माण्डास्तरवः खगाः।।1।।

जलेचरा भूनिलया वाय्वाधाराश्च जन्तवः।

प्रीतिमेते प्रयान्त्वाशु मद्दत्तेनाम्बुनाखिलाः।।२।।

नरकेषु समस्तेषु यातनासु च ये स्थिताः।

तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया।।३।।

येऽबान्धवा बान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु ये चास्मत्तोयकाङ्क्षिणः।।४।।

देवता, असुर, यक्ष, नाग, गन्धर्व, राक्षस, पिशाच, गुह्यक, सिद्ध, कूष्माण्ड, वृक्षवर्ग, पक्षी, जलचर तथा थलचर जीव और वायु के आधार पर रहने वाले जन्तु – ये सभी मेरे दिये हुए जल से शीघ्र तृप्त हो। जो समस्त नरकों तथा वहाँ की यातनाओं में पड़े–पड़े दुःख भोग रहे हैं, उनको पुष्ट तथा शान्त करने की इच्छा से मैं यह जल देता हूँ। जो मेरे बान्धव न रहे हो, जो इस जन्म में मेरे बान्धव रहे हो अथवा किसी दूसरे जन्म में मेरे बान्धव रहे हो, वे सभी तथा इनके अतिरिक्त भी जो मुझसे जल पाने की इच्छा रखते हो, वे भी मेरे दिये हुए जल से तृप्त हो।

ऊँ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं देवर्षिपितृमानवाः।

तृप्यन्तु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः।।१।।

अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनाम्।

आब्रह्मभुवनाल्लोकादिदमस्तु तिलोदकम्।।२।।

येऽबान्धवा बान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मया दत्तेन वारिणा।।३।।

ब्रह्माजी से लेकर कीटों तक जितने जीव है, वे तथा देवता, ऋषि, पितर, मनुष्य और माता, नाना आदि पितृगण – ये सभी तृप्त होवे, मेरे कुल की बीती हुई करोड़ों पीढियों में उत्पन्न हुए जो–जो पितर ब्रह्मलोक पर्यन्त सात द्वीपों के भीतर कहीं भी निवास करते हो, उनकी तृप्ति के लिए मेरा दिया हुआ यह तिलयुक्त जल उन्हें प्राप्त हो। जो मेरे बान्धव न रहे हो, जो इस जन्म में या किसी दूसरे जन्म में मेरे बान्धव रहे हो, वे सभी मेरे दिये हुए जल से तृप्त हो जाये।

वस्त्र निष्पीडन् (वस्त्र निचोडने से जो जल निकलता है, वह स्नान करने वाले पुरुष के श्उच्छिष्टभागीय जीवों का भाग है, अतः उसे स्थल में निचोडना चाहिए। जब तक इन ऋषियों और पितरों का तर्पण न कर लेवे, तब तक मनुष्य उस वस्त्र को न निचोड़े जिसे पहनकर उसे स्नान किया हो, वस्त्र को चार आवृत्ति लपेटकर उसे जल से बाहर ले जाकर निचोड़े। फिर उसे बायीं कलाई पर रखकर दो बार आचमन करके पवित्र हो जाये।) :–

तत्पश्चात्वस्त्र को चार आवृत्ति लपेटकर जल में डुबाये और बाहर ले आकर अधोलिखित मन्त्र को पढ़ते हुए अपसव्य होकर अपने बायें भाग में भूमि पर उस वस्त्र को निचोड़े। पवित्रक को तर्पण किये हुए जल में छोड़

देवे, यदि घर में किसी मृत पुरुष का वार्षिक श्राद्ध आदि कर्म हो तो वस्त्र–निष्पीडन् नहीं करना चाहिए। मन्त्र :–

ये चास्माकं कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणो मृताः।

ते गृह्णन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडऩोदकम्।।

7.3.9 भीष्मतर्पण :–

तत्पश्चात्दक्षिणाभिमुख होकर पितृतर्पण के समान ही जनेऊ अपसव्य करके हाथ में कुशधारण किये हुए ही बाल ब्रह्मचारी भक्तप्रवर भीष्म के लिए पितृतीर्थ से तिलमिश्रित जल के द्वारा तर्पण करे।

मन्त्र :– **वैयाघ्रपदगोत्राय शाङ्कृतिप्रवराय च।**

गङ्गापुत्राय भीष्माय प्रदास्येऽहं तिलोदकम्।

अपुत्राय ददाम्येतत्सलिलं भीष्मवर्मणे।।

7.3.10 अर्घ्यदान :–

तत्पश्चात्शुद्ध जल से आचमन करके प्राणायाम करे। इसके बाद यज्ञोपवीत बायें कन्धे पर करके पात्र में शुद्ध जल भरकर उसके मध्यभाग में अनामिका से षड्दल कमल बनावे और उसमें श्वेत चन्दन, अक्षत, पुष्प तथा तुलसीदल छोड़ देवे। फिर दूसरे पात्र में चन्दन से षड्दल कमल बनाकर उसमें पूर्वादि दिशा के क्रम से ब्रह्मादि देवताओं का आवाहन–पूजन करे तथा पहले पात्र के जल से उन पूजित देवताओं के लिए अर्घ्य अर्पण करे। अर्घ्यदान का मन्त्र :–

ऊँ ब्रह्मज्ञानम्प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोव्वेनआवः।

सबुध्न्याऽ उपमाऽ अस्यविष्ठाः सतश्चयोनिमसतश्च व्विवः।।

ऊँ ब्रह्मणे नमः।

सर्वप्रथम पूर्व दिशा से प्रकट होने वाले आदित्यःप ब्रह्म ने भूलोक के मध्यभाग से आरम्भ करके इन समस्त सुन्दर कान्तिवाले लोकों को अपने प्रकाश से व्यक्त किया है तथा वह अत्यन्त कमनीय आदित्य इस जगत्की निवास स्थानभूत अवकाशयुक्त दिशाओं को, विद्यमान – मूर्तपदार्थ के स्थानों को और अमूर्त वायु आदि के उत्पत्ति स्थानों को भी प्रकाशित करता है।

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।
ऊँ विष्णवे नमः ।

सर्वव्यापी त्रिविक्रम (वामन) अवतारधारी भगवान्विष्णु ने इस चराचर जगत्को विभक्त करके (चरणों से) आक्रान्त किया है। उन्होने पृथ्वी, आकाश और द्युलोक – इन तीनों स्थानों में अपना चरण स्थापित किया है

अथवा उक्त तीनों स्थानों में वे क्रमशः अग्नि, वायु, सूर्य:प में स्थित है। इन विष्णु भगवान्के चरणों में समस्त विश्व अन्तर्भूत है। हम इनके निमित्त अग्नि हवि प्रदान करते है।

ऊँ नमस्ते रुद्द्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नम्। बाहुब्भ्यामुतते नम्।

ऊँ रुद्राय नमः।

हे रुद्र! आपके क्रोध और बाण को नमस्कार है तथा आपकी दोनों भुजाओं को नमस्कार है।

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रयोदयात्।।

ऊँ सवित्रे नमः।

हम स्थावर जङ्गमःप सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय सूर्यस्वःप परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते है, जो कि हमारी बुद्धि को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते रहते है।

ऊँ मित्रस्य चर्षणीधृतोऽवोदेवस्य सानसि। द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम्।।

ऊँ मित्राय नमः।

मनुष्यों का पोषण करने वाले दीप्तिमान्मित्र देवता का यह रक्षणकार्य सनातन यशःप से प्रसिद्ध, विचित्र तथा श्रवण करने योग्य है।

ऊँ इमम्मेव्वरुणत्त्शुधीहवमद्द्या च मृडय। त्वामवस्युराचके।।

ऊँ वरुणाय नमः।

हे संसार के अधिपति वरुणदेव! अपनी रक्षा के लिए मैं आपको आमन्त्रित करना चाहता हूँ, आप मेरे इस आवाहन को सुनिये और यहाँ शीघ्र पधारकर आज हमें सभी प्रकार के सुख प्रदान कीजिये।

सूर्योपस्थान :–

इसके बाद अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए सूर्योपस्थान करे :–

ऊँ अदृश्रमस्य केतवा विरश्मयो जनाँ २ अनु भ्राजन्तो अग्नयो यथा। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजयैष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजाय। सूर्य भ्राजिष्ठ भ्राजिष्ठस्त्वं देवेष्वसि भ्राजिष्ठोऽहम्मनुष्येषु भूयासम्। हव ŏ सः शुचिषद्द्वसुरन्तरिक्षसद्धोता वेदिषदातिथिर्दुरोणसत्नृषत्द्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत्।।

प्रज्ञा की हेतुभूत एवं सम्पूर्ण पदार्थों का ज्ञान कराने वली इन सूर्यदेव की किरणें समस्त प्राणियों के भीतर विशेषःप से अनुगत देखी गयी है, जैसे देदीप्यमान अग्नि सर्वत्र व्याप्त देखी जाती है। हे सोम! तुम उपयाम पात्र द्वारा गृहीत हो, मैं दीप्तमान सूर्यदेव के निमित्त तुम्हें ग्रहण करता हूँ, यह तुम्हारा स्थान है। मैं दीप्तिशाली भगवान्सूर्यदेव के लिए तुम्हें इस स्थान पर रखता हूँ। हे अत्यन्त देदीप्यमान सूर्यदेव! जिस

प्रकार तुम सभी देवताओं में अत्यन्त प्रकाशमान हो, उसी प्रकार तुम्हारे प्रकाश से मैं भी मनुष्यों में अत्यन्त प्रकाशमान होऊँ।

हे सूर्य भगवान्! आप अहंकार का नाश करने वाले, प्रकाश में गमन करने वाले अपने में सभी को निवासित करने वाले, वायु:प से अन्तरिक्ष में गमन करने, देवों को बुलाने वाले, अग्नि:प से वेदी पर स्थित होने वाले, सभी के पूजनीय, यज्ञशाला में आहवनीयादि अग्रि:प से प्राप्त होने वाले, प्राण :प से मनुष्यों में विचरने वाले, श्रेष्ठ स्थानों में गमन करने वाले, यज्ञ में प्राप्त होने वाले और आकाश में विचरने वाले है तथा आप जल में उत्पन्न होने वाले, चार प्रकार के प्राणियों के :प में पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाले, सत्य से उत्पन्न होने वाले, पर्वतों में होने वाले एवं सत्य:प और महान्है। मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

तत्पश्चात्दिग्देवताओं को पूर्वादि क्रम से नमस्कार करे :–

१. ऊँ इन्द्राय नमः – प्राच्यै, २. ऊँ अग्नये नमः – आग्नेय्यै,

३. ऊँ यमाय नमः – दक्षिणायै, ४. ऊँ निर्ऋतये नमः, नैर्ऋत्यै,

५. ऊँ वरुणाय नमः – पश्चिमायै, ६. ऊँ वायवे नमः – वायव्यै,

७. ऊँ सोमाय नमः – उदीच्यै, ८. ऊँ ईशानाय नमः – ऐशान्यै,

९. ऊँ ब्रह्मणे नमः – ऊर्ध्वायै, १०. ऊँ अनन्ताय नमः – अधरायै।

तत्पश्चात्जल में नमस्कार करे :–

१. ऊँ ब्रह्मणे नमः, २. ऊँ अग्नये नमः,

३. ऊँ पृथिव्यै नमः, ४. ऊँ ओषधिभ्यो नमः,

५. ऊँ वाचे नमः, ६. ऊँ वाचस्पतये नमः,

७. ऊँ महद्भ्यो नमः, ८. ऊँ विष्णवे नमः,

९. ऊँ अद्भ्यो नमः, १०. ऊँ अपाम्पतये नमः,

११. ऊँ वरुणाय नमः।

मुखमार्जन :– तत्पश्चात्अधोलिखित मन्त्र पढ़कर शुद्ध जल से मुखप्रक्षालन करे :–

ऊँ संवर्चसा पयसा सन्तूनभिरगन्महि मनसा स ঌ शिवेन त्वष्टा

सुदत्रो विदधातु रायाऽनुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम्।

हम ब्रह्मतेज से, क्षीर आदि रस से, कर्म करने में असमर्थ सुदृढ़ अङ्गों से और शान्त मन से संयुक्त हो। सम्यक्प्रकार से दान करने वाले तवष्टा देवता हमें धन देवे और हमारे शरीर में जो शक्ति आदि की न्यूनता आ गयी है, उसका मार्जन करे अर्थात्हमारे धन और शरीर की पुष्टि करे।

विसर्जन :–

अधोलिखित मन्त्र पढ़ते हुए विसर्जन करे :–

ऊँ देवा गातुविदो गातु वित्त्वा गातुमित।

मनसस्पत इमं देव यज्ञ ऽ्र स्वाहा वाते धाः।।

हे यज्ञवेत्ता देवताओं! आप लोग हमारे इस तर्पण :पी यज्ञ को समाप्त जानकर अपने गन्तव्यमार्ग को पधारे। हे चित्त के प्रवर्तक परमेश्वर! मैं इस यज्ञ को आप के हाथ में अर्पण करता हूँ, आप इसे वायु देवता में स्थापित करे।

समर्पण :–

अधोलिखित मन्त्रों से तर्पण–कर्म प्रभु के श्रीचरणों में समर्पित करे :–

अनेन यथाशक्तिकृतेन देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणाख्येन कर्मणा भगवान्मम समस्तपितृस्वःपी जनार्दनवासुदेवः प्रीयतां न मम।

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

ऊँ विष्णवे नमः। ऊँ विष्णवे नमः। ऊँ विष्णवे नमः।

7.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्छात्र स्वयं के स्तर पर स्नानाङ्ग तर्पण एवं नित्य कर्म में तथा पर्वों पर भी तर्पण करवाने में सक्षम हो सकेंगे। मनुष्य को देव–पितृ–ऋषि–मनुष्य आदि ऋणों से मुक्ति तथा इनकी तृप्ति हेतु तर्पण अवश्य करना चाहिए। इस इकाई में छात्रों को तर्पण का विधि–विधान साङ्गोपाङ्ग बताया गया है। इसके अन्तर्गत देवतर्पण का उल्लेख का किया गया है जिसके अन्तर्गत ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रादि देवताओं के लिए, ऋषितर्पण के अन्तर्गत मरीचि, अत्रि, अङ्गिरस आदि ऋषियों के लिए तथा मनुष्य तर्पण के अन्तर्गत सनक, सनन्दन, सनातन, कपिलादि दिव्यमनुष्यों के लिए तर्पण का विधि–विधान बताया गया है। दिव्यपितरों के अन्तर्गत कव्य, सोम, यम, अर्यमादि दिव्यपितरों का तर्पण, यमतर्पण के अन्तर्गत धर्मराज, मृत्यु, अनन्त, कालादि चौदह यमों का तर्पण तथा अपने पूर्वजों में पिता–पितामह–प्रपितामह–मातापितामही–प्रपितामही आदि का तर्पण बताया गया है। इस इकाई में अपने पितृकुल, मातृकुल तथा सभी सगे–सम्बन्धियों का तर्पण बताया गया है। तर्पण का प्रत्येक मनुष्य के जीवन में महत्त्व है, इसके बिना वह अपने पूर्वजों की तृप्ति नहीं कर सकता है।

7.5 शब्दावली

१. तर्पण	=	पितरों को जल देने की विधि,
२. देवतीर्थ	=	देवताओं को अंजलि देने का स्थान अर्थात्अङ्गुलियों का अग्रभाग
३. ब्रह्मतीर्थ	=	मणिबन्ध का स्थान
४. प्रमातामहः	=	परनाना
५. मातामह	=	नाना
६. वृद्धप्रमातामह	=	वृद्धपरनाना
७. मातामही	=	नानी
७. प्रमातामही	=	परनानी
८. वृद्धप्रमातामही	=	वृद्धपरनानी
९. पितामह	=	दादा
१०. प्रपितामह	=	परदादा
११. पितामही	=	दादी
१२. प्रपितामही	=	परदादी
१३. हंस	=	अहंकार का नाश करने वाले
१४. अन्तरक्षिसत्	=	वायु :प से अन्तरिक्ष में गमन अथवा विचरण करने वाले
१५. होता	=	देवों को बुलाने वाले
१६. वेदिषत्	=	वेदी पर स्थित होने वाले
१७. नृषत्	=	मनुष्यों में प्राण:प से विचरण करने वाले
१८. व्योमसत्	=	आकाश में विचरण करने वाले
१९. अब्ज	=	जल में उत्पन्न होने वाले
२०. ऋतजा	=	सत्य से उत्पन्न होने वाले

२१. अद्रज = पर्वतों में उत्पन्न होने वाले

7.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : देवतर्पण में प्रत्येक देव के लिए कितनी बार तर्पण किया जाता है?

उत्तर : देवतर्पण में प्रत्येक देव के लिए एक बार तर्पण किया जाता है।

प्रश्न – २ : मरीचि आदि ऋषियों के तर्पण में प्रत्येक ऋषि के लिए कितनी बार तर्पण किया जाता है।

उत्तर : ऋषियों के तर्पण में प्रत्येक ऋषि के लिए एक बार तर्पण किया जाता है ।

प्रश्न – ३ : सनकादि दिव्यमनुष्यों के तर्पण में प्रत्येक के लिए कितनी बार तर्पण किया जाता है?

उत्तर : सनकादि दिव्यमनुष्यों के तर्पण में प्रत्येक के लिए दो बार तर्पण किया जाता है।

प्रश्न – ४ : पितरों के लिए तर्पण में प्रत्येक के लिए कितनी बार तर्पण किया जाता है?

उत्तर : पितरों के लिए तर्पण में प्रत्येक के लिए तीन बार तर्पण किया जाता है।

प्रश्न – ५ : तर्पण का जल किस समय किस :प में पितरों को प्राप्त होता है?

उत्तर : तर्पण का फल सूर्योदय से आधे प्रहर तक अमृत, एक प्रहर तक मधु, डेढ़ प्रहर तक दूध तथा साढ़े तीन प्रहर तक जल :प से पितरों को प्राप्त होता है। इसके उपरान्त दिया गया जल राक्षसों को प्राप्त होता है।

7.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : तर्पण की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न – २ : देवतर्पण की विधि बताइये ?

प्रश्न – ३ : ऋषि व दिव्यमनुष्य तर्पण की विधि बताईये ?

प्रश्न – ४ : पितरों के तर्पण की विधि बताइये ?

प्रश्न – ५ : वस्त्र निष्पीडऩ से क्या तात्पर्य है? विधि बताइये।

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. धर्मशास्त्र का इतिहास

लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे

प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2. नित्यकर्म पूजा प्रकाश,

लेखक :– पं. बिहारी लाल मिश्र,

प्रकाशक :– गीताप्रेस, गोरखपुर।

3. अमृतवर्षा, नित्यकर्म, प्रभुसेवा

संकलन ग्रन्थ

प्रकाशक :– मल्होत्रा प्रकाशन, दिल्ली।

4 कर्मठगुरुः

लेखक – मुकुन्द वल्लभ ज्योतिषाचार्य

प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

5 हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

इकाई – 8

उत्तरकर्म

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 दशदान

8.4 प्राण त्यागने के पश्चात्

8.5 पञ्चक–शान्ति

8.6 अस्थि संचय

8.7 दशगात्र विधि

8.7.1 पिण्ड़दान मलिन षोड़शी

8.7.2 एकादशाह

8.7.2 उत्तम षोड़शी

8.8 सपिण्डन् श्राद्ध

8.9 शय्यादान

8.10 एकोद्दिष्ट श्राद्ध

8.11 सारांश

8.12 शब्दावली

8.13 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

8.14 लघुत्तरात्मक प्रश्न

8.15 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.1 प्रस्तावना

मृत्यु समय निकट देखकर पुत्र अथवा सम्बन्धी लोग भक्ति का उपदेश, भगवान्के नामों का उच्चारण, गायत्री मन्त्र का जाप, ऊँकार अथवा महामृत्युञ्जय का जाप, गङ्गा, राम, कृष्ण का स्मरण करवायें या जिसकी मृत्यु निकट आ गयी हो, उसे गीता, विष्णुसहस्रनाम, गङ्गा सहस्रनाम, श्रीमद्भगवद्गीता आदि पुण्य शास्त्रों का पाठ सुनावें, जिससे अन्तकाल में प्राणी भगवान्नाम को स्मरण अथवा श्रवण करते हुए मुक्त हो सके। प्राण प्रयाण के समय मृतक के मुख में गङ्गाजल, तुलसीदल, स्वर्ण अथवा पञ्चरत्न भी देना शास्त्रों का निर्देश है। इस समय कुटुम्बजन भूमि पर गोबर व मिट्टी का लेप करके तिल बिखेर देवे, कुशा डालकर उसके ऊपर ऊर्णवस्त्र बिछाकर उसके ऊपर मरणासन्न व्यक्ति को लिटा देवे, यदि सुवर्ण न हो तो सुवर्ण के अभाव में घृत की बूँद भी दे सकते है।

वैदिक सनातन धर्मालम्बी को मृत्यु के पश्चात्निम्न सामग्री एकत्रित करनी चाहिए

1 अर्थी बनाने के लिए बाँस आदि अर्थी पर बिछाने के लिए कुशासन अथवा चटाई।

2 सफेद नया कपड़ा मलमल का अथवा रामनाम की चद्दर।

3 सौभाग्यवती स्त्री के शव को पहनाने के लिए चुनरी और ढकने के लिए गोटे वाली रंगीन ओढऩी एवं अलंकृत करने के लिए सौभाग्यद्रव्य (सिन्दूर, चूड़ा, मेंहदी आदि)।

4 शव को बाँधने के लिए मूँज की रस्सी, साथ में मौली (सौभाग्यवती स्त्री) अथवा कच्चा सूत (पुरुषों के लिए)।

5 अर्थी को सजाने के लिए पुष्प एवं पुष्पमाला, अबीर–बुक्का, इत्र, रुई, धूपबत्ती, दियासलाई, थाली, लोटा, यज्ञोपवीत ।

6 लोकाचार से शव की परिक्रमा करने हेतु नारियल (पुरुष हेतु) तथा गोलागिरि (स्त्रियों के लिए)।

7 शव के ऊपर उछालने के लिए रजत अथवा स्वर्ण खण्ड़, सिक्के, रुई, धानका लावा, रुपये, श्वेत–पुष्प आदि।

पिण्ड़दान की सामग्री :– जौ का आटा, तिल, मधु, गोघृत, कुश, सफेद पुष्प, पलाश की पत्तल

8.2 उद्देश्य :

1 मृत्यु प्राप्त करने वाले की सद्गति हेतु पौरोहित्य का उचित ज्ञान प्रदान करना।

2 सामान्य जन में उचित रीति एवं भ्रान्ति का भेद स्पष्ट करना।

3 समाज में उत्तर कर्म की उपयोगिता सिद्ध करना।

4 उत्तमकर्म के शास्त्रीय विधानों को समझना।

8.3 दशदान

मृत्यु प्राप्ति के निकट पहुँच चुके सद्धति प्राप्ति के लिए व्यक्ति से सद्गति प्राप्ति हेतु दशदान एवं गोदान सङ्कल्पपूर्वक करवा लेने चाहिए :–

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय सुपूजित सालंकृत सवत्सगौदानमहं करिष्ये।

गोभूतिल हिरण्याज्यवासोधान्य गुड़ानिच।

रौप्यं लवणमित्याहु दशदानानि पण्डिताः।।

अर्थात् सद्गति प्राप्ति के लिए अलग अलग निरिष्ट सामग्रियों का उन–उन देवताओं की प्राप्ति के लिए पृथक संकल्प पूर्वक दान कराये जैसे – गौ, भूमि, स्वर्ण, छी, वस्त्र,धान्य, गुड़, रौप्य (रूप – चांदी) नमक आदि का दान करना चाहिए।

निम्नलिखित समस्त दानों को जल, अक्षत एवं द्रण्यादि यथा प्रचलन के अनुसार व्यक्ति के हाथों में रखकर ही सम्पन्न कराना चाहिए। किसी भी संकल्प में हथेली में जलाक्षत, इत्यादि होना अनिवार्य माना गया है।

विष्णु देवता के निमित्त भूमि दानः–

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय भूमिदानम् अहं करिष्ये।

भूमि सर्वाश्रया च या वराहेण समुद्धृता।

अनन्त पुण्यफलदा शान्तिदानात्प्रच्छतु।।

पुनः विष्णुदेवता के लिए तिल दान :–

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय द्रोणादिपरिमितानेतांस्तिलदानम् अहं करिष्ये।

महर्षे गोत्र सम्भूताः कश्यपस्य तिला स्मृता।

तस्मादेषां प्रदानेन सर्वपापं व्यपोहतु।।

अग्निदेवता के लिए स्वर्ण दान :–

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय स्वर्णदानम् अहं करिष्ये।

हिरण्यगर्भगर्भस्थ हेमबीजं विभावसो।

अनन्तं पुण्यं फलदमतः शान्ति प्रयच्छ मे।।

विष्णुदेवता के लिए घी दान :-

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्‌गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय घृतदानम् अहं करिष्ये।

कामधेनु समुद्‌भूतं सर्व यज्ञेषु संस्थितम्।

देवनामाज्यमाहारोदानेनास्या सुखं स्थिरम्।।

शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षकं परम्।

देहालङ्करणं वस्त्रं दानेनास्यास्तु मे सुखम्।।

प्रजापति देवता के लिए धान्य :- ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्‌गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय अन्नदानम्अहं करिष्ये।

सर्वदेवमयं धान्यं सर्वोत्पत्ति करं परम्।

प्राणिनां जीवनोपायो दानादस्य सुखं मम।।

सोम देवता के लिए गुड़ दान :- **ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्‌गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय गुडदानम्अहं करिष्ये।**

गुडमिक्षुरसोद्‌भुतं मन्त्राणां प्रणवोयथा।

दानेनास्य सदाशान्तिर्भवत्वीश प्रसादतः।।

चन्द्रदेवता के लिए रौप्य चांदी का दान :-

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थं शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्‌गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय रजतदानम्अहं करिष्ये।

रजतः प्रीतिश्च पितृणां विष्णुशङ्करयोस्तथा।

शिवनेत्रेतद्‌भवरौप्यमस्य दानेन मे सुखम्।।

सोमदेवता के लिए नमक दान :–

ऊँ अद्येत्यादि .... अनेकजन्मोपार्जितज्ञाताज्ञात कायिकवाचिकमानसिक सांसर्गिक समस्तपापानां निवृत्यर्थ शास्त्रोक्तफलप्राप्त्यर्थं भगवत्प्रीत्यर्थं सद्गतिप्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणः ब्राह्मणाय लवणदानम्अहं करिष्ये।

यस्मादन्ये रसाः सर्वे नोत्कृष्टाः लवणं बिना।

सोमः प्रीतिकरा यस्माद्दानेनास्य सदा सुखम्।।

गोदान :–

धेनुदान–पाप धेनुदान, ऋण धेनुदान, प्रायश्चित धेनुदान तथा वैतरणी धेनुदान – ये चार धेनुदान सन्तान अपने माता–पिता से करवायें। मरण समय उक्त पापों को दूर करने के लिए धेनुदान करे, धेनु के अभाव में यथाशक्ति गाय का मूल्य रखकर मुंह पूर्व या उत्तर की ओर करके पृथक्–पृथक्सङ्कल्प करे :–

१. पापधेनुदान :– पापधेनवे नमः सम्पूज्य, श्वेत गाय का पूजन करके ब्राह्मण का पूजन करे। फिर सङ्कल्प करे :– अद्येत्यादि .... अमुकोऽहं मम सर्व क्षयपापपूर्वकं स्वर्गलोकावाप्तये इमां सुपूजितां श्वेतां गां रुद्र दैवता वा तन्निष्क्रयीभूतद्रव्यं चन्द्रादिदैवतं अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यं सम्प्रददे न मम।

पुनः गाय की प्रार्थना करे :– **आजन्मोपार्जितं पापं मनोवाक्कायकर्मभिः।**

तत्सर्वनाशमायातु पापधेनुप्रदानतः।।

२. ऋण धेनुदान :– ऋणधेनवे नमः सम्पूज्य, रक्त गौ का पूजन करके ब्राह्मण का पूजन करे। फिर सङ्कल्प करे :– अद्येत्यादि .... अमुकोऽहं मम अनेकजन्मार्जितपापप्रशमनपूर्वकसद्गतिप्राप्तये सुपूजितामिमाऋणधेनुरक्तां ब्रह्मदैवतां अमुकगोत्राय अमुकशर्म्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यं सम्प्रददे।

पुनः गाय की प्रार्थना करे :– **ऐहिकामुष्मिकं यच्च सप्तजन्मार्जितं मम।**

विजयं तदृणं यातु गामेतां प्रदतो मम।।

३. प्रायश्चित धेनुदान :– प्रायश्चित धेनवे नमः, गौ का पूजन करके ब्राह्मण का पूजन करे। फिर सङ्कल्प करे :– अद्येत्यादि .... अमुकोऽहं मम सप्तजन्मार्जितज्ञाताज्ञात अनेकविधप्रायश्चित्तोपयोगीसमस्तदुरितदूरीकरणीपूर्वक सद्गतिप्राप्तये इमां सुपूजितां प्रायश्चित्तधेनुम्अमुक गोत्रया अमुक शर्म्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यं सम्प्रददे।

पुनः गाय की प्रार्थना करे :– **प्रायश्चित्ते समुत्पन्ने निष्कृतिर्न कृता मया।**

सर्वपाप शान्त्यर्थं धेनुर्येषार्पिता मया।।

४. वैतरणि धेनुदान :– वैतरणि धेनवे नमः, कृष्ण गौ का पूजन करके ब्राह्मण का पूजन करे। फिर सङ्कल्प करे :– अद्येत्यादि .... अमुकोऽहं मम जन्मजन्मान्तर्जितपापापनोदन पूर्वकशतयोजनविस्तृर्णां वैतरणीनदीं तर्तुकामाय सुपूजितां वैतरणीयधेनुमिमां यमराजदेवतां अमुकगोत्राय अमुकशर्म्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यं सम्प्रददे।

पुनः गाय की प्रार्थना करे :– **यमद्वारे पथे घोरे घोरां वैतरणीनदीम्।**

तर्तुकामः प्रयच्छामि कृष्णां वैतरणीं चगाम्।।

मोक्ष धेनुदान :– गौ पूजन–आवाहन

आवाहयाम्यहं देवीं गां त्वां त्रयलोक्यमातरम्।

यस्या स्मरणमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते।।

त्वं देवी त्वं जगन्माता त्वमेवासि वसुन्धरा।

गायत्री त्वं च सावित्री गङ्गा त्वं च सरस्वती।।

तृणानि भक्ष्यसे नित्यं अमृतं स्रवसं प्रभो।

भूतप्रेत पिशाचांश्च पितृदेवर्षि मानुषान्।।

सर्वास्तारयते देवीनरकात्पापसङ्कटात्।

गाय का पूजन गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा से करते हुए ब्राह्मण पूजन करके सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकोऽहं मम ज्ञाताज्ञात मनोवाक्काय कर्मजन्य पापप्रशमन पूर्वकं मुक्ति हेतवे सुपूजितां कपिलां मोक्षधेनुमिमां रुद्रदेवता मोक्षप्राप्तये अमुकगोत्राय अमुकशर्म्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यं सम्प्रददे।

प्रार्थना :– **मोक्षं देहि जगन्नाथ! मोक्षं देहि जनार्दनः।**

मोक्षधेनुप्रदानेन श्रीविष्णुः प्रीयतां मम।।

8.4 प्राण त्यागने के प�चात्

मरणोपरान्त सर्वप्रथम कर्म करने वाला (पुत्र अथवा उत्तराधिकारी) दक्षिणाभिमुख होकर मुण्डऩादि करवाये तथा स्नान करके द्वादश तिलकों को धारण करे, मृतव्यक्ति को भी शुद्ध जल अथवा गङ्गाजल (यथोपलब्ध केवड़ा इत्यादि सुगन्धित जल) से स्नान करवाकर नवीन मृतवस्त्र (मृतचौल अथवा क+फन) धारण करवाये। गोपीचन्दन का तिलक लगाये, पुष्पमाला धारण करवाये तथा यथाशक्ति अर्थी (मृत्युशैय्या) को सुसज्जित करके उसमें मृतक का सिर दक्षिण की ओर रखते हुए अर्थी पर लेटाकर यथोचित सामग्री से इस तरह बाँध लेवे कि शव रास्ते मे अव्यवस्थित ना हो सके।

जौ का आटा व तिलादि को मिलाकर पाँच पिण्ड (देशाचार के अनुसार छः पिण्ड) बनाये।

१. मृतक शैय्या (मृतस्थान) के पास जाकर अपसव्य होकर जल–तिल–कुश आदि से पितृतीर्थ (अङ्गूठे की ओर से) की मुद्रा से सङ्कल्प करे – .... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य मृतस्थाने एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्। – उच्चारित करते हुए पिण्ड को मृतक के हाथ में रख देवे।

२. द्वारदेश का पिण्ड (मृतक के घर की देहली का पिण्ड) :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य द्वारदेशे पान्थनिमित्त एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

३. चतुष्पद पिण्ड (चौराहे का पिण्ड) :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य चत्वरे खेचर निमित्त एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

४. विश्राम–स्थल पिण्ड (बीचले वासे का पिण्ड़) :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य विश्रान्तो भूतनाम्ना एष ते पिण्डो मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

५. चिता स्थान का पिण्ड :–

.... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य साधकनामप्रेतःएषः चित्रगुप्तदैवतः चितापिण्डस्ते मया दीयते तव उपतिष्ठताम्।

पुनः अवनेजलन (जल–तिल) पिण्ड़ पर डाल देवे। पश्चात्शव के मस्तक की दूसरी तरफ भूमि को शुद्ध करके पञ्चभूसंस्कार करके क्रव्य नामक अग्नि को जलावे और पूजन करते हुए निम्न आहुतियाँ देवे :–

१. ऊँ लोमेब्भ्य स्वाहा	२. ऊँ त्त्वचे स्वाहा	३. ऊँ लोहिताय स्वाहा
४. ऊँ मेदोब्भ्य स्वाहा	५. ऊँ माœ सेब्भ्य स्वाहा	६. ऊँ स्न्नावब्भ्य स्वाहा
७. ऊँ अस्त्थब्भ्य स्वाहा	८. ऊँ मज्जब्भ्य स्वाहा	९. ऊँ रेतसे स्वाहा
१०. ऊँ पायवे स्वाहा	११. ऊँ आयासाय स्वाहा	१२. ऊँ प्प्रायासाय स्वाहा
१३. ऊँ सँय्यासाय स्वाहा	१४. ऊँ व्वियासाय स्वाहा	१५. ऊँ उद्द्यासाय स्वाहा
१६. ऊँ शुचे स्वाहा	१७. ऊँ शोचते स्वाहा	१८. ऊँ शोचमानाय स्वाहा
१९. ऊँ शोकाय स्वाहा	२०. ऊँ तपसे स्वाहा	२१. ऊँ तप्प्यते स्वाहा
२२. ऊँ तप्प्यमानाय स्वाहा	२३. ऊँ तप्प्ताय स्वाहा	२४. ऊँ धर्म्माय स्वाहा
२५. ऊँ निष्क्कृत्त्यै स्वाहा	२६. ऊँ प्प्रायश्श्चित्त्यै स्वाहा	२७. ऊँ भेषजाय स्वाहा

२८. ऊँ यमाय स्वाहा २६. ऊँ अन्तकाय स्वाहा ३०. ऊँ मृत्यवे स्वाहा

३१. ऊँ ब्रह्मणे स्वाहा ३२. ऊँ ब्रह्महत्यायै स्वाहा

३३. ऊँ विश्वेभ्यो देवेभ्य स्वाहा

३४. ऊँ द्यावापृथिवीभ्याœ स्वाहा।।

हवन के पश्चात्जलती हुई अग्नि में लेकर मुँह दक्षिण दिशा में रखकर यह मन्त्र पढ़े :–

ऊँ कृत्वासुदुष्कृतं कर्म जानता वाप्यजानता।

मृत्यु कालवशं प्राप्य नर पञ्चत्वमागताः।।

धर्माधर्मसमायुक्तः लोभमोहसमावृतः।

देहेयं सर्वगात्रणि दिव्यान्लोकान्सगच्छतु।।

हाथ की अग्नि को लेकर चिता की परिक्रमा करते हुए सिर की तरफ से चिता में अग्नि देवे।

8.5 पञ्चक–शान्ति

यदि पंचक के भीतर किसी की मृत्यु हो जाये तब धनिष्ठादि पञ्चनक्षत्रों में मृत व्यक्ति की पञ्चक–शान्ति हेतु कुशा से पाँच प्रतिमायें बनाकर सङ्कल्प करे :–

देशकालौ सङ्कीत्र्य .... अद्य अमुकगोत्रः अमुकप्रेतस्य पञ्चकमरणजनितवशारिष्टपरिहारार्थं पञ्चकशान्तिकर्म अमुकामुक अहं करिष्ये।

दर्भमय पाँच प्रतिमाओं को ऊन के वस्त्र से वेष्टित करके निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करके अग्नि में आहुति देकर यथास्थान रखे। धनिष्ठादि पाँच नक्षत्रों की निम्न मन्त्रों से पूजन करके आहुतियाँ देवे :–

१. धनिष्ठा :– ऊँ व्वसो् पवित्रमसि शतधारं व्वसो् पवित्रमसि सहस्रधारम्।

देवस्त्वा सविता पुनातुव्वसो् पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्ष्।

१.१. ऊँ प्रेतवाहाय नमः – सिर पर

२. शतभिषा :– ऊँ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो व्वरुणस्य ऽ

ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽ ऋतसदनमासीद।।

२.१. ऊँ प्रेतसखाय नमः – नेत्रों पर

३. पूर्वाभाद्रपद :– ऊँ उतनोहिर्बुध्न्यः शृणोत्वजऽएकपात्पृथिवीसमुद्रः।

विश्वेदेवा ऋतावृधोहुवानास्तुतामन्त्राः कविशस्ताऽअवन्तु।।

३.१. ऊँ प्रेतमाय नमः – वामकुक्षि पर

४. उत्तराभाद्रपद :– ऊँ शिवो नामासि स्वधितिस्त्ते पिता नमस्त्तेऽअस्तु मा मा हि सी।

निवर्त्तयाम्म्यायुषेन्नाद्द्याय प्रजननाय रायस्प्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्य्याय।

४.१. ऊँ प्रेतभूमिपाय नमः – नाभि पर

५. रेवती :– ऊँ पूषन्तवव्रतेव्वयन्नरिष्येन्न कदाचन। स्तोतारस्तऽइहस्मसि।।

५.१. ऊँ प्रेतहर्त्रे नमः – चरणों पर

कपाल क्रिया :–

शव के अर्द्धदग्ध होने पर कर्मकर्ता बाँस के डण्डे को आगे से तोड़कर नारियल में घी भरकर सिर के ब्रह्मरन्ध्र का छेदन (कपाल–क्रिया) करे। तत्पश्चात्सभी व्यक्ति अपने स्थान का परित्याग करते हुए मृतक को गोमयपिण्ड (छाणे/कण्डे/समिधादान) समर्पित करे। अत्येष्टि के पश्चात्शुद्ध जल से स्नानादि करके मृतक के निमित्त पीपलादि वृक्ष में जलाञ्जलि देकर घर को प्रस्थान करे।

8.6 अस्थि संचय

प्रथम दिवस से दस दिन के भीतर मृतक की अस्थियों को गङ्गा आदि पवित्र नदीयों में प्रवाहित करने का विधान है। चिता भस्म को ठण्डी होने के बाद पहले या तीसरे दिन एक मिट्टी या ताँबे की मटकी को शुद्ध कर लेवे, अपसव्य होकर कर्मकर्ता अनामिका अङ्गुष्ठ से मृतक की अस्थियों को चुने। अस्थियों को गङ्गाजल व दूध से धोकर कलश में रखे, रेशमी वस्त्र से ढककर तीर्थ में भेजने की व्यवस्था करे अथवा बाद में भेजना हो तो अस्थिकलश को सुरक्षित स्थान में रखे देवे।

अस्थि संचय में क्षेत्रविशेष :– सामान्यतया अस्थि संचय तीसरे दिन होता है क्योंकि चिता की अग्नि को शान्त होने में समय लगता है तत्पश्चात्परिवारजन अस्थ्यिों को गङ्गा आदि पवित्र नदीयों में प्रवाहित करते है।

गङ्गानदी या अन्य पवित्र नदियों के किनारे पर रहने वाले लोग दाह–संस्कार वाले दिन ही अस्थि–संचय/अस्थि–विसर्जन कर देते है। अतः यहाँ देश–काल–परिस्थिति के अनुसार कार्य करना चाहिए।

पुनः चिता की भस्म को जल में बहाकर अन्य लोग (पुत्रादि बान्धव) दक्षिण मुखकरके मुण्डन् करावे। अर्थी को ले जाने वाले दक्षिणमुख कर अपसव्य होकर (सगोत्री) जलाञ्जलि देवे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रामुकप्रेततच्चिता दाहोपशमनार्थं एषा तिलतोयाञ्जलिस्ते मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।

पुनः घर के लिए प्रस्थान करे, घर में गोमूत्र अथवा जल आदि का स्पर्श कर अन्य इष्ट–मित्र स्वगृह हेतु प्रस्थान करे। कर्मकर्ता ब्रह्मचर्य होकर एक समय भोजन करे, पृथ्वी पर सोये। दशगात्र में गरुड़–पुराण की कथा का श्रवण करे, जिससे मृतक की आत्मा को शान्ति पहुँचे।

कर्मकर्ता घर आकर नीम के पत्ते को दाँतों से काटे, ऐसा भी प्रचलन है। सायंकाल मृतक स्थान पर बाहरवें दिन तक दीपक जलायें।

8.7 दशगात्र विधि

दशगात्र की सामग्री लेकर गाँव/नगर के बाहर पीपल के वृक्ष के पास नदी/तालाब के समीप श्राद्ध भूमि बनाकर पिण्ड़दान की व्यवस्था कर्मकर्ता शिखा खोलकर स्नान के लिए सङ्कल्प करे। अपसव्य होकर कुश–तिल जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य (स्त्री हो तो – गोत्रयाः प्रेतायाः) प्रेतत्वनिवृत्तये उत्तमलोकप्राप्त्यर्थं च करिष्यमाण प्रथमदिनकृत्यर्थं (जितने दिन हो, वैसा कहे) स्नानमहं करिष्ये।

स्नान के पश्चात्तिलाञ्जलि अथवा जलाञ्जलि देवे (तिलतोय अंजलि दश दिन तक प्रत्येक एक–एक अंजलि बढ़ाकर देवे) :– अद्येत्यादि ...... अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य चितादाहजनिततापशमनार्थं प्रथमदिनसमन्धि एष तिलतोयाञ्जलिर्मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।

तत्पश्चात्चतुर्दश यम तर्पण करे (अपसव्य होकर कुश–तिल सहित प्रत्येक के जल की तीन अञ्जलि देते हुए यमतर्पण करे) :–

ऊँ यमाय नमः .. ३, ऊँ धर्मराजाय नमः .. ३, ऊँ मृत्यवे नमः .. ३, ऊँ अन्तकाय नमः .. ३, ऊँ वैवश्वताय नमः .. ३, ऊँ कालाय नमः .. ३, ऊँ सर्वभूतक्षयाय नमः .. ३, ऊँ औदुम्बराय नमः .. ३, ऊँ दध्नाय नमः .. ३, ऊँ नीलाय नमः .. ३, ऊँ परमेष्ठिने नमः .. ३, ऊँ वृकोदराय नमः .., ऊँ चित्राय नमः .. ३, ऊँ चित्रगुप्ताय नमः .. ३ ।

चितानल विधि :–

यह कार्य प्रथम दिन से दस दिन तक होता है। जहाँ पिण्ड देना हो, वहाँ भूमिलेपन कर यव का चूर्ण लेकर उसमें तिल डालकर पिण्ड़ बना देवे, यह कार्य चतुर्थ दिन से दशम दिन तक करना है, यदि चतुर्थ दिन हो तो चार अथवा जितने दिन मृतक के हो गये हो, उतने ही पिण्ड़ का निर्माण करना चाहिए, केवल दसवें दिन उड़द की दाल के चूर्ण का पिण्ड़ बनाना चाहिए।

घटदीप :– यथासम्भव पीपलवृक्ष की शाखा पर शरीर की सङ्कल्पना करते हुए जलपूर्ण मिट्टी का कलश लटकाकर कलश में नीचे छिद्र कर ऐसी व्यवस्था करे, जिससे जल बूँद–बूँद टपकता रहे। कलश के ऊपर दीपक स्थापित करे अथवा त्रिकाष्ट के ऊपर कलश को स्थापित कर उसमें दूध और जल डाल देवे जिसकी जलधारा नीचे रखे चिता भस्म अथवा कुश के बनाये प्रेत पर बूँद–बूँद पड़ती रहे :–

घटपूजन :– अकामे तु निरालम्बो वायुभूत निराश्रय।

प्रेतघण्टो मयादत्तस्तवैष उपतिष्ठताम्।।

चितानल प्रदग्धोऽसि परित्यक्तोऽसिबान्धवैः।

इदं नीरमिदं क्षीरं अत्र स्नाहि इदं पिब।।

प्रेत स्थापित करने के लिए पूर्व से पश्चिम दिशा में वेदी बनाये, कर्मकर्ता कुशा के आसन पर बैठे। ब्राह्मण कर्मकर्ता के गङ्गा की मिट्टी से ललाट, हृदय, नाभि, कण्ठ, पृष्ठ, दोनों भुजा पीठ, दोनों कर्ण, मस्तक मन्त्रोच्चार सहित पर तिलक लगायें–

तिलकं च महत्पुण्यं पवित्रं पापनाशनम्।

आपदां हरते नित्यं ललाटे हरिचन्दनम्।।

तत्पश्चात्कर्मकर्ता दो कुशा की पवित्री दाहिनें हाथ की अनामिका तथा तीन कुशा की पवित्री बायें हाथ की अनामिका में पहन लेवे। नीवी बन्धन करके शिखा तथा आसन में भी कुशा रख लेवे, आचमन शिखाबन्धन प्राणायाम कर बायें हाथ में जल लेकर निम्नलिखित मन्त्र से शरीर पर छींटे देवे :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

भूमि पूजन करके जल लेकर कर्मकर्ता श्राद्ध हेतु सङ्कल्प करे :–

देशकालौ सङ्कीत्र्य अमुकवासरे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्व विमुक्तये सद्गतिप्राप्त्यर्थे प्रथमदिवसादारभ्य दशमाह्निकश्राद्धमहं करिष्ये।

चितानल पूजन हेतु सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य चितादाहोपशमनार्थं प्रेतत्वविमुक्तये दशगात्रनिष्पत्यर्थञ्च प्रथमदिन सम्बन्धि रौरवनामनरकोत्तारणाय विष्णुस्वःपचितानलपूजनं करिष्ये।।

कर्मकर्ता पूर्वमुखी होकर हाथजोड़कर पितृगायत्री का स्मरण करे :–

ऊँ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमोनमः।।

अपसव्य होकर बायाँ घुटना मोड़कर दातुन हाथ में लेकर दक्षिणमुखी होकर घड़े में डाल देवे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रामुकप्रेतशौचार्थे प्रथमदिनसम्बन्धितदन्तधावनं काष्ठमेतन्मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।

थोड़ी मिट्टी भी घड़े में छोड़ देवे, सव्य होकर चितानल का पूजन करे :–

विष्णुस्वःप चितानलाय नमः, गन्धाक्षतं पुष्पाणि धूपदीपनैवेद्यं दक्षिणा च समर्पयामि।

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

पूजन करते हुए प्रार्थना करे :–

ऊँ अनादि निधनो देवः शङ्खचक्रगदाधरः।

अक्षयः पुण्रीकाक्षः प्रेतमोक्ष प्रदोभव।।

ऊँ अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिकाः।

पुरी द्वारावती ज्ञेया सप्तैता मोक्षदायिकाः।।

प्रार्थना करके अपसव्य होकर दक्षिणमुखी होकर बायाँ घुटना झुकाकर तिल–जल से कलश के प्रत्येक के लिए तीन तर्पण करे :–

ऊँ यमाय नमः .. ३, ऊँ धर्मराजाय नमः .. ३, ऊँ मृत्यवे नमः .. ३, ऊँ अन्तकाय नमः .. ३, ऊँ वैवश्वताय नमः .. ३, ऊँ कालाय नमः .. ३, ऊँ सर्वभूतक्षयाय नमः .. ३, ऊँ औदुम्बराय नमः .. ३, ऊँ दध्ने नमः .. ३, ऊँ नीलाय नमः .. ३, ऊँ परमेष्ठिने नमः .. ३, ऊँ वृकोदराय नमः .. ३, ऊँ चित्राय नमः .. ३, ऊँ चित्रगुप्ताय नमः .. ३ ।

चितानल पूजन करके पिण्ड़ वेदी के पास आ जाये।

8.7.1 पिण्डदान मलिनषोड़शी

प्रेत शरीर पिण्ड़ निर्माण प्रक्रिया के समय दस दिन के आशौचकाल में जो पिण्ड़दान श्राद्ध कर्म अनिवार्यतः किये जाते है, वह मलिनषोड़शी के अन्तर्गत आते है। वह सभी मृतकों के लिए अनिवार्य है। इसी के द्वारा प्रेत के पिण्ड़ निर्माण के दशगात्र के :प में सम्पूर्ण दशपिण्ड़ से पिण्ड़शरीर निर्माण को सम्पन्न कराये। कर्मपात्र स्थापित करके उसमें जल–दूध आदि निम्नलिखित मन्त्रों से छोड़ देवे :–

जल :– ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँौरभिस्रवन्तुनः।।

दूध :– ऊँ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्।।

तिल :– ऊँ तिलोसि सोमदैवत्यो गोसवो देव निर्मितः। प्रत्नमद्भि पृक्तः स्वधयापितृलोकान्प्रीणाहि नः।।

यव :– ऊँ यवोऽसियवयास्मद्वेशोयवयारातीः।।

कुश :– ऊँ पवित्र्रेस्थो वैष्णव्यो सवितुर्वः प्रसवः। उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।।

कुशा से जल को हिलावे :– **ऊँ यद्देवादेवहेडनं देवाशश्चकृमाव्ययम्।**

अग्र्मिा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

यदि दिवा यदिनक्तमेनांसि च कृमा वयम्।

वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान मुञ्चत्व œ हसः।।

यदि जाग्रद्यपि स्वप्न एनांसि च कृमा वयम्।

सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान् मुञ्चत्व œ हसः।।

इस जल से कुशा के द्वारा सामग्री पर छींटा देकर (तिल–जल–कुशा में हाथ में लेकर) सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये प्रथमदिन सम्बन्धि रौरवनाम नरकोत्तारणाय मूर्धावयवनिष्पत्यै शिरः पूरक पिण्डदानं करिष्ये।

अपसव्य होकर बायें पैर को जमीन पर झुकाकर दक्षिणमुखी होकर तिल–जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रथमदिनसम्बन्धि शिरः पूरक पिण्ड़स्थाने इदमासनं मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

प्रेत के लिए एक कुश पर गाँठ बाँधकर प्रेत को समर्पित करे :–

गतोऽसि दिव्यलोकांस्त्व कर्मणा प्राप्त सत्पथः।

मनसा वायुःपेण कुशे त्वां विनियोजये।।

प्रेत के पैर धोने के लिए कर्मकर्ता तीन बार जल देवे :– एतत्ते पाद्यं पदावनेजनं पादयोः। पादप्रक्षालनम्।

एक पात्र में जल लेकर दूध–तिल–पुष्प से अर्घ्यपात्र बनाये, कुशा की चट पर डाले :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं हस्तार्घ्यमुपतिष्ठताम्।

स्नान के जल चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं स्नानमुपतिष्ठताम्।।

तीन सूत का धागा चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं एतत्ते वासः उपतिष्ठताम्।।

ऊर्ण सूत्र चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं एतत्ते ऊर्णसूत्रः उपतिष्ठताम्।।

तर्जनी अङ्गुली से चन्दन चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं चन्दनमुपतिष्ठाम्।।

तिल–अक्षत चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं एतानि अक्षतानि उपतिष्ठताम्।।

राल का धूप दे एवं दीप दिखावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं एतत्ते धूपमुपतिष्ठाम्।।

अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं एतत्ते दीपमुपतिष्ठाम्।।

नैवेद्य चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं एतत्ते दीपमुपतिष्ठाम्।।

दक्षिणा चढ़ा देवे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं दक्षिणामुपतिष्ठताम्।।

ताम्बूल चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं ताम्बूलमुपतिष्ठताम्।।

जल चढ़ावे :– अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य इदं पिण्डस्थाने अवनेजनं तवोपतिष्ठताम्।।

पहले दिन का पिण्ड़ तिल–कुश–जल के साथ हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य शिरः पूरकः एषः।

प्रथमदिवसीयः पिण्डोमयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

सङ्कल्प करके अङ्गुष्ठ की तरफ से पिण्ड़ को वेदी के कुश के ऊपर रख देवे, फिर एक दोने में जल लेकर पिण्ड़ के ऊपर अङ्गुष्ठ की ओर जलधारा देवे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य तेऽवनेजनं मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

पिण्ड़ पूजन–पिण्ड़ के ऊपर पूजन के लिए निम्न सामग्री चढ़ा देवे :–

स्नान हेतु जल :– पिण्ड़ोपरि स्नानीयजलं उपतिष्ठताम्।

कार्पास सूत्र :– पिण्ड़ोपरि कार्पाससूत्रम्उपतिष्ठताम्।

ऊर्ण सूत्र :– पिण्ड़ोपरि ऊर्णसूत्रम्उपतिष्ठताम्।

चन्दन :– पिण्ड़ोपरि चन्दनमुपतिष्ठताम्।

तिलाक्षत :– पिण्ड़ोपरि तिलाक्षतम्उपतिष्ठताम्।

पुष्प :– पिण्ड़ोपरि पुष्पम्उपतिष्ठताम्।

भृङ्गराज :– पिण्ड़ोपरि भृङ्गराजं दीयते उपतिष्ठताम्।

रालधूप :– पिण्ड़ोपरि रालधूपम्उपतिष्ठताम्।

दीप :– दीपमुपतिष्ठताम्।

नैवेद्य :– एतत्ते नैवेद्यम्उपतिष्ठताम्।

दक्षिणा :– दक्षिणाचोपतिष्ठताम्।

हरिद्रा (हल्दी) :– चर्मपूरक हरिद्राग्रन्थिः तवोपतिष्ठताम्।

मजीठ :– रक्तपूरितं मञ्जिष्ठा तवोपतिष्ठताम्।

खस :– नासाजालोत्पादकं खशं तवोपतिष्ठताम्।

कमलगट्टा :– षट्चक्रपूरकं कमलबीजं तवोपतिष्ठताम्।

आँवला :– वीर्यपूरकधात्रीफलं तवोपतिष्ठताम्।

शतावरी :– दन्तोत्पादकानिशतावरीमूलानि उपतिष्ठताम्।

तिलतोय पात्र हाथ में लेकर निम्र मन्त्र से पिण्ड़ के ऊपर देवे :–

अमुकगोत्रः अमुकप्रेतः चितादाहजनिततापतृषोपशमनाय प्रथमदिनसम्बन्धित एतत्तिलतोयं मद्दतं तवोपतिष्ठताम्।

तिलतोयाञ्जलि प्रथम दिन एक तथा दूसरे दिन दो, इस वृद्धिक्रम से तिल सहित जलाञ्जलि देवे :–

प्रार्थना :– **ऊँ अनादि निधनो देवः शङ्खचक्र गदाधरः।**

अक्षय पुण्डरीकाक्षः! प्रेतमोक्ष प्रदोभव।।

ऊँ अतसी पुष्पसंकाशं पीतवास समन्वितम्।

धर्मराज नमस्तुभ्यं प्रेतमोक्षप्रदो भव।।

पिण्ड़ देकर कर्मकर्ता प्रेताप्यायनमस्तुत् कहकर पिण्डज़ल में डालकर स्नान कर ले और घर जाकर स्वयं भोजन बनाकर तीन बलि अपसव्य होकर दक्षिणमुख हो देवे :–

काग ग्रास :– काकोसि यम दूतोसि गृहाण बलिमुत्तमाम्।

ममद्वारगतं प्रेतं त्वमाप्यायितुमर्हसि।।

गौ ग्रास :– सौरभे या सर्वहिता पवित्रा पुण्यराशयः।

प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासं गावस्त्रैलोक्य मातरः।।

श्वान ग्रास :– द्वौ श्वानौ श्यामसशबलौ वैवश्वकुलोद्भवौ।

ताभ्यामन्नं प्रदास्यामि स्यातामेतावहिंसकौ।।

तीनों ग्रास देकर जल छोड़ देवे। अब कर्मकर्ता स्वयं भी भोजन कर लेवे, सायंकाल को मृतक के लिए एक दीप जलाकर कहे :– अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रथमदिननिमित्त – प्रेतलोकादित्यवद्द्यौतनकामः इमं दीपं विष्णु दैवतं न मम।।

दीप देकर प्रार्थना करे :–

ॐ शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्,

विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।

लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यम्,

वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्।।

इस प्रकार प्रथम दिन का पिण्ड, चितानल पूजन पूर्ण हुआ, दसवें दिन तक इसी क्रम में पिण्ड़दान होता है, प्रत्येक दिन पिण्ड़ देने में असुविधा हो तो यह कार्य दसवें दिन भी किया जा सकता है। दूसरे दिन शरीर पूरक तथा नरक तारण के लिए सङ्कल्प अलग–अलग है। दूसरे दिन से दस दिन तक के सङ्कल्प इस प्रकार करने चाहिए :–

२. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य द्वितीयदिने योनिपुंसनाम् नरकोत्तारणाय चक्षुश्रोत्रनासिका सम्भूत्यै एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

३. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य तृतीयदिने महारौरवनाम् नरकोत्तारणाय भुजवक्षोग्रीवामुखावयव निष्पत्यर्थं एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

४. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य चतुर्थदिने तामिस्रनाम् नरकोत्तारणाय उदरनाभि गुदवस्थि मेढ्यसम्भूत्यै एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

५. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य पञ्चमदिने अन्धतामिस्रनाम् नरकोत्तारणाय

गुल्फउरुजानुजङ्घाचरणसम्भूत्यै एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

६. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य षष्ठे दिने सम्भ्रमनाम्नरकोत्तारणाय सर्वमर्म सम्भूत्यै एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

७. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य सप्तमे दिने अमेढ्यक्रमीनाम् नरकोत्तारणाय अस्थिमज्जाशिरा पूरणाय एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

८. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य अष्टमे दिने पुरीषभक्षणनाम् नरकोत्तारणाय नखदन्तरोमकेशपूर्णाय एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

९. अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य नवमे दिने स्वमांसभक्षणनाम् नरकोत्तारणाय वीर्य्यपूर्णाय एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

१०. उड़द पिण्ड : अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य दशमे दिने कुम्भीपाकनाम्नरकोत्तारणाय क्षुत्पिपासापूर्णाय एषः पिण्डस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

घट आदि का विसर्जन :– दसवें दिन का कार्य पूर्ण होने पर कर्मकर्ता को दशगात्र के पहने हुए वस्त्र, यज्ञोपवीत छोड़कर नवीन यज्ञोपवीत, वस्त्रादि धारण करने चाहिए। कुम्भ, वेदी तथा पिण्ड़ को जल में विसर्जित कर दे। अपने लोकाचार से कर्मकर्ता पुनः मुण्डन् भी करा सकता है, घर की शुद्धि करे, दधि, दूर्वा का स्पर्श करे तथा कर्मकर्ता ब्राह्मण हो तो अग्नि का, क्षत्रिय हो तो वाहन या आयुध का, वैश्य हो तो स्वर्ण का तथा शूद्र हो तो वृषभ का स्पर्श कर लेवे।

8.7.2 एकादशाह :–

शास्त्र प्रमाण के अनुसार एकादशाह के दिन महाब्राह्मण–दम्पती का पूजन, शय्यादान, गोदान, कुम्भदान, वृषोत्सर्ग करने के बाद एकदशाह का पिण्ड़श्राद्ध करे।

आदौ च दम्पती पूज्यौ शय्या देया ततः परम्।

पश्चाच्च कपिला देया उद्कुम्भंस्तथैव च।।

वृषोत्सर्गस्ततः कार्यः पश्चादेकादशाहिकम्।।

एकादशाह के दिन कर्मकर्ता प्रातः काल उठकर स्नान करके एकादशाह की सामग्री रखकर पूर्वमुखी या उत्तरमुखी हो सव्य होकर द्विज दम्पती का पूजन करे, हाथ मं तिल–जल–कुश लेकर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकं अक्षयस्वर्गप्राप्त्यर्थं द्विजदम्पत्योः पूजनमहं करिष्ये।

द्विज दम्पती के अभाव में कुश वट का पूजन करे, गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीपक, नैवेद्य तथा दखिणा भी देवे।

8.9 शय्यादान

प्रेत के लिए उपयुक्त शय्या दक्षिणोत्तर रखकर सिर की तरफ कुम्भ रख देवे, आभूषण आदि रखकर चतुर्मुख दीप जला देवे, शय्या के ऊपर सप्तधान्य रखकर उसके ऊपर स्वर्ण की प्रतिमा को पञ्चामृत से धोकर स्थापित कर देवे, शय्या के ऊपर स्वर्ण की प्रतिमा का पूजन करके चारों दिशाओं का पूजन करके परिक्रमा करे, पूजन कुशवट ब्राह्मण का भी करके तिल–कुश–जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि ..... अमुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य सकलनरकयातना शीतादिबाधा याम्यपुरुष प्रहार निवृत्तिपूर्वक अनेकानेककल्पान्तरपुरन्दरादि सकललोकप्राप्त्यर्थं घृतकुम्भजलकलशताम्बूलदीपिकापादुकाछत्र आसनचामरनानाविधिभोजनसुवर्णाभूषणऊर्णकार्पासवस्त्रहैममयकाञ्चनपुरुषप्रतिमायुतामिमां शय्याप्रजापति दैवतां सम्प्रददे।

दक्षिणा सङ्कल्प :– अद्यकृतस्य शय्यादानस्य प्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं इदं निष्क्रय द्रव्यं वा युवाभ्यां सम्प्रददे।

प्रार्थना :– प्रेतस्य प्रतिमा सैषा विष्णुसानिध्यदायिनी।

स्यातामस्याः प्रदानेन सन्तुष्टौ द्विजदम्पती।।

कपिलादान :– गाय के लिए स्वर्ण सींग, चाँदी के खुर, ताम्र, पीठ, कांस्य पात्र दुहने के लिए, माला आदि रखकर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि ..... प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वक तदङ्गत्वेन गवादिपूजनं च करिष्ये।

गौ का पूजन गन्धाक्षत से वस्त्र, पुष्प, धूप, दीप से करके नैवेद्य देवे, गाय का मुँह धो देवे, दक्षिणा भी देकर कुश–तिल–जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वक उत्तमलोकप्राप्त्यर्थं इमां कपिला गां रुद्रदैवता यथालङ्कारैः अलंकृतां यथानामगोत्राय अमुशर्म्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यं सम्प्रददे।।

प्रार्थना :– **कपिले सर्वदेवानां पूजनीयासि रोहिणी।**

अर्थधेनुमयी यस्माद्दत्तः शान्ति प्रयच्छ मे।।

गाय ब्राह्मण को देकर कर्मकर्ता गाय की परिक्रमा कर लेवे।

उदकुम्भदान :– जितने दिन वर्ष में होते है, उतने बड़े कलश जल के और अधिक मास के अन्दर आ जाये तो तीस कलश अधिक रख घट का पूजन कर गन्धाक्षत, पुष्प से करके तथा इस संख्या के समान दीपदान तथा दन्तधावन को रखकर पूर्वमुखी ब्राह्मण का पूजन कर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य मरणदिनमारभ्य तिथिवृद्धिचान्द्रमानेन सम्वत्सरपूर्तिपर्यन्तं जायमान प्रात्यहिक क्षुतपिपासानिवृत्यर्थं षष्ठ्यधिकत्रिंशत्संख्याकान्सान्तान्सदीपान्सदन्तधावनान्उद्कुम्भान्ब्राह्मणाय दास्ये ।

वृषोत्सर्ग :– वृषोत्सर्ग में बछड़ा अथवा बछड़ी का पूजन करके त्याग करने का विधान है। यदि न हो सके तो मेनफल को ही नाल (मौली) से बाँधकर कुशा लपेटकर सात फेरे करवारक सूर्य–चन्द्रमा की पूजा करके देवे। गणपत्यदि देवताओं के पूजन के अनन्तर सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकमासे अमुकपक्षे तिथौ वासरे अमुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य विमुक्तिपूर्वकाक्षय स्वर्गलोके प्राप्तिकामः एकादशेऽहनि वृषोत्सर्ग कर्माहं करिष्ये।

नारायण बलि (मध्यमषोड़शी) :–

मध्यमषोड़शी नारायण बलि का अङ्ग है। यह षोड़शी अपमृत्यु की स्थिति (महामारी, सर्पदंश, दुर्घटना, पञ्चकमृत्यु, आत्महत्या आदि) में की जाती है, किन्तु वर्तमान में जिनके लिए नारायण बलि अपेक्षित नहीं है, उनके लिए आजकल की प्रक्रिया में श्शताधिमेलयेत्त्यच इस वाक्य के अनुसार कहीं कहीं सभी के लिए मध्यमषोड़शी करवायी जाती है।

नोट :– नारायण बलि के सन्दर्भ विशेष पूजन हेतु उत्तरकर्म से सम्बन्धित अन्य उपयोगी पुस्तकों (श्राद्धपारिजात, श्राद्धविवेक,अन्त्येष्टि श्राद्धकर्म पद्धति) आदि का अवलोकन करे।

उत्तम षोड़शी :–

यह कर्म पन्द्रहवें दिन से लेकर वार्षिक श्राद्ध तक का है। परन्तु वर्ष भर के बन्धन अथवा मनुष्य की अनेक प्रकार की परेशानियों को देखते हुए पूर्वाद्ध में यह श्राद्ध बाहरवें दिन करने का भी विधान है।

१५ वें दिन पाक्षिक, ३०वें दिन मासिक, ४५वें दिन त्रैपाक्षिक, ६०वें दिन द्विमासिक, ९०वें दिन त्रिमासिक, १२०वें दिन चतुर्थ मासिक, १५०वें दिन पञ्चमासिक, १६५वें दिन उन्षाण्मासिक, १८०वें दिन षाण्मासिक, २१०वें दिन सप्त मासिक, २४०वें दिन अष्टमासिक, २७०वें दिन नवम मासिक, ३००वें दिन दशममासिक, ३३०वें दिन एकादश मासिक, ३४५वें दिन उनाब्दिक, ३६०वें दिन एकतन्त्र से भी किया जा सकता है।

कर्मकर्ता श्राद्ध के लिए भूमि को साफ करके विष्णु भगवान् की पूजा के लिए वेदी बनाकर उसके ऊपर तीन कुशाओं में गाँठ लगाकर विष्णु भगवान्की कल्पना करे, घी का दीपक जलावे। एक बड़ी वेदी बनाकर १६ चट स्थापित करे, प्रेत के लिए वेदी बनाकर दक्षिण में तेल का दीपक जलावे, पिण्ड़ के लिए खीर की व्यवस्था करके पूजन सामग्री रखकर श्राद्धकर्म प्रारम्भ करे :–

आचमन–प्राणायाम करके बायें हाथ में जल लेकर दक्षिण व बायें हाथों में पवित्री धारण करके अनामिका–अङ्गुष्ठ से जल द्वारा अभिमन्त्रित करे :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

आसन, शिखा में कुशा रखकर कर्मकर्ता बाँये हाथ में कुश–सुपारी–द्रव्य रखकर भूमि का पूजन करे :–

श्राद्धस्थलभूम्यै नमः, भगवते गयायै नमः, भगवते गदाधराय नमः।

तिल–सरसों दिशाओं में विकिरण करे :–

ऊँ नमो नमस्ते गोविन्द! पुराण पुरुषोत्तम!।

इदं श्राद्धं ऋषिकेश! रक्षतां सर्वतो दिशः।।

दीपक को भी गन्धाक्षत चढ़ाकर ब्राह्मण का भी पूजन करे :–

नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादाक्षिशिरोरु बाहवे।

सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः।।

ब्राह्मण भी कर्मकर्ता के तिलक करे।

कर्मकर्ता अपसव्य होकर सङ्कल्प करे :–

अद्यामुकगोत्रस्य ..... अमुकनामप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये सद्गति प्राप्तये अक्षयस्वर्गलोक गमनकामनया षोड़शश्राद्धान्तर्गतपञ्चदशदिवसीयाद्य श्राद्धमारभ्यवार्षिकश्राद्धपर्यन्तं षोड़शाहश्राद्धमहं करिष्ये।

सव्य हो पूर्वमुखी होकर पितृगायत्री को स्मरण (तीन बार) करे :–

देवताभ्यपितृभ्यश्च महायोगीभ्य एव च।

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः।।

विष्णु भगवान्का पूजन करे :–

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

भगवान्विष्णु को गन्धाक्षत, पुष्प, धूप–दीप–नैवेद्य दक्षिणा चढ़ा देवे। दक्षिण में प्रेत वेदी के ऊपर कुश रखकर प्रेत का आवाहन करे।

आवाहन :–

इहलोकं परित्यज्य गतोऽसि परमां गतिम्।

मनसावायु :पेण चटेत्वाहं निमन्त्रये।।

प्रेत पूजन हेतु अपसव्य होकर प्रार्थना करे :–

अनादि निधनो देव शङ्खचक्र गदारधरः!।

अक्षयः पुण्डरीकाक्ष! प्रेतमोक्षप्रदो भव।।

तत्पश्चात्कर्मकर्ता ताम्रपात्र में जल–दूध एवं कुशा डालकर कुशा से उन्हें हिलाता रहे :–

ऊँ यद्देवा देव हेडनं देवासश्च कृमावयम्।

आग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

ऊँ यदि दिवा यदि नक्तमेना œ सिचकृमा वयम्।

वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

ऊँ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एनांसि चकृमा वयम्।

सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

श्राद्ध सामग्री पर कुशा से जल के छींटे देवे :–

स्वानादि दुष्ट दृष्टि निपातात्दूषितं पाकादि पूतं भवत्वित्युक्त्वा तेन पाकं प्रोक्षयेत्।।

16 टुकड़े कुशा के आसन हेतु हाथ में रखकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये अभीष्टलोकप्राप्तये उत्तमषोड़शश्राद्धान्तर्गतश्राद्धे इदमासनं ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

कुश–तिल–जल के वेदी के ऊपर आसन के लिए छोड़ कुश आसनों को ऊपर तिल बिखेर देवे :–

ऊँ अपहता असुरा रक्षा œ सि वेदिषदः।।

१६ पत्तों के ऊपर जल रखकर अर्घ्य बना देवे :–

ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँौरभिस्रवन्तुनः।।

जल–तिल–कुश मिलाकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये उत्तमलोकावाप्तये एकादश श्राद्धे एषोऽर्घ्यस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। अङ्गुष्ठ की तरफ से चटों के ऊपर जलधारा देवे, अर्घ्यपात्रों को उल्टा कर देवे।

१६ कुश के ऊपर रखे हुए चटों का गन्धाक्षत, पुष्प आदि अङ्गुष्ठ की तरफ से चढ़ाकर सङ्कल्प–पूजन करे–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये अभीष्टलोकावाप्तये एकादशाह श्राद्धादारभ्य द्वादशमासिक श्राद्धपर्यन्तं एकादशाहश्राद्धे मया गन्धादि दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

थोड़ा सा अन्न व जल सभी चटों के पास रखकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये अभीष्टलोकावाप्तये एकादशाह श्राद्धादारभ्य द्वादशमासिक श्राद्धपर्यन्तं एकादशाहश्राद्धे इदमन्नोदकं ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

पिण्ड़ निर्माण पूजन :–

१. प्रथम पिण्ड़ :– जौ के आटे या खीर में घी, शहद, तिल मिलाकर १६ पिण्ड़ बनाकर प्रथमपिण्ड़ पाक्षिक को अपसव्य होकर हाथ में तिल–जल–कुश–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

   ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य आद्यश्राद्धे प्रथमपक्ष निमित्तं एष ते पिण्ड़ो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

२. द्वितीय पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

   ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रथममासिकश्राद्ध निमित्तं एवं द्वितीयपिण्ड़स्थे मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

३. तृतीय पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य त्रिपाक्षिकश्राद्ध निमित्तं एष ते पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

४. चतुर्थ पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य द्वितीयमासिकश्राद्ध निमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

५. पञ्चम पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य तृतीयमासिकश्राद्ध निमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

६. षष्ठ पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य चतुर्थमासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

७. सप्तम पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य पञ्चममासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

८. अष्टम पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य ऊनषाण्मासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

९. नवम पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य षाण्मासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

१०. दशम पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य सप्तमासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

११. एकादश पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य अष्टम्मासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

१२. द्वादश पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य नवम्मासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

१३. त्रयोदश पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य दशम्मासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

१४. चतुर्दश पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य एकादशमासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

१५. पञ्चदश पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य ऊनद्वादशमासिकश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

१६. षष्ठदश पिण्ड़ :– तिल–कुश–जौ–जल–पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य द्वादशश्राद्धनिमित्तं एष पिण्ड़स्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ को अङ्गुष्ठ की तरफ से वेदी पर आसन के ऊपर रखकर देवे ।

सव्य होकर अर्घ्यपात्र बनाकर मन्त्र पढ़े :–

ऊँ दिव्याऽऽपः पयसासम्बभूवुर्य्याऽऽन्तरिक्षा उत पार्थीवीर्याः हिरण्यवर्णा यज्ञिस्तान्आपः शिवा स œ स्योनाः सुहवा भवन्तु।।

अपसव्य होकर तीन कुशा–जल–तिल–अर्घ्यपात्र हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य आद्यादिद्वादश मासिकश्राद्धनिमित्तं षोड़शपिण्ड़ेषु एष ते हस्तेर्घ्यो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

ऐसा उच्चारित करते हुए अर्घ्य के जल को पिण्ड़ों पर डालते हुए अर्घ्यपात्र को उल्टा रख देवे।

अवनेजन जल :–

तिल–जल–पुष्प–गन्ध पात्र में लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकनामप्रेतस्य प्रेतत्व विमुक्तये अभीष्टलोकप्राप्त्यर्थं षोड़शश्राद्धान्तर्गत आद्यश्राद्धादारभ्य द्वादशमासिक श्राद्धपर्यन्तं षोड़शपिण्ड़ोपरि प्रत्यवनेजन जलानि मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। पिण्ड़ों पर जल छोड़ देवे।

पिण्ड़ पूजन :–

१. जल :– पिण्डेषु जल मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

२. वस्त्र :– पिण्डेषु वासांसि मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

३. सूत :– पिण्डेषु कार्पाससूत्रं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

४. ऊर्णसूत्र :– पिण्डेषु ऊर्णसूत्रं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

५. गन्ध :– पिण्डेषु गन्धं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

६. यवाक्षत :– पिण्डेषु यवाक्षतं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

७. पुष्प :– पिण्डेषु पुष्पं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

७. भृङ्गराज :– पिण्डेषु भृङ्गराजं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

८. तुलसी :– पिण्डेषु तुलसीदलं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

९. धूप :– पिण्डेषु धूपं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

१०. दीपक :– पिण्डेषु दीपं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

११. नैवैद्य :– पिण्डेषु नैवैद्यं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

उपरोक्त सामग्री पिण्ड़ों पर चढ़ाकर नीवीं विसर्जन करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य आद्यादि षोड़श श्राद्धपिण्ड़ेषु यद्दतं गन्धाद्यर्चनं तवोपतिष्ठताम्।। जल छोड़ देवे।

पुनः एक पात्र/दोना पर जल रखे :–

ऊँ शिवा आपः सन्तु। – जल

ऊँ सौमनस्यमस्तु। – पुष्प

ऊँ अक्षतं चारिष्टम्चास्तु। – यव व तिल

सङ्कल्प :– ऊँ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य आद्यश्राद्धे यद्दत्तमन्नपानादिकं तदुपतिष्ठताम्।। पात्र के जलादि को पिण्ड़ों पर छोड़ देवे।

दक्षिणा सङ्कल्प :– ऊँ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्व विमुक्तये कृतैतदाद्यादिद्वादशमासिककान्त षोड़शश्राद्धप्रतिष्ठा सिद्धयर्थं इदं रजतं चन्द्रदैवतं अमुकगोत्राय अमुकशर्म्मणे ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन दातुमहं उत्सृजेत्।। पात्र के जलादि को पिण्ड़ों पर छोड़ देवे।

प्रार्थना :–

अनादिनिधनोदेवः शङ्खचक्रगदाधरः।

अक्षयः पुण्डरीकाक्षः प्रेतमोक्ष प्रदोभव।।

अपसव्य होकर दीपक को बुझा देवे, देवताओं का विसर्जन करे और पिण्ड़ों को जल में छोड़ देवे।

प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

अश्वत्थ पूजन एवं अभिषेक :–

पुष्प लेकर पीपल के वृक्ष का ध्यान करे :–

एकादशात्मक रुद्रोऽसि वसूनाञ्च शिरोमणिः।

नारायणोऽसिदेवानां वृक्षराज नमोऽस्तु ते।।

पीपल के वृक्ष के पास जाकर अभिषेचन–सङ्कल्प करे :–

अद्येत्यादि .... अमुकगोत्रः अमुकशर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं सपरिवारस्य ममोत्तरण शुभफलप्राप्त्यर्थं तथा अमुकगोत्रस्या अमुकशर्मा/वर्मा/गुप्तस्य अस्मत्(पितुः) अक्षयतृप्तिकामनायै विष्णुस्वःपस्य अश्वत्थस्य पूजनं षष्ट्याधिशतत्रयसंख्यात्मक जलकुम्भै अभिषेचनं च अहं करिष्ये।

श्वेतपुष्प अर्पण करके कच्चे सूत के धागे से तीन बार लपेटकर तीन सौ साठ (३६०) बार पीपल को जल प्रदान करे तथा गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा से पीपल का पूजन करे।

प्रार्थना :–

यं दृष्ट्वा मुच्यते रोगैः स्पृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते।

यदाश्रया चिरञ्जीवी तमश्वत्थं नमाम्यहम्।।

8.8 सपिण्डन् श्राद्ध

द्वादशाह के दिन स्नानादि प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया करने के पश्चात्कर्मकर्ता श्वेतवस्त्र धारण करके श्राद्ध भूमि को गोमय से लीपकर सपिण्डन् श्राद्ध की सामग्री को एकत्रित कर के पूजन करे। कर्मपात्र को जल से भरकर उसमें गन्ध, तिल, पुष्प डालकर जल का पूजन करे :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहिमा।।

ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ३

उपरोक्त मन्त्र से श्राद्धसामग्री एवं अपने शरीर का प्रोक्षण करे।

श्राद्धभूमि का पूजन :–

ऊँ श्राद्धस्थल भूम्यै नमः, ऊँ भगवत्यै गदाधराय नमः, ऊँ भगवत्ये गयायै नमः। – गन्धाक्षत से पूजन करे।

सङ्कल्प (कर्मकर्ता दायें हाथ में तिल–कुश–जल–दक्षिणा हाथ में लेकर) :–

अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्व विमुक्तये सद्‌गति प्राप्तये सपिण्ड़ीकरणश्राद्ध अमुकगोत्र अमुकशर्मा/वर्मा/गुप्तोऽहं करिष्ये।

ऊँ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः।।

तीन बार उच्चारण करते हुए पितृगायत्री का स्मरण करे।

अपसव्य होकर दिशाओं में यव विकिरण करे :–

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्रेय्यां गरुड़ध्वजः।

दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः।

उत्तरे श्रीधरो रक्षेद्ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः।

एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

ऊँ नमो नमस्ते गोविन्द! पुराणपुरुषोत्तम!।

इदं श्राद्धं ऋषिकेश! रक्षतां सर्वतो दिशः।।

कर्मकर्ता कमर के बायें भाग में सुपारी, कुशा व द्रव्य रखे। एक कुशा आसन पर तथा एक कुशा शिखा में रखे तथा बायें हाथ में तीन कुशा एवं दायें हाथ में दो कुशा की पवित्री धारण करे। एक पात्र में जल लेकर कुशा से उस जल को हिलावे।

ऊँ यद्देवा देव हेडनं देवासश्च कृमावयम्।

आग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

ऊँ यदि दिवा यदि नक्तमेना œ सिचकृमा वयम्।

वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

ऊँ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एनांसि चकृमा वयम्।

सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

जल से सामग्री का प्रोक्षण करे।

उत्तरमुखी होकर कर्मकर्ता विश्वेदेवा के लिए यवाक्षत हाथ में लेकर आवाहन करे :–

ऊँ विश्वेदेवा स ऽ आगत शृणुताम्ऽ इम हवम्। एदं वर्हिर्निषीदत।।

ऊँ यवोऽसियवयाम्सद्वेषोयव यारातीः।।

पात्र में कुश–जल छोड़ते समय निम्र मन्त्र पढ़े :–

ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शौंरभिस्रवन्तुनः।।

निम्न मन्त्र से जौ चढ़ाये :– ऊँ यवोऽसियवयाम्सद्वेषोयव यारातीः।।

जौ डालने के पश्चात्इसमें गन्ध, पुष्प, तुलसीदल, छोड़े।

अर्घ्यपात्र अभिमन्त्रित करके दाहिने हाथ में तिल–यव–कुश लेकर अर्घ्यदान करे :–

ऊँ अद्यास्मत्पितामहादित्रयश्राद्धसम्बन्धिनः कामकालसंज्ञका विश्वेदेवाः एषवोहस्तार्घः स्वाहा नमः।।

दाहिने हाथ में देवतीर्थ से अर्घ्य विश्वेदेवा के लिए देवे, विश्वेदेवा को वस्त्र, गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवैद्य, दक्षिणा आदि चढ़ाकर तीन कुश–जल–यव लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ अद्यास्मत्पितामहादित्रयश्राद्धसम्बन्धिनः कामकालसंज्ञका विश्वेदेवाः एतानि गन्धपुष्पधूपदीपताम्बूल यज्ञोपवीतवासांसि वो नमः। अनेन पूजनेन विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्।।

प्रेत के लिए पश्चिम में वेदी के ऊपर आसन रखे, दक्षिणमुखी होकर बायाँ घुटना मोड़कर अपसव्य होकर पात्र या दोने में दो कुशा रखकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिण्डीकरणश्राद्धे इदमासनमुपतिष्ठताम्।।

पित्रेश्वरों का तिल विकिरण करते हुए आवाहन करे, पितरों के लिए दक्षिण में आसन रखे, पात्र या दोने में तीन कुशा, तीन आसन व जल रखकर सङ्कल्प करे :–

१. अमुकगोत्रस्य पितामहस्य अमुकशर्मणः वसु:पस्य इदमासनं स्वधानमः।।

२. अमुकगोत्रस्य प्रपितामहस्य अमुकशर्मणो रुद्रःपस्य इदमासनं स्वधानमः।।

३. अमुकगोत्रस्य वृद्धप्रपितामहस्य अमुकशर्मणः आदित्यस्वःपस्य इदमासनं स्वधानमः।।

आसनों को दक्षिण की वेदी पर रखकर पितरों का आवाहन करे।

ऊँ उशन्तस्त्वानिधी मह्य सन्तः समिधीमहि।

अशन्नुशत आवह पितृन हविष अत्तवे।।

पितरों की वेदी के ऊपर तिल विकिरण करे :–

ऊँ आयान्तु नः पितरः सोम्यासो अग्निष्वाता पथिभिर्देवयानैः।

अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तौधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान्।।

तिल–कुश–गन्ध–जल लेकर प्रेत के लिए अर्घ्य बनावे :–

ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँौरभिस्रवन्तुनः।।

अपसव्य होकर तिल–कुश–जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये सपिण्डीकरणश्राद्धे एष ते हस्ताघ्र्यो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।। प्रेत की कुशा पर जल डाले।

तिल–कुश–गन्ध–जल लेकर पितरों के लिए तीन अर्घ्य बनावे :–

ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँौरभिस्रवन्तुनः।।

सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये पितृत्वप्राप्तये पितामह प्रपितामह वृद्धप्रपितामह अमुकशर्मन्सपिण्डीकरणश्राद्धे एष हस्तार्घ्यस्ते स्वधा।। पितरों को अङ्गुष्ठ की तरफ से जल देवे।

प्रेत–पितरों के अर्घ्य को (मिलाने) एकत्रित करने के लिए सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये सद्गतिप्राप्तये तत्पितृपितामह प्रपितामह वृद्धप्रपितामहानामर्घ्यैः सह अर्घ्य संयोजनं करिष्ये।

प्रेत और पितरों के अर्घ्य को मिलाये :– मन्त्र :–

ये समानाः समनसोजीवा जीवेषु मामकाः।

तोष œ श्रीर्मयी कल्पतामस्मिन्लोके शत œ समाः।।

प्रेत के अर्घ्यपात्र को उठाकर कुशा से पितामह, प्रपितामह, वृद्धप्रपितामह के अर्घ्यपात्र में जल छोड़ देवे, प्रेत के अर्घ्यपात्र को प्रेत–वेदी के पास उल्टा रखकर पितर वेदी के पास तीनों अर्घ्यपात्रों को भी उल्टा रख देवे।

एक बार जल छोड़ देवे :– अनेन अर्घसंयोजनेन प्रेतस्य सद्गत्युत्तम लोक प्राप्त्यस्तु ।।

पिण्ड़ निर्माण :– पकाये हुए चावलों में घी, तिल, शहद, गङ्गाजल मिलाकर पुरुषसूक्त का स्मरण करते हुए पिण्ड़ बनावे। एक पिण्ड़ लम्बा, पितरों के लिए तीन गोल–पिण्ड़, एक पिण्ड़ छोटा प्रेतवेदी पर कुशा गाँठ लगाकर प्रेत के लिए रखे। तीन कुशा पितर वेदी पर पितरों के निमित्त रखे।

प्रेत पूजन का सङ्कल्प करे :– अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिण्ड़ीकरणश्राद्धे एतानि गन्धपुष्प धूपदीप ताम्बूलयज्ञोपवीतवासांसि ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्। गन्धादि से पूजन करे।

पितरों के पूजन का सङ्कल्प करे :– अमुकगोत्रास्मत्पितामहप्रपितामहवृद्धप्रपितामह अमुकशर्मन्एतानि गन्धपुष्प धूपदीप ताम्बूलयज्ञोपवीतवासांसि तुभ्यं स्वधा। गन्धादि से पूजन करे।

एक बार जल छोड़ देवे :– पितृणां अर्चनं सम्पूर्णमस्तु।।

कर्मकर्ता प्रेतासन के दक्षिण की तरफ पात्र या दोना रखकर छोटे पिण्ड़ को हाथ में रखकर वंश में जिनकी अकाल मृत्यु हो गई हो, उनकी तृप्ति के लिए पिण्ड़ देवे :–

अग्नि दग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धा कुले मम।

भूमौ दत्तेन तृप्यन्तु तृप्ता यान्तु परां गतिम्।।

अब चार पात्रों पर अर्घ्य बनावे, उसमें कुशा के एक–एक टुकड़ा डालकर जल भरे :–

ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँौरभिस्रवन्तुनः।।

अर्घ्यपात्र में कुश–जल–तिल डालकर उच्चारण करे :– श्श्अर्घ्यपात्रं परिपूर्णतास्तुय्य।

अपसव्य होकर एक पात्र लेकर प्रेत के लिए अर्घ्य देवे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य अर्घ्येऽवनेजनं मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

अर्घ्य को प्रेत के आसन के पास रखकर जल का प्रोक्षण करे।

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिण्ड़ीकरण श्राद्धनिमित्तक अमुकगोत्र पितामह अमुकशर्माणं पिण्डस्थाने कुशोपरि अर्धावनेजनं निक्षिप्यते स्वधा।

ऐसा कहकर अर्घ्य का थोड़ा जल पितामह के आसन वाले पात्र पर छोड़कर अर्घ्य को आसन के पास रखकर तीसरे अर्घ्य को हाथ में उठाकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिण्ड़ीकरणश्राद्धे अमुकगोत्र प्रपितामह अमुकशर्मन्पिण्डस्थाने कुशोपरि अर्धावनेजनं निक्षिप्यते स्वधा।

तत्पश्चात् थोड़ा अर्घ्य का जल प्रपितामह के आसन के पात्र पर छोड़कर अर्घ्यपात्र को प्रपितामह के आसन के पास रखकर चतुर्थ अर्घ्य हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिण्ड़ीकरण श्राद्धे अमुकगोत्र वृद्धप्रपितामह अमुकशर्मन्पिण्डस्थाने कुशोपरि अर्धावनेजनं निक्षिप्यते स्वधा।

तत्पश्चात थोड़ा जल वृद्ध प्रपितामह के आसन पर छोड़कर अर्घ्यपात्र को वृद्ध प्रपितामह के आसन के पास रखे।

पिण्ड़दान :–

पहले प्रेतपिण्ड़ जो लम्बे आकार का बनाया था, अपसव्य होकर कर्मकर्ता उसे उठाकर तिल–कुश–जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेत सपिण्डीकरणश्राद्धे एष ते पिण्डो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्।।

तत्पश्चात्पिण्ड़ को प्रेत के पास आसन के ऊपर अङ्गुष्ठ की ओर रखकर पितामह के लिए दूसरे पिण्ड़ का सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रः पितामहः अमुकशर्मन्वसुःप एष ते पिण्डः स्वधा नमः।।

तत्पश्चात्पिण्ड़ को पितामह के पास आसन के ऊपर रखकर तृतीय पिण्ड़ लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रः प्रपितामहः अमुकशर्मन्आदित्य:प एष ते पिण्डः स्वधा नमः।।

तत्पश्चात्पिण्ड़ को वृद्धप्रपितामह के पास आसन पर रखकर प्रेत के अर्घ्य से थोड़ा जल प्रेत के पिण्ड़ के पास छोड़े :– अमुकगोत्रः अमुकप्रेतसपिण्डीकरणश्राद्धे प्रत्यवचने अवनेजनं मयादीयते तवोपतिष्ठताम्।।

तत्पश्चात्पितामह, प्रपितामह, वृद्धप्रपितामह के अर्घ्यों से भी पिण्ड़ पर जल छोड़ देवे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिण्डीकरणश्राद्धनिमित्तं अमुकगोत्राणां पितामह–प्रपितामह वृद्धप्रपितामहानां पिण्ड़ोपरि अवनेजनं तेभ्यः स्वधा नमः।।

पिण्ड़ देने के पश्चात्पके हुए चावलों का शेष जो हाथ पर रहे, उसे बायें हाथ में कुश लेकर दाहिने हाथ को साफ करे और उच्चारण करे :–

ऊँ नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरशोषाय नमो वः पितरः जीवाय नमो वः पितरो स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः नमो वः पितरो नमो वः गृहान्नः पितरो दत्त सत्तो वः पितरो द्वैष्मै तद्वः पितरो वास आधत।।

अपसव्य होकर कर्मकर्ता प्रेतपिण्ड़ का गन्धाक्षत, यव, पुष्प, तुलसीपत्र, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, दक्षिणा आदि से पूजन करके पितामह, प्रपितामह व वृद्धप्रपितामह के पिण्ड़ों का यथोपचार पूजन करके उत्तरमुखी होकर प्राणायाम रीति से बाँये नाम से श्वास लेवे, दक्षिण की दिशा में तरफ श्वास छोड़ते हुए पितरों व सूर्य का ध्यान करे।

सूर्य प्रार्थना :– **ऊँ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत।**

पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत œ शृणुयाम शरदः

शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीना स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात।।

पिण्ड़ संयोजन :–

अपसव्य होकर कर्मकर्ता स्वर्ण या रजत शलाका (विकल्प में कुश) से प्रेतपिण्ड़ के तीन समान भाग करे तथा तिल–जल–कुश हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकपितृसमप्राप्त्यर्थं वस्वादिलोक प्राप्त्यर्थं च अमुकगोत्राणां तत्पितृपितामहप्रपितामहानां पिण्डैः सहप्रेतस्य पिण्ड़संयोजनं करिष्ये।।

प्रेतपिण्ड़ का पहला भाग बाँये हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रथमं पिण्डशकलं अमुकपितामहस्यामुकशर्मणो वसु:पस्य पिण्डेन सह संयोजयिष्ये।। प्रेतपिण्ड़ के पहले भाग के साथ पितामह के पिण्ड़ के साथ मिला देवे।

ऊँ ये समानाः समनसः पितरोयमराज्ये।

तेषां लोकः स्वधा नमो यज्ञो देवेषु कल्पताम्।। १।।

ये समानाः समनसो जीवाजीवेषु मामकाः।

तेषा œ श्रीर्म्मयि कल्पतामस्मिँलोके शत œ समाः।।२।।

पिण्ड़ गोलकरके पितामह के आसन पर रखकर पुनः प्रेतपिण्ड़ का दूसरा भाग उठाकर सङ्कल्प बोले :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य द्वितीयपिण्ड़शकलं अमुकप्रपितामहस्यामुकशर्मणः रुद्रःपस्य पिण्डेन सह संयोजयिष्ये। तत्पश्चात्मन्त्रों का उच्चारण करे :–

ऊँ ये समानाः समनसः पितरोयमराज्ये।

तेषां लोकः स्वधा नमो यज्ञो देवेषु कल्पताम्।। १।।

ये समानाः समनसो जीवाजीवेषु मामकाः।

तेषा œ श्रीर्म्मयि कल्पतामस्मिँलोके शत œ समाः।।२।।

तत्पश्चात्प्रेतपिण्ड़ के दूसरे भाग के साथ प्रपितामह के पिण्ड़ को गोलाकर बनाकर प्रपितामह के आसन के ऊपर रख देवे। प्रेतपिण्ड़ के तृतीय भाग को उठाकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य तृतीयं पिण्ड़शकलं अमुक वृद्धपितामहस्यामुक शर्मणः आदित्यःपस्य पिण्डेन सह संयोजयिष्ये।। तत्पश्चात्मन्त्रो का उच्चारण करे :–

ऊँ ये समानाः समनसः पितरोयमराज्ये।

तेषां लोकः स्वधा नमो यज्ञो देवेषु कल्पताम्।। १।।

ये समानाः समनसो जीवाजीवेषु मामकाः।

तेषा œ श्रीर्म्मयि कल्पतामस्मिँलोके शत œ समाः।।२।।

तत्पश्चात् प्रेतपिण्ड़ के तृतीय भाग के साथ वृद्धपितामह का पिण्ड़ मिलाकर आसन के ऊपर रखे, अब शेष अर्घ्य के जल को हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :–

अमुकगोत्राणां पितामह प्रपितामह वृद्धप्रपितामहानां पिण्ड़ोपरि अवनेजनं तेभ्यः स्वधा नमः।।

जल देकर नीवीं मोचन (अंटी में रखा हुआ द्रव्य–कुशा–सुपारी) पिण्ड़ों के पास रखकर सव्य होकर प्रार्थना करे :–

ऊँ नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरशोषाय नमो वः पितरः जीवाय नमो वः पितरो स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः नमो वः पितरो नमो वः गृहान्नः पितरो दत्त सत्तो वः पितरो द्वैष्मै तद्वः पितरो वास आधत।।

पिण्ड़ों का पूजन पुनः वस्त्र तीन सूत्र, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से करके कर्मकर्ता उत्तरमुखी होकर प्राणायाम की रीति से श्वास चढ़ाकर दक्षिण की तरफ छोड़े :–

भगवान्विष्णु को स्वादिष्ट व्यञ्जनों का भोग लगावे :–

ऊँ नाब्भ्याऽआसीदन्तरिक्ष œ शीष्र्णो द्यौः समवर्त्तत।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ २ऽ अकल्पयन्।।

विश्वेदेव को भी स्वादिष्ट व्यञ्जनों का भोग लगावे :–

कालकाम संज्ञक विश्वेदेवानां पक्वान्ननैवेद्यं अहमुत्सृजे।।

कर्मकर्ता हाथ जोड़कर पितरों से आशीर्वादे लेवे :–

तत्पश्चात्पिण्ड़ों पर दूध की धारा देकर पितरों को प्रणाम कर बीच के पिण्ड़ को हिला देवे। अब अपसव्य होकर पिण्ड़ों को उठाकर सूंघ लेवे और पिण्ड़ों को विसर्जन के लिए थाली में रखकर सव्य हो थाली को रुपये से बजा देवे।

ब्राह्मण को दक्षिणा का सङ्कल्प करे :–

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ..... पितृ अमुक गोत्रपित्रादित्रयश्राद्ध सम्बन्धिनां कालसंज्ञानां विश्वेषां देवानां प्रीतये कृतस्य सपिण्ड़ीकरण श्राद्धान्तर्गतविश्वदैविककर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं साद्गुण्यार्थञ्च इमां सुवर्णदक्षिणा तन्निष्क्रयद्रव्यं वा ब्राह्मणाय दास्यै।।

कर्मकर्ता ब्राह्मण को दक्षिणा देकर अपसव्य से दीपक बुझाकर पितरों को उठायें, ऊँ उत्तिष्ठन्तु पितरः।। देवताओं का विसर्जन अक्षत चढ़ाकर करे – देवाः स्वस्थानं यान्तु।। प्रदक्षिणा करे :–

ऊँ अमावाजस्य प्रसवो जगम्यादेमेद्यावा पृथिवी विश्वःपे।

आमा गन्तां पितरा वामा सोमो अमृतत्वेन गम्यात्।।

प्रार्थना :– **प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रत्यवेताध्वरेषु यत्।**

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्ण स्यादिति श्रुतिः।।

कर्मकर्ता पिण्ड़ वेदी को साफ करके पिण्ड़ों को जल में डाल देवे या गाय को खिला देवे।

यथोक्तविधि से गाय, श्वान, काक, देव व पिपीलिका को बलि देने के बाद एक थाली में सभी पकवान परोसकर अपसव्य और दक्षिणाभिमुख होकर निम्न सङ्कल्प करे – अद्य अमुक गोत्रः अमुक शर्माऽहममुकगोत्रस्य मम पितुः (पितामहस्य मातुः वा) वार्षिकश्राद्धे (महालयश्राद्धे वा) अक्षयतृप्त्यर्थमिदमन्नं तस्मै (तस्यै) स्वधा।

उपर्युक्त सङ्कल्प करने के बाद श्ऊँ इदमन्नम्य, श्ऊँ इमा आपःच, श्ऊँ इदमाज्यम्य, श्ऊँ इदं हविःच इस प्रकार बोलते हुए अन्न, जल, घी तथा पुनः अन्न को दाहिने हाथ के अङ्गुष्ठ से स्पर्श करे।

ब्राह्मण भोजन :–

तत्पश्चात् दाहिने हाथ में जल, अक्षत आदि लेकर निम्न सङ्कल्प (ब्राह्मण भोजन का सङ्कल्प) करे – अद्य अमुकगोत्रः अमुकोऽहं मम पितुः (मातुः वा) वार्षिकश्राद्धे यथासंख्यकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

ब्राह्मणों के पैर धोकर उत्तम आसन पर बैठाकर भोजन करायें :–

यत् फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे।

तत्फलं पाण्डवश्रेष्ठ विप्राणां पादसेचने ।

इसके बाद उन्हें अन्न, वस्त्र और द्रव्य–दक्षिणा देकर तिलक करके नमस्कार करे, तत्पश्चात् नीचे लिखे वाक्य यजमान व ब्राह्मण दोनों बोले –

यजमान :– शेषान्नेन किं कर्त्तव्यम्। (श्राद्ध में बचे अन्न का क्या कः ?)

ब्राह्मण :– इष्टैः सह भोक्तव्यम्। (अपने इष्ट–मित्रों के साथ भोजन करें।)

इसके बाद अपने परिवार वालों के साथ स्वयं भी भोजन करे तथा निम्न मन्त्र द्वारा भगवान को नमस्कार करें –

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्। स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

8.9 शय्यादान

पलंग पर गद्दा, चद्दर, तकिया आदि सुव्यस्थित बिछाकर शय्या उत्तर–दक्षिण रखकर शय्या को सजाकर मृतक को जो वस्तुएँ जीवनकाल में प्रिय लगती थी, उनको भी शय्या के पास रखकर, घृत, जलकलश, बर्तन, वस्त्रादि रखकर, शय्या के ऊपर स्वर्ण से बनी लक्ष्मीनारायण की मूर्ति एवं शालग्राम को दूध–जल से स्नान करवाकर प्रतिष्ठापित करे :–

ऊँ एतन्ते देव सवितुर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे।

तेन यज्ञमेव तेन यज्ञपतिं तेन मामव।।

ऊँ मनोजूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्ज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ज्ञ œ समिमन्दधातु।

विश्वेदवा स ऽ इह मादयन्तामो ३ँ म्प्रतिष्ठ।।

प्रतिष्ठापन करके विष्णु का ध्यान करे :–

नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्रपादाक्षिशिरोरु बाहवे।

सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः।।

नमः कमलनाभाय नमस्तेजलशायिने।

नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोस्तुते।।

लक्ष्मीनारायणको पुष्प अर्पित करके पुरुषसूक्त से पूजन करके ब्राह्मणों का पूजन करे :–

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मण हिताय च।

जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः।।

शय्यादान प्राप्तकर्ता ब्राह्मण के मौलिकासूत्र बाँधकर शय्या के ऊपर बैठाकर हाथ में तिल–कुशा–जल लेकर सङ्कल्प करे :–

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ..... अद्येत्यादि अमुकगोत्रस्या अमुकनामाहं मम पितुः विष्णुलोके सुखशयनार्थं इमां शय्यां सोपस्करां श्रीलक्ष्मीनारायणकाञ्चन प्रतिमासहितां विष्णुदैवत्यां अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।।

हाथ के जल–कुश–तिल को ब्राह्मण के हाथ में देकर शय्या को हिला देवे, ब्राह्मण को प्रणाम करे :–

यदर्चनं कृतं विप्रं! तव विष्णुस्तद्ःपिणः।

प्रार्थना मम दीनस्य विष्णवेतु समर्पणम्।।

ब्राह्मण सङ्कल्प हाथ में लेकर श्श्स्वस्तित्त्यि कहे। दाता शय्यादान साङ्गतासिद्धि के लिए स्वर्ण या रजत द्रव्य हाथ में लेकर यह सङ्कल्प करे :–

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ..... अद्यकुतैतत्सोपकरणशय्यादानकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थमिदं हिरण्यमग्निदैवतं अमुकगोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन तुभ्यमहं सम्प्रददे।।

दाता शय्या की प्रदक्षिण करे :–

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।

तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे।।

प्रार्थना करे :–

यथा न कृष्णशयनं शून्यं सागरजातया।

शय्याममाप्यशून्याऽस्तु तथा जन्मनिजन्मनि।।

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।

न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।

त्रयोदश पद दान :–

तेरह पद–दान में निम्न द्रव्य, वस्तु यथाशक्ति दान करे :– १. आसन, २. उपानह (जूते/चप्पल), ३. छत्र (छाता), ४. मुद्रिका, ५. जलपात्र, ६. आमान्न, ७. जल, ८. पाँच बर्तन, ६. वस्त्र, १०. यज्ञोपवीत, ११. घृत, १२. दण्ड़, १३. ताम्बूल, दक्षिणा इत्यादि।

हाथ में तिल–जल–कुश लेकर उपरोक्त सामग्री के दान हेतु सङ्कल्प करे :–

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ..... अद्य अमुकगोत्रोत्पन्नो अमुकशर्माहं अमुकगोत्राय ममपितुः अमुकनाम्रः शुद्धश्राद्धान्तरे परलोके सुखप्राप्त्यर्थं असद्गतिनिवारणार्थं इमानि आसनोपानहच्छत्रमुद्रिकाकमण्डल्वन्नजलभाजनं वस्त्राज्ययज्ञोपवीतदण्ड़ताम्बूलानित्रयोदश पदानि नानादैवतानि नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमहमुत्सृजे।।

कर्मकर्ता अन्य सभी ब्राह्मणों को यथोपलब्ध/यथाशक्ति वस्तुयें देकर सन्तुष्ट करे।

गोदान :–

कर्मकर्ता ब्राह्मण से आचमन लेकर आसन–पूजन, भूशुद्धि कर गाय के ऊपर तिल/चावल/पुष्प छोड़े :–

ऊँ आयङ्गौः पृश्निरक्क्रमीदसदन्मातरम्पुरः। पितरञ्चप्प्रयन्त्स्वः।।

अङ्गपूजन :– ऊँ आस्यायन नमः। ऊँ शृङ्गाभ्यां नमः। ऊँ पृष्ठाभ्यां नमः।

ऊँ पुच्छाय नमः। ऊँ अग्रपादाभ्यां नमः। ऊँ पृष्ठपादाभ्यां नमः।

तत्पश्चात्अङ्गपूजन सहित गौ का यथोपचार पूजन करे।

गोपुच्छ तर्पण :–

पूर्वमुखी होकर कर्मकर्ता हाथ में जौ–कुश–तिल–जल लेकर गाय की पूँछ पकड़ सव्य होकर देवतीर्थ से तर्पण करे :–

गणपतिस्तथा ब्रह्मा माधवो रुद्र देवता।

लक्ष्मी सरस्वती चौव कार्तिकश्च नवग्रहाः।।

देवाधिदेवताः सर्वास्तथा प्रत्यधि देवता।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः।

किन्नराश्चपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः।।

दैत्याश्च दानवाश्चौव ये चान्येऽप्सरसाङ्गणाः।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः।।

यज्ञोपवती को कण्ठीकृत करके उत्तरमुखी कार्यतीर्थ से तिल–जौ–कुश–जल हाथ में लेकर तर्पण करे :–

सनकः सनन्दनश्चौव सनातनस्तथैव च।

कपिलश्च सुरैश्चौव बोढुपञ्चशिखस्तथा।।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः।।

अपसव्य होकर दक्षिणमुखी होकर पितृतीर्थ से तिल–यव–कुश–जल हाथ में लेकर तर्पण करे :–

पिता पितामहश्चौव तथैव प्रपितामहः।

मातामहस्तत्पिता च वृद्धमातामहस्तथा।।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः।।

माता पितामहीचौव तथैव प्रपितामही।

मातामह्यादयः सर्वास्तथैवान्याश्च गोत्रजाः।।

ता सर्वा तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः।।

पितृवंशेमृताये च मातृवंशे तथैव च।

गुरुश्वसुर बन्धूनां ये चान्ये बान्धवाः स्मृताः।

ते सर्वे तृप्तिमायान्तु गोपुच्छोदकतर्पणैः।।

सव्य होकर कर्मकर्ता आचमल लेकर प्रार्थना करे :–

या लक्ष्मीः सर्वभूतानां या च देवेष्ववस्थिता।

धेनु:पेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु।।

गोदान सङ्कल्प :– पूर्वमुखी गाय, उत्तमुखी ब्राह्मण तथा कर्मकर्ता गाय की पूँछ की तरफ होकर हाथ में गोपुच्छ–तिल–तीन कुशा–जल लेकर सङ्कल्प करे :–

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ..... अमुकगोत्रस्य अस्मत्पितुरमुक नाम्नः स्वर्गकाम इमां गां सवत्सां सुपूजितां पयस्विनीं सुवर्णशृङ्गीरौप्यखुरां ताम्रपृष्ठां वस्त्रयुगच्छनां कांस्यपानीयपात्रां पैत्तिलदोहां रुद्रदैवताममुक गोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।।

हाथ में तिल–यव–कुश–जल ब्राह्मण के हाथ में देकर स्वर्णादि दक्षिणा हाथ में रखकर सङ्कल्प करे :–

अद्यकृतैतद्गोदानप्रतिष्ठार्थं इमां सुवर्णदक्षिणामग्निदैवताममुकगोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं सम्प्रददे।।

ब्राह्मण सङ्कल्प हाथ में लेकर श्स्वस्तित्य कहे। कर्मकर्ता गाय की चार प्रदक्षिणा करे :–

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।

तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे।।

ब्राह्मण तर्पण जल से कर्मकर्ता को सपरिवार छींटे देवे, कर्मकर्ता प्रार्थना वाक्य कहे :–

नमो ब्रह्मण्य देवाय गो ब्राह्मण हिताय च।

जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः।।

8.10 एकोद्दिष्ट श्राद्ध :–

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया करने के पश्चात्कर्मकर्ता श्वेतवस्त्र धारण करके श्राद्ध भूमि को गोमय से लीपकर उसके ऊपर जलता हुआ तृण घुमाकर पिण्ड़ के लिए चावल पकाकर वेदी के ऊपर पितृ:प कुशा रखकर श्राद्ध के लिए तिल के तेल से दीपक जलाकर कर्मकर्ता पूर्वमुखी आचमन लेकर दोनों हाथों में पवित्री धारण करके प्राणायाम करके बाँये हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ से प्रोक्षण करे :–

ऊँ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ऊँ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः।

पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहिमा।।

ऊँ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ३

उपरोक्त मन्त्र से श्राद्धसामग्री एवं अपने शरीर का प्रोक्षण करे।

श्राद्धभूमि का पूजन :-

ऊँ श्राद्धस्थल भूम्यै नमः, ऊँ भगवत्यै गदाधराय नमः, ऊँ भगवत्ये गयायै नमः। - गन्धाक्षत से पूजन करे।

ऊँ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ।

सङ्कल्प (कर्मकर्ता दायें हाथ में तिल-कुश-जल-दक्षिणा हाथ में लेकर) :-

ऊँ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ..... अद्यामुकगोत्रस्य असमत्पितुः अमुकशर्मणो वसुःपस्य साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धं करिष्ये।

पूर्वमुख हो तो तीन बार स्मरण करे :-

ऊँ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः।।

दक्षिणमुखी होकर अपसव्य होकर तिल-सरसों का दिशाओं में विकिरण करे :-

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः।

दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः।

उत्तरे श्रीधरो रक्षेद्ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः।

एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

ऊँ नमो नमस्ते गोविन्द! पुराणपुरुषोत्तम!।

इदं श्राद्धं ऋषिकेश! रक्षतां सर्वतो दिशः।।

सव्य होकर श्राद्धकर्ता दक्षिणमुखी होकर दीपक का पूजन करे :-

ऊँ भो दीप देवःपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्।

यावत्श्राद्धसमाप्तिः स्यात्तावदत्र स्थिरो भव।।

ब्राह्मण का पूजन करे :–

यदर्चनं कृतं विप्रं! तव विष्णुस्तद्ःपिणः।

प्रार्थना मम दीनस्य विष्णवेतु समर्पणम्।।

अपसव्य होकर पात्र में कुशा रखे :

इस मन्त्र से जल छोड़े – ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शौंरभिस्रवन्तुनः।।

पात्र में तिल छोड़े :–

ऊँ तिलोसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः।

प्रयत्नमद्भि पृक्तः स्वधयापितृन्लोकान्प्रिणाहिनः स्वधा।।

पात्र में गन्ध, पुष्प छोड़कर तीन कुशाओं से हिलावें ।

ऊँ यद्देवा देव हेडनं देवासश्च कृमावयम्।

आग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

ऊँ यदि दिवा यदि नक्तमेना œ सिचकृमा वयम्।

वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

ऊँ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एनांसि चकृमा वयम्।

सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व œ हसः।।

जल से सामग्री का प्रोक्षण करे।

श्राद्ध सामग्री का प्रोक्षण करके अपसव्य होकर तिल–जल–कुश हाथ में लेकर उच्चारण करे :–

अद्यामुकगोत्रस्य वसुस्वःपस्यास्मत्पितुरमुकशर्मणः साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धे इदमासनं ते स्वधा। – कुश के आसन को पितृःपकुश के पास रखकर वेदी पर तिल विकिरण करे।

ऊँ अपहता असुरा रक्षा œ सिवेदिषदः।। एक दोने में अर्घ बनाकर हाथ में तिल–जल–कुश रखकर अर्घ्य देव।

ऊँ अमुकगोत्रः अस्मत्पितुः अमुकशर्मन्वसुःप एष ते हस्तार्घ्यः स्वधा।। – ऐसा उच्चारण करके दोने के जल को पितृकुश के ऊपर छोड़कर वेदी के बायीं तरफ रख देवे।

नींवी बन्धन करके पितृपूजन करे :– ऊँ पितृब्भ्यः स्वधायिब्भ्यः स्वधानमः पितामहेभ्यः स्वधायिब्भ्यः स्वधानमः प्रपितामहेब्भ्यः स्वधायिब्भ्यः स्वधानमः। अक्षन्पितरोमीमदन्तपितरोतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम।

पितृःप कुश का गन्धाक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा, वस्त्रादि से पूजन करके उच्चारण करे :–

अद्यामुकगोत्रस्य वसुस्वःपस्यास्मत्पितुरमुकशर्मणः साम्वत्सरिकैकोदिष्ट श्राद्धे एतानि गन्धाक्षतपुष्प धूपदीपनैवेद्यताम्बूलदक्षिणां वासांसि ते स्वधा।

अन्न में मधु मिलाकर दक्षिण में जलपात्र, घी रखकर दाहिने हाथ से अन्न पर हाथ रखकर पितृ को अर्पण करे :–

ऊँ मधुव्वाता ऽ ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माद्ध्वीर्न्नः सन्त्वोषधीः। मधुनक्तमुतोषसोमधुमत्पार्थिव œ रजः। मधुद्द्यौरस्तु नः पिता। मधुमान्नोव्वनस्पतिर्म्मधुमाँ २ ऽ अस्तु र्सू। माद्ध्वीर्गावो भवन्तु नः।

दायें हाथ जमीन पर रखकर, उसके ऊपर बायाँ हाथ रखे और अन्न को दिखावे :–

ऊँ पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य। मुखेऽमृतेऽमृतं जुहोमि स्वधा।।

सव्य होकर भगवान्विष्णु का पूजन करे :–

ऊँ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधेपदम्। समूढमस्यपा œ सुरे स्वाहा।।

प्रार्थना करे :–

अन्नहीनं क्रियाहीनं मन्त्रहीनं च यद्भवेत्।

तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर।।

पिण्ड़ के लिए प्रादेशमात्र की वेदी बनाकर तिल वेदी के ऊपर बिखेरे।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेय्यां गरुड़ध्वजः।

दक्षिणे रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋते।।

पश्चिमे वारुणो रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः।

उत्तरे श्रीधरो रक्षेद्ऐशान्ये तु गदाधरः।।

ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेद्अधस्ताद्त्रिविक्रमः।

एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः।।

ऊँ नमो नमस्ते गोविन्द! पुराणपुरुषोत्तम!।

इदं श्राद्धं ऋषिकेश! रक्षतां सर्वतो दिशः।।

पिण्ड़–निर्माण :– कर्मकर्ता दोनों हाथ से पके हुए चावलों से पुरुषसूक्त का पाठ करते हुए पिण्ड़ों का निर्माण करे।

पिण्ड़ स्थापन पूजन :– पिण्ड़ निर्माण करके थाली में रखकर अपसव्य होकर बायीं जङ्घा नीची करके तीन कुशाओं को लेकर वेदी के पश्चिम भाग में रखे :–

असंस्कृतप्रमीतानां त्यागिनां कुलभागिनाम्।

आच्छिष्ट भागधेयानां दर्भेषुविकिरासनम्।।

पका हुआ अन्न पात्र पर उठाकर जल घुमाकर तीन कुशाओं के ऊपर रख देवे :–

ऊँ अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यादग्धा कुले मम।।

भूमौ दत्तेन चान्नेन तृप्तायान्तु परां गतिम्।।

सव्य होकर स्मरण करे :–

ऊँ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः।।

पुनः अपसव्य होकर बायाँ घुटना झुकाकर कुशा से वेदी के ऊपर दक्षिण से उत्तर को रेखा खींचे :– ऊँ अपहता असुरा रक्षा सिवेदिषदः।।

जलता हुआ अङ्गारा लेकर वेदी की रेखा के ऊपर घुमाकर दक्षिण की ओर रख देवे :–

ऊँ ये :पाणि प्रतिमुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वध्याचरन्ति।।

परा पुरोनिपुरो ये भरन्त्यनिष्टां लोकात्प्रणुदात्यस्मात्।।

पुनः वेदी में जल का प्रोक्षण करे :–

जल :– ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँौरभिस्रवन्तुनः।।

तिल :– ऊँ तिलोसि सोमदैवत्यो गोसवो देव निर्मितः। प्रत्नमद्भि पृक्तः स्वधयापितृलोकान्प्रीणाहि नः।।

गन्धाक्षतपुष्पं निक्षिप्य।।

दोने को बायें हाथ में रखकर, उसमें रखे हुई कुशा को वेदी पर रखकर कुश–तिल–जल हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :– अद्यामुकगोत्रः वसुस्वःपास्मत्पितरमुकशर्मन्साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धे पिण्डस्थानेऽत्रावनेनिक्ष्व ते स्वधा।।

दोने के जल को वेदी की कुशा के ऊपर छोड़े तथा दोने को रखकर पिण्ड़ पर घी व शहद लगाये, कुश–तिल–जल को हाथ में लेकर सङ्कल्प करे :– अद्यामुकगोत्रः वसुस्वःपास्मत्पितरमुकशर्मन्साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धे एष ते पिण्ड़ स्वधा नमः।।

वेदी के मध्य कुशासन के ऊपर पिण्ड़ को रखकर थाली में पिण्ड़ के शेष अन्न को पिण्ड़ के पास रख देवे :– लेपभागभुजस्तृप्यन्तु।।

कुशमूल से हाथ पोंछकर सव्य होकर आमचन करके प्राणायाम रीति से उत्तर की ओर मुख करके श्वास लेकर और दक्षिण दिशा की ओर मुख करके श्वास छोड़े।

अर्घ्य के पात्र को हाथ में लेकर अपसव्य होकर जल को पिण्ड़ पर छोड़े। अद्यामुकगोत्रः वसुस्वःपास्मत्पितरमुकशर्मन्साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धे पिण्ड़ प्रत्यवने निक्ष्वते स्वधा।।

नींवी, कुशा आदि को पिण्ड़ के पास रखकर सव्य होकर आचमन करे, पुनः अपसव्य होकर बायीं जङ्घा नीची करके कार्पाससूत्र हाथ में लेकर दक्षिणमुखी होकर पिण्ड़ पर चढ़ावे :–

ऊँ नमो वः पितरो रसाय नमो वः पितरशोषाय नमो वः पितरः जीवाय नमो वः पितरो स्वधायै नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः नमो वः पितरो नमो वः गृहान्नः पितरो दत्त सत्तो वः पितरो द्वेष्मै तद्वः पितरो वास आधत।।

हाथ में तिल–कुश–जल लेकर सङ्कल्प करे :– अद्यामुकगोत्रः वसुस्वःपास्मत्पितरमुकशर्मन्साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धे पिण्ड़े एतत्ते वासः स्वधा।।

पिण्ड़ पर गन्ध, अक्षत, पुष्प, तुलसी, धूप, दीप, ताम्बूल, दक्षिणा चढ़ाकर वस्त्र से ढककर पिण्ड़ का शेषान्न पिण्ड़ के पास छोड़ देवे :–

ऊँ शिवा आपः सन्तु। – जल

ऊँ सौमनस्यमस्तु। – पुष्प

ऊँ अक्षतं चारिष्टम्चास्तु। – यव व तिल

दोने पर जल में तिल रखकर अक्षोदक देवे :– अद्यामुकगोत्रः वसुस्वःपास्मत्पितरमुकशर्मन्साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धे प्राणाप्यापन कामनायै दत्तै तदन्नपानादिकं अक्षयं अस्तु।।

सव्य होकर पूर्वमुखी होकर पितरों को नमस्कार करके अशीष ग्रहण करे :– ऊँ अघोरः पिताऽस्तु।।

पुनः उच्चारण करे :– अघोराः पितरः सन्तु। गोत्रं नो वर्धन्ताम्। दातारो नोऽभिवर्द्धन्ताम्। वेदाश्च नोऽभिवर्द्धन्ताम्। सन्ततिर्नोऽभिवर्द्धन्ताम्। श्रद्धा च नो माव्यगमत्। बहुदेयं च नोऽस्तु। अन्नं च नो बहु भवेत्। अतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च न सन्तु। एता आशीषः सत्याः सन्तु।

पुनः अपसव्य होकर पिण्ड़ के ऊपर तीन कुशा रखकर जल देवे :– ऊँ ऊर्ज्जं वहन्ती अमृतं घृतं कीलालं परिस्रुतम्। स्वधास्थतर्पयतमे पितरम्।

अर्घ्यपात्र को उल्टा करे देवे, यथाशक्ति दक्षिणा लेकर सङ्कल्प करे :– अद्यामुकगोत्रः वसुस्वःपास्मत्पितरमुकशर्मन्साम्वत्सरिकैकोद्दिष्ट श्राद्धप्रतिष्ठार्थमिदं रजतचन्द्रदैवतममुक गोत्रायामुकशर्मणे ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन दातुमहमुत्सृजे।।

ब्राह्मण को दक्षिणा देकर, पिण्ड़ को उठाकर सूंघकर थाली में रखे तथा कुश से जलते अङ्गार को अग्नि में डालकर दीपक को बुझा देवे। हाथ–पैर धोकर सव्य होकर प्रार्थना करे :–

ऊँ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च।

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः।।

प्रमादात् कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।

स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः।।

पितृःप कुश को उठाकर पिण्ड़ के साथ जल में विसर्जन कर देवे, एकोद्दिष्ट श्राद्ध में शय्यादान, वस्त्र, अन्न, आमान्न, गौ, आदि का दान करे तथा कर्मकर्ता पके हुए अन्न को पात्र में रखकर पञ्चबलि निकालकर कौओं के निमित्त निकाला गया अन्न कौवे को देवे, कुत्ते का अन्न कुत्ते को देवे, देवताओं का अन्न भिक्षुक अथवा अतिथि को देवे, चींटियों का अन्न चींटियों अथवा कीटादि को तथा गाय का अन्न गाय को देने के बाद निम्नलिखित मन्त्र से ब्राह्मणों के पैर धोकर भोजन करायें।

यत् फलं कपिलादाने कार्तिक्यां ज्येष्ठपुष्करे।

तत्फलं पाण्डवश्रेष्ठ विप्राणां पादसेचने ।

इसके बाद उन्हें अन्न, वस्त्र और द्रव्य–दक्षिणा देकर तिलक करके नमस्कार करे।

8.11 सारांश

इस इकाई में छात्रों को अन्त्येष्टि कर्म में जीवन की अन्तिम श्वास से लेकर षोड़शी सपिण्डन् तक की विधि का परिचय दिया गया है। जिससे छात्र मृत्यशय्या पर पहुँच चुके व्यक्ति का दशमहादान भी स्वयं करवा सकता है। इसके अध्ययने के पश्चात्छात्र मृत्यु के पश्चात्देय पाँच पिण्ड़, पञ्चकशान्ति, कपाल क्रिया, अस्थि संचय, दशगात्र, मलिनषोड़शी, एकादशाह, द्वादशाह, उत्तम षोड़शी, सपिण्डन् श्राद्ध इत्यादि सहित मृतक की शान्ति हेतु सभी आवश्यक कर्मों में पारङ्गत हो जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति जीवन भर स्वयं के कर्मों पर आश्रित रहता है, परन्तु मृत्यु के पश्चात्सन्तान को दिये गये संस्कार के फलस्वःप ही उसकी गति होती है। यदि मनुष्य सन्तान को धर्म की यथोचित विधियों से परिचित करवा दे तो मृत्यु के पश्चात्उसकी

सद्‌गति अवश्य ही हो जायेगी। अतः इस इकाई के अध्ययन की आवश्यकता केवलमात्र यही नहीं है कि छात्र स्वयं कर्म करवाने जाये, अपितु वह यह भी जान पायें कि उसके परिवार के व्यक्ति का जो संस्कार हो रहा है, वह यथोचित विधि से सम्पन्न हो रहा है अथवा नहीं।

8.12 शब्दावली

१. अपमृत्यु	=	अकालमृत्यु
२. अर्थी	=	मृतक–शव को श्मशान ले जाने के लिए बाँस की विशेष शय्या।
३. कपाल क्रिया	=	अर्द्धदग्ध शव के कपाल का भेदन
४. चतुष्पद	=	चौराहा
५. क्रव्याद्	=	चिता की अग्नि की संज्ञा
६. निवीती	=	तिल–कुश–जौ को धोती की अण्टी में कमर पर बाँधना
७. मुण्डन्	=	केशत्याग करना (गंजा होना अर्थात्सिर के बाल मुण्ड़वाना)
८. अस्थिसंचय	=	चिताग्नि शान्त होने पर मृतक की अस्थियों (हड्डीयों) को संग्रह करना
९. पंचक	=	धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद व रेवती नक्षत्रों का संयोग।
१०. नारायणबलि	=	ग्याहरवें दिन सम्पन्न होने वाली विधि

8.13 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : शवयात्रा के समय श्मशान तक कितने पिण्डों का दान किया जाता है?

उत्तर : शवयात्रा के समय श्मशान तक पाँच पिण्ड़ों का दान किया जाता है।

प्रश्न – २ : कपाल क्रिया कब की जाती है?

उत्तर : शव के अर्द्धदग्ध हो जाने पर कपाल क्रिया की जाती है।

प्रश्न – ३ : पञ्चक शान्ति के समय निर्मित पुतलों की स्थापना किन–किन अङ्गों पर की जाती है?

उत्तर : १. सिर पर, २. नेत्रों पर, ३. वाम कुक्षि पर, ४. नाभि पर, ५. चरणों पर पुतलों की स्थापना की जाती है।

प्रश्न – ४ : नारायण बलि कब की जाती है ?

उत्तर : मृत्यु अथवा अग्निदाह से ग्याहरवें दिन नारायण बलि की जाती है।

प्रश्न – ५ : सपिण्डन् श्राद्ध कब किया जाता है ?

उत्तर : मृत्यु अथवा अग्निदाह से बाहरवें दिन सपिण्डन् श्राद्ध किया जाता है।

8.14 लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न – १ : मृत्यु के पश्चात्पुत्र अथवा उत्तराधिकारी द्वारा किये जाने वाले कार्यों की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न – २ : शवयात्रा के समय मृतकस्थान से चिता तक दिये जाने वाले पिण्ड़ों की विधि का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न – ३ : पञ्चकशान्ति से आप क्या समझते है? विधि बताईये?

प्रश्न – ४ : मलिनषोड़शी का वर्णन कीजिये ?

प्रश्न – ५ : सपिण्डन् श्राद्ध की विधि बताईये ?

8.15 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1 धर्मशास्त्र का इतिहास
लेखक – डॉ. पाण्डुरङ्ग वामन काणे
प्रकाशक :– उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान।

2 श्राद्ध विवेक
लेखक :– महामहोपाध्याय श्री रुद्रधर
प्रकाशक :– चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।

3 श्राद्ध पारिजात
लेखक :– डॉ. मधुसूदन पाण्डेय
प्रकाशक :– प्राच्य प्रकाशन, गया।

४. अन्त्येष्टि श्राद्ध कर्म पद्धति
लेखक :– पण्ड़ित चतुर्थी लाल
प्रकाशक :– खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई।

इकाई –9

सूक्तो की व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 विषय प्रवेश
9.3.1 शिव संकल्प सूक्त
9.3.2 पुरूष सूक्त
9.3.3 उत्तरनारायण सूक्त
9.3.4 अप्रतिरथ सूक्त
9.3.5 रूद्र सूक्त
9.3.6 भद्र सूक्त
9.4 सारांश
9.5 शब्दावली
9.6 अतिलघुतरीय प्रश्न
9.6 लघुउत्तरीय प्रश्न
9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.1 प्रस्तावना :–

इस देश मे जितने प्रकार के उपवास व्रत पूजन अथवा होम–नियम प्रचलित है उनमे शिवरात्रि–व्रत के समान अन्य किसी का प्रचार नही देखा जाता । इस विशाल भारत में स्त्री–पुरूष, बाल–वृद्ध ,प्रौढ – युवा प्रायः किसी न किसी रूप मे इसके अनुष्ठान मे रत देख जाते है । बहुत से लोग पूजा आदि न करते हुए भी उपवास कर लेते है । जिनकी उपवास मे रूचि नही होती ,वे रात्रि – जागरण करके ही इस व्रत का पुण्य प्राप्त करते है।

साम्ब सदाशिव की आराधना से चतुर्वर्ग फलाप्ति का अमोघ वैदिक उपाय है ''रूद्राभिषेक''। शिव और रूद्र ब्रह्म के ही पर्यायवाची शब्द है। 'वेदः शिवः शिवो वेदः' वेद शिव है और शिव ही वेद है अर्थात् शिव वेदस्वरूप है। ' वेदो नारायणः साक्षात् ' भी कहा गया है । वास्तव मे श्रीमद्भागवतोक्त वचनानुसार '' परः पुरूष एक एवास्य धत्ते स्थित्यादये हरिविरचिहरेति संज्ञाम्'' यही सनातन धर्म का संस्थापित सिद्धान्त है। आशुतोष शिव की अर्चना सर्वदेवार्चनमयी है । '' सर्वदेवात्मको रूद्रः सर्वे देवाः शिवात्मकाः '' तथा '' ब्रह्मविष्णुमयो रूद्र अग्नि सोमात्मकं जगत्'' आदि से यही सिद्ध होता है।

भगवान् रूद्र (साम्बशिव) की उपासना के लिए रूद्राष्टध्यायी ग्रन्थ वेद का ही सारभूत संग्रह है । इसमे गणपति से प्रारम्भ करके पुरूषसूक्त के रूप से नारायण , रूद्रसूक्त के माध्यम से शिव तथा अन्य सभी देवो का स्तवन सहज रूप मे किया जाता है । इस ग्रन्थ मे परब्रह्म के निर्गुण एवं सगुण दोनो रूपो का वर्णन है । रूद्राष्टध्यायी व्यक्ति को इसके जप , पाठ तथा अभिषेक से भगवत्भक्ति ,सुख,शान्ति,सन्तोष,पुत्र,पौत्रादि की वृद्धि , स्वास्वथ्य, आरोग्य धनधान्य की सम्पन्नता आदि के लौकिक तथा परमपद प्राप्ति (मोक्ष) के परलौकिक अनन्य उपलब्ध करता है।

जिस भाँति ,दुग्ध से नवनीत निकाल लिया जाता है,उसी भाँति मानव कल्याणार्थ शुक्लयजुर्वेद से रूद्राष्टध्यायी का संग्रह किया गया है। इस मन्त्रो मे गृहस्थ – धर्म ,राजधर्म, ज्ञान– वैराग्य, ईश्वर –स्तवन आदि विषयो का वर्णन किया गया है।

9.2 उद्देश्य :–

शिव संकल्प , पुरूष , उत्तरनारायण ,भडसूक्त एवं रूद्राष्टाध्यायी के पंचम अध्याय के मंत्रो की व्याख्या से सम्बलित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

1. शिव के विभिन्न वैशिष्ट्यो का ज्ञान करा सकेगे।

2. सृष्टि प्रक्रिया में विरात पुरूष को परिभाषित करेगें।

3. नारायण की विशेषताओ से परिचित होगें।

4. भद्र सूक्त के माध्यम से विश्व कल्याण की कल्पना को समझा सके ।

5. संक्षिप्त अभिषेक विधि को बता सकेगें ।

6. इस इकाई के माध्यम से यजुर्वेद के वैशिस्ट्र्य को समझा सकेगें।

9.3 विशय प्रवेश

9.3.1 शिवसंकल्पसूक्त :–

मनुष्य के शरीर मे सभी कुछ महत्वपूर्ण है। हाथ की छोटी से छोटी अगुंली भी अपना महत्व रखती है , परन्तु मन का महत्व सर्वाधिक है। इसमे विलक्षण शक्ति निहित है। मनुष्य के सुख–दु:ख तथा बन्धन और मोक्ष मन के ही अधीन है। संसार में ऐसा कोई स्थल नही जो मन के लिए अगम्य हो, मन सर्वत्र जा सकता है, एक पल मे जा सकता है । चक्षुरादि इन्द्रियाँ जहाँ नही पहुँच सकती , जिसे नही देख सकती , मन वहाँ जा सकता है , उसे ग्रहण कर सकता है। जिस आत्म ज्ञान से शोकसागर को पार कर नित्य निरतिशय सुख का अनुभव किया जा सकता है , वह मन के ही अधीन है। मन ही आत्म आक्षात्कार के लिए नेत्रवत् है। श्रुति भी कहती है –**'मनसैवानुद्रश्टव्यम्'** संसार मे हम जो भी उत्कर्ष प्राप्त करते है, उनकी मुख्य हेतु है –हमारी स्वस्थ और सक्षम ज्ञानेन्द्रियाँ। कानो से सुनायी न देता हो, आँखो से दिखायी न देता हो तो कोई कितना भी कुशाग्रबुद्धि क्यो न हो , कैसे विद्या प्राप्त करेगा ? विज्ञान एवं कला के मे कैसे व क्या वैशिष्ट्य सम्पादन करेगा ? अर्थोपार्जन भी कैसे करेगा ? ऐसा व्यक्ति तो संसार मे दीन–हीन रहेगा। अपनी जीवनयात्रा के लिए भी वह दूसरो पर आधारित होकर भारभूत ही होगा। अतः इस सत्य से कोई इन्कार

नही कर सकता कि हमारे उत्कर्ष प्रथम एवं महत्वपूर्ण साधन है – हमारी स्वस्थ और सक्षम ज्ञानेन्द्रियाँ। परन्तु यह नही भूलना चाहिए कि इन्द्रियो का प्रवर्तक है मन । यदि मन असहयोग कर दे तो स्वस्थ तथा सक्षम इन्द्रियाँ भी अपने विषय को ग्रहण करने मे समर्थ नही रह जायेगी। जब इन्द्रियो का प्रवर्तन–निवर्तन मन पर आधारित है और स्पष्ट हो जाता है कि हमारा अभ्युदय की प्राप्ति सम्यक् कर्म सम्पादन पर आधारित है , तब यह आपने आप स्पष्ट हो जाता है कि हमारा अभ्युदय मन के शुभ संकल्प युक्त होने पर निर्भर है इसीलिए मन्त्रद्रष्टा ऋषि इस शिवसंकल्प सूक्त के माध्यम से प्रार्थना करते है।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति देवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।

दूरंगमं ज्योतिशां ज्योतिरेक तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। (शुक्लयजुर्वेद, 34/1)

मेरा वह मन धर्मविषयक सकंल्पवाला (शिवसंकल्प) हो , मन में कभी पापभाव न हो , जाग्रदवस्था में देखे–सुने दूर से दूर स्थल तक दौड़ है–(दूरमुदैति) और सुषुप्तावस्था में पुनः अपने स्थान पर लग जाता है। जो ज्योतिः स्वरूप (देव) आत्मा को ग्रहण करने का एकमात्र साधन है (दूर मम्) , दूरगामी तथा विषयों को प्रकाशित करने वाली इन्द्रियों–ज्योतियों–का एकपात्र प्रकाशक (ज्योतिरेकं) अर्थात् प्रवर्तक हैं। वह मेरा मन शुभ सकल्पों वाला हो।

मन के ही निर्मल , उत्साहयुक्त और श्रद्धावान् होने पर बुद्धिमान् यज्ञ–विधि–विधानज्ञ कर्मपरायणजन यज्ञों की सब क्रियाओ को सम्पन्न करते है । मेधावी पुरूष बुद्धि के सम्यक् प्रयोग से वेदादि सच्छास्त्रो का प्रामाण्य समझ सकते है । न्याय और मीमांसा आदि दर्शनशास्त्रो की प्रक्रिया का गूढ़ अनुशीलन कर अप्रामाण्य की सब शंकाओ को दूर कर अपने हृदय में दृढतापूर्वक यह निश्चय कर सकते है। वेदादि – शास्त्र अपने विषय मे (धर्म और ब्रह्म के विषय में) निर्विवाद प्रमाण है। अकोसहित वेदो का अध्ययन करके विविध फलों का सम्पादन करने वाले के विधि–विधान और अनुष्ठान की सम्पूर्ण तभी हो सकता है, जब मन निर्मल ,श्रद्धोपेत तथा उत्साहयुक्त हो । वैदिक क्रियाओ कालप मन की अनुकूलता पर निर्भर है। हम एक–आध बार भले ही मन की उपेक्षा कर दें , परन्तु हम सदा ऐसा नही कर सकते हैं, मन को सदा खिन्न रखकर हम अपना जीवन भी नही चला सकते हैं, मन को भगवान स्वयं अपनी 'विभूति' बतलाते है–'इन्द्रियाणां मनश्रचास्मि' (गीता, 10/12) –' इन्द्रियो मे मैं मन हूँ।' अतः मन पूज्य है। हमे उसकी पूजा करनी ही पडेगी, उसका रूख देखना ही पडेगा इसलिए ऋषि दूसरी ऋचा में प्रार्थना करते है–

येन कर्माण्यपसो मनीशिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेशु धीराः।

यदपूर्वं यक्षमन्त प्रजानां तन्मे मनः शिवसकंल्पमस्तु।।

जिस मन के स्वस्थ और निर्मल होने पर मेधावी पुरूष (मनीषिणः) यज्ञ में कार्य करते है– (कर्माणि कृण्वन्ति), मेधावी जो कर्मपरायण है (अपसः) तथा यज्ञसम्बन्धी विधि–विधान (विदथेषु) मे बड़े दक्ष (धीराः) है तथा जो मन संकल्प विकल्पों से रहित हुआ साक्षात् आत्मरूप ही है। 'यदपूर्वं' इत्यादि श्रुति इन लक्षणों से आत्म का ही लक्ष्य कराती है और पूज्य (यक्षम्) है, जो प्राणियो के शरीर के अन्दर ही स्थित है (अन्तः प्रजानाम्), वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

प्रत्यक्षादि प्रमाणो के माध्यम से उत्पन्न होने वाली ज्ञानवस्तु मन के द्वारा ही उत्पन्न होता है। सामान्य तथा विशेष दोनो प्रकार के ज्ञानों का जनक मन ही है। क्षुधा और पिपासा इत्यादि की पीडा से मन जब अत्यन्त व्यथित हो जाता है , तब बुद्धि मे कुछ भी ज्ञान स्फुरित नही हो पाता। ज्ञान ही मनुष्य की विशेषता है।

ज्ञान के बल से ही वह मर्त्यलोक के अन्य जीवों से श्रेष्ठ बना , उनका सिरमौर बना। ज्ञान की वृद्धि करके उसने अतुल सुख और सम्पत्ति प्राप्त की। ज्ञान के ही द्वारा उसने पशुओ की अपेक्षा अपने जीवन को मधुर बनाया। मोक्ष भी आत्मज्ञान से ही प्राप्त किया जा सकता है । उस ज्ञान का जनक यह मन ही है।

हमारी जीवनयात्रा निष्कण्टक नहीं। अनेक विघ्न–बाधायें इसमे उपस्थित होती है । अभ्युदय और उत्कर्ष का कोई मार्ग अपनाओ , वह निरापद नहीं होगा। कठिनाइयाँ और क्लेश हमारे सामने आयेगे ही । यदि हम उन कठिनाईयो को जीतने में समर्थ नही तो मार्गपर आगे प्रगति नही कर सकते है। यदि प्रगति अभीष्ट है तो कठिनाईयो से सघर्ष करके उन पर विजय प्राप्त करना होगा। । इसके लिए धैर्य चाहिए । थोडी–थोडी कठिनाईयों में अधीर हो जाने वाले व्यक्ति तो कोई भी उद्यम नही कर सकते। कार्य उद्यम करने से सिद्ध होते है , मनोरथमात्र से नहीं। अतः सफलतारूप प्रसाद का एक मुख्य स्तम्भ धैर्य है। धैर्य मन मे ही अभिव्यक्त होता है , अतः धैर्य का उत्पादक होने से जल को जीवन कहने की भाँति मन को ही धैर्य मन में ही अभिव्यक्त होता है, अतः धैर्य का उत्पादक होने से जल को जीवन कहने की भाँति मन को ही धैर्यरूप कहा गया है। मन के बिना कोई भी लौकिक–वैदिक कर्म सम्पादित नहीं किया जा सकता है। अतः तीसरी ऋचा से ऋषि कामना करते है–

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।

यस्मान्न ऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। (शुक्लयजुर्वेद,34/3)

जो मन प्रज्ञान अर्थात् विशेषरूप से ज्ञान उत्पन्न करने वाला है तथा पदार्थो को प्रकाशित करने वाला (चेतः) सामान्य ज्ञानजनक है जो धैर्यरूप है, सभी प्राणियो में (प्रजासु) स्थित होकर अन्तज्योर्ति अर्थात् इन्द्रियादि को अथवा आभ्यन्तर पदार्थो को प्रकाशित करने वाला है एवं जिसकी सहायता और अनुकूलता के बिना कोई कार्य सम्पन्न नही हो सकता , मेरा वह मन शुभसंकल्प वाला हो ।

चक्षुरादि इन्द्रियाँ केवल उन पदार्थो को ग्रहण कर सकती है , जिनसे उनका साक्षात् सम्बन्ध हो , पर उन अप्रत्यक्ष पदार्थो को भी ग्रहण करने मे समर्थ है। चतुर्थ ऋचा से ऋषि यही भाव व्यक्त करते है–

येनेदं भूतं भुवनं भविश्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम्।

येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। – (शुक्लयजुर्वेद, 34/4)

जिस मन के द्वारा यह सब भलीप्रकार जाना जाता है ,ग्रहण किया जाता है (परिगृहीतम्) , भूत , भविष्यत् और वर्तमान सम्बन्धी सभी बातो को परिज्ञान होता है (भूतं भुवनं भविष्यत्) जो मन शाश्रवत है– संकल्प–विकल्प से रहित हुआ आत्मरूप (अमृतेन) ही है जिस श्रद्धायुक्त और स्वस्थ मन से सप्त होताओ वाला (अग्निष्टोम यज्ञ में सप्त होता है।) किया जाता है (तायते), वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

हमारा जितना भी ज्ञान है , वह सब शब्द–राशि में ओतप्रोत है। शब्दानुगम से रहित लोक मे कोई भी ज्ञान उपलब्ध नहीं होता । जैसे आत्मा की अभिव्यक्ति शरीर मे होती है , वैसे ही ज्ञान की अभिव्यक्ति शब्दरूप कलेवर मे ही होती है। वे शब्द मन में ही प्रतिष्ठित होते है । मन के स्वस्थ होने पर उनकी स्फूर्ति होगी और मन के व्यग्र होने पर वे स्फुरित नहीं होगें । छन्दोग्योपनिषद् मे कहा गया है – ' **अन्नमयं हि सोम्य मनः** ' – ' हे सोम्य ! मन अन्नमय है। ' इस सत्य का अनुभव कराने के लिए शिष्य को कुछ दिनों तक भोजन नही दिया गया। भोजन न मिलने से जब वह बहुत कृश हो गया , तब उसे पढे हुए वेद को सुनाने के लिए कहा गया । वह बोला कि ' इस समय वह पढ हुआ कुछ भी मन में स्फुरित नही हो रहा है ।'

अनन्तर उसे भोजन कराया गया है । भोजन से तृप्त होने पर उसके मन में वह पढा हुआ वेद स्फुरित हो गया । इस अन्वय और व्यातिरेक से यह भी सिद्ध होता है कि ज्ञान की प्रतिष्ठा तथा स्फुर्ति मन मे ही होती है। यदि मन प्रसन्न है तो ज्ञान–सम्पादन और विचार–विमर्श सफल होगें। यदि वह व्यग्र एवं अधीर हो रहा है तो कोई भी कार्य सफल न होगा। अतः मन का निर्मल और प्रसन्न होना सबसे अधिक महत्व का है इसलिए पाँचवी ऋचा में ऋषि प्रार्थना करते है–

यस्मिन्नृचः साम यजूषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।

यस्मिँश्चित्त सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। – (शुक्लयजुर्वेद , 34/5)

जिस मन मे ऋक्, यजुः और सामरूप वेदत्रयी ठीक उसी प्रकार प्रतिष्ठित है , जैसे रथचक्र नाभि मे चक्के–अरे, जिस मन मे प्राणियो का लोक विषयकज्ञान (चित्तम्) पट में तन्तु की भाँति ओतप्रोत है , वह मेरा मन शुभसंकल्प वाला हो।

बुद्धिमान् सब जानते हैं कि मन ही मनुष्य को सब जगह भटकाता रहता है। यही आग्रह करके उन्हें किसी मार्ग में प्रवृत्त करता है अथवा उससे निवृत्त करता है। नयन और नियमन मन के ही अधीन हैं। यदि मन पवित्र संकल्प वाला होगा तो उत्तम स्थान पर लेजायेगा और सत्–प्रवृत्तियों से इसका नियमन करेगा। यदि मन पाप संकल्पों से आक्रान्त होगा तो मनुष्य को बुरे मार्ग में लगाकर उसके विनाश दुर्गति का कारण बन जाएगा। छटी ऋचा में ऋषि ने यही बात कहकर मन के पवित्र होने की प्रार्थना की है।

सुषारथरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्जानिव इव।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।। – (शुक्लजयुर्वेद, 34/6)

जैसे कुशल सारथि (सुषारथिः) चाबुक हाथ में लेकर (अश्वान्) घोडों को जिधर चाहता है, ले जाता है (नेनीयते), वैसे ही जो मन मनुष्यों को (मनुष्यान्) जिधर चाहता है, ले जाता है तथा जिस प्रकार सुसारथि बागडोर हाथ में लेकर (अभीशुभिः) घोड़ों का अपने मनचाहे स्थान पर ले जाता है (वाजिनः नेनीयते), वैसे ही जो मन मनुष्य को ले जाता हैं, जो प्राणियों के हृदय में प्रतिष्ठित है (हृत्प्रतिष्ठम्), शरीर के वृद्ध होने पर भी जो वृद्ध नहीं होता, जो अत्यन्त वेगवान् है (जविष्ठम्), मेरा वह मन शुभसंकल्पवाला हो।

दो दृष्टान्त देकर बतलाया कि 'मन शरीर का नयन और नियमन दोनों करता है। शरीर के शिथिल होने पर भी मन का वेग कम नहीं होता। अत्यन्त वेगवान् होने से जल्दी वश में नहीं आता है।' बिगड़ उठे तो बलवान् होने से व्यक्ति बुरी तरह झकझारे देता है। यदि मन शुद्ध और पवित्र बन जाये तो हमारे जीवन की धारा बदल जाएगी और हमारी समस्त शक्तियाँ मंगलमय कार्यों में ही लगेगी।

9.3.2 पुरूष सूक्त :–

सभी सूक्तों में 'पुरूषसूक्त' श्रेष्ठ माना गया है। इसका सम्बन्ध सृष्टि सृजन से जुड़ा हुआ है। इसमें सोलह ऋचाएँ हैं, जो भगवान् नारायण के सृष्टि सृजन के स्वरूप को लेकर इससे जुड़ी हुई हैं। इन सोलह ऋचाओं से ही देवता के षोड़शोपचार पूजन हैं। पूजन के प्रत्येक उपचार के साथ पुरूषसूक्त की एक एक ऋचा जुड़ी है। इसके भावार्थ से ही सृष्टि सृजन का बोध होता है। इसके प्रथम मन्त्र में ही सहस्त्र शिरो से भाव है समस्त ब्रह्माण्ड जिसका अंश अस विश्व मृत्युलोक में समसत प्राणियों से जुड़ा हुआ है। यह स्वरूप हजारों नेत्र, हाथ पैर, अन्द्रिय होने से विराट् स्वरूप में प्रत्यक्ष है, जीवन में प्रत्यक्ष इसका आविर्भाव होता है।

जीव का अंत हो जाने पर इसका तिरोभाव होताहै। इससे परब्रह्म महानारायण परमात्मा का व्यक्त और अव्यक्त निराकार और साकार रूप प्रकट होता है, जो अनंत स्वरूप है, जिसकी हजारों मूर्तियाँ है, जिसके हजारों पाँव, आँखें भुजाएँ हैं वह अच्युत पुरूष कोटियुगों से विद्यमान है। वस्तुतः वही सृष्टि का सृजन तत्त्व रूप में विद्यमान है। उस पुरूषोत्तम पुरूष को हम बार–बार नमस्कार करते हैं। 'सहस्त्रशीर्ष' शब्द अनन्त द्युलोक से युक्त उस महाविराट्पुरूष का द्योतक है। उस महाविराट् से ही इस क्षुद्र विरा् की उत्पत्ति होती है। उस महान् विराट् पुरूष के रोम–रोम से अनन्त भूः भुवः एवं स्वर्लोकों से समन्वित अगणित ब्रह्माण्ड वर्तमान रहते हैं। वह चतुष्पात् पूर्ण पुरूष एकपाद से अगणित ग्रह्माण्डों के रूप में विकसित रहता है। उसे ही महानारायण विष्णु रूप में कहा गया है। सहस्त्रशीर्षा पुरूष चतुष्पात् पूर्ण पुरूष है। वह अपने एक पाद से अगणित विश्व ब्रह्माण्डों के रूप में विकसित हुआ। वह अन्तर्यामी रूप में सन्निविष्ट रहताहै। इसे कोटी महनारायण या विष्णु कहकर पुकारते हैं। वह ज्यायमान है। पुराणों में इसे ही शेष अथवा अनन्त कहते हैं।

सहस्त्राशीर्षा पुरूषः सहस्त्राकक्षः सहस्त्रपात्।

सभूमिः सर्व्वत स्पृत्त्वात्यतिष्ट्ठद्दशांगुलम्।।1।।

हे मनुष्यों! जिस पूर्ण परामात्मा में हम मनुष्य आदि के असंख्य शिर, आँखे और पैर आदि अवयव है जो भूमि आदि से उपलक्षित हुए पाँच स्थूल और पाँच सूक्ष्म भूतों से युक्त जगत् को अपनी सत्ता से पूर्ण कर जहाँ जगत नहीं वहाँ भी पूर्ण हो रहा है।

पुरूषऽएवेदः सर्व्वँ य्यद्भूतँ य्यच्च भागव्यम्।

उतामृतत्त्वस्येशानों यदन्नेनातिरोहति।।2।।

वह विराट पुरूष ही भूतत, भविष्य और वर्तमान है, वही ''अमृतत्वस्य ईशानः'' अर्थात अमरता का स्वामी है।यत् अन्नेन अतिरोहति अर्थात् जो अन्न से बढ़ता है। अन्न का अर्थ प्राण भी है।

एतावानस्य महिमातो ज्ज्यायाँश्च्च पुरूषः।

पदोस्य विश्श्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।3।।

इस विराट की इतनी महिमा है कि उससे भी बढ़कर व परूष पहिमा वाला है इसके एक पादस्वरूप यह समस्त चराचर जगत है और तीन पादस्वरूप अमृतत्व दिव्य लोभ है।

त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरूषः पादोस्येहाभवत्पुन।

ततो विष्ष्वङ्डव्यक्क्रामत्त्साशनानशनेऽअभि।।4।।

यह पूर्वोक्त परमेश्वर कार्यजगत् से पृथक तीन अंश से प्रकाशित हुआ एक अंश अपने सामर्थ्य से सब जगत को बार बार उत्पन्न करता है, पीछे उस चराचर जगत् में व्याप्त होकर स्थित है। अर्थात् अनशन और अशन की सृष्टि में शासन के अन्तर्गत जगत जिसमें अन्नादि सृष्टि के प्राणी एवं अनशन अर्थात दिव्यलोक के प्राणी निवास करते है।

ततो विराडजायत विराजोऽअधिपूरूषः।

सजातो ऽअत्यरिच्च्यत पश्च्वाद्भमिमथो पुरः।।5।।

परमेश्वर ही से सब समष्टिरूप जगत् उत्पनन होता है, वह उस जगत् से पृथक् उसमें व्याप्त भी हुआ, उसके दोषों से लिप्त न होकर इस सबका अधिष्ठाता है। इस प्रकार सामान्य रूप से जगत की रचना का वर्णन कर विशेषकर भूमि आदि की रचना को क्रम से कहते है।

तस्माद्द्यज्ञात्त्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्ज्यम्।

पशूँस्ताँश्चक्क्रे व्वयव्यानारण्ण्या गग्राम्म्याश्च ये।।6।।

जिस सबका गहण करने योग्य, पूजनीय परमेश्वर ने सब जगत के हित के लिए दही आदि भोग्य पदार्थो ओर ग्राम के तथा वन के पशु बनायें है उसकी सब लोग उपासना करो।

तस्माद्यज्ञात्त्सर्व्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे।

छन्दाः सिजज्ञिरे तस्माद्द्यजुस्त्स्मादजायत।।7।।

हे मनुष्यां! तुम को चाहिए कि उस पूर्ण अत्यन्त पूजनीय जिसके अर्थ सब लोग समस्त पदार्थों को देते या समर्पण करते है उस परमात्मा से ऋग्वेद, सामवेद उत्पनन हुआ; उस परमात्मा से अथर्ववेद उत्पन्न हुआ और उस पुरूष से यजुर्वेद उत्पन्न होता है और उस वेद को पढ़ो और उसकी आज्ञा के अनुकूल वर्त्त के सुखी होओ।

तस्मादश्श्वाऽअजायन्त ये के चौभयदतः

गावो हे जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताऽअजावय।।8।।

हे मनुष्यों! तुम को घोड़े तथा जो कोई गदहा आदि दोनों, ओर ऊपर नीचे दाँतों वाले हैं वे उस परमेश्वर से उत्पन्न हुए उसी से गौवें या अन्य भी एक ओर दाँत वाले जीव निश्चय करके उत्पन्न हुए हैं, इस प्रकार कहना चाहिए।

तँय्यज्ञम्बर्हिषि प्प्रौक्क्षन्नपुरूषंजातमग्ग्रतः।

तेन देवाऽअयजन्त साद्ध्याऽऋषयश्च्च ये।।9।।

विद्वान मनुष्यों को चाहिए कि सृष्टिकर्त्ता ईश्वर का योगाभ्यासादि से सदा हृदयरूप अवकाश में ध्यान और पूजन किया करे।

यत्त्पुरूषँ व्यदधुः कतिधा व्यकल्प्पयन्।

मुखंकिमस्यासी त्तिकम्बाहू किमूरू पदाऽउच्च्येते।।10।।

हे विद्वानों! आप जिस पूर्ण परमेश्वर को विविध प्रकार से धारण करते हो उसको कितने प्रकार से विशेषकर कहते हैं और इस ईश्वर की सृष्टि में मुख के समान श्रेष्ठ कौन है? भुजबल को धारण करने वाला कौन है? उरू अर्थात् घोंटू के कार्य करने वाले कौन है और पाँव के समान तुच्छ कौन कहे जाते हैं?

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्नयः कृतः।

ऊरू तदस्य यद्वैश्श्यः पद्भ्याश शूद्द्रोऽ अजायत।।11।।

हे जिज्ञासु लोगो! तुम उस ईश्वर की सृष्टि में वेद व ईश्वर का ज्ञाता इनका सेवक या उपासक मुख के तुल्य उत्तम ब्राह्मण है। भुजाओं के तुल्य बल पराक्रमयुक्त राजन्य (क्षत्रिय) है। ऊरू अर्थात् जंघाओं के तुल्य वेगादि से काम करने वाला अथवा व्यापारविद्या में प्रवीण वैश्य है। सेवा और अभिमान से रहित होने से शूद्र उत्पन्न हुआ है।

चन्द्रमा मनसो जातश्च्चक्षोः सूर्य्योऽ अजायत।

श्रोत्त्राद्वायुश्च्च प्प्राणश्च्च मुखादग्निरजायत।।12।।

जा यह सब जगत् कारण ईश्वर ने उत्पन्न किया है उसमें चन्द्रलोक मनरूप, सूर्यलोक नेत्ररूप वायु और प्राण श्रोत्र के तुल्य, मुख के तुल्य अग्नि औषधि और वनस्पति रोमों के तुल्य नदी नाड़ियों के तुल्य और पर्वतादि हड्डी के तुल्य है ऐसा जानना चाहिए।

नाब्भ्याऽ आसीदन्तरिक्षः शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत।

पद्भ्या म्भूमिर्द्दिशः श्रोत्त्रात्तथा लोकां ।। ऽअकल्प्पयन्।।13।।

हे मनुष्यों! जो जो इस सृष्टि में कार्यरूप वस्तु है वह सब विराटरूप कार्यकारण का अवयवरूप है, ऐसा जानना चाहिए।

यत्पुरूषेण हविषा देवा यज्ञमतन्न्वत।

व्वसन्तो स्यासी दाज्जयङ्ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः।।14।।

जब ब्राह्य सामग्री के अभाव में विद्वान् लोग सृष्किर्त्ता ईश्वर की उपासनारूप मानस ज्ञानयज्ञ को विस्तृत करें तब पूर्वाह्न आदि काल ही साधनरूप से कल्पना करना चाहिए।

सप्प्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिध÷कृताः।

देवा यद्द्यज्ञन्तन्नवानाऽ अबध्नन्पुरूषम्पशुम्।।15।।

हे मनुष्यों! जिस मानस ज्ञानयज्ञ को विस्तृत करते हुए विद्वान लोग जानने योग्य परमात्मा को हृदय में बांधते है। इस यज्ञ के सात गायत्री आदि छन्द चारों ओर से सूत के सात लपेटों (परिधि) के समान है। इक्कीस अर्थात् प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, पाँच सूक्ष्मभूत, पाँच स्थूलभूत, पाँच ज्ञानेन्द्रिय और सत्व, रजस्

तीन गुण ये सामग्री रूप किये उस यज्ञ को अथावत् जानो। इस विशेषताओं वाले पुरूष को यज्ञ विस्तार है उसकी पशुता को समाप्त करने के लिए बाँधा अर्थात् यज्ञ वेदी पर आहूत किया।

यज्ञेन यज्ञमयजनत देवास्तानि धर्म्माण प्प्रथमान्यासन्।

तेहनाकम्महिमान÷ सचन्त यत्रपूर्व्वे साद्ध्याः सन्ति देवाः।।16।।

हे मनुष्यों! जो विद्वान् लोग पूर्वोक्त ज्ञानयज्ञ से पूजनीय सर्वरक्षक अग्निवत् तेजस्वि ईश्वर की पूजा करते है, वे ईश्वर की पूजा आदि धरणरूप धर्म अनादि रूप से मुख्य है, वे विद्वान् महत्व से युक्त हुए जिस मुख में इस समय से पूव साधनों को किये हुए प्रकाशमान विद्वान् है उस सब दुःखरहित मुक्तिसुख को ही प्रापत होते है, उसको तुमलोग भी प्राप्त होवोगे।

9.3.3 उत्तरनारायण सूक्त –

अद्भ्यः सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्श्वकर्म्मणः समवर्त्तताग्ग्रे।

तस्य त्वष्टा विदधद्द्रूपमेति तन्मर्त्त्यस्य देवत्वमाजानमग्ग्रे।।17।।

जल, पृथ्वी आदि से बनने वाले इस विश्व अथवा जगत् से पूर्व इन जलादि तत्वों को धारण करने वाले महापुरूष सूर्य के रूप में परमपिता ईश्वर ही मुख्य आराध्य देव है।

वेदाहमेतम्पुरूषम्महान्तमादित्यवर्ण्णन्तमसः परस्तात्।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेतिनान्यः पन्थाविद्द्यतेयनाय।।18।।

इस मन्त्र में मनुष्य की मुक्ति का मार्ग बताते हुए कहा है कि सूर्य ही ज्ञानरूवरूप परमपिता है। इस ज्ञान को प्राप्त करने वाला ही अमृत तत्व को प्राप्त करता है।

प्रजापतिश्च्चरति गर्ब्भेऽअन्तरजायमानोबहुधाविजायते।

तस्य योनिम्परिपश्श्यन्ति धीरास्तस्मिन्नह तस्त्थुर्ब्भुवनानि विश्श्वा।।19।।

नित्य परमपिता प्रजापति स्वयं जन्म न लेते हुए भी गर्भ के मध्य में सहजता से अपनी उपस्थिति बताता है तथा ब्रह्म को जानने वाले भी उस ब्रह्म के सभी योनियों/लोकों में दर्शन कर पाते है।

यो देवेब्भ्यऽआतपति यो देवानाम्पुरोहितः।

पूर्व्वो यो देवेब्भ्यों जातो नमो रूचाय ब्ब्राह्मये।।20।।

परमब्रह्म ज्योतिस्वरूप सभी देवताओं को अपने ज्ञान से ज्ञानवान् तथा शक्ति से शक्तिमान् बनाता है। जो अनित्य है, उस परमपुरूष को हम नमस्कार करते है।

रूचम्ब्राह्मंजनयन्तो देवाऽअग्ग्रेतदब्ब्रुवन्।

यस्त्वैवम्ब्राह्मणोविद्द्यात्तस्य देवाऽ असन्नवशे।।21।।

वेद को जानने वाले विद्वान् को चाहिए कि ईश्वर के नित्य स्वरूप को जानकर उसकी उपासना करे, जिसके करने से उसकी सभी अभिलाषायें पूर्ण हो सके।

श्रीश्च्वते लक्ष्मीश्च्च पत्न्यावहोरात्त्रे पाश्र्वे नक्षत्राणि रूपमश्श्विनौ व्व्यात्तम्।

इष्ष्णन्निषाणा मुम्मऽइषाण सर्व्वलोकम्मऽइषाण।।22।।

श्री और लक्ष्मी जिस परब्रह्म की पत्नियाँ है, दिन और रात पार्श्व मे विद्यमान है। सूर्य और चन्द्र नक्षत्ररूप में तथ पृथ्वी और आकाशरूप में आप सुशोभित है, अपने आशीर्वचन से मेरा कल्याण करे।

9.3.4 अप्रतिरथ सूक्त

अप्रतिरथ सूक्त का विशेष माहात्म्य है, इसकी ऋचाओं के पाठ से ईश्वर की कृपा होती है तथा मनुष्य की सभी मनोकामनायें पूर्ण होती है।

।। हरिः ओम्।।

आशुः शिशनो व्वृषभो न भीमो घनाघनः क्क्षोभणश्च्चर्षणीनाम्।

सङ्क्रन्दनोनिमिषऽएकवीरः शतः सेनाऽअजयत्सा कमिन्द्रः।।1।।

देवताओं के सेनानायक इन्द्र के प्रति विशेषणों से युक्त यह अप्रतिरथ सूक्त है। भगवान् रूद्र का यह कवच रूप समझा जाता है। युद्ध में इस का पाठ प्रशस्त माना गया है। संक्षेप में अर्थ है वज्र के समान शीघ्रगामी, भयकारी शत्रुओं के घातक, क्षोभ हेतु बार–बार गर्जना करने वाले अत्यन्त सावधान इन्द्र सैंकड़ों सेनाओं को जीत लेते हैं।

सङ्क्रदनेना निमिषेण जिष्ष्णुना युत्त्कारेण दुश्च्च्य–वनेनधृष्ष्णुना।

तदिन्द्रेण जयततत्त्सहदध्वँ य्युधोनरऽ–इषुहस्त्तेन व्वृष्ष्णा।।2।।

हे युद्ध करने वाले वीरों तुम अनेक युद्धों को जीतने वाले भय रहित बाण धारण करने वाले तुम अजेय हो और देव सेनानायक इन्द्र के प्रभाव से शत्रुसेना का युद्ध में विनष्ट कर दो।

सऽइषुहस्त्तैः सनिषंङिभिर्व्वशीसः स्त्रष्ट्टासयुधऽइन्द्रोग–णेन।

सः सृष्ट्ट जित्सोमपाबाहु शदर्ध्युग्ग्र धन्न्वा प्प्रतिहि–ताभिरस्त्ता।।3।।

यह सूक्त पुनः इन्द्र को सम्बोधित है। हे इन्द्र! आप शत्रुओं को नाश करने वाले होवे। रथ के साथ सभी दिशाओं में विचरण करें। राक्षसों का नाश करें। हाथ में बाण लेकर सभी ओ विचारण करें शत्रुओं को पीड़ित करें। धनुषधारियों को युद्ध में ललकारने वाले बाहुबली भी इन्द्र अपने धनुष से छोड़े हुए बाणों से जो शत्रुओं का नाश कर देते हैं, वे इद्र हमारी रक्षा करें।

बृहस्प्पते परिदीया रथेन रक्षोहामित्त्रां।। ऽअपबाधमानः।

प्रभंजन्त्सेनाः प्प्रमृणो युधा जयन्नस्म्माकमेद्ध्यविता रथानाम्।।4।।

बृहस्पति को सम्बोधित करते हुए कहा है – है बृहस्पति! आप राक्षसों का नाश करने वाले बने। रथ से सभी ओर विचरण करें। शत्रुओं को पीड़ित कर उनकी सेनाओं को हानि पहुँचाकर युद्ध में हिंसा करने वालों को जीत कर हमारे रथों की रक्षा करें।

बलविज्ञाय स्त्थविरः प्प्रवीरः सहस्वान्वाजी सहमानऽउग्ग्रः।

अभिवीरोऽ अभिसत्त्वा सहोजा जैत्त्रमिन्द्र रथमातिष्ठ गोवित्।।5।।

पुनः इद्र को वीरता पूर्ण विशेषणों से संबोधित करके कहा है – है इन्द्र! आप दूसरों केवल की जानने वाले, बहुत शूरवीर, महाबलशाली, अन्न देने वाले युद्ध में अतिक्रूर, सब ओर वीर योद्धाओं से युक्त, सभी ओर से सेवकों से घिरे हुए आप अपने विजयशील रथ पर चढ़ जाएँ।

गोत्त्रभिदंगोविदँव्वज्जबाहुंजयन्तमज्जम प्प्रमृणन्तमोजसा।

इन सजाताऽअनु वीरयद्ध्व मिन्द्रः सखायोऽ अनु सः रभद्ध्वम्।।6।।

हे इन्द्र! आप शत्रुओं को मारने वाले, असुर कुल के नाशक वेदवाणी के ज्ञाता, हाथ में वज्र लेकर संग्राम को जीतने वाले, बल से शत्रुओं का संहार करने वाले इस इन्द्र को पराक्रम दिखाने के लिए उत्साह दिलाइये। इसको उत्साहित कर आप स्वयं उत्साहित हो जाओ।

अभि गोत्त्राणि सहसा गाहमानोदयो व्वीरः शतमन्न्युरिन्द्र÷।

दुश्च्च्यवनः पृतनाषाडयुद्ध्योस्म्माकः सेनाऽअवतु प्प्रयुत्त्सु।।7।।

शत्रुओं के प्रति दयाहीन–रूद्र के लिए पुनः विशेषण लगाए गए हैं। पराक्रम सम्पन्न अनेक प्रकार से क्रोध युक्त अथवा सैंकड़ों यज्ञ करने वाले दूसरे से नष्ट न होने योग्य, शत्रुओं का संहार करने वाले किसी के भी द्वारा प्रहारित न हो सकने वाले देवसेना नायक इन्द्र असुरों के कुलो का नाश करने वाले हमारी सेना की रक्षा करें।

इन्द्रऽआसान्नेता बृहस्प्पतिर्द्दक्षिणा यज्ञः पुरऽएतु सोम÷।

देवसेनानामभिभंजतीनांजयन्तीनाम्मरूतो यन्त्वग्ग्रस्।।8।।

यहाँ पर देवसेना नायकों इन्द्र और बृहस्पति की प्रसंसा की गई है बृहस्पति और इन्द्र सभी प्रकार से शत्रु सेनाओं का मर्दन करने वाली विजयशील देवसेनाओं के नायक हैं यज्ञ पुरूष विष्णु सोम सभी मरूद्गण और दक्षिण चले।

इन्द्रस्य व्वृष्ष्णो व्वरूणस्त राज्ञऽआदित्त्यानाम्मरुताः शर्द्धऽउग्ग्रम्।

महामनसाम्भुवनच्च्यवानांघोंषों देवानांजयता मुदस्त्थात्।।9।।

उक्त सूक्त में वरूण जल देवता का आवाहन किया गया है। सभी लोकों के नाश करने की सामर्थ्य वरूण में है। महानुभाव वरण की सभा से जय जयकार का शब्द उठ रहा है, जो देवताओं बारह आदित्यों और मरूद्गणों को जल–वर्षा के द्वारा प्रदान करता है। उस इन्द्र और वरुण की सभा से जय जयकार उठ रही है।

उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत्सत्त्वनाम्मामकानाम्मनाःसि।

उद्वत्त्रहन्वाजिनाँ व्वाजिनान्युद्दथानांजयताँय्यन्तु घोषाः।।10।।

पुनः इन्द्र को उक्त सूक्त में संबोधित कर जयघोष और विजय प्राप्ति की कामना की गयी है। युद्ध में विजय प्राप्त हो। हे इन्द्र! आप अपने घोड़ों की गति को तेज कीजिए, आप अपने शस्त्रो को भली प्रकार से सुसज्जित करो, मेरे वीर सैनिकों के मन को हर्षित कीजिए। आपके विजय चाहने वाले रथों से जय विजय की घोषणा होनी चाहिए।

अस्म्माकमिन्द्रः समृतेषु द्ध्वजेष्ष्वस्माकँय्याऽइषवस्त्ता जयन्तु।

अस्म्माकँ व्वीराऽउत्तरे भवन्त्वस्म्मा ऽँ।।ऽउ देवाऽअवता हवेषु।।11।।

उक्त सूक्त में संग्राम और यद्ध में विजय प्राप्ति की कामना की गई है। हे अन्द्र! शत्रु की पताकाओं के साथ हमारी पताकाओं के मिलने पर अर्थात् युद्ध का सामना होने पर हमारी रक्षा करें। हमारे बाण शत्रुओं को नष्ट कर विजय प्राप्त करें। हमारे वीर सैनिक शत्रुओं के सैनिकों से श्रेष्ठता प्राप्त करें। हे देवगण! आप लोग संग्रामों में हमारी रक्षा कीजिए।

अमीषा चिंत्तम्प्रतिलोभयन्ती गृहाणांगन्न्यप्प्वे परेहि।

अभिप्प्रे हिनिर्द्दह हृत्सु शोकैरन्धेना मित्त्रास्तमसा सचन्ताम्।।12।।

यहाँ पुनः शत्रुओं का नाश हो ऐसे प्रयत्नों का आवाहन हुआ है, उनके चित्त भंग हो जाएँ इस कामना से उन में व्याधियो के द्वारा उनके चित्त को मोहित करो। उनके सिर आदि अंगों कोग्रहण करो, दूर जाकर पुनः उनके पास लौट कर उनके हृदयों को शोक से दग्ध कर दो हमारे शत्रु घने अंधकार से आच्छन्न हो जाएँ।

अवसृष्ट्टा परापत शरव्व्ये ब्ब्रह्मसः शिते।

गच्छामित्त्रान्प्र पद्द्यस्व मामीशांकंचनोच्छिषः ।।13।।

यहाँ पुनः बाण रूपी ब्रह्मास्त्र का वर्णन है – हे बाण रूपी ब्रह्मास्त्र। वेद मन्त्रों से तक्षण हो कर मेरे द्वारा प्रक्षिप्त होने पर तुम शत्रुसेना पर गिरो। शत्रु के पस जाकर पहुँच जाओ और उनके शरीर में प्रविष्ट होकर उनमें से किसी को भी जीवित मत छोड़ों।

प्रेता जयता नरऽइन्द्रो वः शर्म्म यच्छतु।

उग्ग्रा व÷ सन्तु बाहवोनाधृष्ष्या यथासथ।।14।।

यहाँ पर पुनः विजय की कामना करते हुए कहा है – हे हमारे वीर पुरूषों! शत्रु सेना पर आक्रमण करो और विजय प्राप्त करो। देव सेनानायक इद्र तुम्हारा कल्याण करें। तुम्हारी भुजाएँ शस्र उठाएँ तुम किसी भी प्रकार से शत्रु से पराजय का तिरस्कार प्राप्त न करें।

असौ या सेना मरूतः परेषामब्भ्यैति नऽओजसा स्प्पर्द्धमाना।

ताङ्गूहत तमसा पव्व्रतेन यथामीऽअन्नयोऽअन्नयन्न जानन्।।15।।

यहाँ पर शत्रु सैनिक स्वयं ही अपने में विद्रोह करके नष्ट हो जाये ऐसे भाव हैं :– हे मरूद्गण! जो शत्रुसेना–बल लिए आ रा है उसमें अकर्मण्यता का अंधेरा फैलाकर उसे नष्ट कर दो। उस अंधकार में शत्रु सैनिक एक दूसरे को पहिचान न सके और परस्पर कट कर शस्त्र चलाने से नष्ट हो जाये।

यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा व्विशिखऽइव।

तन्नऽइन्द्रो बृहस्प्पतिरदितिः शर्म्म यच्छतु व्विश्श्वाहा शर्म्मयच्छतु।।16।।

यहाँ पर बृहस्पति इन्द्र और देवमाा को सम्बोधित विजय कल्याण क कामना की गयी है। जिस युद्ध में शत्रु के बाण फैली हुई शिखा वाले बालकों के समान इधर–उधर गिरते हैं, उसमें इन्द्र बृहस्पति और देव माता अदिति हमे विजय दिलाये। सभी देवता सर्वदा हमारा कल्याण करें।

मर्म्माणिते व्वर्म्मणा च्छादयामि सोमस्त्वा राजामृते–नानुवस्ततम्।

उरोर्व्वरीयो व्वरूणस्त्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानु देवा मदन्तु।।17।।

उक्त सूक्त यजमान को सम्बोधित किया गया है :–

हे यजमान! मैं तुम्हारे मर्म स्थानों को कवच से आच्छादित करता हूँ। वरुण तुम्हारे कवच का और उत्कृष्ट बनावे, अन्य देवता तुम्हारा उत्साह बढ़ाकर विजय प्राप्ति की आरे जावें।

9.3.5 रुद्र सूक्त :–

नमक चमक के द्वारा शिवलिंग के आभिषेक की पुरानी परम्परा है। रुद्राष्टध्यायी का पंचम अध्याय शतरूद्रिय माना जाता है। इसे भगवान् रूद्रके सौ से अधिक नाम गिनाएँ गए हैं। शतरूद्रिय पाठ समस्त वेदों के पारायण के तुल्य माना जाता है। इसको ही रूद्राध्याय भी कहते है। शतरूद्रिय परम पवित्र तथा धन, यश और आयु की वृद्धि करने वाला है। इसके पाठ से सम्पूर्ण मनोरथों की सिद्धि होती है। इसका पाठ परम पवित्र एवं पापों का नाश करने वाला होता है। ये मनोरथ की सिद्धि इसी से प्राप्त होती है, दुःख और भय को दूर करने वाला होता है। जो कोई इसके परम पवित्र पाठ का श्रवण करता है, वह उत्तम कामनाओं को प्राप्त करता है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने शतरूद्रिय पाठ को अमृतत्व का साधन माना है। शतरूद्रिय पाठ करने वाला, पूत होता है, वायुपूत होता है, आत्मपूत होता है, सुरापान या मदिरापान दोष से छूटता है, ब्रह्म हत्या के दोष से मुक्त हो जाता है। शुभाशुभ कर्मों से उद्धार पाठ करता है। सदाशिव आश्रित हो जाता है। इस प्रकार उसे मोक्ष जन्म मरण विमुक्त होकर कैवल्य प्राप्त होता है।

विभिन पदार्थो द्वारा निर्मित शिवलिंग –

अपने देश में प्रायः सभी स्थानों पर पार्थिव–पूजा का प्रचलन व मान्यता है। लिंग मात्र की पूजा में पार्वती व शिव दोनों की पूजा हो जाती है। लिंग के मूल ब्रह्म, मध्यभाग में श्री विष्णु और ऊपर ओंकार रूप महादेव विराजमान है। वेदी महादेवी और लिंग महादेव है। गरूडपुराण में अनेक पदार्थो के शिवलिंग निर्माण करके, अनेक अभीष्ट कार्यो की सिद्धि हेतु पूजन करने का प्रकरण विस्तार से है, जिसमें सवार्धिक महत्व पारद निर्मित शिवलिंग का बताया गया है। शास्त्रों में अनुसार शिवलिंग अनन्त स्वरूप और निर्माण–विधियों का वर्णन भी मिलता है। विभिन्न कामना सिद्धि हेतु अनेक पदार्थो के शिवलिंग निर्माण किए जाते है, जिनमें कुछ इस प्रकार है।

गन्धलिंग :– यह लिंग दो भाग कस्तूरी, चार भाग चन्दन तथा तीन भाग कुंकुम द्वारा निर्मित किया जाता हैं। इसकी पूजा शिव का सायुजय प्राप्त करने के लिए की जाती है।

पुष्पलिंग :– इसका निर्माण विभिन्न रंगों के फूलों द्वारा किया जाता है, पृथ्वी का आधिपत्य प्राप्त करने के लिए इसकी पूजा की जाती है।

रजोमयलिंग :– यह मिट्टी (बालूका) द्वारा बनाया जाता है। इसका अर्चन करने से विद्या की प्राप्ति होती है।

यवगोधूमशालिजलिंग :– जौ, गेहूं, चावल इन तीनों का आटा समान भाग लेकर इसका निर्माण किया जाता है। इसकी पूजा सौन्द्रर्य, स्वास्थ्य और पुत्र–प्राप्ति के लिए करनी चाहिए।

सिताखंडमयलिंग :– यह मिश्री के बने हुए सिट्टे का बनाया जाता है। रोगों से मुक्ति पाने तथा स्वास्थ्य के लिए इसका पूजन सार्थक माना गया है।

लवणजलिंग :– हरताल त्रिकूट (सोंठ, मिर्च, पीपल) को नमक में मिलाकर इसका निर्माण करते हैं। वशीकरण के अर्थ में इसका पूजन तत्काल फलदायक है।

तिलपिष्टोन्थलिंग :– तिलो को पीसने के बाद उसका लिंग बनावे। इसका पूजन सभी प्रकार की इच्छापूर्ति हेतु किया जाता है।

गुडोत्थलिंग :– यज्ञकुन्ड से लेकर बनाए गए लिंग को भस्मलिंग कहा जाता है। इसका पूजन अनेक प्रकार से फलदायक है।

शर्करामयशिवलिंग :– चीनी (शर्करा) द्वारा निर्मित लिंग के पूजन से सुख–शान्ति प्राप्त होती है।

वशांकुरमयलिंग :– बांस के कोमल अंकुर द्वारा बनाए गए शिवलिंग की पूजा करने से वंश की वृद्धि होती है।

दधिदुग्धोद्भवलिंग :– कच्चे दूध को लेकर उसमें दही मिलावें। इस प्रकार दूध और दही के बने हुए शिवलिंग की पूजा करने से यश और लक्ष्मी, दोनों की प्राप्ति होत है।

धान्यजशिवलिंग :– कई प्रकार के धान्य (अनाज) गुड़ के साथ मिलकर उसका लिंग पूजन करने से धन (अनाज) की वृद्धि होती है।

फलोत्थालिंग :– फलों को धागे में पिरोकर लिंगरूप बनाया जाता है। ऐसे लिंग के अर्चन से फलसिद्धि होती है।

धात्रीफलमयलिंग :– आँवले को पीसकर बनाया गया शिवलिंग मुक्ति देने वाला होता है।

नवनीतजलिंग :– वृक्षों के कोमल पत्तों को पीसकर बनाए गए लिंग पूजन से यश और सौभाग्य प्राप्त होता है।

कर्पूरजलिंग :– कपूर से बनाया गया लिंग भक्ति का प्रेरक कहलाता है।

अयस्यान्तकमणिजलिंग :– लोहे (धातु) द्वारा बनाया गया शिवलिंग सिद्धिदायक है।

मौक्तिशिवलिंग :– मोतियों द्वारा बनाया गया लिंग स्त्रियों को सौभाग्य प्रदान करता है। पुरूष इसकी पूजा करे तो भाग्य–वृद्धि होती है।

स्वर्णनिर्मितलिंग :– सोने के शिवलिंग का पूजन करने से धनधन्य और सुख–समृद्धि प्राप्त होते है। अनन्तः मनुष्य मुक्ति को प्राप्त होताहै।

रजमयशिवलिंग :– चाँदी के लिंग का पूजन भी सभी प्रकार की सुख–समृद्धि को देने वाला है।

वैदूर्यंजमणिलिंग :– लहसुनिया से निर्मित लिंग शत्रुनाश करने वाला सर्वत्र विजय प्राप्त करने वाला है।

स्फटिकमणिलिंग :– स्फटिकमणि से निर्मित लिंग का पूजन इच्छाओं की पूर्ति हेतु सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसके दर्शन मात्र से ही पापों का नाश हो जाता है। इसके पूजन से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती है।

इसके अलावा भी अन्य कई प्रकार के लिंगो का निर्माण और उनकी पूजा का विधन बताया गया है। गरूड़पुराण में लिंगो का महत्व उनका आकार–प्रकार और उनके प्रकार की फल प्राप्तियो का विस्तार पूर्वक उल्लेख मिल जाता है।

।। हरिः ओम।।

भूर्भुवः स्वः। नमस्ते रुद्द्र मन्यवऽउतोतऽइषवे नमः।

बाहुब्भ्यामुतते नमः।।1।।

या ते रुद्द्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी।

तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि।।2।।

यामिषुंगिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे।

शिवांगिरित्र तांकुरुमा हिः सीः पुरुषंजगत्।।3।।

शिवेन व्वचसा त्त्वा गिरिशाच्छा व्वदामसि।

यथा नः सर्व्व मिज्जगदयक्ष्मः सुमनाऽअसत्।।4।।

अद्ध्यवोचदधिवक्ता प्प्रथमो दैव्व्यों भिषक्।

अहींश्च सर्व्वांजम्भयन्त्सर्व्वाश्च्च यातुधान्योधराचीः परासुव।।5।।

असौ यस्ताम्म्रोऽअरुणऽउत बब्भ्रुः सुमंगल÷।

ये चैनः रुद्द्राऽअभितो दिक्क्षु श्रिश्रताः सहस्त्रशोवैषाः हेडऽईमहे।।6।।

असौ योवसर्प्पति नीलग्ग्रीवो व्विलोहितः।

उतैनंगोपाऽअदृ श्र्श्रन्नदृश्र्श्रन्नुदहार्य्य÷ स दृष्ट्टो मुडयाति नः।।7।।

नमोस्तु नीलग्ग्रीवाय सहस्त्राक्षाय मीढुषे।

यथो येऽअस्य सत्त्वानो हन्तेब्भ्यो करन्नमः।।8।।

प्रमुंच धन्नवनस्त्वमुभयोरात्क्न्योंम्।

याश्च्चते हस्तऽइषवः परा ता भगवो व्वप।।9।।

व्विज्जयन्धनु÷ कपर्द्दिनो व्विशल्ल्यो बाणवाँ२।।ऽउत।

अनेश न्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषंगधिः।।10।।

या ते हेतिर्म्मीढुष्ट्टम हस्ते बभूव ते धनु÷।

तयास्म्मा न्विश्श्वत स्त्वमयक्ष्मया परिभुज।।11।।

परि ते धन्न्वनो हेतिरस्म्मान्व्वृणक्तु व्विश्श्वत÷।

अथो यऽइषुधिस्तवारेऽ अस्म्मन्निधेहि तम्।।12।।

अवतत्त्य धनुष्ट्ट्वः सहस्त्राक्ष रातेषुधे।

निशीर्य्य शल्ल्या नाम्मुख शिवो न÷ सुमना भव।।13।।

नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे।

उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्न्वने।।14।।

मा नो महान्तुमुतमानाऽ अर्ब्भकम्मा नऽउक्षन्तमुत मानऽक्षितम्।

मा नो व्वधीः पितरम्मोत मातरम्मा न÷ प्प्रियास्तन्वो रुद्द्र रीरिषः।।15।।

मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मानोऽअश्श्वे षुरीरिषः।

मा नो व्वीरान्त्रुद्द्र भामिनो व्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे।।16।।

नमो हिरण्ण्यबाहवे सेनान्न्ये दिशांच पतये नमो नमोव्वृक्षेब्भ्यो हरिकेशेब्भ्यः पशूनाम्पतये

नमो नम÷ शष्पिंजराय त्त्विषीमते पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्ट्टानाम्पतये नमो नमो बब्भ्लुशाय।।27।।

नमो बब्भ्लुशाय व्व्याधिनेन्नाम्पतये नमो नमो भवस्य हेत्त्यै जगताम्पतये नमो रुद्द्रायाततायिने क्क्षेत्त्राणाम्पतये नमो नम÷ सूतायाहन्त्त्यै व्वनानाम्पतये नमो नमोरोहिताय।।18।।

नमो रोहिताय स्त्थपतये व्वृक्क्षाणाम्पतये नमो नमो भुवन्तये व्वारिवस्कृतायौष धीनाम्पतये नमो नमो मन्त्रिणे व्वाणिजाय कक्क्षाणाम्पतये नमो नमऽउच्चैर्ग्घोषायाक्क्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमो नम÷ कृत्स्त्रायतया।।19।।

नम÷ कृत्स्त्रायतया धावते सत्त्वनाम्पतये नमो नमः सह मानाय निव्व्याधिनऽ आव्व्याधिनीनाम्पतये नमो नमो निषंगिणे ककुभाय स्तेनानाम्पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्ण्या नाम्पतये नमो नमो व्वंचले।।20।।

नमो व्वंचते परिवंचते स्त्तायूनाम्पतये नमो नमो निषंगिणऽइषुधिमते तस्क्कराणाम्पतये नमो नम÷ सृकायिब्भ्यो जिघांः सद्भ्यो मुष्णताम्पतये नमो नमो सिमद्भ्यो नक्तंचरद्भ्यो व्विकृन्तानाम्पतये नम÷।।21।।

नमऽ उष्ष्णीषिणे गिरिचराय कुलुंचानाम्पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽ आतन्न्वानेब्भ्य÷ प्प्रतिदधाने ब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽ आयच्छद्भ्योस्यद्भ्यश्च्च वो नमो नमोव्विसृजद्भ्य÷ ।।22।।

नमो व्विसृजद्भ्यो व्विद्ध्यद्भ्यश्च्च वो नमो नम÷ स्वपद्भ्यो जाग्ग्रद्भ्यश्च्च वो नमो नमः शयानेब्भ्यऽ आसीनेब्भ्यश्च्च वो नमो नमस्तिष्ट्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च्च वो नमा नम÷ सभाब्भ्य÷।।23।।

नम÷ सभाब्भ्य÷ सभापतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमो श्श्वेब्भ्यो श्श्वपतिब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽआव्व्याधिनीब्भ्यो व्विविद्ध्यन्तीब्भ्यश्च्च वो नमो नमऽ उगाणाब्भ्यस्तृः हतीब्भ्यश्च्च वो नमो नमो गणेब्भ्य÷ ।।24।।

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च्च वो नमो नमो व्व्रतेभ्यो व्व्रातपतिभ्यश्च्च वो नमो नमो गृत्त्सेभ्यो गृत्त्सपतिभ्यश्च्च वो नमो नमो व्विरूपेभ्यो व्विश्श्वरूपेभ्यश्च्च वो नमो नमः सेनाभ्यः।।25।।

नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च्च वो नमो नमो रथिभ्योऽअर थेभ्यश्च्च वो नमो नम÷ क्क्षतृभ्य÷ सङ्ग्रहीतृभ्यश्च्च वो नमो महद्भ्यो ऽ अर्ब्भकेभ्यश्च्च वो नम÷।।26।।

नमस्तक्क्षभ्यों रथकारेभ्यश्च्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्म्मारेभ्यश्च्च वो नमो नमो निषादेभ्य÷ पुंजिष्ट्भ्यश्च्च वो नमो नम÷ श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च्च वो नमो नमः श्वभ्य÷।।27।।

नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च्च वो नमो नमो भवाय च रुद्द्राय च नम÷ शर्व्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्ग्रीवाय च शिति कण्डाय च नम÷ कपर्द्दिने।।28।।

नम÷ कपर्द्दिने च व्युप्तकेशाय च नम÷ सहस्त्राक्क्षाय च शतधन्न्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्ट्टाय च नमो मीढुष्ट्टमाय चेषुमते च नमो ह्रस्वाय।।29।।

नम÷ ह्रस्वाय च व्वामनाय च नमो बृहते च व्वर्षीयसे च नमो व्वृद्धाय च सवृधे च नमोग्ग्रयाय च प्प्रथमाय च नमऽआशवे।।30।।

नमऽआशवे चाजिराय च नमः शीग्घ्र्याय च शीभ्याय च नमऽ–ऊर्म्म्याय चावस्वन्न्याय च नमो नादेयाय च द्द्वीप्प्याय च।।31।।

नमो ज्ज्येष्ट्ठाय च कनिष्ट्टाय च नम÷ पूर्व्वजाय चापरजाय च नमो मद्ध्यमाय चापगल्ब्भाय च नमो जघन्न्याय च बुद्ध्न्याय च नमः सोभ्याय।।32।।

नमः सोभ्याय च प्प्रतिसर्य्याय च नमो याम्म्याय च क्क्षेम्मयाय च नमः श्लोक्क्याय चावसालन्न्याय च नमऽउर्व्वर्य्याय च खल्ल्याय च नमो व्वन्न्याय।।33।।

नमो व्वन्न्याय च कक्क्ष्याय च नम÷ रवाय च प्प्रतिश्श्रवाय च नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च नमो बिल्म्मिने।।34।।

नमो बिल्म्मिने च कवचिने च नमो व्वर्म्मिणे च व्वरूथिने च नम÷ श्श्रुताय च श्श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्न्यायच नमो धृष्ण्णवे।।35।।

नमो धृष्ण्णवे च प्प्रमृशाय च नमो निषंगिणे चेषुधिमते च नमस्ती–क्ष्णेषवे चायुधिने च नम÷ स्वायुधाय च सुधन्न्वने च।।36।।

नमः स्त्रुत्त्याय च पत्थ्याय च नमः काट्ट्याय च नीप्प्याय च नमः कुल्ल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च व्वैशन्ताय च नमः कूप्प्याय।।37।।

नमः कूप्प्याय चावट्टयाय च नमो व्वीद्ध्याय चातप्प्याय च नमो मेग्घ्याय च विद्द्युत्त्याय च नमो व्वर्ष्याय चावर्ष्याय च नमो व्वात्त्याय।।38।।

नमो व्वात्त्याय च रेष्म्मयाय च नमो व्वास्तव्व्याय च व्वास्त्तुपाय च नमः सोमाय च रूद्द्राय च नमस्ताम्प्राय चारूणाय च नमः शंगवे।।39।।

नमः शंगवे च पशुपतये च नमऽ उग्ग्राय च भीमाय च नमोग्ग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो व्वृक्क्षेब्भ्यो हरिकेशेब्भ्यो नमस्ताराय।।40।।

नमःशम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च मयस्क्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।।41।।

नमः पार्य्याय चावार्य्याय च नमः प्प्रतरणाय चोत्त्रणय च नमस्तीर्त्थ्याय च कूल्ल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्न्याय च नमः सिकत्त्याय।।42।।

नमः सिकत्तय च प्रवाह्य्याय च नमः किः शिलाय च क्क्षयणाय च नमः कपर्द्दिने च पुलस्त्तये च नमऽइरिण्ण्यायच प्प्रपत्त्थ्याय च नमो व्व्रज्ज्याय।।43।।

नमो व्व्रज्ज्याय च गोष्ट्ठ्याय नमस्तल्प्प्याय च गेह्य्याय च नमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च नमः काट्ट्याय च गव्हरेष्ठ्याय च नमः शुष्क्क्याय।।44।।

नमः पर्ण्णाय च पर्ण्णशदाय च मनऽउद्गुरमाणाय चाभिग्घ्रते च नमऽआखिदते च प्प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च्च वो नमो नमो वः किरिकेब्भ्यो देवानाः हृदयेब्भ्यो नमो व्विचिन्न्वत्त्केब्भ्यो नमो व्विक्क्षिणत्त्केब्भ्यों नमऽआनिर्हतेब्भ्यः।।46।।

द्रापेऽ अन्धसस्प्ते दरिद्द्र नीललोहित।

आसाम्प्रजानामेषा म्पशूनाम्मा भेर्म्मारोङ्ङ्मो च नः किंचनाममत्।।47।।

इमा रूद्द्राय तवसे कपर्द्दिने क्क्षयद्द्वीराय प्प्रभरामे मती।

यथा शमसद्द्विपदे चतुष्प्पदे विश्श्वम्पुष्ट्टङ्ग्रामेऽ अस्मिन्ननातुरम।।48।।

या ते रूद्द्र शिवा तनूः शिवा व्विश्श्वाहा भेषजी।

शिवा रूतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे।।49।।

परि नो रूद्द्रस्य हेतिर्व्वृणक्त्तु परि त्त्वेषस्य दुर्म्मतिरघायोः।

अव स्त्थिरा मघवद्भ्यस्त्तनुष्व्व मीढ्स्तोकाय तनयाय मृड।।50।।

मीढुष्ट्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव।

परमे वृक्क्षऽआयु धन्निधाय कृत्तिँव्वसनऽआचार पिनाकम्बिब्भ्रदागहि।।51।।

व्विकिरद्द्र व्विलोहित नमस्त्तेऽ अस्त्तु भगवः।

यास्त्ते सहस्त्रः हेतयोन्नयमस्म्मान्निवपन्तु ताः।।52।।

सहस्त्राणि सहस्त्रशो बाह्वोस्त्तव हेतय÷।

तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि।।53।।

असङ्ख्याता सहस्त्राणि ये रूद्द्राऽअधि भम्मयाम्।

तेषाः सहस्त्रयोजनेव धन्न्वानि तन्न्मसि।।54।।

अस्म्मिन्न्महत्त्यर्ण्णवेन्तरिक्क्षे भवाऽअधि।

तेषाः सहस्त्रयोजनेव धन्न्वाति तन्न्मसि।।55।।

नीलग्ग्रीवाः शितिकण्ठा दिवः रूद्द्राऽउपश्रि्श्रताः।

तेषाः सहस्त्रयो जनेव धन्न्वानि तन्न्मसि।।56।।

नीलग्ग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्व्वाऽ अधः क्क्षमाचरा।

तेषाः सहस्त्रयो जनेव धन्न्वानि तन्न्मसि।।57।।

ये व्वृक्क्षेषु शष्प्पिंजरा नीलग्ग्रीवा व्विलोहिताः

तेषाः सहस्त्रयो जनेव धन्न्वानि तन्न्मसि।।58।।

ये भूतानामधिपतयो व्विशिखास÷ कपर्द्दिन÷।

तेषाः सहस्त्रयो जनेवा धन्न्वानि तन्न्मसि।।59।।

ये पथाम्पथिरक्क्षयऽ ऐलबृदाऽ आयुर्य्युध÷।

तेषाः सहस्त्रयो जनेवा धन्न्वानि तन्न्मसि।।60।।

ये तीर्त्थानि प्प्रचरन्ति सृकाहस्त्ता निषंगिण÷।

तेषाः सहस्त्रयो जनेवा धन्न्वानि तन्न्मसि।।61।।

येन्न्नेषु व्विविद्ध्यन्ति पात्त्रेषु पिबतो जनान्।

तेषाः सहस्त्रयो जनेवा धन्न्वानि तन्न्मसि।।62।।

यऽएतावन्तश्च्च भूयाः सश्च्च दिशो रूद्द्रा व्वितस्त्थिरे।

तेषाः सहस्त्रयो जनेवा धन्वानि तन्मसि।।63।।

नमोस्तु रूद्द्रेब्भ्यो ये दिवि येषाँव्वर्षमिषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणादश प्प्रतीचीर्द्दशोद्ध्वीः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च्च नो द्वेष्ट्टि तमेषांजम्भे दद्ध्मः।।64।।

नमोस्तु रूद्द्रेब्भ्यो येन्तरिक्क्षे येषाँव्वातऽइषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणा दश प्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोद्ध्वीः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च्च नो

द्वेष्ट्टि तमेषांजम्भे दद्ध्मः।।65।।

नमोस्तु रूद्द्रेब्भ्यो ये पृथ्व्वियाँ य्येषामन्नमिषवः।

तेब्भ्यो दश प्प्राचीर्द्दश दक्षिणा दश प्प्रतीचीर्द्दशोदीचीर्द्दशोद्ध्वीः।

तेब्भ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यन्द्विष्मो यश्च्च नो

द्वेष्ट्टि तमेषांजम्भेदद्ध्यः।।66।।

9.3.6 भद्रसूक्त

ओम आनो भद्द्राः क्क्रतवो यन्तु व्विश्वतो दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः।

दवानो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्प्प्रायुवोरक्षितारो दिवेदिवे।।1।।

सभी मनुष्यों को ईश्वर के विज्ञान व विद्वानों के सत्संग से बुद्धि को प्राप्त करके जीवन में धर्म का आचरण करते हुए प्रतिदिन सभी की रक्षा करनी चाहिए।

देवानां भद्द्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाः रातिरभिनोनिवर्त्तताम्।

देवानाः सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयं देवानऽआयुः प्प्रतिरन्तुजीवसे।।2।।

सभी मनुष्यों को चाहिए कि वे विद्वानों के सानिध्य से उत्तम बुद्धि को पाकर ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन करते हुए आयु को बढ़ाकर सदैव धार्मिक जनों के साथ मित्रता बनायें रखे।

तान्पूर्व्वया निविदा हूमहे व्वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम्।

अर्य्यमणं व्वरूणः सोममश्विना सरस्वती नः सुभगामयस्करत्।।3।।

प्रत्येक मनुष्य को देव में आदेशित कार्य का ही अनुष्ठान करना चाहिए। जिस प्रकार माता अपने सन्ता को अच्छी शिक्षा देकर उनके ज्ञान को बढ़ाती है, उसी प्रकार सभी के लिए कर्मों में श्रेष्ठता लाते हुए सभी को सुख प्रदान करे।

तन्नोव्वातो मयो भुव्वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः।

तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयो भुवस्तदश्विना श्रृणुतं धिष्ण्या युवम्।।4।।

जिसकी पृथ्वी के समान माता व सूर्य के समान पिता है, वह स्वयं सुखभाव की अनुभूति करते हुए सभी को सुखी व निरोगी बनाये रखे।

तामीशानंजगतस्तस्थुषस्पति–न्धियंजिन्वमवसे हूमहे व्वयम्।

पूषा नो यथा व्वेदसामद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।5।।

इसमें सभी उपदेशकर्ताओं से कामना की गयी है कि वे ऐसे उपदेश करे जिससे सर्वशक्तिमान् ईश्वर की सभी लोग प्रार्थना करे तथा उसी से सम्पूर्ण सुखों का प्रदाता जानें।

स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषाव्विश्ववेदाः।

स्वस्तिनस्ताक्ष्यो ऽ अरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु।।6।।

प्रत्येक मनुष्य को चाहिए कि जिस प्रकार व्यक्ति स्वयं के सुख की आकांक्षा करता है, उसी प्रकार अपने आचरण से सभी को सुख प्रदान करे।

पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं व्यावानो व्विदथेषु जग्मयः।

अग्निजिह्व्वामनवः सूरचक्षसो व्विश्वेनोदेवाऽअवसा गमन्निह।।7।।

प्रत्येक मनुष्य का विद्वानो का सत्संग करना चाहिए, जिस प्रकार से इस संसार में वायु आदि पदार्थ सभी प्राणियों के लिए है, उसी प्रकार इस जगत् में विद्या अथवा ज्ञान सभी के लिए है।

भद्द्रंकर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्द्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

स्थिररैरंगैस्तुष्टवाः सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं य्यदायुः।।8।।

विद्वानों के सत्संग से मनुष्य सत्य को सुने, सत्य को देखे तथा ईश्वर की प्रार्थना करे तो वह पूर्णायु को प्राप्त होता है। विवेकी मनुष्य को असत्य भाषण, दुष्टकृत्य करना अथवा देखना तथा झुठी प्रशंसा से सदैव दूर रहना चाहिए।

शतमिन्नुशरदो ऽ अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसंतनूनाम्।

पुत्रासो यत्र पितरो भवनित मानो मध्दया रीरिषतायुर्गन्तोः।।9।।

इस मन्त्र में देवताओं से प्रार्थना की गयी है कि वे अपने अर्चक को पूर्णायु का आशीर्वाद देवे तथा ऐसे पुत्र देवे जो कि आयुजनित कष्टों से उनकी रक्षा कर सके।

अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः।

विश्वेदेवा ऽ अदितिः पंचजना ऽ अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम्।।10।।

देवमाता अदिति एवं जगत्पिता परमात्मा की कृति अर्थात् प्रकृति ही नित्य अर्थात् अविनाशी है, इसकी ना तो कभी उत्पत्ति होती है और ना ही कभी अन्त होता है।

यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयं कुरु। शन्नः कुरु प्रजाब्भ्योभयन्नः पशुभ्यः।।11।।

इस मन्त्र में परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना की गयी है कि आप जिस किसी भी रूप हो, उसी रूप में हमारा और हमारी सन्तानों का कल्याण करे तथ हमारे पशुओं को भी सभी प्रकार के भय से उन्मुक्त करे।

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षः शान्तिः पृथिवी शानितरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

व्वनस्पतयः शान्तिर्व्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वः शान्तिः

इस मन्त्र में आत्मशान्ति की कामना की गयी है अर्थात् द्युलोक, अन्तरिक्ष, पृथ्वीलोक, जल में औषधि में, वनस्पति में, सभी देवताओं में, ब्रह्मरूप में, सम्पूर्ण जगत् में शान्ति (परमानन्द) रूप में विद्यमान है, वह ईश्वर की कृपा से हमे प्राप्त हो।

ओम शान्तिः।। ओम शान्तिः।। ओम शान्तिः।। सुशान्तिर्भवतु।। – ईश्वर सभी को शान्ति प्रदान करे।

9.4 सारांश :–

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि माध्यन्दिन शुक्लयजुर्वेद के अन्तर्गत सूक्तो का पाठाभ्यास किस प्रकार करना चाहिए। भगवान् शिव केवलमात्र एक बिल्वपत्र से भी प्रसन्न हो जाते है तथापि यदि हम उनका पूजन सम्पूर्ण रूद्राष्टध्यायी अथवा शिवसंकलसूक्त, अप्रतिरथसूक्त, रूद्रसूक्त, पुरुषसूक्त, भद्रसूक्त आदि भी से करते है तो शिव जी का विशेष कृपा अवश्य मनुष्य को प्राप्त होती है। शिवसंकल्प सूक्त को मन को दृढ़ प्रतिा बनाते हुए आत्मकल्याण की कामना क गयी है, पुरूषसूक्त के अन्तर्गत परमपिता ईश्वर को सर्वव्यापी मानते हुए हजारों, सिर, नेत्र तथा पैर वाला बताते हुए इस जगत् की उत्पत्ति का विराट् पुरूष से तारतम्य बताते हुए अपने लिए ऐश्वर्य आदि की प्रार्थना की गयी है। अप्रतिरथसूक्त के अन्तर्गत रूद्र के क्रोध को अपे लिए शान्त एवं मंगलमय बनाने, सभी दुःखों को दूर करने, ज्ञान की प्राप्ति तथा अपनी अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिए रूद्र के विविध रूपों की प्रार्थना की गयी है। भद्रसूक्त के अन्तर्गत इन्द्र, सूर्य, प्रजापति, अग्नि, वायु, चन्द्र, वसु, रूद्र, आदित्य, मरूत, विश्वेदेवा, बृहस्पति, वरूण आदि देवताओं से प्रार्थना के द्वारा अपने जीवन को उत्कर्ष बनाने की तथा जगत् में परमानन्दरूपी शान्ति के लिए प्रार्थना की गयी है।

9.5 शब्दावली :–

1. शिव	=	कल्याण	2. संकल्प	=	प्रतिज्ञा
3. सूक्त	=	स्तुतिपरक मन्त्रों का संग्रह	4. पुरूष	=	विष्णु का पर्याय
5. सहस्त्र	=	हजार	6. पाद	=	पैर
7. रूद्र	=	शिव का रौद्र रूप	8. भद्र	=	श्रेष्ठ

9.6 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न –1 : मन को कल्याणकारी व दृढ़ संकल्प बनाने वाला कौनसा सूक्त है ?

उत्तर : शिवसंकल्प सूक्त मन को दृढ़, कल्याणकारी व संकल्पवान् बनाता है।

प्रश्न –2 : पुरूषसूक्त के द्वारा विशेषतः त्रिदेवों में किस देव का अर्चन किया जाता है ?

उत्तर : पुरूषसूक्त के द्वारा विशेषतः त्रिदेवों में भगवान् विष्णु का अर्चन किया जाता है।

प्रश्न –3 : निम्न मन्त्र किस सूक्त से उद्धृत है ?

श्रीश्च्वते लक्ष्मीश्च्व पत्न्यावहोरात्त्रे नक्षत्राणि रूपमश्श्विनौ व्यात्तम।

इष्णन्निषाणा मुम्मऽइषाण सर्व्वलोकम्मऽइषाण।।

उत्तर : उपरोक्त मन्त्र उत्तरनारायण सूक्त से उद्धृत है।

प्रश्न –4 : इन्द्रादि देवताओं से युद्ध में विजय दिलाने की प्रार्थना किस सूक्त में की गयी है ?

उत्तर : इन्द्रादि देवताओं से युद्ध में विजय दिलाने की प्रार्थना अप्रतिरथ सूक्त के माध्यम से की गयी है।

प्रश्न –5 : शिवार्चन में विशेषतः किस सूक्त का पाठ किया जाता है ?

उत्तर : शिवार्चन में विशेषत+ रूद्रसूक्त का पाठ किया जाता है।

9.7 लघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न –1 : शिवसंकल्पसूक्त में मन्त्रों का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न –2 : पुरूषसूक्त का महत्त्व बताते हुए किन्हीं तीन मन्त्रों की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न –3 : उत्तरनारायण सूक्त के मन्त्रों की विवेचना कीजिये ?

प्रश्न –4 : अप्रतिरथसूक्त से आप क्या समझते हैं ?

प्रश्न –5 : रूद्रसूक्त का महत्त्व बताते हुए प्रारम्भिक षोड़श मन्त्रों का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न –6 : भद्रसूक्त का महत्त्व बताइये ?

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. **शुक्लयजुर्वेदीय रूद्राष्टध्यायी**

   सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

   प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

2. **शुक्लयजुर्वेदीय रूद्राष्टध्यायी**

   प्रकाशन – गीताप्रेस, गोरखपुर।

3. **वेदों का भाष्य**

   प्रकाशक – दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली।

इकाई –10

चण्डी विधान

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 चण्ड़ी

10.4 श्री दुर्गा विधान

10.5 सारांश

10.6 शब्दावलि

10.7 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

10.8 लघुत्तरात्मक प्रश्न

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

10.1 प्रस्तावना

यत्रास्ति भोगो नहि तत्र मोक्षः, यत्रास्ति मोक्षो न हि तत्र भोगः।

श्रीसुन्दरी–साधन–तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव।।

इस संसार में बड़े–बड़े सिद्ध एवं साधकों ने श्सप्तशतीय पर अपनी वाणी को पवित्र करने के लिए शास्त्र–साधना, अनुभव, भक्ति, प्रेम एवं आनन्द में विभोर होकर अपने–अपने श्रेष्ठतम विचारों को साधकों के हितार्थ व्यक्त किया था, वर्तमान में कर रहे है तथा भविष्य में भी करेंगे।

नवरात्रों में अथवा विभिन्न कार्यानुष्ठानों में दुर्गा पाठ का अत्यन्त महत्व है। इस इकाई के अन्गर्तत दुर्गासप्तशर्त का समुचित विधान बताया गया है। जिसका अध्ययन करके दुर्गासप्तशती के विभिन्न प्रयोगों में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

अतः इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह बता बताइयें कि चण्डी विधानों के प्रयोग की क्या विधाएं हैं।

10.2 उद्देश्य

दुर्गा उपासना के वर्णन से संबंधित इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह समझा सकेंगें कि –

1. नवचण्डी प्रयोग का विधान क्या है
2. दुर्गासप्तशती के प्रयोग से क्या लाभ हैं
3. सप्तशती का पाठ विधान क्या है
4. दुर्गा की आराधना से विभिन्न क्षेत्रों में क्या लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं
5. नवचण्डी प्रयोग में किस प्रकार के विधान लागू किये गयेहै।
6. चण्डी यज्ञ प्रयोग की सावधानियां क्या हैं।

10.3 चण्ड़ी

भगवती दुर्गा के उग्र स्व:प या :प धारण को ही चण्ड़ी कहा गया है। दुर्गासप्तशती स्तोत्र के सप्तम अध्याय के २०वें शख़ोक में इसका तारतम्य मिलता है। यथा –

उत्थाय च महासिं हं देवी चण्डमधावत्।

गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाछिनत्।।

आचार्य श्री नागोजी भट्ट (भास्कर राय जी) ने श्सप्तशतीच की गुप्तवती टीका एवं टिप्पणी में आनन्दातिरेक के कारण भाव–विभोर होकर विनम्र भाव से यह कह ही दिया कि मैं अत्यन्त गोपनीय रहस्य को प्रकाश में ला रहा हूँ, पुनरपि यह अत्यल्प ही है, क्योंकि कोई कह नहीं सकता।

इस परमाराध्य सर्वाराध्य श्सप्तशतीच पर अनेक संस्कृत टीकाएँ और भाष्य हिन्दी–बंगला–महाराष्ट्रीय आदि भारतीय भाषाओं सहित व विदेशी भाषा (अंग्रेजी) में भी विद्यमान है तथा भक्तों, देशिकों, विद्वानों एवं महापुरुषों ने अपनी–अपनी शैलियों में इस गूढ़ रहस्य को बुद्धिगम्य बनाने की चेष्टा की है तथा इसे आधिभौतिक, आध्यात्मिक एवं आधिदैविक अर्थों से विभूषित कर समय–समय पर भगवती की इच्छा से ही प्रकट किया है।

दुर्गा नाम का अर्थ :– १. द–कार, २. अ–कार, ३. रेफ, ४. ग–कार और ५. आ–कार–इन ५ वर्णों के योग से मन्त्र स्व:प श्दुर्गाच नाम की निष्पत्ति होती है। दैत्यों (असुरों) के नाश के अर्थ को द–कार बतलाता है, उ–कार विघ्न का नाशक वेद–सम्मत है। र–कार रोग का नाशक, ग–कार पाप का नाशक और आ–कार भय तथा शत्रु का विनाशक है। इस प्रकार श्दुर्गाच नाम अपने आप में यथार्थ का बोधक है।

दुर्गा शब्द का दूसरा :प श्दूर्गाच भी है। श्दुर्गाच पर में ह्रस्व उ–कार है, परन्तु कहीं–कहीं दीर्घ ऊ–कार का भी उल्लेख है। इसमें श्दुर्गाच नाम का अर्थ अधिक स्पष्ट हो जाता है। श्विश्वसार–तन्त्रच कहता है – श्थान्त–वीजं समुद्‌धृत्य, वाम–कर्ण (ऊ) विभूषितम् ।च

वरदा–तन्त्र भी इसी मत का समर्थन करता है – श्दं दुर्गा–वाचकं देवि! ऊ–कारो रक्षणार्थकः ।च

ब्रह्म–सूत्रच का प्राणाधिकरण श्शक्ति–भाष्यच भी यही कहता है – श्दू–नाम्नी देवता च जगद्धात्री दुर्गा तद्–वीज–वर्णात्।

अतः 'दुर्गाङ्क पद से पाप–क्षय–कारिणी, मृत्यु को दूर भगाने वाली, भय तथा शत्रु का नाश करने वाली का बोध होता हैत्त। दूसरे शब्दों में इससे उस परम सत्ता का बोध होता है, जो वागादि इन्द्रियों के पापों को दूर कर मृत्यु को दूर भगाती हैत्त। पापों को इस प्रकार हटाती है कि जीव से अच्छे कर्म करवाती है, जिससे यम का डर नहीं रहतात्त। इसीलिए शास्त्रों में ऐसी फल–श्रुति लिखी है–

प्रभाते यः स्मरेन्नित्यं, दुर्गा–दुर्गाक्षर–द्वयम।

आपदस्तस्य नश्यन्ति, तमः सूर्योदये यथा।

अर्थात् प्रभात–काल (प्राण–शक्ति की सम्वर्धित स्थिति) में जो नित्य 'दुर्गाङ्क–'दुर्गाङ्क इस अनाशवान् वर्ण–द्वय का स्मरण करते हैं, उनकी आपदाएँ इस प्रकार नष्ट होती है, जिस प्रकार सूर्य के उदय होने पर अन्धकार का नाश होता हैत्त और अधिक स्पष्ट रूप में कह सकते हैत्त कि जिस प्रकार सूर्य की प्रकाश–शक्ति अन्धकार को भगाती है, उसी प्रकार 'दुर्गाङ्क सर्व–व्यापिका महा–शक्ति की धारणा से समस्त आपदाएँ–अविद्या के सहकारी आसुरी सर्ग दूर हो जाते हैत्त।

'दुर्गा– दुर्ग्रह अर्थात् कठिनता से ग्रहण की जाने वाली रू–

'दुर्गाङ्क (र्दुग गमने, ज्ञाऩेटाए)–पद से 'दुर्ग्रहङ्क अर्थात् कठिनता से ग्रहण की जानेवाली सत्ता का भी बोध होता हैत्त। 'योग–वासिष्ठङ्क, निर्वाण–प्रकरण, उत्तरार्ध ८४त्त–११–'दुर्गा दुर्ग्रह–रूपतःत्त।ङ्क

'अथर्वशीर्ष–देव्युपनिषत्ङ्क– श्रुति भी 'दुर्गाङ्क को 'दुर्गमाङ्क कहती है–तां दुर्गां दुर्गमां देवीम्त्त।ङ्क

10.4 श्रीदुर्गा–विधान

भगवान् श'र ने भगवती दुर्गा के प्रस्तुत विधान को,'रुद्र–यामल तन्त्रङ्क में भगवान् विष्णु द्वारा प्रसन्न करने पर कहा हैत्त। यह विधान सर्वदा श्रेष्ठ हैत्त तथा सिद्ध हैत्त। इस विधान के अनुकूल उपासन करने पर साधक अपने उद्देश्य को अवश्य सिद्ध कर सकता हैत्त। महा–माया चण्डी कलि–युग में धर्मार्थ–काम–मोक्ष को देने वाली है, सर्व–शक्ति–मयी है, ब्रह्मा–विष्णु–महेश की उपास्या देवी हैत्त। ऐसी महा–माया को प्रणाम कर 'रुद्र–यामलङ्क के चण्डी–विधान का वर्णन करता हूँत्त।

शकर भगवान् ने विष्णु से कहा–जो साधक नित्य देवी की पूजा करता है, वह दीर्घायु, पुत्रवान् और सुख–भोक्ता होता हैत्त। वह समस्त विद्याओं का ईश्वर बन जाता हैत्त। वे देवी दिव्य–रूपा है, चण्डिका है, भक्त–वत्सला हैत्त। जो साधक भक्ति–संयुक्त होकर चण्डिका का पूजन करता है, लक्ष्मी उसकी कि'री बन जाती हैत्त। समस्त राजा लोग उसके वशीभूत हो जाते हैत्त। स्त्रियाँ भी उसके अनुकूल हो जाती हैत्त। जो साधक आदर के साथ नित्य भवानी श'री का पूजन करते है, वे इस लोक में नाना प्रकार के सुखों के भोक्ता बन जाते है और देहावसान होने पर–ब्रह्म परमात्मा महा–माया से मिल जाते है, तद्–रूप बन जाते हैत्त।

जिस साधक पर दुर्गा प्रसन्न हो जाती है, वही साधक उपर्युक्त सुखों के भोक्ता बनते हैं और उनकी सम्पूर्ण कामनाएँ सिद्ध होती हैं और जिस साधक से दुर्गा रुष्ट–अप्रसन्न हो जाती हैं, उसको उन सुखों का अनुभव नहीं होतात्त। जिस साधक के शुभ कार्यों में या किसी प्रकार के कार्यो में उत्तमोत्तम गौरी–पूजन होता है, उसकी साधना में किसी प्रकार के विघ्नादि–मोहोत्पातादि हों, उनका विनाश हो जाता हैत्त। जो साधक

मा'ल्य कार्यो में गणप और गौरी का पूजन करते हैं, उनके गृह में सर्वदा म'ल हुआ करता हैत्त। हे विष्णु! इसलिए सर्वेश्वरी महा–माया भगवती का त्रिकाल में भक्ति–संयुत होकर, नाना प्रकार के पुष्पों और और गन्धों से, विविध फलों से, नाना प्रकार के नैवेद्यों से, नाना प्रकार के दिव्य वस्त्रों से, नाना प्रकार की दिव्य स्तुतियों से और देवी के नाना प्रकार के सूक्तों से तथा नाना प्रकार के नाम–मन्त्रों से पूजन करेत्त। देवी को निवेदित अन्न–नैवेद्य और हविः–शेष अन्न को प्रथमतः ब्राह्मणों को देकर फिर स्वयं खा लेना चाहिएत्त। इसी प्रकार प्रति–दिन पूजन करने का विधान हैत्त। प्रतिमा के अभाव में पीठ–यन्त्र में देवी का पूजन करेत्त।

माघ, चौत्र, आषाढ, पौष या आश्विन मास की वैधी शुक्ल तिथि में पूजन प्रारम्भ करेत्त। महा–पूजन का विधान करके मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा आदि सामग्री उपस्थित कर प्रथमतः गुरुदेव की पूजा करेत्त। पश्चात् अतन्द्रित होकर चण्डिका–यज्ञ का प्रारम्भ करेत्त। प्रातः काल स्वर्ण–रौप्य–ताम्र या मृत्तिका का यथा–प्राप्त कुम्भ स्थापित करेत्त। पुराण, वेद, आगमेत्यादि के मन्त्रों से घट को तीर्थ–जल से पूरित करेत्त। घटोपरि पात्र स्थापित करेत्त। तदुपरि त्रि–शक्ति–महा–काली, महा–लक्ष्मी, महा–सरस्वती का आवाहन–न्यास करेत्त। दर्भ का ब्रह्मा निर्मित कर स्थापित करेत्त। मृद्–गोमय से मण्डप को स्वच्छ पवित्र कर तोरणादि पुष्प–मालाओं से अलंकृत कर वेदी में धान्य बोकर उसे शनैः–शनैः जल से सिञ्चित करेत्त। पाँच र'ों से मण्डप को सुशोभित करेत्त। मण्डप की शोभा मौक्तिकादि भी लगाकर ब६ढानी चाहिएत्त। इसके बाद साधक गुरु–मार्गानुसार यथा–विभव देवी की त्रिकाल–पूजा करेत्त।

यदि साधक त्रिकाल–पूजन करने में अशक्त हो, तो वह पञ्चमी या अष्टमी या चतुर्दशी में या नवमी के दिन पूजन का विधान करेत्त। चण्डिका की प्रसन्नता के लिए रात्रि में जागरण करेत्त। ब्राह्मण को भोजन कराएत्त। कुमारिका–पूजन करे, परमान्न भोजन कराएत्त।

दुर्गा का थोडा भी पूजन कल्याणकांक्षी मनुष्यों के लिए सुखदायक होता हैत्त। जल, पुष्प, गन्ध आदि यथा–प्राप्त सामग्री से भगवती का यजन–पूजन करेत्त। इस प्रकार जो साधक भक्ति से पूजन करेत्त। इस प्रकार जो साकध भक्ति से पूजन और चण्डी का पाठ करता है, वह सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त कर अन्त में देवी का सायुज्य प्राप्त करता हैत्त।

माघ–मास में देवी–पूजन का विधान

माघ–मास, शुक्ल प्रतिपदा–युक्त द्वितीया के दिन कुम्भ–स्थापन कर उसमें भगवती नन्दा का पूजन करेत्त। नवमी–पर्यन्त उपचारों से प्रति–दिन पूजन करेत्त। भगवती की प्रसन्नता के लिए अखण्ड दीप प्रदान करेत्त। देवी नन्दा के पूजन का विधान माघीय 'नव–रात्रङ्क में कहा गया हैत्त। शिशिर के 'नव–रात्रङ्क में शुभ चाहने वाले नन्दा देवी का पूजन करेंत्त।

पूर्वाङ्घ में देवी–घट स्थापित करने वाला वैश्वदेव न करे, परन्तु अपराङ्घ में करने वाले को वैश्वदेव करना पडता हैत्त। साधक को यह ध्यान में रखना चाहिए कि व्यतीपात–योग न रहे। व्यतीपात–योग में देवी–घट कभी न स्थापित करे। ऋक्ष–दग्धा तिथि ग्राह्य भी है, परन्तु व्यतीपात सर्वथा वर्जित हैत्त। यदि व्यतीपात में कलश स्थापित करेगा, तो अग्नि–भय होगात्त। यदि ऋक्ष–दग्धा तिथि व्यतीपात हो तो अभिजित् मुहूर्त निकालकर उसी अभिजित् में देवी–कलश स्थापित करेत्त। अज्ञान से अथवा मोह से व्यतीपात में जो

‘कलशङ्क स्थापित करता है, वह महान् दोष का भागी होता हैत्त। देश का भी विनाश होता है और छत्र–भ’ होता हैत्त। दुर्भिक्ष होता है, संसार में अनावृष्टि होती है, पुत्र–पौत्रों का विनाश होता है, शरीर में व्याकुलता आ जाती हैत्त। इससे भगवती का कुम्भ उत्तरा–व्यतीपात को वर्जित करके स्थापित करेत्त।

कुम्भ के आगे स्तुति–पाठ, जप, वेद–पारायण, सप्तशती–पाठ, देवी–सूक्त या पौराणिक अनेक प्रकार के स्तुति–पाठ करेत्त। प्रतिदिन भक्ति में तत्पर होकर त्रिकाल–पूजन करेत्त। अष्टमी के दिन रात्रि में जागरण करे और ‘पञ्च तत्त्वोंङ्क से ‘महा–पूजाङ्क करेत्त। ‘महा–रात्रिङ्क में हवन और बलिदान करेत्त। हे माधव! प्रातः–काल देवी का पूजन करेत्त। ब्राह्मणों को भोजन कराएत्त। नव–कुमारिकाओं को विविध प्रकार का भोजन कराएत्त। स्वयं भी पारणा करेत्त। रात्रि में जागरण करेत्त। दशमी के दिन अभिषेक कर मूर्ति का विसर्जन करेत्त। विसर्जन से पूर्व मूर्ति को लेकर नगर, बाजार, ग्राम में भ्रमण कराएत्त। भ्रमण कराकर महा–नदी ग'ा में अथवा तđडाग में या अगाध जलाशय में मूर्ति को स्थापित करेत्त। यही पूजन ‘नन्दोत्सवङ्क कहा गया हैत्त।

चौत्र–मास में देवी–पूजन का विधान रू– चौत्र–मास के शुक्ल–पक्ष में रक्त–दन्तिका का पूजन करना चाहिएत्त। रेवती या अश्विनी में देवी–घट स्थापित करेत्त। प्रति–दिन जवा–कुसुम, रक्त–करवीर, ब्रह्म–पुष्प या श्वेत–पुष्प–पल्लव से पूजा करेत्त। अहिर्बुध्न, वैधृति और अपराङ्घ में कुम्भ स्थापित न करेत्त। देवी–स्थापन के उद्देश्य से कलश–स्थापन होता हैत्त। वैधृति में कुम्भ–स्थापन करने से राज्य–नाश, चौर–भय, अग्नि–भय होता हैत्त। इसलिए वैधृति–त्याज्य हैत्त। अपराङ्घ भी वर्जित हैत्त। जो साधक मोह से दुर्गा–कलश को अपराङ्घ में स्थापित करते है, उन साधकों का गृह–भ’ होता है, यश की हानि होती हैत्त। इसलिए अपराङ्घ त्याज्य हैत्त।

विहित समय पर कलश–स्थापन कर प्रति–दिन वेद–पाठादि, सप्तशती–पाठ, नाना प्रकार के स्तोत्रादिकों का पाठ करना चाहिएत्त। ‘रक्त–दन्तिकाङ्क के प्रसन्नार्थ त्रिकाल–पूजन करेत्त। अष्टमी के दिन रात्रि में जागरण करेत्त। नवमी के दिन पारणा करेत्त। दशमी के दिन कलश–विजर्सन और अभिषेक करेत्त। इस प्रकार ‘रक्त–दन्तिकोत्सवङ्क करेत्त। इससे साधक के आयुर्बल की वृद्धि होती है और पुत्र प्राप्त होता हैत्त। दैवी शक्ति उस साधक को मिलती हैत्त।

आषाढ–मास में देवी–पूजन का विधान –

आषाढ के ‘नव–रात्रङ्क में ‘शुम्भासुर–निवर्हिणी महा–सरस्वतीङ्क को स्थापित करेत्त। प्रतिपद् के प्रातः रजत–कुम्भ का स्थापन करेत्त। उसका अभाव होने पर ताम्र–कुम्भ को पुष्प–चन्दन से चर्चित कर उसमें पूजा करेत्त। प्रति–दिन श्वेत–पुष्प, चम्पा–पुष्प और श्वेत–वस्त्र से ‘महा–सरस्वतीङ्क का पूजन करेत्त। ग्रीष्म के इस ‘नव–रात्रङ्क में शीतल जल से शीतोपचार–कर्पूर, श्वेत चन्दन से पूजन और अष्टा’–धूप से धूपित करे। दीप दिखाकर नाना प्रकार के नैवेद्यों को चđढाएत्त। पुनर्वसु या पुष्य– नक्षत्र में शुभ कलश को स्थापित करेत्त।

रौद्र, व्याघात योगों में और अपराङ्घ में कुम्भ–स्थापन न करेत्त। रौद्र में कुम्भ स्थापित करने से अति–वृष्टि, अन्न का विनाश, कुत्ते और सर्प द्वारा काटे जाने का भय होता हैत्त। इसलिए सर्व–दुष्ट समयों को त्याग कर अभिजित् मुहूर्त में घट को स्थापित करेत्त।

दुर्गा–मख में प्रति–दिन शुम्भासुर–निवर्हणी महा–सरस्वती का पूजन–स्तुति–पाठादि सब पूर्ववत् साधक करे। इस प्रकार महा–सरस्वती को प्रति–वर्ष स्थापित कर पूजन करेत्त। इससे साधक के गृह में सदा कल्याण होता है और लक्ष्मी अचला होकर रहती हैत्त।

आश्विन–मास में देवी–पूजन का विधान –

भगवान् शंकर विष्णु से बोले–आश्विन शुक्ल पक्ष के 'नव–रात्रङ्क में मन को समाहित कर त्रिमूर्ति–रूपिणी सावरणा दुर्गा को स्थापित कर पूजन करेत्त।

विष्णु ने भगवान् श'र से पूछा– हे देव–देव महा–देव! हमारे मन में सन्देह है, इससे मुक्त कीजिएत्त। आप चराचर के स्वामी, संसार के बनाने वाले, पालन करने वाले और संहार करने वाले हैत्त। आप किस देवी की स्तुति–पूजा और किस परम मन्त्र का जप–तप और ध्यान किया करते हैत्त? हे शम्भो! आपसे बड्ढा और कौन है?

भगवान् शंक'र ने उत्तर दिया–हे सुर–श्रेष्ठ! आपने जो पूछा है, उसे अभी तक मैंने षण्मुख से भी गुप्त रखा हैत्त। वही रहस्य मैं आपसे कह रहा हूँत्त। पूर्व–काल मे युग–क्षय होने पर लोकों को बनाने के लिए गुण–त्रय–मयी चिद्–रूपा ने मुझे उत्पन्न कियात्त। मुझसे आप उत्पन्न हुएत्त। आपसे लोक–कर्ता ब्रह्मा उत्पन्न हुएत्त। तब ब्रह्मा ऋृषि बने, विष्णु ऋृषि बने और मैं भी ऋृषि बनात्त।

तीनों ऋृषियों को देखकर ब्रह्म–रूपिणी चेतना महा–शक्ति ने मेरा आलि'न कियात्त। कारण से कार्य होता हैत्त। उस महा–माया के इच्छानुसार परमा–शक्ति 'इच्छाङ्क के रहस्य–रूप में स'म होने से वाग–शब्द–ब्रह्म–मयी–माया उत्पन्न हुईत्त। वही जगन्माता है, सरस्वती है, वैष्णवी है, रौद्री है, शिवा है, क्षमा है, वही कौमारी है, पार्वती है, सर्व–म'ल–दायिनी हैत्त। सर्व–शक्ति की आद्या महा–लक्ष्मी है, वही शिवात्मिका भी हैत्त।

हे विष्णु! उसी ने इस विश्व को बनाया हैत्त। इस अनाधार विश्व को उसी ने धारण भी किया हैत्त। वही महा–माया इस विश्व का पालन भी करती हैत्त। उसी महा–माया में यह विश्व का पालन भी करती हैत्त। उसी महा–माया में यह विश्व लय हो जाता हैत्त। वही भगवती पूजन–ध्यान करने से प्रणतों को सर्व–प्रकार का सुख देती हैत्त। आराधन–स्तुति करने से सर्व प्रकार का म'ल करती हैत्त। उस महा–माया के अनुग्रह से मैंने परम पद को प्राप्त किया हैत्त।

हे विष्णु! उसी महा–माया के महा–लक्ष्मी–रूप का मैं निरन्तर भजन करता हूँत्त। प्रसन्न होकर महा–लक्ष्मी वर–प्रदा होती हैत्त। मेरे ध्यान करने पर उस सुप्रीता ने मुझमें प्रवेश कियात्त। उस समय मैंने काशी ऐसे महत्त्व–पूर्ण स्थान को प्राप्त कियात्त। उसी की प्रसन्नता से मैंने चराचर जगत् को बनाया हैत्त। सुर, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, मनुष्य, समुद्र, पर्वत, वन, ग्रह–राशि, नक्षत्र, सूर्य–मण्डल, चतुर्विध प्राणि–जाति, पञ्च–भूत–समन्वित इस विश्व की मैंने रचना की हैत्त।

श'र का यह वचन सुनकर विष्णु बोले–भगवान्! मैं आपका भक्त हूँत्त। आपका दास हूँत्त। मुझ पर प्रसन्न होकर आप उस महा–माया के सुर–दुर्लभ माहात्म्य का वर्णन करएत्त। हे देव! मुझे सुनने की इच्छा हैत्त। जगत् के हित के लिए आप उसका वर्णन करिएत्त।

श'र बोले–हे विष्णु, सुनो! महा–देवी के उत्तमोत्तम माहात्म्य का वर्णन करता हूँ, जिसे श्रवण करने पर साधक सर्व–प्रकार के पापों से छूट जाते हैत्त। विश्व की आद्या जो महा–लक्ष्मी मेरी माता है, वही महा–माया कार्य–भेद से नाना प्रकार के रूप धारण करती हैत्त। चतुर्भुजा महा–लक्ष्मी इस संसार में व्याप्त हैत्त। वीजापूर, गदा, चर्म, सीधु–पात्र को वह धारण किए हैत्त। नाग–लि', योनि को भी धारण किए हैत्त। वह अपरा–सुन्दरी हैत्त। हिरण्य–वर्ण के समान रुचिरा हैत्त। सुवर्ण का मुकुट धारण किए हैत्त। अपने शरीर के प्रकाश से त्रैलोक्य को प्रकाशित करती हैत्त।

तीनों लोकों को शून्य देखकर केवल तमो–गुण से उसने रूपान्तर धारण किया हैत्त। नव–मेघ के समान कृष्ण वर्ण, अञ्जन के समान श्याम–वर्णवाली मत्त–मात'–गामिनी महा–काली को महा–लक्ष्मी ने देखात्त। वह चार भुजावाली हैत्त। खड्ग, पाश, शिर, खेटक को धारण किए है और मुण्ड–माला कण्ठ में पहने हैत्त। मूर्धि्न में सहस्र सर्पों को धारण किए है, त्रैलोक्य–सुन्दरी हैत्त। इस अवस्था में महा–काली को देखकर महा–लक्ष्मी ने कहा–''हे चामुण्डे! तेरा नाम–करण करती हूँत्त। तेरे नाम महा–माया, महा–काली, महा–मारी, क्षुधा, तृषा, निद्रा, कृष्णा, एक–वीरा, काल–रात्रि, दुरत्यया हैत्त। हे कालिके, तेरे नामों को जानकर जो साधक कार्य करते हैं, वे सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त करते हैत्त।ङ्कङ्क

सार्द्ध 'नव–चण्डीङ्क प्रयोग

' –फलङ्क का इच्छुक प्राणी अपनी अभिलषित वस्तुओं की प्राप्ति के लिए अत्यधिक 'व्यग्र मनङ्कसे प्रयत्न करता हैत्त। जीवन का बहुत बङ्डा भाग 'व्यग्र मनङ्क से की गई 'साधनाङ्क में व्यतीत हो जाता हैत्त। तथापि,'सिद्धिङ्क एवं 'शान्तिङ्क नहीं मिल पातीं और व्यक्ति 'सन्तप्त–चित्तङ्क ही संसार से चला जाता हैत्त। इसके कारणों पर बहुत सूक्ष्म रीति से तान्त्रिकों ने विचार किया 'श्रीललिता–सहस्र–नामङ्क के भाष्य में श्री भास्कर राय कहते है–'कुण्डलिन्युत्थापनेन मुधस्रावणेन डाकिन्यादि–मण्डल–प्लावन–रूपान्त–कर्माणि सत्येतद्–बाह्यानि यज्ञादि–कर्माणि सफलानि भवन्तित्त। तदभावे तु यस्मिन् काले कर्माणि क्रियन्ते, स काल एव, तेषां कर्मणा 'काल–मृत्युङ्क–रूपो भवतीति।ङ्क

अर्थात् जो तान्त्रिक योगी 'कुण्डलिनी–शक्ति के उत्थापन–द्वारा अमृत–स्राव कर षटचक्रों में स्थित डाकिनी आदि मण्डलों का सिञ्चन करना जानता है, वही बाह्य कर्म–काण्ड में सिद्धि प्राप्त कर सकता हैत्त। अन्यथा 'काल–तत्त्वङ्क मृत्यु–रूप होकर उसका विनाश कर देता हैत्त। इसी तत्त्व को 'चन्द्र–ज्ञान तन्त्रङ्क में इस प्रकार कहा गया है –

अन्तरग्नौ मधु–स्रावं, कुर्वतां शिशिरात्मनाम्त्त।

इष्ट–पूर्तादि–कर्माणि, फलन्ति किल कालतःत्त।।

अन्त–स्राव–विहीनानां, सदा सन्तप्त–चेतसाम्त्त।

कर्माणि क्रियमाणानि, कालो ग्रसति तत्–क्षणात्त।।

काल–कर्षिणिकैवान्तः, करोति मधु वर्षतित्त।

इति यो वेद तस्य स्याद्, ब्रह्म–रन्ध्रात् सुधा–स्रुतिःत्त।।

अर्थात् जो शान्त–चित्तवाले साधक अन्तराग्नि में मधु–स्राव करना जानते है, उनके किए 'इष्ट–पूर्तादि कर्मङ्क काल–द्वारा सफल होते है, अन्तः–स्राव–विहीन सन्तप्त–चित्त वाले पुरुषों–द्वारा किए हुए कर्म को 'कालङ्क तत्क्षण ही ग्रस लेता हैत्त। 'काल–कर्षिणिका–शक्तिङ्क ही यह अन्तरकार्य सम्पन्न करती है तथा वही 'मधु–वर्षाङ्क करती हैत्त। ऐसा रहस्य जो जानता है, उसके 'ब्रह्म–रन्ध्रङ्क से 'सुधाङ्क (अमृत) की स्रुति होती हैत्त।

'कुण्डलिनी–जागरणङ्क एवं 'मधु–स्रावङ्क एक कठिन कार्य है, जो सिद्धि क्रिया–कुशल योगी ही करने में कृत–कार्य हो सकते हैत्त। यह सबके द्वारा साध्य नहीं हैत्त। इसलिए तान्त्रिकों ने कुछ अनुष्ठान भी दिए है, जिनमें 'कुण्डलिनी–जागरणङ्क अथवा 'मधु–स्रावङ्क करें या नहीं, तब भी सिद्धि पाई जा सकती हैत्त।

सार्द्ध नव–चण्डी 'प्रयोगङ्क को करने के लिए ९ ब्राह्मण 'सप्तशतीङ्क के पूरे पाठ करने के लिए 'वरणङ्क किए जाते हैत्त। एक आधा पाठ करने वाला और एक शुक्ल–यजुर्वेदीय 'षड'–रुद्रीयङ्क का पाठ करने वाला होता हैत्त। कुल एकादश (११) ब्राह्मणों द्वारा यह 'अनुष्ठानङ्क सम्पन्न होता हैत्त। पाठ करने वाले ब्राह्मण 'शक्ति–तत्त्वङ्क में निष्ठा रखने वाले होने चाहिएत्त। 'अर्ध–पाठङ्क के पाठ से ही ९ पाठ सफलीभूत होते हैत्त। अर्ध–पाठ मुख्य हैत्त। 'अर्ध–पाठङ्क के विषय में कहा गया है–

नव–सार्धं जपेद् यस्तु, मुच्येत् प्राणान्तकाद् भयात्त।

राज्य–श्रीः सर्व–सम्पत्तिः, सर्वान् कामानवाप्नुयात!त्त।।

प्रयोगोऽयं महा–गुह्यो, देवानामपि दुर्लभःत्त।

तत् तेऽहं सम्प्रवक्ष्यामि, सावधानावधारयत्त।।

मधु–कैटभ–नाशं च, महिषासुर–घातनम्त।

शक्रादि–स्तुतिरेवातो, देवी–सूक्तं पनस्तथात्त।।

नारायणी–स्तुतिश्चौव, फलानुर्कीतनं तथात्त।

ततो वर–प्रदानं च, ह्यर्ध–पाठोऽयमुच्यतेत्त।।

अर्ध–पाठस्त्वयं प्रोक्तः, सर्व–काम–फल–प्रदःत्त।

अर्ध–पाठेन रहितं, नव–पाठ–फलं नहित्त।।

अर्थात् जो पुरुष ‘सार्ध नव–चण्डीङ्क का प्रयोग करता है, वह ‘प्राणान्त–स’टङ्क से मुक्त होकर राज्य–श्री, सर्व–सम्पत्ति तथा सभी कामों को करता हैत्त। प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थाध्याय का पाठ सम्पूर्ण, पाँचवे अध्याय में ‘देवा ऊचुः–नमो देव्यैङ्क इत्यादि से लेकर ‘ऋषिरुवाचङ्क–पर्यन्त तथा एकादश अध्याय की ‘नारायणी–स्तुतिङ्क, द्वादश एवं त्रयोदश अध्याय सम्पूर्ण–ये सब मिलकर ‘अर्ध–पाठङ्क कहलाते हैत्त। इसी ‘अर्ध–पाठङ्कसे प्रयोग की ‘सफलताङ्क होती हैत्त। ‘अर्ध–पाठङ्क से रहित ‘नव–पाठोंङ्क का फल नहीं होतात्त। निम्न प्रकार इसका प्रयोग करना चाहिए–

सार्ध ‘नव–चण्डीङ्क–प्रयोग की विधि

१. पहले चन्द्र, तारा, नक्षत्रादि के अनुकूल होने पर शुभ मुहूर्त में अथवा कृष्णाष्टमी, नवमी, चतुर्दशी तिथियों के किसी दिन विधिवत् ‘कुमारी–पूजाङ्क करेत्त। उन्हें भोजन–दक्षिणादि से सन्तुष्ट कर ‘प्रयोगङ्क हेतु उनकी आज्ञा लेत्त।

२. फिर शुद्ध लिपी–पुती भूमि पर आसन बिछाकर प्राङ्मुख बैठकर विघ्न–निवारणार्थ ‘स्वस्तिवाचनङ्क कर भगवान् श्रीगणेश का आवाहन कर उनकी ‘पूजाङ्क करे ‘अनुष्ठानङ्क के लिए ‘स’ल्प करेंत्त। ‘ॐ तत्सदद्येत्यादिङ्क देशकाल का कीर्तन कर, ‘अमुक–गोत्रोत्पन्नोऽहम्ङ्क (शर्मा–वर्मेत्यादि) नाम–युक्त राज्य से व्यवहार, सेवा, प्रतिष्ठा, श्री–वृद्धि आदि की कामना वाला अपनी कामना के अनुसार एकादश ब्राह्मणों द्वारा ‘शुक्ल–यजुर्वेदीय षड’–रुद्रीय–पाठ–सहित–मार्कण्डेय–पुराणान्तर्गत–श्रीचण्डी–चरितस्य श्रीमहा–काली–महालक्ष्मी–महा–सरस्वती–दैवतकस्य सार्ध–नवक–रूप–पुरश्चरणं कारयिष्येङ्क ऐसा ‘स’ल्पङ्क करेत्त।

३. गन्धाक्षत–कौसुम्भ–सूत्र–वस्त्रादि ‘वरण–सामग्रीङ्क के सहित प्रत्येक ब्राह्मण का पृथक्–पृथक् वरण करेत्त।

४. फिर आचार्य यथा–विधि ‘कलश–स्थापनाङ्क कर भवानी–श’र की सोपचार पूजा करेत्त। इसके अनन्तर ‘पुस्तक–पूजनादिङ्क कर प्रत्येक ब्राह्मण को ‘पाठङ्क का स’ल्प कर पाठारम्भ करना चाहिएत्त। पाठ को सम्पूर्ण करके ‘नवार्ण–मन्त्रङ्क का ‘जपङ्क करना चाहिए तथा भगवती को ‘पाठ का समर्पणङ्क करना चाहिएत्त।

५. इसके बाद ‘होम–विधिङ्क से ‘कुण्डङ्क या ‘स्थण्डिलङ्क में संस्कृत अग्नि में घृत–पायस–तिल से ‘एक पाठ का होमङ्क करना चाहिएत्त। फिर ‘तर्पण–मार्जनङ्क मूल–मन्त्र से कर ब्राह्मणों को भोजन एवं दक्षिणा प्रदान करके प्रसन्नता–पूर्वक यजमान ब्राह्मणों से आशीर्वाद ग्रहण करेत्त।

विशेष रू– ‘सप्तशती का पाठङ्क शक्ति–मन्त्र से दीक्षित ब्राह्मणों द्वारा ही कराना चाहिए क्युेक अदीक्षितों की क्रिया सर्वथा निष्फल होती हैत्त। ‘दीक्षाङ्क के बिना अन्तः करण में शुद्ध शक्ति का सञ्चार नहीं होता तथा इसके बिना ‘स’ल्प–सिद्धिङ्क नहीं होतीत्त।

उक्त प्रयोग सरल, अल्प–व्यय–साध्य हैत्त। प्रत्येक ‘देवी–पर्वङ्क पर इसे कराकर मनुष्य सफली–भूत हो सकते हैत्त। वसन्त एवं शरद् ऋतु में इसका अनुष्ठान विशेष सिद्धिकर हैत्त। इसके करने में एक ही दिन

लगता हैत्त। अनेक दिनों में जो ‘अनुष्ठानङ्क होते हैत्त। उनमें करने वालों के उत्साह में शिथिलता आ जाती हैत्त। ऐसा इसमें नहीं होतात्त।

‘सप्तशती के पाठङ्क में कितना प्रभाव है, यह बात यहाँ बताने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विश्व की ऐसी कोई विभूति नहीं, जो इसके द्वारा प्राप्त न हो सकेत्त। इस घोर कलि–काल में यह एक ही ग्रन्थ कर्म–काण्ड की महत्ता अक्षुण्ण बनाए हुए हैत्त। सहस्र–चण्डी, शत–चण्डी आदि महा–अनुष्ठान बहुत ही कठिन एवं दुःसाध्य हैत्त। इसी बात को लक्ष्य करके यह ‘सार्ध नव–चण्डीङ्क प्रयोग यहाँ दिया गया हैत्त। आशा है, शाक्त–जन स्वयं इसे ‘प्रयोगङ्क में लाकर कृत–कार्य होंगे तथा इसका समुचित प्रचार कर धार्मिक श्रद्धालु जनता का हित करेंगेत्त।

पाठ हेतु निर्देश

पाठ प्रेमपूर्वक भगवती का ध्यान करते हुए करेत्त्तथा निम्न बातों का ध्यान रखें –

पाठक के गुण – मीठा स्वर, अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण, पदों का विभाग, उत्तम स्वर, धीरता, एक लय के साथ बोलना – ये सभी एक श्रेष्ठ पाठक के गुण हैत्त।

पाठक के दोष – जो पाठ करते समय रागपूर्वक गायें, उच्चारण में जल्दबाजी करें, सिर हिलायें, अपने हाथों से लिखी हुई पुस्तक के द्वारा पाठ करें, दुर्गासप्तशती का भावार्थ नहीं जानता हों और पाठ को अधूरा ही कण्ठस्थ करता हो, वह पाठक अधम माना गया हैत्त।

पाठ में विश्राम – जब तक अध्याय की पूर्ति न हो, तब तक बीच में पाठ बन्द न करें, यदि प्रमादवश अध्याय के बीच में पाठ का विराम हो तो पुनः प्रति बार पूरे अध्याय का पाठ करेंत्त।

उच्चारण की विधि – अज्ञानवश पुस्तक हाथ में लेकर पाठ करने का फल आधा ही होता हैत्त। स्तोत्र का मानसिक नहीं वाचिक होना चाहिएत्त। वाणी से स्पष्ट उच्चारण ही उत्तम माना गया हैत्त।

पाठ की विधि – बहुत जोर–जोर से बोलना तथा पाठ में उतावली करना वर्जित हैत्त। यत्नपूर्वक शुद्ध एवं स्थिर चित्त से पाठ करना चाहिएत्त।

यदि पाठ कण्ठस्थ न हो तो पुस्तक से करेंत्त। अपने हाथ से लिखे हुए अथवा ब्राह्मणेतर पुरुष के लिखे हुए स्तोत्र का पाठ न करेंत्त। यदि एक सहस्र से अधिक श्लोकों या मन्त्रों का ग्रन्थ हो तो पुस्तक देखकर ही पाठ करें, इससे कम श्लोक हो तो उन्हें कण्ठस्थ करके बिना पुस्तक के भी पाठ किया जा सकता हैत्त।

अन्य प्रमाण :–

1 पूजन में कन्याओं की संख्या का प्रमाण – (ह्क्वह्लद्द ।+ृ ठ्ठ ्र।–) एक कन्या को भोजन कराने से ऐश्वर्य की प्राप्ति, दो कन्याओं को भोजन कराने से भुक्ति व मुक्ति की प्राप्ति, तीन कन्याओं को भोजन कराने से त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) की प्राप्ति, चार कन्याओं को भोजन कराने से राज्यसुख की प्राप्ति व सभी कामनाओं की सिद्धि, पाँच कन्याओं से विद्याप्राप्ति, छः कन्याओं से षट्कर्म सिद्धि, सात कन्याओं से राज्य प्राप्ति, आठ से गुण व सम्पत्ति तथा नौ कन्याओं को भोजन कराने व पूजन करने से व्यक्ति पृथ्वी का स्वामी अर्थात् राजा तुल्य हो जाता है।

2 कन्याओं की संज्ञा – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) दो वर्ष की कन्या को कुमारिका, तीन वर्ष की कन्या को त्रिमूर्ति, चार वर्ष की कन्या को कल्याणी, पाँच वर्ष की कन्या रोहिणी, छः वर्ष की काली, सात वर्ष की चण्डिका, आठ वर्ष की शाम्भवी, नौ वर्ष की कन्या दुर्गा तथा दस वर्ष तक उम्र की कन्या सुभद्रा होती है। दस वर्ष की आयु के बाद कन्या पूजनादि सभी कार्यों में वर्जित होती है।

3 पूजन में कन्या की जातिविशेष से लाभ – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) सभी कार्यों में सिद्धि की कामना से ब्राह्मणी कन्या, जय की भावना से क्षत्रिय (राजवंश से उत्पन्न) कन्या, धनलाभ के लिए वैश्यवंश की कन्या, पुत्र प्राप्ति की कामना हेतु शूद्रवंश की कन्या, दारुणकर्म (मारण, उच्चाटन, विद्वेषण) हेतु अन्त्य जाति की (चाण्डाल, यवन आदि से उत्पन्न) कन्या का पूजन करना चहिए।

4 अशौच में देवी पूजन – ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) सूतक (जनन शौच, जन्म से दस दिन तक) में देवी का पूजन व दान देवी की आराधना मानकर कर सकते है, इसमें दोष नहीं लगता है।

5 अशौच में विशेष व्यवस्था – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) भगवान शिव के पूजन में दीक्षित, अग्निहोत्री, ब्रह्मचारी और सन्यासियों को शरीर में सूतक नहीं लगता है। विप्रों की उपासना से अङ्गशुद्धि हो जाती है। सूतक व मृतकशौच (मृत्युदिवस से सपिण्डीकरण तक) में भी शिवपूजन का त्याग नहीं करना चाहिए।

6 किन नक्षत्रों में नवरात्रों में क्या करे ? – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) मूल नक्षत्र में देवी की स्थापना, पूर्वाषाढ़ा में पूजन, उत्तराषाढ़ा में बलिदान, श्रवण में विसर्जन करना चाहिए। उसमें भी मूल के प्रथम चरण में आह्वान और श्रवण के अन्तिम चरण में विसर्जन करना चाहिए। रात्रि के प्रथमभाग में श्रवण नक्षत्र होने पर देवी का सम्प्रेषण (विसर्जन) करके दशमी में महोत्सव करना चाहिए।

7 अष्टमी का पूजन रात्रि में ही करे – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) नवरात्रों में अष्टमी तिथि का पूजन रात्रि में ही करने का विशेष महत्व है। रात्रि में पूजित वैष्णवी देवी समस्त पापों का नाश करती है। कन्या राशि में सूर्य के स्थित होने पर शुक्ल पक्ष की अष्टमी में रात्रिकाल में अनेक प्रकार की पूजन सामग्री से विस्तार पूर्वक देवी का पूजन करना चाहिए।

9 नवरात्र में अष्टमी, नवमी व दशमी के कर्म – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) नवरात्रों में अष्टमी तिथि को जागरण, नवमी को व्रत समाप्ति (पारणा), दशमी तिथि में विसर्जन करना चाहिए।

10 देवी की मूर्ति किस धातु की हो ? – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) काष्ठ की मूर्ति से कामनाओं की पूर्ति, स्वर्ण की मूर्ति से मोक्ष, चाँदी की मूर्ति से स्वर्गतुल्य सुख, ताँबे की मूर्ति से आयु की वृद्धि, काँसे की मूर्ति से बहुत आपत्तियों का नाश, रैतिकी (पारद) की मूर्ति से शत्रुनाश, पत्थर की मूर्ति से सर्वविध भोग प्राप्ति, स्फटिक की मूर्ति का पूजन करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है तथा मिट्टी की मूर्ति भोग की वस्तुएँ प्रदान करने वाली होती है।

11 द्रोण पुष्प का महत्व – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि को द्रोणपुष्प अत्यन्त प्रिय है। यह पुष्प दुर्गा को सर्वकामना और अर्थ की सिद्धि के लिए प्रदान करना चाहिए।

12 ब्राह्मण को देवताओं के सम्मुख ही दक्षिणा देवे – (ह्क्वह्ह्द्द्ध ।+ृठ्ठ/–) देवताओं के सम्मुख ही दान एवं दक्षिण देनी चाहिए। ब्राह्मण को यदि किसी भी प्रकार का दान–दक्षिणा देना हो तो देवताओं के सम्मुख ही देवे अन्यथा वह दान–दक्षिण निष्फल हो जाती है।

13 दीप निर्वाण का दोष – (ह्क्वह्नद्द।+ृठ्ठ⁄–) देवताओं के पूजन में स्थित दीपक को शान्त (बुझाना) या हटाना नहीं चाहिए क्योंकि दीपक को हरण करे वाला व्यक्ति अन्धा हो जाता है तथा उसे बुझाने वाला व्यक्ति काणा हो जाता है।

14 हवन कुण्ड में विकार आने पर उसका फल – माप से अधिक गहरे कुण्ड में हवन करने से मनुष्य रोगी होता है, होता के दोषयुक्त होने से धेनु (गाय) और धन का क्षय, टेढ़ा कुण्ड सन्तापकारक, मेखला से भिन्न आकृति मरणकारक, मेखला से रहित होने से शोककारक, इष्टिका (ईंट) की अधिकता से वित्त का संशय, कुण्डयोनि के न होने से भार्या का विनाश तथा कण्ठ से वर्जित कुण्ड सन्तान का ध्वंस (विनाश) कारक फल देता है अतएव कुण्डनिर्माण मे अनेक प्रकार के दोषों की सम्भावना होने के कारण न्यून और अधिकता दोनों प्रकार के दोष श्रवण से स्थण्डिल (वेदी) का निर्माण अधिक श्रेयस्कर है इसलिए शास्त्रों में उल्लेख हैं :– श्नास्ति यज्ञसमो रिपुः ।

दुर्गासप्तशती के भेद

दुर्गापाठस्य नव नामानि तल्लक्षणानि चत्त।

रहस्योक्तानि नामानि ब्रह्मो–भानि वदामितेत्त।।

(हिन्दी मन्त्रमहार्णव रू– द्वितीय तरंग पृष्ठ १६३)

देवी के गुप्त नव नामों और लक्षण, जिन्हें ब्रह्मा ने कहा था –

महाविद्या महातन्त्री चण्डी सप्तशतीति चत्त।

मृत–संजीवनी–नाम पञ्चमं परिकीर्तितम्त्त।।१त्त।।

षष्ठं चौव महा–चण्डी सप्तमं रूप–दीपिकात्त।

अष्टमं तु चतुः षष्टि–योगिनी नवमी परात्त।।२।।

१. महाविद्या, २. महातंत्री, ३. चण्डी, ४. सप्तशती, ५. मृत–संजीवनी, ६. महा–चण्डी, ७. रूप–दीपिका, ८. चतुः षष्टि–योगिनी, ६. परा–चण्डी – ये देवी के नौ नाम हैत्त।

एतानि योऽभिजानाति नामानि नृप–नन्दनत्त।

जपं विना भवेत्तस्य चण्डिका वरदा सदात्त।।

हे राज–पुत्र! जो दुर्गा–सप्तशती के इन सभी नामों को जानता है, उसे जप के बिना ही चण्डिका सदा वर देती हैत्त। पूर्वोक्त नव विद्याओं निम्न प्रकार से बताया गया है रू–

१. आद्य, द्वितीय, तृतीय चरितानुक्रम से सप्तशती 'महा–विद्याङ्क सभी तन्त्रों में गुप्त रूप से निहित हैत्त।

२. आद्य, अन्त्य तथा मध्य चरितानुक्रम से महा–विद्या को 'महा–तन्त्रीङ्क कहा गया हैत्त।

३. आद्य, मध्य तथा अन्त्य चरितानुक्रम से महा–विद्या को 'चण्डी–महातन्त्रङ्क कहा गया हैत्त।

४. मध्य, आद्य तथा अन्त्य चरितानुक्रम से महा–विद्या को 'सप्तशतीङ्क कहा गया हैत्त।

५. अन्त्य, आदि तथा मध्य चरितानुक्रम से महा–विद्या को 'मृत–संजीवनीङ्क कहा गया हैत्त।

६. अन्त्य, मध्य तथा आद्य चरितानुक्रम से महा–विद्या को 'महा–चण्डीङ्क कहा गया हैत्त।

७. 'रूप देहि जयं देहिङ्क इस श्लोक को नवार्ण–मन्त्र के साथ युक्त करके प्रत्येक श्लोक को उससे सम्पुटित करके जप करने को 'रूप–चण्डीङ्क कहा गया हैत्त। यह सभी अभीष्टों को देने वाला हैत्त।

८. सप्तशती–मन्त्रों से चौसठ योगिनियों का सम्बन्ध होने से महा–विद्या को 'चतुः षष्टिङ्क कहते है। यह योग–सिद्धि प्रदान करने वाली है।

९. परा–बीज के साथ संयुक्त होने के कारण महाविद्या को 'परा–चण्डीङ्क कहते हैंत्त।

१०. ख्ह्लयझ्यत्र डदब्द्यणह्लय् ऽँद्यणद्मष्ठ ऽष्ठैं झ्य्त्रिष्टह्म द्भर्त्य्ष्ठ्यघ्त्रष्टह्म फ्तणत्झ् ऽँद्यद्रण दृ–

(ह्रीं) विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्यश्रीब्रह्मणो द्वितीय परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे, वैवस्वतमन्वन्तरे अष्ट्विशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके जम्बूद्वीपे गंगादितीर्थसमन्वितभव्यभारतवर्षे नानाविधमहिमामण्डितभरतखण्डे बौद्धावतारे आर्यावर्तैकदेशे अघनाशिनी गंगायमुनातापीनर्मदामहीसाभ्रमेत्यादि नदीनां विलसिते नर्मदाया उत्तरतटे अर्बुदारण्यक्षेत्रे ृद्बरुड्ढ (राजस्थान) प्रदेशे ृद्बरुड्ढ द्मख्द्यद्दण (ज्द्भड्ढरुद्यणद्मख्द्यद्दण) देवगुरुब्राह्मणानां चरणसन्निधौ स्वायंभुवादि मन्वन्तराणां मध्ये सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे कृतत्रेताद्वापरकलिसंज्ञकानां चतुर्णां युगानां मध्ये वर्तमाने अष्ट्विशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे बौद्धावतारे प्रभवादि षष्टिसम्वत्सराणां मध्ये वर्तमाने अमुकनाम्नि सम्वत्सरे अमुक वैक्रमाब्दे विक्रमादित्यराज्यात् अमुकशकाब्दे अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु एवं गुणगणविशेषण विशिष्टायां शुभपुण्यवेलायां अमुकगोत्ररू अमुकोऽहं ममात्मनरू श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं सकलमनईप्सितकामना संसिध्यर्थं लोकेसभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादि प्राप्त्यर्थं इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य सपशोरू समस्तभयव्याधि जरापीडामृत्युपरिहारद्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं स्थिरलक्ष्मी कीर्तिलाभ शत्रुपराजय सर्वपापनिरसनसकलावाप्ति सकलसुख जन्मकुण्डल्यां वर्षकुण्डल्यां वा सहगोचरे अनिष्टग्रहशान्त्यर्थं भूतप्रेत वैतालजन्यदोषोपशान्त्यर्थं अभिचार क्रिया उपशान्तिहेतवे सर्वविघ्नबाधा दुरितक्षयपूर्वकं देव–दनुज–मनुज कृतसकलकृत्यदोषोपशमनार्थं चतुर्विध पुरुषार्थसिध्यर्थं

संकल्प पश्चात शापविमोचन मंत्रों का पाठ करते हुए कवच–अर्गला–कहजक, रात्रिसूक्त, नवार्णमंत्र, चण्डीस्रोत के न्यास–ध्यान के पश्चात त्रयोदश अध्ययनों का पाठ करने के पश्चात पुनः न्यासध्यान करके देवीसूक्त तथा रहस्यत्रय का पाठ करते हुए भैरवनामावलि का पाठ भी साथ में करने स चण्डीस्रोत पूर्ण माना जाता है। यहस्रोत सद्योतफलदायक है।

फलश्रुति – 'दुर्गा–सप्तशतीङ्क के १३ अध्यायों के पाठ से विविध प्रकार के दोष दूर होते हैंत्त। यथा –

प्रथम अध्याय रू– क्रोध दूसरा अध्याय रू– भय एवं शोक

तीसरा अध्याय रू– कामचौथा अध्याय रू– मोह

पाँचवा अध्याय रू– विभित्सा छठा अध्याय रू– परासुता

सातवाँ अध्याय रू– मद आठवाँ अध्याय रू– लोभ

नौवाँ अध्याय रू– मात्सर्य दसवाँ अध्याय रू– ईर्ष्या

ग्यारहवाँ अध्याय रू– निन्दा बारहवाँ अध्याय रू– दोष–दृष्टि

तेरहवाँ अध्याय रू– कंजूसी, दैन्य भाव

यवांकुर वनि

ेसद्धान्त शखिरङ्क ओद ग्रन्थों में यवांकुर वनि कि सिम्न्ध में िवस्तार सि लिखा है। वहाँ उद्धृत हैह्

गृह प्रेतष्ठा, दवि प्रेतष्ठा, दीक्षा, स्थानिा, उत्सव, शान्तिह्रप्रोप्त, िववाह, उनियन ओद समस्त मांगेलक कायाब कि प्रारम्भ में यवांकुर वनि िकयि जानि का िवधान है। प्रेतष्ठा या स्थानिा िदन सि नौ िदन र्पूवि या सात िदन, िाचि िदन, तीन िदन या तत्काल भी यवांकुर वनि हाताि है। िजतनि िदन र्पूवि वनि हागिा, उतनि ही िदनों कि प्रभाव सि उनकी वृेद्ध हागिी। उनकी वृेद्ध सि क्रियामाण कर्म कि शुभाशुभ का ज्ञान भी हाि जाता है। यवांकुर वनि कि समय पुिण्याहवाचन िकया जाता है। िदवस गणना व िनश्चय सि र्पूवि मुहूर्त ज्ञान आवश्यक है। तार्राेल, नक्षत्र्ेल,चन्द्रेल ओद दखिकर तदनुसार शुभ मुहूर्त में स्थानिा सि र्पूवि जाि भी िदन शुभ िमलि, जुवार्रािनि चोहए। िवधान ताि यह भी है िक यवांकुर वनि कि दिन नान्दी श्राद्ध भी िकया जाय। यजमान की अेभवृेद्ध कि िलए यवांकुर वनि का िवधान है। इन्हें दखिकर भी िवजय कर्म की शुभाशुभ स्थेित का िववचिन करति हैं।

यवाङ्कुर रीक्षाह्नतत्फलं च –

यवांकुर सीधि िनकलि हैं, कामिल हैं, सफदि हैं, धूम्रवर्ण कि हैं, अनाखिि हैं, ितरछि िनकलि हैं, श्यामवर्ण कि हैं, ौनि हैं ताह्निउनकी स्थेित का आकलन करनि सि शुभाशुभ फल रि िवचार करना चोहए तथा तदनुरूि शान्तिकर्म िकया जाना चोहए।

फल – येद यवांकुर कृष्णवर्ण कि हैं ताि वृष्टि नहीं हाताि, धूम्रवर्ण कि हैं ताि कलह(लङ्मडाईह्नझगङ्मडा) हाताि है। रूिि नहीं िनकलि हैं ताि जननाश की संभावना रहती है। श्यामवर्ण हैं ताि दुेर्भक्ष हाताि है। ितरछि िनकलि हैं ताि व्याेध (रागि) हाताि हैं। ौनि िनकलि हैं ताि शत्रु भय की शंका है। अतङ्घ इन अशुभ अंकुरों कि िलए शान्ति करानी चोहए। शान्ति में श्रद्धा व शेक्त कि अनुसार नवार्ण मूलमन्त्र व अन्यान्य मन्त्रों सि सौ या हजार आहुेतयां दी जाती हैं। श्वतिांकुर अशुभ नहीं हाताि, रिन्तु अनाखिा हानिि सि शान्तिह्नकर्म िकया जाता है, उसि सुरेक्षत िकया जाता है। वह समृेद्ध का सूचक माना गया है। अन्य ग्रन्थों में भी इसका फल िनेर्दष्ट है।

सिद्धकुञ्जिकास्रोत्रम्

त।। `शव उवाच ।।

शृणु दंवि! प्रवक्ष्योम कुंञ्जका–स्तात्रिमुत्तमम्।

यनि मन्त्र–प्रभावणि चण्डी–जाङ्घि शुभा भवति।।१।।

न कवचं नार्गला–स्तात्रिं कीलकं न रहस्यकम्।

न सूऽतं नो ध्यानं च न न्यासा न च वार्चनम् ।।२।।

कुंञ्जका–ाठि–मात्रणि दुर्गा–ाठि–फलं लभति!

अेतह्गुह्यतरं दंवि! दविानामे दुर्लभम्।।३।।

गाोनीयं प्रयत्ननि स्व–यांनिपरव ार्वत!

मारणं माहिनं वश्यं स्तम्भनाच्चिाटनोदकम्।

ाठि–मात्रणि संसद्धयति् कुंञ्जका–स्तात्रिमुत्तमम्।।४।।

त।। अथ मन्त्रङ्घ ।।

ढ ऐं ह्वीं ऽलीं चामुण्डायै `वच्चि।।

ढ ग्लौं हुं ऽलीं जूं सङ्घ ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल

प्रज्वलऐं ह्वीं ऽलीं चामुण्डायै `वच्चि ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा।

त।। स्तात्रिम् ।।

नमस्त रुद्र–रूण्यिै नमस्त मधु–मर्दन।

नमङ्घ कैटभ–हापरण्यै नमस्त मेहषोर्दन।।१।।

नमस्त शुम्भ–हन्त्र्यै च `नशुम्भासुर–घोतेन।।२।।

जाग्रतं `ह महा–दंवि! ज सिद्धं कुरुष्व म।

ऐंकारी सृष्टि–रूायै ह्वींकारी प्रेत–ालिका ।।३।।

ऽलीं कारी काम–रूण्यैि `ाज–रा नमाऽस्तु त।

चामुण्डा चण्ड–घाती च यैकारी वर–दोयनी।।४।।

`वच्चि चाभयदा `नत्यं नमस्त मन्त्र–रूंणि।।५।।

धां धीं धूं धूर्जटङ्घि त्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी।

क्रां क्रीं क्रूं कोलका देवि! शां शीं शूं मिशुभं कुरु।।६।।

हुं हुं हुंकार–रूण्यै जं जं जं जम्भ–नोदनी।

भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी–भद्रिभवान्यै तिनमानिमङ्घ।।७।।

अं कं चं टं तं िंयं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षंपधजाग्रंत्त।

`धजाग्रं त्राटिय त्राटिय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा।।

िा ी ू िर्विती र्ूर्णा खां खीं खूं खचिरी तथा ।।८।।

सां सीं सूं सप्तशती–दव्यिा मन्त्र–`सुद्ध कुरुष्व मि।

इदं तु कुञ्जिका–स्तात्रिं मन्त्र–जागेर्त–हतिवत्ति।।६त्त।।

अभऽतं नैव दातव्यं गोर्तिं रक्ष िर्वित।।१०त्त।।

यस्तु कुञ्जिकया देवि! हीनां सप्तशतीं ठिति।

न तस्य जायतिसेद्धररण्यिरादिनं यथा।।११त्त।।

।। श्रीरुद्रयामलिगौरीतन्त्रिशवार्वितीसंवादिकुञ्जिकास्तात्रिं श्रीगुरविर्अिणमस्तु।।

१०.११. आदिुद्धारर्ण`टुकभैरव अष्टात्तिरशतनाम स्तात्रि –

ॐ अस्य श्री आपदुद्धारक–बटुक–भैरव–मन्त्रस्य बृहदारण्यक ॠषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमदापदुद्धारकबटुक–भैरवो देवता, वं ह्वीं बीजम्, ह्वीं बटुकाय शक्तिः, प्रणवः कीलकं, ममाभीष्ट–सिद्ध्यर्थे सप्तशती पाठा'त्वेन जपे (पाठे) विनियोगःत्त।

।। ॠ"योद न्यासङ्घ ।।

ृहदारण्यक–ॠ"ायि नमङ्घ `शरेस। अनुष्टुि–छन्दसि नमङ्घ मुखि। श्रीमदापदुद्धारक–बटुक–भैरव–देवतायै नमङ्घ हृदयि। वं `ीजाय नमङ्घ गुह्यि ह्वीं शक्तयि नमङ्घ पादयोः, ॐ कीलकाय नमः नाभौ। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे (पाठे) विनियोगाय नमः सर्वा`त्त।

।। करन्यासङ्घ त्त।।

ॐ ह्वां वां ईशान–महादेवाय नमः अ'ष्ठाभ्यां नमःत्त।।

ॐ ह्रीं वीं तत्परुरुष–महादेवाय नमः तर्जनीभ्यां नमः।।

ॐ ह्रूं वूं अघोर–महादेवाय नमः मध्यमाभ्यां नमः ।।

ॐ ह्रैं वैं महादेवाय नमः अनामिकाभ्यां नमः ।।

ॐ ह्रौं वौं सद्योजाताय–महादेवाय नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।।

ॐ ह्रः वः पञ्चवक्त्र–महादेवाय नमः करतल–करपृष्ठाभ्यां नमः।।

ध्यान

शान्तं पद्मासनस्थं शशि–मुकुट–धरं भ्रू–लता' त्रिनेत्रम्,

शूलं खड्गं च वज्रं परशु–मुसलके दक्षिणा' वहन्तम्।

नागं पाशं च घण्टां नलिन–कर–युतं सा'शं वाम–भागेत्त।

नानाल'ार–युक्तं स्फटिक–मणि–निभं नौमि तत्त्वं शिवाख्यम्।।

स्तात्रिम्

ढ भैरवा भूत–नाथश्च, भूतात्मा भूत–भावनङ्घ।

क्षत्रिज्ञङ्घ क्षत्रिालिश्च क्षत्रिदङ्घ क्षेत्रया विराट् ।।१।।

श्मशान–वासी मांसाशी, र्खिराशी स्मरान्तकङ्घ।

रक्तङ्घि ानिङ्घि सद्धङ्घ सेद्धदङ्घ सद्ध–सेवितङ्घ।।२।।

कङ्कालङ्घ काल–शमनङ्घ काम–काष्ठा तनूङ्घ केवङ्घ।

त्र–नर्त्रािहु–नत्रिश्च तथा ल–लाचिनङ्घ।।३।।

शूल–ाणिङ्घ खड्ग–ाणिङ्घ क'ाली धूम्र–लाचिनङ्घ।

अभीरुर्भैरवी–नाथा, भूताा योगिनी–तिङ्घ।।४।।

धनदाऽधिन–हारी च, धनवान् प्रेतभाग–वान्।

नाग–हारा नाग–ाशा, व्यामि–कशिङ्घ कालि–भृत्।।५।।

कालङ्घ कलि–माली च, कमनीयङ्घ कला–ेनेधङ्घ।

ेत्रलाचिनाि ज्वलन्नत्रिस्त्रेशखी च ेत्रलाचिनङ्घ।।६।।

ेत्रनत्रि–तनयाि डम्भ–शान्तङ्घ शान्त–जन–ेप्रयङ्घ।

ैटुर्कािहु–वषिश्च, खट्वाङ्ग वर–धारकङ्घ।।७।।

भूताध्यक्षङ्घ शिुंतिर्भक्षुकङ्घ पिरचापरकङ्घ।

धूर्तो ेदगर्म्ंरङ्घ शूराि र्हिपरणङ्घ ाण्डु–लाचिनङ्घ।।८।।

प्रशान्तङ्घ शान्तिदङ्घ शुद्धङ्घ शंर–ेप्रय–ेन्धवङ्घ।

अष्ट–मूर्त्तेर्नधीशश्च ज्ञान–चक्षुस्तािमियङ्घ।।६।।

अष्टाधारङ्घ षडाधारङ्घ, र्सि–युऽतङ्घ ेशखी–शखङ्घ।

भूधराि भूधराधीशाि, भूंतिर्भूधरात्मजङ्घ।।१०।।

कंाल–धारी मुण्डी च, आन्त्र–यज्ञाेिवीत–वान्।

जृम्भणाि माहिनङ्घ स्तम्भी मारणङ्घ क्षाभिणस्तथा।।११।।

शुद्ध–नीलाञ्जन–प्रख्याि दैत्यहा मुण्ड–भूषतङ्घ।

ैल–भुर्ग ेलभुग–नाथाि, ेालार्ििल–रिाक्रमङ्घ।।१२।।

सर्वाित्–तारणि दुर्गो दुष्ट–भूत–ेनषेवितङ्घ।

कामी कला–ेनेधङ्घ कान्तङ्घ कोमनी–वशकृद्–वशी।।१३।।

जगद्–रक्षा–करोऽनन्तो माय–मन्त्रौषधी–मयःत्त।

सर्व–सिद्धि–प्रदो वैद्यः प्रभुर्विष्णुरितीव हित्त।।१४।।

त्त।। अष्टोत्तर–शतं नाम्ना भैरवस्य महात्मनःत्त।।

१०.१२. सिद्ध सम्पुट मन्त्र –

१. सामूहिक कल्याण के लिए रू–

दव्यिा यया ततेमदं जगदात्म–शऽत्या,

ेनङ्घशषि–दवि–गण–शेक्त–समूह–मूर्त्या।

तामम्रर्ेकामेखल–दवि–महेर्ष–जि्यां,

भऽत्या नताङ्घ स्म`वदधातु शुभोन सा नङ्घ ।। अ.४, श्लाि. ३त्त।।

२. विश्व में अशुभता तथा भय का नाशं करने के लिए रू–

यस्याङ्घ प्रभावमतुलं भगवाननन्ताि,

ॅह्मा हरश्च न`ह वऽतुमर्लं`लं च।

सा चण्डिकाऽखल–जगत्–पिर–ािलनाय,

नाशाय चाशुभ–भयस्य मुत करातिु ।। अ.४, श्लाि. ४त्त।।

३. विश्व की रक्षा के लिए रू–

या श्रीङ्घ स्वयं सुकृेतनां भवनष्विलक्ष्मीङ्घ,

ाितिमनां कृत–ेधयां हृदयर्षिु`द्धङ्घ।

श्रद्धा सतां कुल–जन–प्रभवस्य लज्जा,

तां त्वां नताङ्घ स्म पिरािलय दवि!`वश्वम्।। अ.४, श्लाि. ५त्त।।

४. विश्व की रक्षा के लिए रू–

`वश्वश्विपर! त्वं पिरािस`वश्वं,

`वश्वात्मिका धारयसीत`वश्वम्।

`वश्वशि–वन्द्या भवती भवन्ति,

`वश्वाश्रया य`त्वेय भेक्त–नम्राङ्घ।। अ.११, श्लाि. ३३त्त।।

५. विश्वव्यापी विपत्तियों के नाश के लिए रू–

दवि! प्रन्नोर्त–हर`प्रसीद,

प्रसीदमातर्जगताऽखिलस्य।

प्रसीद`वश्वश्विपर! ािह`वश्वं,

त्वमीश्वरी दवि! चराचरस्य।। अ.११, श्लाि. २त्त।।

६. विश्व के पापताप निवारण के लिए रू–

दवि! प्रसीद पिर–िलिय नाऽिपरभीतत–

पर्नत्यं यथासुर–वधादधुनैव सद्यङ्घ।

िाििन सर्व–जगतां प्रशमं नयाशु,

उतित–िकि–जेनताँश्च महािािसर्गान्।। अ.११, श्लाि ३४त्त।।

७. विपत्तिनाश के लिए रू–

शरणागत–दीनार्त–पिरत्राण–िरायणि!

सर्वस्योर्त्त–हरि दवि! नारायेण! नमाऽिस्तु तिा। अ.११, श्लाि ११त्त।।

८. विपत्तिनाश और शुभ की प्राप्तिके लिए रू–

करातिु सा नङ्घ शुभ–हतिुरीश्वरी, शुभोन भद्राण्येभहन्तु चादिङ्घ।। अ.५, श्लाि ३७त्त।।

९. भयनाश के लिए रू–

सर्व–स्वरािूि सर्वेशि सर्व–शेक्त–समन्वितिा

भयभ्यिस्त्राेह नाि दवि! दुर्ग दवि! नमाऽिस्तु तिा। अ.११, श्लाि २४त्त।।

एतत् ति विदनं सौम्यं लाचिन–त्रय–भूेषतम्।

िातिु नङ्घ सर्व–भीतभ्यङ्घ कात्यायेन! नमाऽिस्तु तिा। अ.११, श्लाि २५त्त।।

ज्वाला–करालमत्युग्रमशषािसुर–सूदनम् ।

`त्रशूलं िातिु नाि भीतर्भिद्रकोल! नमाऽिस्तु तिा। अ.११, श्लाि २६त्त।।

१०. पापनाश के लिए रू–

`हनस्ति दैत्य–तजािंस स्वननिाूिर्यि या जगत!

सा घण्टा िातिु नाि दवि! िािाभ्याि निङ्घ सुताोनव।। अ.११, श्लाि २७त्त।।

११. रोगनाश के लिए रू–

रागािनशषािनहिंस तुष्टा,

ददापस कामान् सकलानभीष्टान्।

त्वामोश्रतानां न`वन्निराणां,

त्वामोश्रता ह्याश्रयतां प्रयान्ति।। अ.११, श्लाि. २६त्त।।

१२. महामारीनाश के लिए रू–

जयन्ती म६ला काली भद्रकाली कलिनी।

दुर्गा क्षमा`शवा धात्री स्वाहा स्वधा नमाऽिस्तु ताि।। अर्गला स्तात्रि, १त्त।।

१४. आरोग्य और सौभाग्य प्राप्ति के हेतु रू–

दोहि सौभाग्यमाराग्यिं दोहि मािरिमं सुखम्।

रूिंदोहि जयं दोहि यशाािदोहि`द्वषााजिह ।। अर्गला स्तात्रि, १२त्त।।

१५. सुलक्षणा पत्नी की प्राप्ति के हेतु रू–

त्निीं मनारिमां दोहि मनावृित्तानुसापरणीम्।

तापरणीं दुर्ग–संसार–सागरस्य कुलादि्भवाम् ।। अर्गला स्तात्रि, २४त्त।।

१६. बाधा शान्ति हेतु रू–

सर्वा–ेंधा–प्रशमनं त्रैलाऽियस्योखलश्विपर!

एवमवि त्वया कार्यमस्मद्–वैपर–`वनाशनम्।। अ.११, श्लाि. ३७त्त।।

१७. सर्वविध अभ्युदय हेतु रू–

तािसम्मता जन–दिषु धनोन तषिां,

तषिां यशोंस न च सीदेत धर्म–वर्गङ्घ।

धन्यास्त एव`नभृतात्मज–भृत्य–दारा,

यषिां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ।। अ.४, श्लाि. १५त्त।।

१८. दारिर्द्यदुःख आदि के नाश हेतु रू–

दुर्गे स्मृता हरेस भीतमशषि–जन्ताङ्घि,

स्वस्थैङ्घ स्मृता मेतमतीव–शुभां ददोस।

दापरर्द्य–दुङ्घख–भय–हापरपण का त्वदन्या,

सर्वोकिार–करणाय सदाऽऽर्द्र–ेचत्ता ।। अ.४, श्लाि. १७त्त।।

१६. समस्त विद्या और समस्त स्त्रियों में मातृभाव की प्राप्ति हेतु रू–

`वद्याङ्घ समस्तास्तव देवि! भदिाङ्घ,

स्त्रियङ्घ समस्ताङ्घ सकला जगत्सु।

त्वयैकया िूपरतमम्ैंयैतत्!

का ति स्तुेतङ्घ स्तव्य–रि रिोक्तिङ्घ।। अ.११, श्लाि. ५त्त।।

२०. सभी प्रकार के कल्याण हेतु रू–

सर्व–म६ल–मा६ल्यि शवि सर्वार्थ–सोधकि!

शरण्यि त्र्यम्ैंकि गौपर! नारायेण! नमाऽिस्तु ति।। अ.११, श्लाि. ६त्त।।

२१. शक्तिप्राप्ति हेतु रू–

सृष्टि–स्थित–ेवनाशानां शक्त–भूति सनातेन!

गुणाश्रयि गुणमयि नारायेण! नमाऽिस्तु ति।। अ.११, श्लाि. १०त्त।।

२२. प्रसन्नताप्राप्ति हेतु रू–

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि! `वश्वोर्तहापरेण!

त्रैलाऽिय–वोसनामीड्यि लाकिानां वरदा भव।। अ.११, श्लाि. ३५त्त।।

२३. विविध उपद्रवों से बचने हेतु रू–

रक्षोंसि यत्राग्नि–ेवषाश्च नागा,

यत्रारयाि दस्यु–ैलोन यत्र।

दावानलाि यत्र तथाब्धि–मध्यि,

तत्र स्थिता त्वं पिरिासि `वश्वम्।। अ.११, श्लाि. ३२त्त।।

२४. बाधामुक्त होकर धन और सन्तति की प्राप्ति हेतु रू–

सर्वा–ेधा–ेवनर्मुऽताि धन–धान्य–सुतान्वितङ्घ।

मनुष्यामित्–प्रसादनि भेवष्येत न संशयङ्घ।। अ.१२, श्लाा. १२त्त।।

२५. भुक्तिमुक्ति की प्राप्ति हेतु रू–

`वधेहि देवि! कल्याणं`वधेहि रिमां`श्रयम्।

रूं देहि जयं देहि यशा देहि`द्वषा जेह ।। अर्गला स्तात्रि, १४त्त।।

२६. पापनाश तथा भक्तिप्राप्ति हेतु रू–

नतभ्यिङ्घ सर्वदा भऽत्या चण्डिका! दुपरताहि।

रूं देहि जयं देहि यशा देहि`द्वषा जेह ।। अर्गला स्तात्रि, ६त्त।।

२७. स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति हेतु रू–

सर्व–भूता यदा दवी स्वर्ग–मुक्त–प्रदोयनी।

त्वं स्तुता स्तुतयका वा भवन्तु रिमात्तियङ्घ।। अ.११, श्लाा. ६त्त।।

२८. स्वर्ग और मुक्ति की प्राप्ति हेतु रू–

सर्वस्र्य ुंद्ध–रूिणि जनस्य ह्रेद संस्थिता।

स्वर्गाविर्गदा देवि! नारायेण! नमाऽस्तु ता।। अ.११, श्लाा. ७त्त।।

२६. मोक्ष की प्राप्ति हेतु रू–

त्वं वैष्णवी शेक्तरनन्त–वीर्या,

`वश्वस्र्य ीजं रिमोस माया।

सम्मोहितं देवि समस्तमतित्,

त्वं वै प्रसन्ना भेुव मेुक्त–हतिुङ्घ।। अ.११, श्लाा. ४त्त।।

३०. स्वप्न में सिद्धिध्असिद्धि की जानकारी हेतु रू–

दुर्गे देवि! नमस्तुभ्यं सर्वकामार्थसाधिकेत्त।

मम सिद्धिमसिुद्ध वा स्वप्ने सर्व प्रदर्शयत्त।।

३१. सुखप्राप्ति (महामारीध्व्याधि) हेतु रू–

ॐ त्र्यम्बकँ जामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्त्।

उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्त।।

३२.कष्टनिवारण हेतु रू–

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रींत्त।।

३३. अकारण अचानक आये हुये कष्ट के निवारण हेतु रू–

ॐ ह्लीं बगलामुखी सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय,

जिह्वां कीलय, बुद्ध विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहात्त।।

३४. धनप्राप्ति हेतु रू–

ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं ॐ महालक्ष्म्यै नमःत्त।।

३५. कन्या के शीघ्र विवाह हेतु रू–

ॐ र्त्यम्बकँ जामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्त्त।

उर्व्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतःत्त।।

10.5 सारांश

श्रीदुर्गासप्तशती भारतवर्ष की एक अत्यन्त प्राचीन परम्परागत अध्यात्म साधना हैत्त। यह पुरुषार्थ चतुष्ट्य को देने वाली भुक्ति एवं मुक्ति प्रदात्री महामाया का हृदय हैत्त। विभिन्न शास्त्रग्रन्थों में इसके सम्बन्ध में विस्तार से विचार किया गया हैत्त। मन्त्र–तन्त्र व यन्त्र तात्विक रूप से एक ही सत्य के तीन प्रकार है वा एक ही शक्ति के तीन रूप हैत्त। व्यक्ति के शक्ति को उद्दीप्त कर उसमें गुरुत्तर शक्ति का सञ्चार करने वाला गूढ़ रहस्य मन्त्र कहलाता हैत्त। मन्त्र का चित्रात्मक रूप यन्त्र तथा क्रियात्मक रूप तन्त्र हैत्त। मन्त्र के इन त्रिविध रूपों का क्रियात्मक विज्ञान व ज्ञान–भक्ति–कर्मयोग के रहस्य सप्तशती में भरे पड़े हैत्त। इन्हीं साधनों द्वारा स

चैत्र एवं आश्विन मास में शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से नवमी तक के नौ दिन तक श्नवरात्रय माने गये है। हमारे यहाँ वर्ष में चार बार नवरात्रों का पर्व आता हैं, जिनमें मुख्यतया दो नवरात्रे ही प्रसिद्ध है।

१. चौत्र शुक्लप्रतिपदा से नवमी तक बासन्ती नवरात्र तथा

२. आश्विनशुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक शारदीय नवरात्र के नाम से प्रसिद्ध है।

इसके अतिरिक्त दो और नवरात्र है, जिन्हें गुप्त नवरात्र भी कहा जाता है।

१. आषाढ़शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक तथा

२. माघशुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक

नवरात्र पर्व के प्रथमदिन प्रतिपदा को स्नान करके शुभकाल में कलशस्थापना के साथ ही पाठ एवं पूजा करना चाहिए। श्दुर्गा दुर्गति नाशनीच के अनुसार जो दुर्गति का नाश करे, वहीं दुर्गा है। नवरात्र आद्यशक्ति भगवति दुर्गा की उपासना का महापर्व है। भक्तिपूर्वक भगवति के नौ :पों की उपासना करनी चाहिए। मार्कण्डेय पुराण में नित्यजीवन भावों वाली नवदुर्गाओं के नाम व क्रम का उल्लेख मिलता है। जिनकी नवरात्रों मे आराधना करने से अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। देवी के नौ :प है, जिन्हे नवदुर्गा कहते है। इनमें प्रथम श्शैलपुत्रीच, द्वितीय श्ब्रह्मचारिणीच, तृतीय श्चन्द्रघण्टाच, चतुर्थ श्कूष्माण्डाच, पञ्चम श्स्कन्दमाताच, षष्ठ श्कात्यायनिच, सप्तम श्कालरात्रिच, अष्टम श्महागौरीच तथा नवम श्सिद्धिदात्रीच के नाम से प्रसिद्ध है। ये सभी नाम वेदभगवान के द्वारा प्रतिपादित हुए है।

पूजा विधि चौत्र शुक्ल प्रतिपदा से पूजन प्रारम्भ होता हैत्त। सम्मुखी प्रतिपदा शुभ होती हैत्त। अतः वही ग्राह्य हैत्त। अमायुक्त प्रतिपदा में पूजन नहीं करना चाहियेत्त। सर्वप्रथम स्वयं स्नानादि से पवित्र हो, गोमय से पूजा स्थान का लेपन कर उसे पवित्र कर लेना चाहियेत्त। तत्पश्चात् घट स्थापन करने की विधि हैत्त। घट स्थापन प्रातः काल करना चाहियेत्त। परन्तु चित्रा या वैधृतियोग हो तो उस समय घट–स्थापन न करे मध्याङ्घ में अभिजित् आदि शुभ मुहूर्त में घट स्थापन करना उचित हैत्त।

यह नवरात्र व्रत स्त्री–पुरूष दोनों ही कर सकते हैत्त। यदि स्वयं न कर सके तो पति, पत्नी, पुत्र या ब्राह्मण को प्रतिनिधि बनाकर व्रत पूर्ण कराया जा सकता हैत्त। व्रत में उपवास, अयाचित (बिना माँगे प्राप्त भोजन), नक्त (रात में भोजन करना) या एकभुक्त(एक बार भोजन करना) नियम, जो बन सके यथासामर्थ्य वहीं करेत्त।

घट स्थापन के लिये पवित्र मिट्टी से वेदी का निर्माण करे, फिर उसमें जौ और गेहूँ बोये तथा उस पर यथाशक्ति मिट्टी, ताँबे, चाँदी या सोने का कलश स्थापित करेत्त। यदि पूर्ण विधिपूर्वक करना हो तो पञ्चा'पूजन (गणेशाम्बिका, वरूण, षोडशमातृका, सप्तघृतमातृका, नवग्रह आदि देवों का पूजन) तथा पुण्याहवाचन ब्राह्मण द्वारा कराये अथवा स्वयं करेत्त।

इसके बाद कलशपर देवी की मूर्ति स्थापित करे तथा उसका षोडशोपचारपूर्वक पूजन करेत्त। तदनन्तर श्रीदुर्गासप्तशती का सम्पुटित अथवा साधारण पाठ भी करने की विधि हैत्त। पाठ की पूर्णाहूति के दिन दशांश हवन अथवा दशांश पाठ करना चाहिएत्त।

दीपक स्थापन

पूजा के समय घृत का दीपक भी प्रज्ज्वलित चाहिये तथा उसकी गन्ध, अक्षत, पुष्प आदि से पूजा करेत्त। दीपक स्थापन का मन्त्र इस प्रकार हैत्त।

भो दीप ब्रह्मरूपस्त्वं ह्यन्धकारनिवारकत्त।

इमां मया कृतां पूजां गृह्णंस्तेजः प्रवर्धयत्त।।

कुछ लोग अपने घरों में दीवार पर अथवा काष्ठपट्टिका पर चित्र बनाकर इस चित्र की तथा घृतदीपक द्वारा अग्नि से प्रज्वलित ज्योति की पूजा अष्टमी अथवा नवमी तक करते हैत्त।

कुमारी पूजन

कुमारी पूजन नवरात्र व्रत का अनिवार्य अ' हैत्त। कुमारिकाएँ जगज्जननी जगदम्बा का प्रत्यक्ष विग्रह हैत्त। सामर्थ्य हो तो नौ दिन तक नौ कन्या अथवा सात, पाँच, तीन या एक कन्या को देवी मानकर पूजा करके भोजन कराना चाहियेत्त। इसमें ब्राह्मणकन्या को प्रशस्त माना गया हैत्त।

अ◻ौच में देवी पूजन

जयसिंहकल्पद्रुम के अनुसार सुतक (जनन शौच, जन्म से दस दिन तक) में देवी का पूजन व दान देवी का आराधना मानकर कर सकते है, इसमें दोष नहीं लगता है।

आसन बिछाकर गणेश, वटुक तथा कुमारियों को एक पंक्ति में बिठाकर पहले ॐ गं गणपतये नमः से गणेश जी का पञ्चोपचार पूजन करे, फिर ॐ वं वटुकाय नमः से वटुक का तथा ॐ कुमार्यै नमः से कुमारियों का पञ्चोपचार पूजर करेत्त। इसके बाद हाथ में पुष्प लेकर अधोलिखित मन्त्र से कुमारियों की प्रार्थना करे

मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातꣃ.ां रूपधारिणीम्त्त।

नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम्त्त।।

जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणित्त।

पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोऽस्तु ते त्त।।

कहीं कहीं अष्टमी या नवमी के दिन कꣃडाही पूजा की परम्परा भी हैत्त। कꣃडाही में हलवा बनाकर उसे देवी जी की प्रतिमा के सम्मुख रखा जाता हैत्त। तत्पश्चात् चमचे और कꣃडाही में मौली बाँधकर ॐ अन्नपूर्णायै नमः इस नम मन्त्र से कꣃडाही का पञ्चोपचार पूजन भी किया जाता हैत्त। तदननतर थोꣃडा सा हलवा कꣃडाही से निकाल कर देवी माँ को भोग लगाया जाता हैत्त। उसके बाद कुवाँरी बालिकाओं को भोजन कराकर उन्हें यथाशक्ति वस्त्राभूषण, दक्षिणादि देने का विधान हैत्त।

विसर्जन नौ रात्रि व्यतीत होने पर दसवें दिन विसर्जन करना चाहियेत्त। विसर्जन से पूर्व भगवती दुर्गा का गन्ध, अक्षत, पुष्प आदि से उत्तर पूजन करके निम्न प्रार्थना करनी चाहिये

रूपं देहि यशो देहि भाग्यं भगवति देहि मेत्त।

पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मेत्त।।

महिषघ्नि महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनित्त।

आयुरारोग्यमैश्वर्यं दहि देवि नमोऽस्तु ते त्त।।

इस प्रकार प्रार्थना करने के बाद हाथ में अक्षत एवं पुष्प लेकर भगवती का निम्न मन्त्र से विसर्जन करना चाहिये

गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठे स्वस्थानं परमेश्वरि।

पूजाराधनकाले च पुनरागमनाय च ।।

शक्तिधर की उपासना चौत्र नवरात्र में शक्ति के साथ शक्तिधर की भी उपासना की जाती हैत्त। एक ओर जहाँ देवीभागवत, कालिकापुराण और मार्कण्डेयपुराण का पाठ होता है, वहीं दूसरी ओर श्रीरामचरितमानस, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण एवं अध्यात्मरामायण का भी पाठ होता हैत्त। इसलिये यह नवरात्र देवीनवरात्र के साथ साथ रामनवरात्र के नाम से भी प्रसिद्ध है।

शापोद्धार के पश्चात् छः अंगों सहित दुर्गासप्तशती का आद्योपान्त पाठ प्रारम्भ किया जाता है। कवच, अर्गला, कीलक और तीनों रहस्यों से ही दुर्गासप्तशती के छः अंग मान्य है। दुर्गासप्तशती में स्वयंसाधक का कल्याण ही नहीं अपितु इसमें जगत के कल्याण और रक्षा की कामना वाले मन्त्र भी है। सप्तशती धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष चारों पुरुषार्थों को प्रदान करती है। सभी प्रकार की कामना की सफलता के लिए साधक को नवार्ण मन्त्र (ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे) का अवश्य जाप करना चाहिए। नवरात्र पर्व पर दुर्गासप्तशती के प्रतिदिन एक पाठ करने का विधान है। इसी प्रकार नौ दिन में नौ पाठ होते है। यदि एक तिथि कम हो जाये तो भी आठ दिन में नौ पाठ ही करने चाहिए। तिथिवृद्धि होने पर नौ से अधिक दस पाठ (अधिकस्य अधिकं फलं) भी कर सकते है। अपने वंश परम्परा के अनुसार कन्या व वटुक को श्रद्धापूर्वक पूजा कराके दक्षिणा देनी चाहिए।

नवरात्र पर्व में योग्य ब्राह्मण द्वारा सप्तशती के मन्त्रों द्वारा हवन अवश्य करवायें क्योंकि इसके बिना सभी कार्य अधूरे रहते है। साधक को हवन आदि कार्य उसी मन्त्र से सम्पुटित करने चाहिए, जिसके सम्पुट से पाठ करवाया गया है।

10.6 शब्दावली –

१. चण्ड़ी= भगवती दुर्गा का उग्र :प

२. दुर्गा = कठिनता से ग्रहण होने वाली

३. साधक = पूजन/साधना करने वाला

४. नवरात्र = देवी के पूजन हेतु नव अहोरात्र

५. सार्ध = आधे सहित

६. नवार्ण = नौ अक्षर का देवी का मन्त्र

७. वपन= धान्य उगाना

८. सप्तशती = ७०० शख्रोकों का संग्रह

९. सम्पुट = मन्त्र के पूर्व व पश्चात्लगने वाले मन्त्र अथवा शख्रोक

10.7 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न – १ : दुर्गा का अर्थ बताईये?

उत्तर : दुर्ग्रह अर्थात्कठिनता से ग्रहण की जाने वाली देवी ही दुर्गा है।

प्रश्न – २ : नवरात्र वर्ष में कितनी बार आते है?

उत्तर : वर्षभर में चार बार नवरात्र आते है।

प्रश्न – ३ : दुर्गापाठ से क्या फल मिलता है?

उत्तर : धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति दुर्गापाठ से होती है।

प्रश्न – ४ : किस स्तोत्र के पाठ से सम्पूर्ण दुर्गापाठ का फल प्राप्त होता है?

उत्तर : सिद्धकुञ्जिका स्तोत्र के पाठ से सम्पूर्ण दुर्गापाठ का फल प्राप्त होता है।

प्रश्न – ५ : नवार्णमन्त्र लिखिए ?

उत्तर : ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।।

10.8 लघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न – १ : दुर्गा शब्द का विवेचन कीजिये ?

प्रश्न – २ : नवरात्र से आप क्या समझते है तथा वर्ष में कितनी बार व किस माह में नवरात्र आते है?

प्रश्न – ३ : सार्ध नवचण्ड़ी की विधि का वर्णन कीजिए ?

प्रश्न – ४ : पूजन में कन्याओं का महत्त्व बताईये ?

प्रश्न – ५ : दुर्गासप्तशती की फलश्रुति का विवेचन कीजिए ?

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ –

१. हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।

२. दुर्गासप्तशती

प्रकाशक – गीताप्रेस, गोरखपुर।

इकाई –11

यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 यन्त्र परिचय

11.3.1 सूर्य यन्त्र

11.3.2 चन्द्र यन्त्र

11.3.3 मगल यन्त्र

11.3.4 बुध यन्त्र

11.3.5 गुरु यन्त्र

11.3.6 शुक्र यन्त्र

11.3.7 शनि यन्त्र

11.3.8 राहु यन्त्र

11.3.9 केतुयन्त्र

11.4 मन्त्र परिचय

11.4.1 जप हेतु माला का पूजन–मन्त्र

11.4.2 अथश्रीगणेशषडक्षर मन्त्र–जपविधि

11.4.3 सूर्यमंत्र जप प्रयोग

11.4.4 चन्द्र मंत्र जप प्रयोग

11.4.5 भौममंत्र जप प्रयोग

11.4.6 बुध ग्रह जप प्रयोग

11.4.7 बृहस्पति मंत्र जप प्रयोग

11.4.8 शुक्र मंत्र प्रयोग

11.4.9 शनि मंत्र जप प्रयोग

11.4.10 राहु मंत्र जप प्रयोग

11.4.11 केतु मंत्र जप प्रयोग

11.4.12 नर्वाण मंत्र जप प्रयोग

11.4.13 त्रयक्षरी मंत्र जप प्रयोग

11.4.14 महामृत्यु जप विध

11.5 तन्त्र परिचय

11.6 सारांश

11.7 शब्दावलि

11.8 अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

11.9 लघुत्तरात्मक प्रश्न

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.1. प्रस्तावना

तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र मानव जीवन का अभिन्न अङ्ग है। किसी न किसी :प में मनुष्य इसका उपयोग करता ही रहता है। अपने नित्यदिन के कर्मों के सिद्धि हेतु इनका उपयोग सभी धर्मों के अनुयायी किया करते है। तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र के योग में पारङ्गत होना परम आवश्यक है। जब तक मनुष्य आत्म–संयम नहीं करता है, तब वह तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र हेतु योग्य नहीं माना जाता है। यम–नियम–आसन आदि अष्टाङ्गयोग के द्वारा ही मनुष्य तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र की ओर अग्रसर हो पाता है। तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र का उपयोग यदि समुचित उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया जाये तो यह जनकल्याण का समुचित उपादान है तथा इनका उपयोग स्वार्थ सिद्धि हेतु किया जाने लगे तो यह साधक का विनाश ही करता है।

तन्त्र शब्द का सामान्य अर्थ टोना और टोटका से लिया जाता है। शान्तिकर्म, पुष्टि–कर्म, आकर्षण–कर्म, मोहन–कर्म, वशीकरणकर्म, जुम्भण कर्म, उच्चाटन कर्म, स्तम्भन कर्म, विद्वेषण कर्म तथा मारण कर्म – ये सभी कर्म मनुष्यों की कामनाओं की पूर्ति हतु यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र की सहायता से सम्पन्न किये जाते है। तन्त्रशास्त्र बिना मन्त्र के अधूरा ही है, सर्वप्रथम साधक को मन्त्रशास्त्र में पारङ्गत होना पड़ता है तभी वह तन्त्र में कुशल हो पाता है। तन्त्र शास्त्र में समय, स्थान, प्रयोज्य पदार्थ, वातावरण, गुरु का निर्देश साधना

के लिए परम आवश्यक है। तन्त्र साधना में षट्चक्रभेदन, कुण्ड़लिनी जागरण व विभिन्न प्रकार के क्रिया–कलापों को वरीयता दी जाती है। अनाहत–नाद, समाधि की अवस्था, देव सायुज्य जैसे जटिल विषय इसके अङ्ग है, इसका सम्यक्ज्ञान, सुयोग्य गुरु की कृपा के बिना असम्भव है। तन्त्र–मन्त्र–यन्त्र पूर्ण :प से गुरुगम्य ज्ञान है, सामान्यतया आमजन फुटकर पुस्तकों में प्रकाशित तन्त्र के प्रयोगों से निजी जीवन को फलीभूत करने का प्रयास करते है और असफल होने पर शास्त्रों की निन्दा करते है।

11.2 उद्देश्य

1 विविध यन्त्रों की निर्माण व पूजन विधि का ज्ञान प्राप्त करना।

2 मन्त्रों का समुचित प्रयोग करना।

3 तन्त्र शास्त्र का सामान्य परिचय प्राप्त करना।

4 यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र की आधारभूत सामग्रियों का परिचय प्राप्त करना।

5 आम जनता को यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र से लाभान्वित करना।

11.3 यन्त्र परिचय

6	1	8
7	5	3
2	9	4

यन्त्र देवताओं का ही प्रतीक है, इसमें देवताओं की साङ्गोपाङ्ग पूजा की जाती है। यन्त्र विभिन्न आकृतियों में बनायें जाते है। प्राचीन काल से यन्त्रों का निर्माण भोजपत्र पर किया जाता है। किसी विशेष कार्य की सिद्धि हेतु भोजपत्र, काष्ठपीठ, वनस्पतियों के पत्ते, कांस्य, रजत, स्वर्ण, ताम्र आदि पर यन्त्र बनाया जाता है। प्रयोग के अनुसार स्याही के लिए लाल चन्दन, केसर, कस्तूरी, अष्टगन्ध, पञ्चगन्ध, यक्षकर्दम, गोरोचन, हल्दी का प्रयोग किया जाता है तथा लेखनी के :प में अनार की लकड़ी, चन्दन की लकड़ी, आंकड़े की लकड़ी तथा अन्यान्य प्रयोजन के अनुसार लेखनी का प्रयोग किया जाता है। यन्त्र आकार की दृष्टि से त्रिभुजाकार, वर्गाकार, आयताकार, वृत्ताकार निर्मित किये जा सकते है। यन्त्रों में मन्त्र अथवा अङ्कों की सहायता से देवताओं को स्थापित किया जाता है। यन्त्र साक्षात्देवतुल्य है तथा मन्त्रों से उनकी प्राणप्रतिष्ठा की जाती है।

शुभ मुहूर्त में यन्त्र का निर्माण करके इसे यथोपचार पूजन एवं यथोचित जप के पश्चात्ही धारण करना चाहिए।

11.3.1 सूर्य यन्त्र :–

०१. ऊँ घृणिः सूर्याय नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ भास्करायविद्ममहे महाद्युतिकराय धीमहि तन्नो आदित्याय प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन –

सूर्य ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा सूर्य से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु सूर्य–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण रविपुष्य योग के दिन भोजपत्र पर अष्टगन्ध/लाल चन्दन की स्याही से तथा अनार के कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र की यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करनी चाहिए। इससे सूर्य जनित सभी दोषों (पित्त, ज्वर, गर्मी, सिरदर्द, हृदयरोग, अग्निमान्द्य, दाहज्वर, नेत्ररोग, मिर्गी, हड्डियों की कमजोरी, आत्मबल की कमी, उदर विकार की शान्ति आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे स्वर्ण अथवा ताम्र के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा लाल वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.2 चन्द्र यन्त्र :–

7	2	9
8	6	4
3	10	5

०१. ऊँ सों सोमाय नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ इमन्देवा ऽ असपत्न œ सुवध्वम्महते क्षत्रायमहते ज्ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय। इमममुख्य पुत्रममुख्यै पुत्रमस्यै विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ठं० राजा।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ अमृताङ्गायविद्महे कलाःपाय धीमहि तन्नो सोमः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – दधि शङ्खतुषाराभं क्षीरोदार्णवसम्भवम्।

नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुटभूषणम्।

चन्द्र ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा चन्द्र से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु चन्द्र–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण रोहिणी नक्षत्रयुक्त सोमवार के दिन अथवा अन्य शुभ दिन में भोजपत्र पर कर्पूर मिश्रित सफेद चन्दन की स्याही से तथा तुलसी अथवा अनार के कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र की यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करनी चाहिए। इससे चन्द्र जनित सभी दोषों (मानसिक रोग, मानसिक तनाव, फेफड़ों की बीमारी, टी. बी.,

मन की चञ्चलता आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे रजत के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा श्वेत वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.3 मगल यन्त्र :–

8	3	10
9	7	5
4	11	6

०१. ऊँ अँ अङ्गारकाय नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ अग्निर्मूर्द्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्या ऽ अयम्। अपा œ रेता œ सिजिन्वति।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ अङ्ग्ारकायविद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्ति समप्रभम्।

कुमारं शक्तिहस्तं तं मङ्गल प्रणमाम्यहम्।

मङ्गल ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा मङ्गल से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु मङ्गल–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण मङ्गलवार अथवा मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, धनिष्ठा नक्षत्रयुक्त शुभदिन देखकर भोजपत्र पर अष्टगन्ध/लाल चन्दन की स्याही से तथा अनार के कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र की यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे मङ्गल जनित सभी दोषों (सिरदर्द, आधाशीशी, भय, गर्मी, चर्मरोग, ग्रीष्मजनित रोग, रक्त–विकार, उच्च–नीच रक्तचाप, नाक बहना, गर्भाशय सम्बन्धि रोग आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे स्वर्ण अथवा ताम्र के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा लाल वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.4 बुध यन्त्र :–

9	4	11
10	8	6
5	12	7

०१. ऊँ बुँ बुधाय नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते स œ सृजेथा मयञ्च ।

अस्मिन्त्सधस्थे ऽ अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ सौम्यःपायविद्महे बाणेशाय धीमहि तन्नो सौम्यः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – प्रियंगुकलिकाश्यामं ःपेणाप्रतिमं बुधम।

सौम्यं सौम्य गुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम्।

बुध ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा बुध से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु बुध–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण बुधवार के दिन अश्लेषा, ज्येष्ठा व रेवती नक्षत्र से युक्त दिन पर भोजपत्र पर अष्टगन्ध/लाल चन्दन की स्याही से तथा अनार की कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र की यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे बुध जनित सभी दोषों (चर्मरोग, मस्तिष्क सम्बन्धी रोग, ज्वर, दमा, पाण्डुरोग, हर्निया, फेफड़े सम्बन्धी रोग, मिर्गी आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे स्वर्ण अथवा कांस्य के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा हरे वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.5 गुरु यन्त्र :–

10	5	12
11	9	7
6	13	8

०१. ऊँ बृं बृहस्पतये नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ बृहस्पते ऽ अति यर्दो ऽ अर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु।

द्दीदयच्छवसऽऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ अङि्ग्रसाय विद्महे दिव्यदेहाय धीमहि तन्नो जीवः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – देवानां च ऋषीणाञ्ज काञ्चन सन्निभम्।

बुद्धि–भूतं त्रिलोकेशं तन्नमामि बृहस्पतिम्।

गुरु ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा गुरु से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु गुरु–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण गुरुवार को पुष्य नक्षत्रयुक्त दिन भोजपत्र पर अष्टगन्ध/केसर की स्याही से तथा अनार के कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र का यथाविधि

प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे गुरु जनित सभी दोषों (यकृत (लीवर), निर्णय लेने की क्षमता में कमी, चर्बी का बढना़, वमन, कफ, वायु विकार, अग्निमांद्य, पीलिया, जलन की शिकायत, बवासीर) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे स्वर्ण अथवा रजत के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा पीले वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.6 शुक्र यन्त्र :–

11	6	13
12	10	8
7	14	9

०१. ॐ शुं शुक्राय नमः

०२. वैदिक मंत्र – ॐ अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः।

ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान œ शुक्क्रमन्धस ऽ इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतम्मधु।।

०३. गायत्री मंत्र – ॐ भृगुराजाय विद्महे दिव्य देहाय धीमहि तन्नो शुक्रः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – हिमकुन्द मृणालाभं दैत्यानां परमं गुःम्।

सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम्।

शुक्र ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा शुक्र से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु शुक्र–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण शुक्रवार तथा भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रयुक्त शुभदिन देखकर भोजपत्र पर अष्टगन्ध सफेद चन्दन की स्याही से तथा अनार अथवा कनेर की कलम से करना चाहिए। यन्त्र लेखन के उपरान्त यन्त्र का यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे शुक्र जनित सभी दोषों (टिटनेस, स्वप्नदोष, दन्तशूल, मासिक धर्म, यौनरोग, प्रदर, नकसीर आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे रजत के लाल वस्त्र अथवा आवृत्त यन्त्र (ताबीज) में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.7 शनि यन्त्र :–

12	7	14
13	11	9
8	15	10

०१. ऊँ शं शनैश्चराय नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ शन्नोदेवीरभिष्ट्य ऽ आपोभवन्तु पीतये। शँरभिस्रवन्तुनः।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ भार्गवाय विद्‌महे मृत्युःपाय धीमहि तन्नो शनिः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – नीलाञ्जन समाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम्।

छाया मार्त्तण्ड सम्भूतं तं नमामि शनैश्चरम्।

शनि ग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा शनि से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु शनि–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण शनिवार तथा उत्तराषाढ़ा, श्रवण, शतभिषा, चित्रा, स्वाती नक्षत्रयुक्त शुभदिन देखकर भोजपत्र पर अष्टगन्ध सफेद चन्दन की स्याही से तथा अनार/खेजड़ी की कलम से करना चाहिए। यन्त्र लेखन के उपरान्त यन्त्र का यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे शनि जनित सभी दोषों (लकवा, उदर व्याधि, नेत्ररोग, चोट से अङ्गभङ्ग, कुष्ठ, वात व कफजनित रोग आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात्मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे रजत के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा काले वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

11.3.8 राहु यन्त्र :–

13	8	15
14	12	10
9	16	11

०१. ऊँ रां राहवे नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ कयानश्चित्र ऽ आभुवदूती सदावृधः सखा। कयाशचिष्ठ्ठया व्वृता।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ शिरोःपाय विद्‌महे अमृतेशाय धीमहि तन्नो राहुः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम्॥

सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम्॥

राहुग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा शुक्र से सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु राहु–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण शनिवार तथा आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा नक्षत्रयुक्त दिन भोजपत्र पर अष्टगन्ध सफेद चन्दन की स्याही से तथा अनार अथवा कनेर की कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र का यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे राहु जनित सभी दोषों (मानसिक उद्विग्नता, कुष्ठ, अण्ड़कोष में विकार आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात् मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे रजत के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा नीले वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

११.३.६. केतुयन्त्र :–

14	9	16
15	13	11
10	17	12

०१. ऊँ कें केतवे नमः

०२. वैदिक मंत्र – ऊँ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या ऽ अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः।।

०३. गायत्री मंत्र – ऊँ पद्मपुत्राय विद्महे अमृतेशाय धीमहि तन्नो केतुः प्रचोदयात्।

०४. पुराणोक्त स्तवन – पलाशपुष्पसंकाशं तारकग्रहमस्तकम्।

रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम्॥

केतुग्रह का अशुभ प्रभाव दूर करने हेतु तथा केतुसे सम्बन्धित शुभफल प्राप्त करने हेतु केतु–यन्त्र का निर्माण किया जाता है। इस यन्त्र का निर्माण रविवार/सोमवार/मङ्गलवार तथा अश्विनी, मघा, मूल नक्षत्रयुक्त शुभदिन देखकर भोजपत्र पर अष्टगन्ध सफेद चन्दन की स्याही से तथा अनार की कलम से करना चाहिए। यन्त्र–लेखन के उपरान्त यन्त्र का यथाविधि प्राण–प्रतिष्ठा करते हुए पञ्चोपचार अथवा षोड़शोपचार पूजन करना चाहिए। इससे केतुजनित सभी दोषों (हड्डी में विकार आदि) का नाश होकर ग्रह की पुष्टता होती है। यन्त्र के पूजन के पश्चात् मन्त्रोच्चारपूर्वक उसे रजत/स्वर्ण/ताम्र के आवृत्त यन्त्र (ताबीज) अथवा काले वस्त्र में स्थापित करके अपनी राशि के अनुसार शुभ मुहूर्त्त देखकर धारण करना चाहिए।

११.४. मन्त्र परिचय :–

मननात् मन्त्रः अर्थात् जिसका मनन किया जाये वह मन्त्र है। यदि किसी भी सामान्य वाक्य का बारम्बार उच्चारण किया जाये तो वह श्रवणकर्ता के मन–मस्तिष्क में अवश्य पहुँच जाता है, इसी प्रकार वैदिक मन्त्रों

के बारम्बार जप से देवताओं तक साधक की वाणी अवश्य पहुँचती है। वैदिक मन्त्रों में छन्द व लय का विशेष महत्त्व होता है, अतः गुरु के निर्देशन में मन्त्रों का अभ्यास करना चाहिए। प्रत्येक उच्चारित शब्द/ध्वनि अमर है, ब्रह्माण्ड़ में अनेकों शब्द विचरण करते रहते है इसीलिए शास्त्रों ने शब्द को ही ब्रह्म का स्वःप माना है। शरीर में घार्षणिक विद्युत् प्रवाह होता रहता है तथा मस्तिष्क में धारावाही विद्युत् प्रवाहित होती रहती है। मन्त्रोच्चार से इन दोनों विद्युत् का संयोग होता है, यही मन्त्र की शक्ति है। मन्त्रों से हमारा आत्मबल स्वतः वृद्धि को प्राप्त होता है।

११.४.१. जप हेतु माला का पूजन–मन्त्र :–

फर'ऐं ह्रीं अक्ष–मालिकायै नमःङ्क इस मन्त्र से माला की पूजा करके प्रार्थना करे :–

ऊँ मां माले महा–माये सर्व–शक्ति स्वःपिणि!

चतुवर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भवत्त।।

ऊँ अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृहृणामि दक्षिणे करेत्त।

जप–काले च सिद्धयर्थं प्रसीद मम सिद्धयेत्त।।

ऊँ अक्ष–मालाधिपतये सुसिद्ध देहि देहि सर्व–मन्त्रार्थ–साधिनि!

साधय साधय सर्व–सिुद्ध परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहात्त।।१

११.४.२. अथश्रीगणेशषडक्षर मन्त्र–जपविधिः

किसी भी देवता के मन्त्रजाप से पूर्व गणेशमन्त्र के 108 (न्यूनतम) जप परम आवश्यक है। इसके पश्चात् ही कार्यसिद्धि होती है। जप के पूर्व एवं पश्चात् दोनों ही समय जप करना परम आवश्यक है।

ऊँ अस्य श्री गणेशमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः विघ्नेशो देवता वं बीजं, यं शक्तिः हुँ कीलकम् सर्वार्थसिद्घये जपे विनियोगः॥

ऋष्यादिन्यासः –

ऊँ भार्गव ऋषये नमः शिरसि। ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ऊँ विघ्नेशदेवतायै नमः हृदये। ऊँ वं बीजाय नमः गुह्ये। ऊँ यं शक्त्ये नमः पादयोः। ऊँ हुँ कीलकाय नमः सर्वाङ्गे।

करन्यासः – ऊँ वं अंगुष्ठाभ्यां नमः । ऊँ क्रं तर्जनीभ्याँ नमः। ऊँ तुँ मध्यमाभ्याँ नमः। ऊँ डाँ अनामिकाभ्याँ नमः। ऊँ यं कनिष्ठिकाभ्याँ नमः। ऊँ हुँ करतलकरपृष्–ाभ्याँ नमः।

षडङ्ग्न्यासः – ऊँ वं नमः हृदयाय नमः। ऊँ क्रं नमः शिरसे स्वाहा ऊँ तुं नमः शिखायै वषट्। ऊँ डां नमः कवचाय हुँ। ऊँ यं नमः नेत्रत्रयाय वौषट्। ऊँ हुँ नमः अस्त्रायफट्।

वर्णन्यासः – ऊँ वं नमः भ्रुवोर्मध्ये। ऊँ क्रं नमः कण्ठे। ऊँ तुं नमः हृदये। ऊँ डां नमः नाभौ। ऊँ यं नमः लिङ्गे् । ऊँ हुँ नमः पादयोः। ऊँ वक्रतुण्डाय हुँ सर्वाङ्गे्।

ऊँ उद्यद्दिनेश्वररुचिं निजहस्तपद्मैः,

पाशाङ्कुशाभयवरान् दधतं गजास्यम्।

रक्ताम्बरं सकलदुःखहरं गणेशं,

ध्यायेत् प्रसन्नमखिलाः भरणाभिरामम्॥

शऊँ वक्रतुण्डाय हुँय इति षडक्षरमन्त्रं जपेत्। ह्रठ्ठ पूर्ण करने के पश्चात् ष्टदद्वड्ढळक्वद्वद्द व ध्यान ॥+ड्डशत्त–

११.४.३. सूर्यमंत्र जप प्रयोगः

विनियोग :–

ऊँ आकृष्णेतिमन्त्रस्य हिरण्यस्तूपा्रिस ऋषिः स्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता ममसर्वाभिष्ट सिद्धये सूर्य मंत्र जपे विनियोगःत्त।

ऋ"ादिन्यासः–

ऊँ हिरण्यस्तूपी्रिस ऋ"ाये नमः शिरसित्त। ऊँ स्त्रिष्टुप् छन्दसे नमः मुखे। ऊँ सूर्योदेवतायै नमः हृदित्त। ऊँ विनियोगाय नमः सर्वा्त्त।

करन्यास :– ऊँ आकृष्णेन रजसा अंगुष्ठाभ्यां नमःत्त। ऊँ वर्तमानो निवेशयन् तर्जनीभ्यां नमःत्त। ऊँ अमृतं मर्त्यं च मध्यमाभ्यां नमःत्त। ऊँ हिरण्ययेन अनामिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ सविता रथेना कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ देवो याति भुवनानि पश्यन् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

देहादिन्यासः– ऊँ आकृष्णेन शिरसित्त। ऊँ रजसा ललाटेत्त। ऊँ वर्तमानो मुखेत्त। ऊँ निवेशयन् हृदयेत्त। ऊँ अमृतं नाभौत्त। ऊँ मर्त्यं च कट्याम्त्त। ऊँ हिरण्ययेन सविता उर्व्योःत्त। ऊँ रथेना जान्वोंत्त। ऊँ देवोयाति जंघयोःत्त। ऊँ भुवनानि पश्यन् पादयोःत्त।

हृदयाभिदन्यासः–ऊँ आकृष्णेन रजसा हृदयायनमःत्त। ऊँ वर्तमानो निवेशयन् शिरसे स्वाहात्त। ऊँ अमृतं मर्त्यं च शिखायै वषट्त्त। ऊँ हिरण्ययेन कवचाय हुम्त्त। ऊँ सविता रथेना नेत्रत्रयायवौषट्त्त। ऊँ देवो याति भुवनानि पश्यन् अस्त्राय फट्त्त।

ध्यानः– पद्मासनः पद्मकरोद्विद्बाहुः पद्मद्युतिः स्रत्रतुरंगवाहनःत्त।

दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवःत्त।।

मन्त्रः— ऊँ भूर्भुवः स्वः

आकृष्णेनरजसा व्वर्तमानो निवेशयन्नमृतम्मत्र्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्

सूर्याय नमः।।

जप संख्या ७००० जप ङःह्लय्श्च ऽैंद्यणद्मष्ठ ऽष्ठैं झ्यित्रष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्।

११.४.४. चन्द्र मंत्र जप प्रयोग

ऊँ अस्य श्री सोमदेवता प्रीतये इमन्देवेति मन्त्रस्य गौतम ऋषिः देवता

विराट् छन्दः ममयजमानस्य ममसर्वाभिष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगःत्त।

ऋ"यादि न्यासः— ऊँ गौतम ऋ"ाये नमः शिरसित्त। ऊँ विराट्छन्दसे नमः मुखेत्त। ऊँ सोमदेवतायै नमः हृदित्त।

ऊँ विनियोगाय नमः सर्वांत्त।

करन्यासः—

ऊँ इमन्देवाऽअसपत्नं उ सुवध्वं अंगुष्ठाभ्यां नमःत्त। ऊँ महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय तर्जनीभ्यां नमःत्त। ऊँ महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय मध्यमाभ्यां नमःत्त। ऊँ इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै अनामिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ विशऽएष वो मीराजा कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। उ सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना उ राजा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

देहा′ न्यासः— ऊँ इमन्देवा शिरसित्त। ऊँ असपत्न उ ललाटेत्त।

ऊँ सुबध्वं नासिकायाम्त्त। ऊँ महते क्षत्राय मुखेत्त।

ऊँ महते ज्येष्ठयाय हृदयेत्त। ऊँ महते जानराज्याय उदरेत्त।

ऊँ इन्द्रस्येन्द्रियाय नाभौत्त। ऊँ इमममुष्य कटयाम्त्त।

ऊँ पुत्रममुष्यै मेढ्रेत्त। ऊँ पुत्रमस्यै ऊर्वोःत्त।

ऊँ विशऽएष वो जान्वोःत्त। ऊँ मीराजा जंघयोःत्त।

ऊँ सोमोऽस्माकं गुल्फयोःत्त।

हृदयादिन्यासः— ऊँ इमन्देवाऽअसपत्नं उ सुवध्वं हृदयाय नमःत्त।

ऊँ महते क्षत्राय महते ज्येष्ठयाय शिरसे स्वाहात्त।

ऊँ महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय शिखायै वषट्त्।

ऊँ इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै कवचाय हुम्त्।

ऊँ विशऽएष वो मीराजा नेत्रत्रयाय वौषट्त्।

ऊँ सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ऊँ राजा अस्त्राय फट्त्।

ऊँ ब्राह्मणाना उ राजा पादयोःत्।

ध्यानम्— श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विद्बाहुःत्।

चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवःत्।।

मन्त्रः—

ऊँ भुर्भुवः स्वः ंणद्बध्त्त्ष्ठप्य् ळ् ृफझ्ह्वद्म श्व फ्रुप्क्ष् द्बब्त्रष्ठ ूख्यय्द्भद्बब्त्रष्ठ ङ्कङ्कद्भस्ऊह्मणद्भय्द्भ द्बब्णत्रष्ठ ज्य्द्मद्यणय्ङ्कद्भय्द्भष्ठध्त्त्श्नडद्भष्ठ्यध्त्त्श्नद्भय्द्भद्र ंणद्बद्बद्बरु द्भ इरुखय्द्बद्बरु द्भस् इरुखय्द्बडद्भस् ्यप्रय्ळ्ॅप्तप्ष्ठद्बध्द्यणय्ज्य्फ्ष्ठद्बय्ष्ठळ्डद्बर्ढ़ैं द्धश्नयैय्ह्लय्य्द्मय् द्दश्चण० द्यणय्ज्य् ऊँ सोमाय नमःत्।

जप संख्या ११००० जप इःह्लय्श्च ऽैंद्यणद्मष्ठ ऽर्ष्ठैं झ्ज्ञ्त्रिष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्।

११.४.५. अथ भौमग्रहमन्त्रजप प्रयोगः

विनियोग :— ऊँ अग्निर्मूर्द्धेतिमन्त्रस्य विःपारिस ऋषिः गायत्री छन्दः अग्निर्देवता भौमग्रहझ्श्नध्ह्वद्भर्त्ष्ठश्च भौममंत्र जपे विनियोगःत्।

ऋ"यादिन्यासः— ऊँ विःपारिस ऋ"ये नमः शिरसित्। ऊँ गायत्री छन्दसे नमः मुखेत्। ऊँ अग्निर्देवतायै नमः हृदित्। ऊँ विनियोगाय नमः सर्वांत्।

करन्यासः — ऊँ अग्निर्मूर्द्धा अंगुष्ठाभ्यां नमःत्। ऊँ दिवः ककुत् तर्जनीभ्यां नमःत्। ऊँ पतिः मध्यमाभ्यां नमःत्। ऊँ पृथिव्याअयम् अनामिकाभ्यां नमःत्। ऊँ अपाउरेताउसि कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्। ऊँ जिन्वति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्।

अंगन्यासः— ऊँ अग्निः शिरसित्। ऊँ मूर्द्धा ललाटेत्। ऊँ दिवः मुखेत्। ऊँ ककुत् हृदयेत्। ऊँ पति उदरेत्। ऊँ पृथिव्या नाभौत्। ऊँ अयं कट्यांत्। ऊँ अपाउजान्वोःत्। ऊँ रेताउसि गुल्फयोःत्। ऊँ जिन्वति पादयोःत्।

हृदयादिन्यासः—ऊँ अग्निर्मूर्द्धा हृदयाय नमःत्। ऊँ दिवः ककुत् शिरसे स्वाहा ऊँ पतिः शिखायै वषट्त्। ऊँ पृथिव्या अयं कवचाय हुम्त्। ऊँ अपाउरेताउुस नेत्रत्रयाय वौषट्त्। ऊँ जिन्वति अस्त्राय फट्त्।

ध्यानमः– रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषवृतोगदाभृत्त।

धरासुतः शक्तिधरश्वशूली सदायमस्मद्वरदः प्रसन्नःत्त।।

मन्त्रः– ॐ भूर्भुवः स्वः ृयख्अद्बःश्चहणय्श्च्यत्त्द्ृ ऽैंऽरुैंह्वइयत्रदृ इल्यत्र्झद्भय् ळ्ृद्भद्बह्मद्र ृइ्य् श्व द्यदणत्रय् श्व्यफ्यज्ध्य्त्र ॐ भौमायनमःत्त। संख्या – १०,००० जप इःह्लयश्च ऽैंद्यणद्मष्ठ ऽष्ठैं इ्यित्रष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.६. बुधग्रह जप प्रयोगः –

विनियोग :– ॐ उदबुध्यस्वेति मन्त्रस्य परमेष्ठी प्रजापति ऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः बुधो देवता बुधग्रह इश्नध्ह्वद्भर्त्ष्ठश्च जपे विनियोगःत्त।

ऋ"यादिन्यासः–ॐ परमेष्ठी प्रजापति ऋ"ाये नमः शिरसित्त। ॐ त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखेत्त। बुधोदेवतायै नमः हृदयेत्त। ॐ विनियोगाय नमः सर्वांत्त।

करन्यासः– ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्वम् अंगुष्ठाभ्यां नमःत्त। ॐ इष्टापूर्ते तर्जनीभ्यां नमःत्त। ॐ फ् उ सृजेथामयं च मध्यमाभ्यां नमःत्त। ॐ अस्मिन्त्सधस्थेऽ अद्ध्युत्तरस्मिन् अनामिकाभ्यां नमःत्त। ॐ विश्वेदेवा यजमानश्च कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। ॐ सीदत करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

अंगन्यासः– ॐ उद्बुध्यस्व शिरसित्त। ॐ अग्नि प्रति ललाटेत्त। ॐ जागृहि त्वम् मुखेत्त। ॐ इष्टापूर्ते हृदयेत्त। ॐ सउसृजेथामयञ्च नाभौत्त। ॐ अस्मिन्त्सधस्थे कटयाम्त्। ॐ अद्ध्युत्तरास्मिन् ऊर्वोःत्त। ॐ विश्वेदेवा जान्वोःत्त। ॐ यजमानश्च गुल्फयोःत्त। ॐ सीदत पादयोःत्त।

हृदयादिन्यासः– क्ष् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहित्व्र छत्त्द्भय्द्भ द्मद्बदृद्र ॐ इष्टापूर्ते ्यप्रय्द्यणफ्ष्ठ डप्य्ब्णय्द्र ॐ फ् उ सृजेथामयं च ्यप्रय्क्वय्द्भस् प्तट्टह्मणद्र ॐ अस्मिन्त्सधस्थेऽ अद्ध्युत्तरस्मिन् ऽैंप्य्द्भ ब्रुणद्बष्टह्मद्र ॐ विश्वेदेवा यजमानश्च द्मष्ठखय्खय्द्भय्द्भ प्य्स्प्तट्टणष्टह्मत्त। ॐ सीदत ृडखय्य्द्भ ड्ढैंट्टह्मणद्र

ध्यानम्– पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्चहारीत्त।

चार्मासिधृक् सोमसुतोगदाभृत्ुसहाधिःढोवरदो बुधश्चत्त।।

मन्त्र :– ॐ भूर्भुवः स्वःे णत्त्ष्टह्मद्धरुक्द्भडप्य्ज्ज्द्मष्ठ इश्न्यत्रज्य्ख्ल्यब्णह्वप्यद्बउणय्झःत्रष्ठश्च फ् श्व फ्ल्ज्ष्ठत्य् द्बद्भऽ द्र ृयडद्ब६ह्वफक्य्ड्वय्ष्ठ ळ्ृक्द्भरुž्य्द्यण्यडद्ब्य६प्ए्ष्ठत्त्ष्ठप्य् द्भज्द्बय्द्मफिध्त्त्र ॐ बुधाय नमःत्त।

जप संख्या ४००० जप इःह्लयश्च ऽैंद्यणद्मष्ठ ऽष्ठैं इ्यित्रष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.७. बृहस्पतिमन्त्रजप प्रयोगः

विनियोग :– ऊँ बृहस्पतेतिमन्त्रस्य गृत्समद ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः ब्रह्मा देवता मम सकलभीष्टभफलप्राप्त्यो बृहस्पतिदेवताप्रीत्यर्थे जपे विनियोगःत्त।

ऋ"यादिन्यासः– ऊँ गृत्समद ऋ"ाये नम शिरसित्त। ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखेत्त। ऊँ ब्रह्मा देवतायै नमः हृदित्त। ऊँ विनियोगाय नमः सर्वा"त्त।

करन्यास :– ऊँ)ल्बणडइत्रष्ठ ळ् ़यत्र द्भत्त्यष्ठश्र्चे अंगुष्ठाभ्यां नमःत्त। ऊँ अर्हाद्युमत् तर्जनीभ्यां नमः। ऊँ विभाति क्रतुमत् मध्यमाभ्यां नमःत्त। ऊँ जनेषु अनामिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ यद्दीयच्छवसऋतप्रजात–तदस्मासु कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ द्रविणं धेहि चित्रम् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

अंगन्यास :– ऊँ बृहस्पते शिरसित्त। ऊँ ़यत्र द्भत्त्यष्ठश्र्चे ललाटेत्त।

ऊँ अर्हाद्युमत् मुखेत्त। ऊँ विभाति क्रतुमत् हृदयेत्त।

ऊँ जनेषु नाभौत्त। ऊँ यद्दीदयत् कट्याम्त्त।

ऊँ छवसऋतप्रजात ऊर्वोःत्त। ऊँ तदस्मासुद्रविणं जान्वोःत्त। ऊँ /ाहि गुल्फयोःत्त। ऊँ वित्रम् पादयोःत्त।

हृदयादिन्यास :– ऊँ)ल्बणडइत्रष्ठ ळ् ़यत्र द्भत्त्यष्ठश्च हृदयाय नमःत्त।

ऊँ अर्हाद्युमत् शिरसे स्वाहात्त।

ऊँ विभाति क्रतुमत् शिखायै वषट्त्त।

ऊँ यद्दीयच्छवसऋतप्रजाततदस्मासु नेत्रत्रयाय वौषट्त्त।

ऊँ द्रविणं धेहि चित्रम् अस्त्राय फट्त्त।

ध्यानम् :– पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तःत्त।

त्वथाऽक्षसूत्रं च कमण्डलुञ्च दण्डञ्चविभ्रद्वरदोऽस्सु मह्यम्त्त।।

मन्त्र :– ऊँ भूर्भुवः स्वः द्धल्बणडइत्रष्ठ ळ् ़यत्र द्भत्त्यष्ठश्च ळ् ़बणय्श्चश्ररुद्ब्याणद्नय्यत्रऽश्नैंत्ररुद्बङ्कय्द्मष्ठप्तरुद्र सध्त्द्भ'च्णप्फ्ळैंत्रइश्नज्य्त्रत्त्डद्बय्फ्रु त्श्न्यप्ह्लय्र क्य्ष्ठय्बण ़यघ्खय्द्बह्म ऊँ बृहस्पतये नमःत्त।।

जप संख्या १६००० जप इःह्लय्श्च ऊँद्यणद्मष्ठ ऽष्ठैं झ्य्त्रिष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.८. शुक्र मंत्र प्रयोगः –

विनियोग :— ऊँ अन्नात्परिस्त्रुतेति मन्त्रस्य प्रजापतिऋषिः अनुष्टुप्छन्दः शुक्रो देवता ममसर्वाभिष्टसिद्धयर्थ शुक्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगःत्त।

ऋ"यादिन्यास :—ऊँ प्रजापतये ऋ"ाये नमः शिरसित्त। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखेत्त। ऊँ शुक्रोदेवतायै नम हृदित्त। ऊँ विनियोगाय नमः सर्वां"त्त।

करन्यास :— ऊँ अन्नात्परिस्त्रुतो रसं अंगुष्ठाभ्यां नमःत्त। ऊँ ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रं तर्जनीभ्यां नमःत्त। ऊँ पयः सोमम्प्रजापतिः मध्यमाभ्यां नमःत्त। ऊँ ऋतेन सत्यमिन्द्रियं अनामिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ विपान उ शुक्रमन्धस कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतं मधु करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

अंगन्यास :— ऊँ अन्नात्परिस्त्रुते नमः शिरसित्त। ऊँ रसं ब्रह्मणा ललाटेत्त। ऊँ व्यपिबत्क्षत्रं मुखेत्त। पयः सोमं हृदयेत्त। प्रजापतिः नाभौत्त। ऊँ ऋतेन सत्यं कट्याम्त्त। ऊँ इन्द्रियं विपानउगुदेत्त। ऊँ शुक्रं वृषणेत्त। ऊँ अन्धसो ऊर्वोःत्त। ऊँ इन्द्रस्येन्द्रियं जान्वोःत्त। ऊँ इदं पयः गुल्फयोःत्त। ऊँ अमृतं मधु पादयोःत्त।

हृदयादिन्यास :— ऊँ अन्नात्परिस्त्रुतोरसं हृदयाय नमःत्त। ऊँ ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रं शिरसे स्वाहात्त। ऊँ पयः सोमम्प्रजापतिः शिखायै वषट्त्त। ऊँ ऋतेन सत्यमिन्द्रियं कवचाय हुम्त्त। ऊँ विपानउशुक्रमन्धस नेत्रत्रयाय वौषट्त्त। ऊँ इन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतं मधु अस्त्राय फट्त्त।

ध्यानम् :— श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तत्त।

तथाऽक्षसूत्रञ्च कमण्डलुञ्चदण्डञ्चबिभ्रद्वरदोऽस्तुमह्यम्त्त।।

मन्त्र :— ऊँ भूर्भुवः स्वः ृस्त्रय्य्ह्वइयद्यणवरुत्रय्ष्ठ द्यणप्र द्धश्नीय्ह्लय्य् झद्भ्यइद्धह्वूय्ख्र् इद्भदृ फय्ष्ठद्ब्र इश्नज्य्इयत्रदृद्र ॅत्रष्ठद्म फ्ह्वद्भ्यद्ब्य्ध्त्त्श्नद्भ्र ्यझफ्य्द्म श्व प्रय्रु€ऽश्नैंद्बध्क्य्फ् ळ् णध्त्त्श्नडद्भष्ठ्यध्त्त्श्नद्भ्यद्ब्र इद्भय्ष्ठळ्द्बल्त्र द्बक्य्रु ऊँ शुक्राय नमःत्त।

जप इःह्लय्श्च ऽैंद्यणद्मष्ठ ऽष्ठैं झ्य्त्रिष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.६. शनि मन्त्र जप प्रयोग

विनियोग :— ऊँ शनोदेवीति मन्त्रस्य सिन्धुद्वीपऋषिः गायत्री छन्दः आपोदेवता शनि प्रीत्यर्थे जपेविनियोगःत्त।

ऋ"यादिन्यास :— ऊँ सिन्धुद्वीपऋ"ाये नम शिरसित्त। ऊँ गायत्री छन्दसे नमः मुखेत्त। ऊँ आपोदेवतायै नमः हृदित्त। ऊँ विनियोगाय नमः सर्वां"त्त।

करन्यास :— ऊँ शन्नो देवी अंगुष्ठाभ्यां नमः ऊँ अभिष्ठये तर्जनीभ्यां नमःत्त। ऊँ आपो भवन्तु मध्यमाभ्यां नमःत्त। ऊँ पीतये अनामिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ प्रय्ैय्ष्ठद्यण्य य् कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ स्रवन्तु नः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

अंगन्यास :– ऊँ शन्नो शिरसित्त। देवी ललाटेत्त। ऊँ अभिष्टय मुखेत्त। ऊँ आपो कण्ठेत्त। ऊँ भवन्तु हृदित्त। ऊँ पीतये नाभौत्त। ऊँ शं कट्यास्त्त। योः उर्वोत्त। ऊँ अभि जान्वोः त्त। ऊँ स्रवन्तु गुल्फयोः त्त। ऊँ नः पादयोः त्त।

हृदयादिन्यास :– ऊँ शन्नोदेवी हृदयाय नमः त्त। ऊँ अभिष्ठये शिरसे स्वाहात्त। ऊँ आपो भवन्तु शिखायै वषट्त्त। ऊँ पीतये कवचाय हुम्त्त। ऊँ प्रय्ष्ठिघ्ण्य य् नेत्रत्रयाय वौषट्त्त। ऊँ स्रवन्तु नः अस्त्राय फट्त्त।

ध्यानम् – नीलाम्बरः शूलधरः किरीटी गृधस्थितस्त्रासकरोधनुष्मान्त्त।

चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तः सदाऽस्तु मह्यं वरदोऽल्पगामीत्त।।

मन्त्र :– ऊँ भूर्भुवः स्वः प्रय्स्त्रय्ष्ठत्त्ष्ठध्घ्ण्यद्नउह्मणद्भ ळ् ृय्झ्ष्ठद्नप्द्दत्ररु झ्ध्त्रद्भष्ठद्र प्रय्ष्ठिघ्ण्य य्वप्द्दत्ररुद्मदृद्रद्र ऊँ शनैश्चराय नमः त्त।।

जप संख्या २३००० जप झःह्लय्श्च ऽँघ्णद्मष्ठ ऽष्ठैं झ्य्त्रिष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.१०. राहू मन्त्र जप प्रयोग –

विनियोग :– ऊँ कयानश्चित्रेति मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः गायत्री छन्दः राहुर्वेदवताः राहू झ्श्नध्ह्वद्भर्त्ष्ठश्च जपे विनियोगः त्त।

ऋ"यादिन्यासः– ऊँ वामदेव ऋ"ाये नमः शिरसिः त्त। ऊँ गायत्री छन्दसे नमः मुखेत्त। ऊँ राहुदेवतायै नमः हृदयेत्त। ऊँ विनियोगायनमः सर्वांत्त।

करन्यासः– ऊँ कया नः अंगुष्ठाभ्यां नमः त्त। ऊँ चित्रं आ तर्जनीभ्यां नमः त्त। ऊँ भुवदूती मध्यमाभ्यां नमः त्त। ऊँ सदावृधः सखा अनामिकाभ्यां नमः त्त। ऊँ कया कनिष्ठिकाभ्यां नमः त्त। ऊँ शचिष्ठयावृता करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः त्त।

हृदयादिन्यासः–ऊँ कया नः हृदयाय नमः त्त। ऊँ चित्र आ शिरसे स्वाहात्त। ऊँ भुवदूती शिखायै वषट्त्त। ऊँ सदावृधः सखा कवचाय हुम्त्त। ऊँ कया नेत्रत्रयाय वौषट्त्त। ऊँ शचिष्ठयावृता अस्त्रायफट्त्त।

अंगन्यास :– ऊँ कया शिरसित्त। ऊँ न ललाटेत्त। ऊँ चित्रमुखेत्त। ऊँ आ कंठेत्त। ऊँ भुव हृदयेत्त। ऊँ दूती नाभौत्त। ऊँ सदा करयाम्त्त। ऊँ वृधः मेढ्रेत्त। ऊँ सखा ऊर्वोः त्त। ऊँ कया जान्वोः त्त। ऊँ शचिष्ठया गुल्फयोः त्त। ऊँ वृता पादयोः त्त।

ध्यानम् :– नीलाम्बरः नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूलीत्त। चतुर्भुजश्चक्रधरश्च राहुः ुसहाधिःढो वरदोऽस्तुमह्यम्त्त।।

मंत्र :– ऊँ भूर्भुवः स्वः ऽँद्भय्द्म्यखिय् ळ् ृय्द्नरुप्द्दःत्रध् फत्य्ल्क्य्दृ फक्वय्द्र ऽँद्भय्प्रय्यघ्लपणद्भय् झप्ल्त्रय् ऊँ राहवे नमः त्त। जप संख्या १८००० जप झःह्लय्श्च ऽँघ्णद्मष्ठ ऽष्ठैं झ्य्त्रिष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.११. केतु मंत्र जप प्रयोग –

विनियोग :— ऊँ केतुं कृण्वन्नितिमन्त्रस्य मधुच्छन्द ऋषिः गायत्री छन्दः केतु देवता केतु प्रीत्यर्थं केतु इश्नध्ह्वद्भर्त्ष्ठश्च जपेविनियोगत्त।

ऋ"यादिन्यासः— ऊँ मधुच्छन्दऋ"ाये नमः शिरसित्त। ऊँ गायत्रीछन्दसे नमः मुखेत्त। ऊँ केतु देवतायै नमः हृदित्त। ऊँ विनियोगाय नमः सर्वा"त्त।

करन्यासः— ऊँ केतु कृण्वन् अंगुष्ठाभ्यां नमःत्त। ऊँ अकेतवे तर्जनीभ्यां नमःत्त। ऊँ पेशोमर्या मध्यमाभ्यां नमःत्त। ऊँ अपेशसे अनामिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ समुषद्भिः कनिष्ठिकाभ्यां नमःत्त। ऊँ अजायथाः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमःत्त।

अंगन्यास :— ऊँ केतु शिरसित्त। ऊँ कृण्वन् ललाटेत्त। ऊँ अकेतवे मुखेत्त। ऊँ पेशो हृदयेत्त। ऊँ मर्या नाभौत्त। ऊँ अपेशसे कट्याम्त्त। ऊँ स ऊर्व्वोःत्त। मुषद्भिः जान्वोत्त। ऊँ अजायथाः पादयोःत्त।

हृदयादिन्यासः—ऊँ केतुं कृण्वन् हृदयाय नमःत्त। ऊँ अकेतवे शिरसे स्वाहात्त। ऊँ पेशोमर्या शिखायैवषट्त्त। ऊँ अपेशसे कवचाय हुम्त्त। ऊँ समुषद्भिः नेत्रत्राय वौषट्त्त। ऊँ अजायथाः अस्त्राय फट्त्त।

ध्यानम् :— धूम्रो द्विबाहुर्वरदोगदाधरो गृधासनस्थो विकृताननश्चत्त।

किरीटकेयूरविभूषितो यः सदाऽस्तु मे केतुगणः प्रशान्तःत्त।

मन्त्र :— ऊँ भूर्भुवः स्वः ऽष्ठैंत्रङ ऽल्ँह्लह्लप्स्त्रऽष्ठैंत्रष्ठ इ्ष्ठप्रय्ष्ठ द्बय्श्च ळ् ृइ्ष्ठप्रय्फ्ष्ठद्र फद्बरुप्त्यक्षद्यणज्य्द्भर्त्य्दृ ऊँ केतवे नमःत्त।

जप संख्या १७००० जप इःह्लय्श्च ड्ँयणद्मष्ठ ऽष्ठैं इ्स्त्रिष्टह्म उत्तरन्यास प् क्द्भय्द्म करेत्त।

११.४.१२. नवार्ण—मन्त्र जप विधि

ऊँ अस्यश्री नवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्राऋषयः गायत्र्यु—ष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि श्री महाकालीमहालक्ष्मी महासरस्वत्योदेवताः नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि ममाभीष्ट्कामनासिद्घयर्थं श्रीमहाकालीमहा—लक्ष्मीमहारसस्वती देवता प्रीत्यर्थे सप्तशतीङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः। (प्रचलित न्यास) ऋष्यादि न्यास—

ऊँ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि। ऊँ गायर्त्युष्णिगनुष्टुप् छन्दोभ्यो नमः मुखे। ऊँ श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती देवताभ्यो नमः हृदि। ऊँ नन्दाशाकम्भरीभीमा शक्तिभ्योः नमः दक्षिणस्तने। ऊँ रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामरी बीजेभ्यो नमः वामस्तने। ऊँ अग्निवायुसूर्यस्त—त्त्वेभ्योनमः नाभौ। ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डाये विच्चे मूलेन करौ संशोध्य।

करन्यास — ऊँ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऊँ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ऊँ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः। ऊँ चामुण्डाये अनामिकाभ्यां नमः। ऊँ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डाये विच्चे करतलकर—पृष्ठाभ्यां नमः। हृदयादिन्यास ऊँ ऐं हृदयाय नमः। ऊँ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ऊँ क्लीं शिखाये वषट्। ऊँ चामुण्डाये कवचाय हुम। ऊँ विच्चे नेत्त्रीयाय—वौषट्। ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्यायैविच्चे अस्त्रायफट्।

अक्षरन्यासः – ऊँ ऐं नमः शिखायाम्। ऊँ ह्रीं नमः, दक्षिण नेत्रे। ऊँ क्लीं नमः, वामनेत्रे। ऊँ चां नमः, दक्षिणकर्णे। ऊँ मुं नमः वामकर्णे। ऊँ डां नमः, दक्षिणनासापुटे। ऊँ यैं नमः, वामनासापुटे। ऊँ विं नमः, मुखे। ऊँ च्चें नम., गूह्ये। मूलेन अष्ट्वारं व्यापकं कुर्यात्।

दिङ्न्यासः – ऊँ ऐं प्राच्यै नमः। ऊँ ऐं आग्रेय्यै नम.। ऊँ ह्रीं दक्षीणायै नमः। ऊँ ह्रीं नैर्ऋत्यैनमः । ऊँ क्लीं प्रचीत्यै नमः। ऊँ क्लीं वायव्यै नमः। ऊँ चामुंडायै उदीच्यै नमः। ऊँ विच्चे ऐशान्यै नमः। ऊँ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः। ऊँ ऐं ह्रीं क्ली चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः।

ध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापरिघाञ्शूलं भुशुण्डीं शिरः

शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम्।

नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां

यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजोहन्तुं मधुं कैटभम्॥१॥

अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां

दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्।

शूलं पाशुसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां

सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्॥२॥

घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं

हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्।

गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा

पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्॥३॥

क्चद्द॥श+ 9द्वङ्ग ष्ष्व7 ैह्ल ध्ह्ल :द्व–2ज़्स्झद्वक्वँ 6स्रघ्शश्श क्चद्द –ळत ॥+द्व ह्ठ्ठ १०८ 9द्वड्ड ॥+ड्ड7 ङ्कङ्खद्व 6ू ्रूद्वश॥+ ॥+द्वश ठ्ठन्ञ्जझ॥+ड्ड ङ्गशस्रह्म् ॥श+ स्रद्व– द्धैङ्क –शइ ह्ठ्ठ द्द–6ठ्ठउङ्क ॥+ड्ड7 ज–

छ्व2{द्व6ङ्कछ्व2{–छ्वद्वशवतह्म् ल्स्रइ, छ्वअद्धद्वद्वै–ङ्क[2]–॥अ+ङ्कइ ह्ठ्ठ–[2]त्त–

6द्द6बट्टउस्रङ्क2 –श ङ्गश6स्र! ल्स्रङ्क²–श्ददद्वङ्गद्वळ–द्धशॣस्रख्डुत्त––

११.४.१३. अथ त्र्यक्षरीमृत्युञ्जय–जपविधिः

ऊँ अस्य श्री त्र्यक्षरात्मकमृत्युञ्जय मन्त्रस्य कहोल ऋषिः, देवी गायत्री छन्दः श्री मृत्युञ्जयो देवता, जूं बीजं, सः शक्तिः श्रीः कीलकम् सर्वेष्ट्सिद्घयर्थे जपे विनियोगः।

अङ्ग्न्यासः – कहोलऋषये नमः शिरसि। देवी गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। मृत्युञ्जयदेवतायै नमः हृदि। जूं बीजाय नमः गुह्ये। सः शक्त्ये नमः पादयोः।

करन्यासः – सां अगुष्ठ्राभ्यां नमः। सीं तर्जनीभ्यां नमः। सूं मध्यमाभ्यां नमः। सैं अनामिकाभ्यां नमः। सौं कनिष्ठ्किाभ्यां नमः। सः करतलकर पृष्ठ्राभ्यां नमः।

हृदयादिन्यासः – सां हृदयाय नमः। सीं शिरसे स्वाहा। सूं शिखायै वषट्। सैं कवचाय हुँ। सौं नैत्रत्रयाय वौषट्। सः अस्त्राय फट्।

ध्यानम् –

ऊँ चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तः स्थितं,

मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमाँशुप्रभम्।

कोटीरेन्दुगलत्सुधास्नुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं,

कान्त्याविश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत्॥

श्ऊँ जूं सःश्च इति मूलमंत्रं जपेत्।

११.४.१४. अथ महामृत्युञ्जय–जपविधिः –

ऊँ अस्य श्री महामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वामदेवकहोलवसिष्ठऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीत्र्यम्बकरुद्रो देवता, श्रीं बीजं, ह्रीं शक्तिः मम् वा यजमानस्य शरीरे सर्वारिष्ट् निवृत्तिपूर्वक सकलमनोरथ सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः – ऊँ वामदेवकहोलवसिष्ठऋषिभ्यो नमः शिरसि। ऊँ अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। ऊँ श्रीत्र्यम्बकरुद्रदेवतायै नमः हृदये। ऊँ श्रीं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्त्ये नमः पादयोः।

करन्यासः – ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ऊँ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः यजामहे ऊँ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय जीवय तर्जनीभ्यां स्वाहा।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ऊँ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः उर्व्वारुकमिव बन्धनात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय ह्रां ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मृत्योर्म्मुक्षीय ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुः साममन्त्राय कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मामृतात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्ष अघोरास्त्राय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादिन्यासः – ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ऊँ नमो भगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा हृदयाय नमः।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः यजामहे ऊँ नमो भगवते रुद्राय अमृतमूर्तये मां जीवय जीवय शिरसे स्वाहा।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँभूर्भुवः स्वः सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ऊँ नमो भगवते रुद्राय चन्द्रशिरसे जटिने स्वाहा शिखायै वषट् ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः उर्व्वारुकमिव बन्धनात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिपुरान्तकाय ह्रां ह्रीं कवचाय हुँ।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मृत्योर्म्मुक्षीय ऊँ नमो भगवते रुद्राय त्रिलोचनाय ऋग्यजुः साममन्त्राय नेत्रत्रयाय वौषट्।

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः मामृतात् ऊँ नमो भगवते रुद्राय अग्नित्रयाय ज्वल ज्वल मां रक्ष रक्ष अघोरास्त्राय अस्त्राय फट्।

वर्णादिन्यासः – ऊँ त्र्यं नमः दक्षिणचरणाग्रे।

बं नमः, कं नमः, यं नमः, जां नमः दक्षिणचरणसन्धिचतुष्केषु।

ऊँ मं नमः वामचरणाग्रे।

हें नमः, सुं नमः, गं नमः धिं नमः वामचरणसन्धिचतुष्केषु।

पुं नमः गुह्ये।

ष्टिं नमः आधारे।

वं नमः जठरे।

र्द्धं नमः हृदये।

नं नमः कण्ठे।

ऊँ उं नमः दक्षिणकराग्रे।

वां नमः, रुं नमः, कं नमः, मिं नमः, दक्षिणकरसन्धिचतुष्केषु।

ऊँ वं नमः वामकराग्रे।

बं नमः, धं नमः, नां नमः मृं नमः वामकरसन्धिचतुष्केषु।

त्यों नमः वदने। मुं नमः ओष्ठयोः।

क्षीं नमः घ्राणयोः। यं नमः दृशोः।

मां नमः श्रवणयोः। मृं नमः भ्रुवोः।

तां नमः शिरसि।

पदन्यासः –

ऊँ त्र्यम्बकं नमः शिरसि। यजामहे भ्रुवोः।

सुगन्धिं दृशोः। पुष्टिवर्द्धनम् मुखे।

उर्व्वारुकम् गण्डयोः। इव हृदये।

बन्धनात् उदरे। मृत्योः गुह्ये।

मुक्षीय उर्वोः। मां जानवोः।

अमृतात् पादयोः।

ध्यानम् –

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो,

द्वाभ्यां वो दधतं मृगाऽक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परं।

अङ्कन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशकान्तं शिवम्,

स्वच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटाभान्तं त्रिनेत्रं भजे।।

जप–मन्त्रः –

ऊँ हौं ऊँ जूं सः ऊँ भूर्भुवः स्वः ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ ऊँ स्वः भुवः भूः ऊँ सः जूं हौं ऊँ॥

:: अथवा ::

ऊँ हौं ऊँ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्।

उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ भूर्भुवः स्वरों जूं सः हौं ऊँ॥

११.५. तन्त्र परिचय :–

तन्त्र शब्द तन् + त्र बना है, तन् का अर्थ है विस्तार करना और त्र का अर्थ है रक्षा करना। इस प्रकार तन्त्र का अर्थ है – वह शास्त्र जिसके सिद्धान्तों पर चलने से हमारी रक्षा होती है।

वर्तमान में साधकों के दो वर्ग बने गये है :– १. दक्षिणमार्गी (सात्विक उपासक), २. वाममार्गी (तामसिक उपासक)। दक्षिणमार्गी साधक स्नान, शुचिता, स्वच्छता और सात्विकता पूर्वक जप करते है, इसके विपरीत वाममार्गी साधकों ने बाह्यशुचिता, स्वच्छता के स्थान पर मलिनता, माँस, मदिरा, अशोभनीय वेश, सर्वभक्षी आदि आचरण को दैनिक जीवन का अङ्ग बना लिया है। वाममार्गियों के विपरीत व्यवहार का प्रमुख कारण ये भी रहा कि वे साधना में अधिक समय देने के लिए आमजनों से दूर रहना चाहते थे, यदि वे मलिन रहेंगे तो सामान्यजन स्वतः उनसे दूर रहेंगे।

आजकल तान्त्रिकों के कुछ अनैतिक कार्यों को अपने जीवन का उद्देश्य बना रखा है, जिसके कारण लोगों का विश्वास तन्त्र से उठता जा रहा है जबकि तन्त्र का उद्गम लोगों को सद्योफल देने हेतु हुआ था।

साधना का वर्गीकरण :–

१. सात्त्विक, २. तामसिक, ३. राजसिक ।

१. सात्त्विक :– आत्म ज्ञान, ब्रह्मबोध, सांसारिक माया–मोह से परे, निःस्पृह भाव से ईश्वर का सायुज्य, देवी–देवताओं की शरणागति, मोक्ष, अपवर्ग, कैवल्य आदि की प्राप्ति हेतु किया गया जप–तप, चिन्तन–मनन तथा एतत् सम्बन्धी अन्य क्रिया–कलाप सात्त्विक साधना के अन्तर्गत आते है।

२. तामसिक :– शीघ्र अपने कार्य की सिद्धि, वशीकरण, मारण, मोहन, उच्चाटन आदि सभी कार्यों की सिद्धि तामसिक साधना के अन्तर्गत आती है।

३. राजसिक :– सांसारिक वैभव–विलास, धन–सम्पदा, पद–प्रतिष्ठा और घर–परिवार का सुख पाने की अभिलाषा से किये गये आध्यात्मिक प्रयत्नों को राजसिक साधना के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

स्वर–साधना, प्राणायाम, ध्यान–धारणा, मुद्रा, चिन्तन और यौगिक क्रियाएँ इनकी साधना के प्रमुख अङ्ग है। भारतीय संस्कृति के इतिहास में कितने ही ऋषि–मुनियों के प्रसङ्ग मिलते है, जिन्होंने योग तन्त्र की साधना के द्वारा अद्भुत–अलौकिक कार्य कर दिखाये थे। भगवान् शिव साक्षात् योग के प्रणेता है तथा श्रीकृष्ण भी योगेश्वर के :प में जाने जाते है। श्राप अथवा वरदान देवताओं व ऋषि–मुनियों (भारद्वाज, विश्वामित्र, जाबालि, याज्ञवल्क्य, गौतम, कपिल, कणाद जैसे दिग्गज विद्वान्), महापुरुषों (महावीर स्वामी, गौतम बुद्ध, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ आदि) के योग की पराकाष्ठा का ही प्रतिफल था।

साधना :–

स्वच्छ, एकान्त और जीवन्त वातावरण में उत्पन्न वनस्पतियाँ अधिक उपयोगी और प्रभावशाली होती है, जबकि मार्ग/नदी के किनारे में नित्य प्रति कुचली और चरी जाने वाली अथवा अशुभ स्थानों में उत्पन्न वनस्पति में एक प्रकार का अदृश्य प्रदूषण व्याप्त रहता है। साधना के लिए जो भी वनस्पति ली जाये उसकी संरचना, उत्पत्ति स्थल, आयु और वातावरण का विचार कर लेना चाहिए।

१. साधना के लिए कोई भी वनस्पति, जड़ी–बूटी, फल–फूल, पत्ती अथवा टहनी, सड़ी–गली, घुन या कीड़ों से खायी हुई, ऋतु–विरुद्ध, आग में उत्पन्न, आग से दग्ध, किसी प्राकृतिक प्रकोप के कारण छिन्न, रुग्ण अथवा सत्त्वहीन होने पर त्याज्य होती है। उसका उपयोग लाभकर नहीं होता है और साधना का श्रम व्यर्थ चला जाता है।

२. जीव–जन्तुओं के आवास (गुफा–बिल आदि) पर उत्पन्न, आवागमन के मार्ग में स्थित वृक्षों के नीचे उगने वाली घास या वनस्पति साधना हेतु वर्जित होती है।

३. मन्दिर अथवा श्मशान–भूमि में स्थित वृक्षों का कोई अंश नहीं लेना चाहिए। अपवाद की स्थिति अलग है, वह भी तब जबकि उसके सम्बन्ध में स्पष्ट स्वतन्त्रता और निर्देश शास्त्रों में वर्णित हो।

४. साधना हेतु अन्य के द्वारा उपयोग की गई सामग्री (माला, आसन आदि) को काम में नहीं लेना चाहिए।

५. शङ्ख, पूजन–पात्र, प्रतिमा, चित्र, यन्त्र आदि खण्ड़ित नहीं होने चाहिए। ऐसी वस्तुयें गङ्गा या अन्य किसी नदी (तीर्थ में स्थित जल) में आदरपूर्वक विसर्जित कर देनी चाहिए।

६. माला (वह किसी प्रकार के मनकों से निर्मित हो) की मणियाँ आकार में समान, पुष्ट, सम्पूर्ण और विधिवत् शुद्ध की हुई होनी चाहिए। कटे–फटे, टूटे–दरके आकार में विषम, विकृत, नकली और आभार रहित दाने त्याज्य है। साधना में शुद्ध सामग्री का ही उपयोग करना चाहिए।

७. विशेष साधना में ही श्मशान, रक्त, हड्डी, माँस, मदिरा आदि का प्रयोग भी शास्त्रों ने किया है, परन्तु सामान्यतः यह सभी वस्तुएँ अपवित्र और त्याज्य है।

८. यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र आदि सभी कर्म गुरु के निर्देशन में ही करने चाहिए अन्यथा साधक राह से भटक सकता है और सभी कर्म निष्फल हो जायेंगे।

९. साधक को शीलवान्, गुणज्ञ, निच्छल, श्रद्धालु, धैर्यवान्, स्वस्थ, कार्य सक्षम, बुद्धिमान, सच्चरित्र, इन्द्रिय–संयमी और कुल प्रतिष्ठा का पोषक होना चाहिए।

१०. अपराधिक प्रवृत्ति, क्रूर, कुतर्की, मिथ्याभाषी, अहंकार से ग्रस्त, लोभी, लम्पट, विषयी, चोर, दुर्व्यसनी, परस्त्रीगामी, मूर्ख, जड़बुद्धि, क्रोधी, द्वेषालु, ईर्ष्या अथवा अति मोह से ग्रस्त, शास्त्र निन्दक, आस्थाहीन, दुराचारी, वंचक, पाखण्ड़ी, रोगी तथा विकलाङ्ग व्यक्ति सामान्यतः साधक बनने के योग्य नहीं होता है।

११. साधना में प्रयुक्त सामग्री :– बिल्ली की जेर, बाँदा, श्वेतार्क, रुद्राक्ष, शङ्ख, हाथाजोड़ी, गोरोचन, गुञ्जा, सियारसिंगी, एकाक्षी नारियल, कुश, हरिद्रा, नागकेसर, कमल, लवङ्ग, दक्षिणावर्ती–वामावर्ती शङ्ख, सिन्दूर,

राई, सरसों, गुग्गुल, धूप, कर्पूर, सिन्दूर, श्रीफल, नागदमन, उदुम्बर, पीपल, बरगद, विजया, सहदेवी, अपामार्ग, मुण्ड़ी, बहेड़ा, लक्ष्मणा आदि।

व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए अथवा ईर्ष्या–द्वेष की तृप्ति के लिए अभिचार–कर्म निन्दनीय है, आगे चलकर इन सभी कर्मों का दुष्परिणाम साधक को भुगतना ही पड़ता है। मूलतः ऐसे अभिचार–तन्त्रों की सर्जना आत्मरक्षा के लिए अथवा लोक कल्याण के लिए की गयी थी। सामूहिक कल्याण के लिए ऐसे कर्मों का शास्त्रों ने सर्जन किया था।

11.6. सारांश :–

यन्त्र साधना के व्यापक प्रचार की चरम परिणति ने तन्त्र को जन्म दिया, जहाँ मन्त्र केवल ध्वनि–परक था और यन्त्र में उसके साथ चित्रात्मकता आ गयी थी। वहाँ तन्त्र में पदार्थ प्रयोग को वरीयता दी गयी। वैसे, इसमें भी मन्त्र प्रधान आधार है और चित्रात्मकता को भी स्वीकार किया गया, किन्तु उनमें विशिष्ट वस्तुओं के प्रयोग की अनिवार्यता हो गयी। आगे चलकर तन्त्र का इतना अधिक प्रचार हुआ कि वह मन्त्र और यन्त्र से कई गुना अधिक लोकव्यापी हो गया। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी कुछ तन्त्र के माध्यम से प्राप्त किये जाने लगा, किन्तु जहाँ मन्त्रों का प्रयोग सात्त्विकता प्रधान था, वहाँ यन्त्र – राजसिकता प्रधान हुए और तन्त्र को तामसी साधना का चरम :प माना गया। यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र के सन्दर्भ में नवग्रहों का विशद विवेचन इस अध्ययन में प्राप्त होता है। प्रायः जन्कुण्ड़ली में उत्पन्न दोषों का निवारण सूर्यादि नवग्रहों के प्रयोगों से ही होता है। इस अध्याय के पश्चात् जातक अपने जीवन में यन्त्र–मन्त्र–तन्त्र का समुचित उपयोग शास्त्रीय विधि से कर पायेगा।

11.7 शब्दावली –

१. जपनीय = जप के योग्य

२. वैदिक = वेद से उद्धृत

३. पुराणोक्त = पुराणों के अनुसार

४. उदर विकार = पेट का रोग

५. अशुभ = बुरा प्रभाव

६. रविपुष्य = रविवार+पुष्य नक्षत्र

७. उत्तरन्यास = जप के बाद किये जाने वालो न्यास

८. नवार्ण = नौ अक्षरों का मन्त्र

९. सङ्कल्प = दृढ़ प्रतिज्ञा

१०. विनियोग = मन्त्र, ऋषि, छन्द, देव काज्ञान

११. ऋष्यादिन्यास = ऋषि, छन्द, देव काशरीर के अङ्गों में ध्यान/आधान

१२. करन्यास = हाथ की अङ्गुलियों में अभीष्टमन्त्र देवता का ध्यान/आधान

१३. अङ्गन्यास = शरीर के अङ्गों में अभीष्टमन्त्र देवता का ध्यान/आधान

१४. त्र्यक्षरीमन्त्र = तीन अक्षरों का मन्त्र

१५. मृत्युञ्जय = मृत्यु पर विजय पाने वाले

१६. दक्षिणमार्गी = सात्त्विक उपासना

१७. वाममार्गी = तामसिक उपासना

11.8. अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न – १ : यन्त्र का निर्माण सामान्यतः किस धातु अथवा पत्र पर किया जाता है?

उत्तर : यन्त्र का निर्माण सामान्यतः भोजपत्र, स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि धातुओं पर किया जाता है।

प्रश्न – २ : सामान्यतः यन्त्र के निर्माण में किस स्याही का उपयोग किया जाता है?

उत्तर : सामान्यतः यन्त्र के निर्माण में अष्टगन्ध, चन्दन, कस्तूरी, पञ्चगन्ध, भस्म, यक्षकर्दम, गोरोचन व हल्दी आदि का उपयोग किया जाता है।

प्रश्न – ३ : नवार्ण मन्त्र से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर : नव अक्षरों के मन्त्र को नवार्ण मन्त्र कहते है। यथा – ४

प्रश्न – ४ : साधना के मुख्य भेद बताईये ?

उत्तर : १. सात्विक, २. तामसिक, व ३. राजसिक – ये तीनों साधना के मुख्य भेद है।

प्रश्न – ५ : करन्यास से आप क्या समझते है ?

उत्तर : हाथ की अङ्गुलियों में अभीष्टमन्त्र देवता का ध्यान/आधान करना ही करन्यास है।

11.9. लघुत्तरात्मक प्रश्न :–

प्रश्न – १ : सूर्यादि नवग्रहों के एक–एक मन्त्र का उल्लेख करते हुए उनकी जपसंख्या बताईये ?

प्रश्न – २ : सूर्यादि नवग्रहों के चतुरस्र अङ्कयन्त्रों का वर्णन कीजिए ?

प्रश्न – ३ : सूर्यादि नवग्रहों में से किसी भी एक मन्त्र की न्यासविधि सहित विवेचन कीजिये ?

प्रश्न – ४ : गणपति अथवा त्र्यक्षरी मन्त्र की जपविधि बताईये ?

प्रश्न – ५ : तन्त्र शब्द से आप क्या समझते है ? सविस्तार विवेचन कीजिये ?

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ –

१. ज्योतिष सम्राट् पञ्चाङ्ग,

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – अखिल भारतीय प्राच्य ज्योतिष शोध संस्थान, जयपुर।

२. हवनात्मक दुर्गासप्तशती

सम्पादक – डॉ. रवि शर्मा

प्रकाशक – राष्ट्रीय संस्कृत साहित्य केन्द्र, जयपुर।